ॐ

* कौटिल्य अर्थशास्त्र *

का

सरल और सारगर्भित हिन्दीभाषानुवाद

अनुवादक—

श्रीयुत प्राणनाथ विद्यालङ्कार प्रोफैसर

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय।

* प्रकाशक *

मोती लाल बनारसी दास,

अध्यक्ष "पञ्जाब संस्कृत पुस्तकालय"

सैदमिट्ठा बाजार, लाहौर।

संवत १९८०] सर्वाधिकार सुरक्षित [सन १९२३

प्रकाशक—
मोती लाल बनारसी दास,
अध्यक्ष पञ्जाब संस्कृत पुस्तकालय,
सैद मिट्ठा बाजार लाहौर।

891.231
K21,AP

5579

All Rights Reserved.

मुद्रकः—
सरदारी लाल जैन,
मैनेजर "मुम्बई संस्कृत प्रेस"
सैदमिट्ठा बाजार लाहौर।

निवेदन ।

कुछ ही वर्ष हुए कि कौटिल्य-अर्थशास्त्र नामक महत्वपूर्ण ग्रंथ मैसूर से उपलब्ध हुआ। डाक्टर शाम शास्त्री ने इसको प्रकाशित किया। महत्व को देखकर इसका आंग्लभाषा में भाषान्तर भी उन्हों ने कर दिया। कौटिल्य अर्थशास्त्र इतना कठिन ग्रंथ है और उसमें इतने अधिक अप्रचलित पारिभाषिक शब्द हैं कि इसके भाषान्तर में भूल तो अपवाद न होकर नियम बनगई है। मोती लाल बनारसी दास ने आवश्यकता को देखकर इसके हिन्दी भाषान्तर के लिये उद्योग किया। कुछ समय हुआ कि उन्होंने इस काम को हाथमें लेने के लिये लिखा। मैं कई वर्षों से इस ग्रंथ का अध्ययन कर रहा था और इसके पारिभाषिक शब्दों को चुनकर एक कोश तैय्यार कर रहा था। कोश में इस समय तक चार हजार पांच हजार शब्द चुने जाचुके हैं। हिन्दी भाषान्तर में इस कोश के सहारे मैं कई भूलों से बच गया जिनमें डाक्टर शाम शास्त्री स्थान स्थान पर फंस गये। दृष्टान्तस्वरूप मौल तथा पाल शब्दही लीजिये। स्मृतियों में मौल तथा पाल शब्द प्रवासी तअल्लुकेदार तथा गोपाल के लिये आया है। कौटिल्य ने भी इन शब्दों का इसी अर्थ में व्यवहार किया है। परंतु डाक्टर शाम शास्त्री ने मौल का यौगिक अर्थ सामने रख कर पुराना या वंशागत अर्थ कर दिया है। इसी प्रकार भृत्य भरणीय प्रकरण में उन्होंने पाल का गोपाल अर्थ न कर अंग रक्षक अर्थ कर दिया है। क्षय, व्यय, आसार, प्रसार, वीवध, सत्र, परिघ, चक्रचर, रात्रिचरण, उदकचरण, प्रकृति पार्ष्णि आदि हजारों पारिभाषिक शब्द हैं जिनके कारण ग्रंथ का भाषान्तर करना कठिन काम होगया है।

कौटिल्य-अर्थशास्त्र का हिन्दी भाषान्तर मूल ग्रंथ का शब्दानुवाद है। डाक्टर शामशास्त्री के आंग्लभाषा के भाषान्तर को संमुख रखकर यह अनुवाद नहीं किया गया। प्राचीन ग्रंथ के

दुर्गम स्थानों तथा परिभाषिक शब्दों को पूर्णरूप से सुरक्षित रखने के लिये ग्रंथ में उन्हीं शब्दों का प्रयोग कियागया है और साथ ही कोष्ठ में उनका भाषान्तर दे दियागया है।

इस ग्रंथ को लिखने से पूर्व अर्थ शास्त्र तथा इतिहास पर लग भग बारह ग्रंथ लेखक लिख चुका है जिनकी पृष्ठ संख्या लग भग सात हजार पृष्ठों तक पंहुंचती है। इतना काम कर चुकने पर भी चिरकाल से चित्त में उद्वेग था कि कौटिल्य-अर्थ शास्त्र का हिन्दी भाषान्तर प्रकाशित होना चाहिये। परन्तु साथ ही वह भाषान्तर ऐसा होना चाहिये कि अन्वेषण तथा संशोधन के काम में लगे लोगों को पूर्णरूप से सहायता मिल सके। मोतीलाल बनारसी दास की फर्म के सच्चे तथा उदारता पूर्ण व्यवहार ने लेखक को इस आवश्यक काम के समाप्त करने में पूर्ण सहायता पंहुंचायी और गुरुकुल कांगड़ी में पन्द्रह वर्ष तक संस्कृत पढ़ने के कारण लेखक इस काम को हाथ में लेने के लिये योग्य होसका। दोनों ही संस्थाओं के लिये लेखक कृतज्ञ है।

अर्थ शास्त्र संबंधी महत्व पूर्ण बारह ग्रंथों के लिखने के बाद लेखक ने जर्मनी इंग्लैड आदि देशों में जाकर विशेष अध्ययन करने के लिये उद्योग किया। इस उद्योग में श्री पूज्य डाक्टर प्राण जीवन मेहता तथा घनश्याम दास जी बिरला की उदारता ने बड़ी भारी सहायता पहुंचायी। इधर मोतीलाल बनारसी दास के सत्य पूर्ण व्यवहार ने कौटिल्य अर्थशास्त्र की हिन्दी भाषान्तर रूपी मेरी अभिलाषा को पूर्ण करादिया। हिन्दी पाठकों की अब तक मैंने जो सेवा की है, वह इतनी अपर्याप्त तथा तुच्छ है कि मैंने योरुप प्रस्थान के लिये तय्यारी की और इसी लिये मातृभाषा के अर्थशास्त्र संबंधी साहित्य को किसी तरह पूरा करसकूं। इसी ग्रंथ की समाप्ति के साथ ही मैं मातृभूमि तथा हिन्दी पाठकों से पांच साल के लिये विदाई मांगता हूं।

२०३. हेलीनाम बनारस |
१. २. २३— |

प्राणनाथ—

प्रस्तावना !

कौटिल्य अर्थशास्त्र का कौन लेखक है ? उसका क्या जीवन वृत्तान्त है ? उसने क्या काम किया ? कहां का रहने वाला था ? इत्यादि बातों का पूर्ण रूप से हमको ज्ञान नहीं। ग्रंथ में लेखक अपना नाम कौटिल्य देता है। ग्रंथ के अंत में उसने लिखा है कि :—

येन शास्त्रं च शस्त्रं च नन्दराजगताच भूः ।
अमर्षेणोद्धृतान्याशु तेन शास्त्रमिदं कृतम् ॥

अर्थात् इस ग्रंथ को उसने लिखा है जिसने कि शास्त्र, शस्त्र तथा नन्दराजा द्वारा शासित पृथ्वी का एक साथ उद्धार किया। नन्दराजा के नाश के संबंध में विष्णु पुराण में लिखा है कि :—

महापद्मः । तत्पुत्राश्चैकं वर्षशतमवनतीपतयो भविष्यंति । नवैव । तान्नन्दान्कौटिल्यो ब्राह्मणस्समुद्धरिष्यति । तेषामभावे मौर्य्याश्च पृथिवीं भोक्ष्यंति । कौटिल्य एव चन्द्रगुप्तं राज्येऽभिषेक्ष्यति । तस्यापि पुत्रो बिन्दुसारो भविष्यति । तस्याप्य शोकवर्धनः ॥

अर्थात् । महापद्म तथा उसके नौ लड़के १०० साल तक राज्य करेंगे उन नन्दों का कौटिल्य नामक ब्राह्मण नाश करेगा। उनके न रहने पर मौर्य्य पृथ्वी का उपभोग करेंगे। कौटिल्य ही चन्द्रगुप्त को राज्य पर बैठावेगा। उसका पुत्र बिन्दुसार होगा। बिन्दुसार का पुत्र अशोकवर्धन होगा।

शिलालेख संबंधी प्रमाणों से मालूम पड़ा है कि चन्द्रगुप्त मौर्य्य ३२१ बी. सी. और अशोकवर्धन २६६ बी. सी. में राज्य पर बैठा। इसी से स्पष्ट है कि कौटिल्य ने इस ग्रंथ को ३२१ बी. सी. से ३०० बी. सी. के बीच में लिखा।

अर्थशास्त्र का लेखक वही कौटिल्य है जिसने चन्द्रगुप्त को राज्य पर बैठाया इसको कामन्दकनीतिसार के लेखक ने भी पुष्ट किया है। दृष्टान्त स्वरूप वह लिखता है कि:—

यस्याभिचारवज्रेण वज्रज्वलनतेजसः।
पपात मूलतः श्रीमान् सुपर्वानन्दपर्वतः ॥ ४ ॥
एकाकी मंत्रशक्त्या यः शक्त्या शक्तिधरोपमः।
आजहार नृचंद्राय चन्द्रगुप्ताय मेदिनीम् ॥ ५ ॥
नीतिशास्त्रामृतं श्रीमानर्थशास्त्रमहोदधेः।
समुद्दध्रे नमस्तस्मै विष्णुगुप्ताय वेधसे ॥ ६ ॥
दर्शनात्तस्य सुदृशो विद्यानां पारदृश्वनः।
यत्किञ्चिदुपदेक्ष्यामः राजविद्याविदंमतम् ॥ ७ ॥

अर्थात् "कामन्दकनीति उसी विद्वान् के ग्रंथ के आधार पर लिखी गई है जिसके वज्र से पर्वत की तरह स्थिर नन्द जड़ से उखड़ गया। जिसने चन्द्रगुप्त को पृथ्वी का राजा बनाया। जिसने अर्थशास्त्र रूपी समुद्र में से नीतिशास्त्र रूपी अमृत को निकाला। उसी विष्णुगुप्त को नमस्कार है"

चौथी सदी में जो हिन्दू लोग जावा में जाकर बसे अपने साथ कामन्दक नीति को लेते गये। महाभारत के बाद इसी ग्रंथ को वह सब से अधिक महत्व देते हैं। कामन्दक सदृश ही दंडी ने भी अर्थशास्त्र के लेखक का नाम विष्णु गुप्त दिया है। वह लिखता है कि:—

अधीष्व तावद्दण्डनीतिम्। इयमिदानीमाचार्य्यविष्णुगुप्तेन मौर्य्यार्थे षड्भिः श्लोकसहस्रैः संक्षिप्ता। सैवेयमधीत्य सम्यगनुष्ठीयमाना यथोक्तकार्य्यक्षमेति।

अर्थात। "दंडनीति को पढ़ो। आचार्य्य विष्णु गुप्तने मौर्य्य के लिये ६००० श्लोकों में संक्षेप से इस ग्रंथ को लिखा है। यदि वह उत्तम विधिपर पढ़ी जाय तो उससे यथेष्ट फल मिले"। इसप्रमाण के अतिरिक्त सबसे बड़ा प्रमाण तो यह है कि दंडीने जिन जिन

बातों पर चाणक्य का हास्य किया है वह सब के सब वाक्य ज्यों के त्यों अर्थशास्त्र में मिलते हैं *

दंडी के सदृश ही बाणने भी लिखा है कि:—

किं वा तेषां सांप्रतं येषामतिनृशंस प्रयोपदेशे निर्घृणं कौटिल्य शास्त्रं प्रमाणं। अभिचारक्रिया क्रूरैकप्रकृतयः। पुरोधसो गुरवः। परातिसंधान परा मंत्रिणः उपदेष्टारः। नरपतिसहस्रो ज्झितायां लक्ष्म्यामासक्तिः। मरणात्मकेषु शास्त्रेष्वभि योगः। सहजप्रमार्द्र हृदयानुरक्ता भ्रातर उच्छेद्याः॥

अर्थात्—उनलोगों के लिये क्या कहा जाय। जो कि घृणित घृणित कार्य्य को ठीक बताने वाले कौटिल्य अर्थशास्त्र को प्रमाण मानते हैं। जिनकी प्रकृतियां माया तथा योग वामन संबंधी कामों के करने के कारण क्रूर हैं। जिनके गुरु पुरोहित और

---

*१. "इयत ओदनस्यपाकायैतावदिन्धनम्"।	१. काष्ठ पञ्चविंशति पल तण्डुलप्रस्थ साधनम्"। अधि. २ अध्या. १६
२. "कृत्स्नमायव्ययजातमह्नः प्रथमेऽष्टमे भागे श्रोतव्यम्"।	२. "दिवसस्याष्ट मे भागे रक्षाविधान-मायव्ययौ च शृणुयात्" अधि. १ अध्या. १९
३. "चत्वारिंशच्चाणक्योपदिष्टाना हरणो-पायान् महस्रधाऽऽत्मबुद्धयैव विकल्प-यितारः"।	३. "तेषां हरणोपायाश्चत्वारिंशत्...—" अधि. २ अध्याय, ८
४. द्वितीये ऽन्योन्यं विवदमानानां तृतीये स्नातुं भोक्तुं चतुर्थे हिरण्य प्रति-ग्रहाय"।	४. द्वितीये पौरजानपदानां कार्याणि पश्येत् तृतीये स्नान भोजनं सेवेत, स्वाध्यायं च कुर्वीत चतुर्थे हिरण्य प्रतिग्रहमध्यक्षांश्च कुर्वीत" अधि. १ अध्याय १६
५. "भुक्तस्य यावदन्धःपरिणामस्तावदस्य-विषभयं न शाम्यत्येव"। दश कुमारचरितम्॥	५. अग्नेर्ज्वालाधूम नीलता: इति विष युक्त लिङ्गानि" अधि. १ अध्या. २०

सलाह कार ऐसे मन्त्री हैं जो कि दूसरे को धोखा देना ही ठीक समझते हैं। जिनके लिये हजारों राजाओं से परित्यक्त लक्ष्मी ही सबकुछ है। जो कि मरणात्यक्त शास्त्रों का प्रयोग करते है। तथा भाई तक को मारना पसन्द करते हैं।

पंचतंत्र के लेखकने लिखा है कि:—

ततो धर्म्मशास्त्राणि मन्वादीनि। अर्थशास्त्राणि चाणक्यादीनि। कामशास्त्राणि वात्स्यायनादीनि॥

अर्थात् धर्म्मशास्त्र से तात्पर्य्य मन्वादि, अर्थशास्त्र से तात्पर्य्य चाणक्यादि और काम शास्त्र से तात्पार्य्य वात्स्यायनादि-से है। इससे भी यही स्पष्ट है कि अर्थशास्त्र का पर्य्याप्त अधिक प्राचीन हैं। वात्स्यायन ने काम सूत्र लिखते समय अर्थशास्त्र को ही अपना पथदर्शक नियत किया। यही कारण है कि उसका प्रकरण विभाग अर्थ शास्त्र से मिलता है। *

* १. कामसूत्र मिदमर्गा[?]म् तस्यायं प्रकरणाधिकरण समुद्देशः।.........विद्या समुद्देशः औपनिषदिकम् १–१	इदमर्थशास्त्रकृतम् तस्यायं प्रकरणाधिकरण समुद्देशः। विद्यासमुद्देशः......... औपनिषदिकम् १–१
२. पितृपैतामह वश्य इति मित्रसम्पत् १–५	पितृपैतामहम् वश्यम् इति मित्रसम्पत् ६–१
३. कामोपधाशुद्धास्त्रियो ऽन्तःपुरे स्थापयेदित्याचार्याः ५–६	कामोपधाशुद्धान बाह्याभ्यन्तर विहार रक्षासु १–१०
४. इतस्ततश्च स्वयमेवापकृष्योपजपति से- दूत्यागुणानपेक्षी चलबुद्धिरन्वेष्यः ६–४	स्वदोषेण गतागतो गुणप्रभयोः परित्य- क्याकारणाद्गताभ्यागत बुद्धिरन्वेष्यः ५–६
५. अर्थो धर्मः कामः इत्ययं त्रिवर्गः। अनर्थो ऽधर्मो द्वेष इत्यनर्थ त्रिवर्गः ६–६	अर्थो धर्मः कामइत्यर्थत्रिवर्गः। अनर्थो ऽधर्मशोक ऽनर्थ त्रिवर्गः ६–७
६. अर्थोऽर्थानुबन्धः अर्थोनिरनुबन्धः अर्थोऽनर्थानुबन्धः अनर्थोऽर्थानुबन्धः अनर्थोनिरनुबन्धः अनर्थोऽनर्थानुबन्धः अनर्थोऽनर्थ इतिसंशयः धर्मोऽधर्म इतिसंशयः कामोऽद्वेष इतिसंशयः ६–६	अर्थोऽर्थानुबन्धः अर्थोनिरनुबन्धः अर्थोऽनर्थानुबन्धः अनर्थोऽर्थानुबन्धः अनर्थोनिरनुबन्धः अनर्थोऽनर्थानुबन्धः अनर्थोऽनर्थइतिसंशयः धर्मोऽधर्म इतिसंशयः कामश्शोक इतिसंशय त्रिवर्गः ९–७

रघुवंश के कुछ एक वाक्यों की व्याख्या में मल्लिनाथ ने कौटिल्य अर्थ शास्त्र का सहारा लिया *कालीदास ने शिकार के पक्ष में उन्ही युक्तियों को दिया है जो कि कौटिल्य ने अपने अर्थ शास्त्र में दी है †

†१. भूतपूर्वमभूतपूर्वं वा जनपदं परदेश प्रवाहेन स्वदेशाभिष्यन्दवमनेन वा-निवेशयेत्
रघु. १५; २९ कुमाइ. ६, ७२.

२. कार्याणां नियोगविकल्पसमुच्चया भवन्ति । अनेनैवोपायेन ना-न्येनेति नियोग: । अनेन वान्येन वेतिविकल्प: अनेन चेति समुच्चय:
रघु. १७-४९

३. क्षीणा: प्रकृतयो लोभं लुब्धायान्ति विरागताम् । विरक्ता यान्त्यमित्रं वा भर्तारं घ्रतिवाक्यम्
रघु. १२. ५५

४. समज्यायोभ्यां संदधीतहीन विगृह्णीयात्
रघु. १७, ५६

५. मन्त्रप्रभावोत्साह शक्तिभि: परान्सन्द-ध्यात्
१७-७६

६. दुर्बलोबलवत्सेवी विरुद्धाच्छङ्किताादि-भि: । वर्तेत दण्डोपनतो भर्तयेवम-वस्थित:
१७-८६

७. धर्माधर्मौ त्रय्यां मर्थानर्थौ वार्तायांन यानयौ दण्डनीत्या मीति
रघु. १८; ५०

†. मेदश्छेद कृशोदरं लघु भवत्युत्थान योग्यं वपु: । सत्त्वानामपि लक्ष्यते विकृतिमच्चित्तंभयक्रोधयो: । उत्कर्ष स्स च धन्विनां यदिलवस्सिद्ध्यन्ति लक्ष्ये चले मिथ्याहि व्यसनं वदन्ति मृगयामीदृविनोद: कुत: ।
अभि. शाकु. २; ५

१. भूतपूर्वमभूतपूर्वं वा जनपदं परदेशा पवाहनेन स्वदेशाभिष्यन्द वस नेन वा निवेशयेत्
अर्थ. २; १

२. आपदां नियोगविकल्पसमुच्चया भवन्ति। अनेनैवोपायेन नान्येमेति नियोग: । अनेन वान्येन वेति विकल्प: । अनेना न्येन चेति समुच्चय:
अर्थ शास्त्र १०; ७

३. क्षीणा: प्रकृतयो लोभं लुब्धा यान्ति पिरागताम् । विरक्तापान्त मित्रं वा भर्तारंघ्नन्ति वास्वयम्
अर्थ शास्त्र १७; ५५

४. समज्यायोभ्यां संदधीत हीनेन विगृ-ह्णीयात्
अर्थ. ७; ३

५. उत्साहप्रभाव मन्त्र शक्तीनामुत्तरो-त्तराधिकोऽसिसंधत्ते
९; १

६. संयुतबलवत्सेवी विरुद्ध: शङ्कितादिभि: वर्तेतदण्डोपनतो भर्तर्येव मवस्थित: ।
७-१५

७. धर्माधर्मौ त्रययां अर्थानर्थौवार्तायां नयानयौ दण्डनीत्याम्
अर्थ. १; २

मृगयायांतुश्लेष्म पित्तमेदस्वेदना-शश्चले स्थिरे च काये लक्ष्यपरिचय: कोपस्थाने हितेषु च मृगाणां चित्त ज्ञानं अनित्ययानं चेति
अ° ८; ३

इसप्रकार स्पष्ट है कि कौटिल्य का अर्थशास्त्र मल्लिनाथ के समय तक प्रचलित था। कौटिल्य तथा विष्णुगुप्त एक ही व्यक्ति के नाम है। और यह वही मनुष्य है जिसने नन्दों को नष्ट कर चन्द्र गुप्तको राज्य पर बैठाया। हेमचन्द्र १ यादव प्रकाश कृत वैजयंती २ तथा भोजराज कृत नाम मालिका ३ से यह मालूम पड़ता है कि कौटिल्य तथा विष्णु गुप्त का तीसरा नाम चाणक्य है.

नान्दिसूत्र में भी यही लिखा है कि चाणक्य ने कौटिल्य नामक ग्रंथ बनाया। इसके अतिरिक्त एक और सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि मेगस्थनीज़ ने भारत की सामाजिक तथा राजनैतिक अवस्था का जो वर्णन किया है वह कौटिल्य के अर्थशास्त्र से मिलता है। इसपर नन्दलालडे ने अपनी "एशियन इंडियन हिन्दू पालिटी" नामक पुस्तक में उत्तम विधि पर प्रकाश डाला है।

कौटिल्य की लेखशैली आपस्तंब बौधायन आदि धर्म्मसूत्र लेखकों से मिलती है। कौटिल्य के सैकड़ों शब्द हैं जिनका संस्कृत के ग्रंथ में बहुत कम प्रयोग मिलता है। दृष्टान्त स्वरूप:—

युक्त	उद्यानपद्री
उपयुक्त	कर्काट कश्रृंगी
तत्पुरुष	काकपद्री
परिग्र	प्रदर

---

१. वात्स्यायनो मल्लनागः कौटिल्यश्चणकात्मजः।
द्रामिलः पक्षिलः स्वामी विष्णुगुप्तो ऽगुलश्चसः॥
हेम चन्द्र।

२. वात्स्यायनस्तु कौटिल्यो विष्णुगुप्तो वराणकः।
द्रामिलः पक्षिलस्स्वामी मल्लनागो ऽङ्गुलोपिच।
यादवप्रकाश—वैजयंती।

३. कात्यायनो वररुचि मेधाजित्च पुनर्वसुः
कात्यायनस्तु कौटिल्यो विष्णुगुप्तो वराणकः
द्राविलः [illegible] स्वामी मल्लनागो ऽङ्गुलोपिच।
भोजराज - नाम मालिका

व्याजि	दढ़क
रूपिक	असह्य
पारीक्षिक	पारिपतन्तक
परोक्त	स्थूलकर्ण
निवेशकाल	अभिसृत
उच्छुल्क	परिसृत
औपनिषदिक	अतिसृत
सर्वज्ञस्थापन	अपसृत
रोचन्ते	उन्मंत्री
चातुर्थ्यअभागिकाः	अवधान
नस्यकर्म	वालि
चातुराश्रिकः	गोमूत्रिकामंडल
दैवतसंयोगख्यापन	प्रकीर्णिका
शकट	व्यावृत्तपृष्ठ
सत्र	अनुवंश
स्तम्भवाट	अग्रभग्नरक्षा
उदकचरण	पार्श्वभग्नरक्षा
रात्रिचरण	पृष्ठभग्नरक्षा
आयुक्त	भग्नानुयात
सत्री	प्रभंजन
परिव्राजिका	अनुपात
चक्रचर	
चक्रान्त	
अर्थचर	

कौटिल्य का अर्थशास्त्र याज्ञवल्क्य स्मृति से प्राचीन है कौटिल्य ने ऐसी बहुत सी बातें दी हैं जोकि पौराणिक काल के हिन्दुओं के विचारों के प्रतिकूल हैं। कौटिल्य के समय के—अत्याचारपूर्ण राज्यकर, अन्तःपुर के दोष, अमीरों को मरवाकर धन लूटना, मनुष्यों की गणना, धार्मिककर, सांयात्रिककर, मन्दिरों की संपत्ति को लूटना, पशुओं को मारना, बेईमानी से भरी संधियां, कूटयुद्ध, खतरनाक धूओं का प्रयोग, चुपे चुपे लोगों को जहर

देना—आदि कार्य्य बौद्धों के समय में पसन्द नहीं किये गए। यही कारण है कि याज्ञवल्क्य स्मृति में इन बातों का उल्लेख नहीं मिलता। इसी प्रकार विवाह संबंध का भंग होना, स्त्रियों का किसी दूसरे पुरुष से पूर्वपति के रहते हुए भी विवाह कर लेना, शूद्रा लड़कियों के साथ ब्राह्मणों का विवाह करना, मांस खाना, शराब पीना तथा युद्ध करना भी ईस्वीसदी के प्रारम्भ में भारत के अन्दर प्रचलित नहीं रहा। जादूगरी टोना टुटका आदि भी किसी अंश तक कम होगया।

कौटिल्य के समय की जो जो बातें चिरकाल तक चलती रहीं उनको उन्हीं शब्दों में याज्ञवल्क्य स्मृति में लिख दिया गया। दृष्टान्त स्वरूप :—

कौटिल्य अर्थ शास्त्र।	याज्ञवल्क्यस्मृति।
भ्रातृभार्य्यां हस्तेन लंघयतो। संदिष्टमर्थमप्रयच्छतो। समुद्रगृह मुद्भिन्दतः॥ [कौ. पृ. १९८.]	भ्रातृभार्य्याप्रहारदः। संदिष्टस्याप्रदाता च। समुद्रगृहभेदकृत्॥ [या. २. २३२.]
पुरुषं बंधनीयं बध्नतो। बन्धयतो बंधं वा मोक्षयतो। बालमप्राप्तव्यवहारं बध्नतो। बन्धयतो वा साहसदंडः। [कौ. पृ. १९९]	अबन्ध्यं यश्च बध्नाति। बद्धयश्च प्रमुञ्चति। अप्राप्तव्यवहारं च॥ सदाप्यो दममुत्तमम्॥ [या. २. श्लो. २४३.
छिनेत्रभेदिनः राजाद्विष्टमादेशतो शूद्रस्य ब्राह्मणवादिनो अप्टशतो दंडः। [कौ. पृ. २२७.]	छिनत्रभेदिनो राजाद्विष्टादेशकृत स्तथा। विप्रत्वेनच्च शूद्रस्य जीवतोऽष्ट गुणतोदमः॥ [याज्ञ. २। ३०४.]
रूपाजीवायाः प्रसह्योपभोगे द्वादशपणो दंडः। बहूनामेकाम धिचरतां पृथक् चतुर्विंशति पणो दंडः॥ [कौटि. द्वितीय सं.। पृ. २३९.]	प्रसह्य दास्याभिगमे दंडो दश पणः स्मृतः। बहूनां यद्यकामासौ चतुर्विंशतिकः पृथक्। [याज्ञ. २. २९१]

स्वदेशग्रामयोः पूर्वमध्यमंजाति संधयोः। आक्रोशाद्देव चैत्यानां उतमं दंडमर्हति।
[कौ. पृ. १९४.]

त्रैविद्यनृपदेवानां क्षेप उत्तम साहसः। मध्यमो जातिपूगानां प्रथमो ग्राम-देशयोः॥
[या. स्मृ. २। २११]

याज्ञवल्क्य के सदृश सोमदेव सूरी ने कौटिलीय अर्थशास्त्र को सामने रखकर नीतिवाक्यामृत लिखा। सोमदेव सूरी राजा यशोधर के समय में विद्यमान था। उसने लिखा है किः—

श्रूयते हि किल चाणक्यस्तीक्ष्णदूतप्रयोगेणैकं नन्दंजघानेति।
[नीति. १३. पृ. ५२.]

अर्थात् सुना जाता है कि चाणक्य ने तीक्ष्णों तथा दूतों के सहारे नन्द को मारडाला। चाणक्य के अर्थ शास्त्र तथा सोमदेव के नीतिवाक्यामृत के निम्नलिखित वाक्य आपस में मिलते हैंः—

नीति वाक्यामृत	कौटिल्य
उद्धृतेष्वपि शस्त्रेषु दूतमुखावै राजानः। तेषामन्त्यावसायिनोऽप्यवध्याः किमंगपुनर्ब्राह्मणाः।	दूतमुखा वै राजान स्त्वं चान्ये च। तस्मादुद्धृतेष्वपि शस्त्रेषु यथोक्तं वक्तारस्तेषामन्तावसायिनोऽप्यवध्याः किमंगपुनर्ब्राह्मणाः
ज्ञानबलं मंत्रशक्तिः। शशकेनेव सिंहव्यापादनमत्र दृष्टान्तः कोशदंड बलं प्रभुशक्तिः। शूद्रक शक्ति कुमारा दृष्टान्तः। विक्रमबलमुत्साहशक्तिः। अत्ररामो-दृष्टान्तः। २९: ११४ ११५	ज्ञानबलं मंत्रशक्तिः। कोशदंड बलं प्रभुशक्तिः। विक्रमबलमुत्साह शक्तिः।
यावत्परेषोपहतं न चेतोऽधिक मपकृत्य सन्धिमुपेयात्। नतप्त लोहमतप्त लोहेनसन्धत्त तेजो-हि सन्धानकारणम्।	यावन्मात्रमपकुर्यात्तावन्मात्र मस्य प्रत्यपकुर्यात् तेजोहि सन्धान कारणम्। ना तप्तं लोहं लोहे न सन्धत्ते।
समस्य समेनसह विग्रहोऽनिश्चितं मरणं जयेसन्देहः। आमंहि पात्र मामेनाभिहतमुभयतः क्षयमेव करोति। ज्यायसा सह विग्रहो हस्तिना पाद युद्धमिव॥	विगृहीतो हिज्यायसा हस्तिना पाद युद्धमिवाभ्युपैति। समेन चामपात्र मामेनाभिहतमिवोभयतः क्षयं करोति॥

"कौटिल्य का मत है" "कौटिल्य के विचार में तो" इत्यादि वाक्यों से बहुत से योरूपीय विद्वान् समझते हैं कि कौटिल्य अर्थ शास्त्र किसी दूसरे का बनाया हुआ ग्रंथ है। असली में बात यह है कि संस्कृत के प्राचीन लेखक अपनी संमति इसी ढंगपर दिया करते हैं दृष्टान्तस्वरूप वात्स्यायन ने काम सूत्र में लिखा है कि :—

> सा चोपाय प्रतिपत्तिः कामसूत्रादिति वात्स्यायनः।
> उपायपरिज्ञानं च कामसूत्रात्। तेनोपदिश्यमानत्वात्।
> वात्स्यायन इति स्वगोत्रनिमित्ता समाख्या। मल्लनाग इति सांस्कारिकी।

अर्थात् "वात्स्यायन का मत है" कि उपायों का ज्ञान कामसूत्र से होता है। क्यों कि उसकी व्याख्या उसी में है। वात्स्यायन गोत्र का और मल्लनाग असली नाम है।

सारांश यह है कि यह ग्रंथ चन्द्रगुप्त मौर्य्य के प्रसिद्ध मंत्री चाणक्य का लिखा हुआ है। उसी का नाम विष्णु गुप्त तथा कौटिल्य है। इस ग्रंथ का महत्व इसीसे जाना जासकता है कि "भारत के प्राचीन इतिहास" की बहुत सी उलझने इससे सुलझगयीं। संस्कृत साहित्य में यह एक ही ग्रंथ है जो कि प्राचीन भारत की आर्थिक राजनैतिक तथा सामाजिक सभ्यता को विस्तृत रूपसे प्रगट करता है विद्वान् लोगों का ज्यों २ ध्यान इस ओर दिन परदिन बढ़ता जाता है त्यों २ इसका महत्व दिन परदिन बढ़ता जाता है। भारतमें समय आने वाला है जब कि कोई भी राष्ट्रीय या सरकारी संस्था ऐसी न होगी जिसमें यह ग्रंथ पाठ्य पुस्तक न हो शरीर के लिये जैसे भोजन आवश्यक है वैसेही प्राचीन आर्य्यों के रहन सहन को समझने के लिये यह ग्रंथ आवश्यक है लेखक ने ग्रंथ का शब्दानुवाद भी इसी लिये किया है कि इसका ऐतिहासिक महत्व ज्यों त्यों बनारहे। यदि यह कठिन है तो हिन्दी पाठक भी इसकी कठिनाइयों से पूर्ण रूप से परिचित रहें। आशा है कि पाठक गण लेखक के यत्न से लाभ उठाने का प्रयत्न करेंगे।

विषय सूची ।

पृथ्वी के लाभ तथा पालन के सम्बन्ध में पूर्व आचार्यों ने जितने अर्थ शास्त्र लिखे प्रायः उनका संग्रह कर यह एक, अर्थ शास्त्र बनाया गया । उसकी विषय सूची निम्नलिखित है ।

विषय सूची	पृष्ठ संख्या ।
१ अधिकरण विनयाधिकार	१–३६
विद्या—विषयक विचार	१
वृद्ध संयोग	५
इन्द्रिय जय	६
अमात्योत्पत्ति	८
मंत्रि तथा पुरोहित की नियुक्ति	१०
भिन्न २ उपायों से अमात्यों के हृदय की सफाई तथा खोटकी परीक्षा	११
खुफिया पुलिस की नियुक्ति	१३
खुफिया पुलिस का प्रयोग तथा प्रबंध	१४
अपने देश में शत्रुओं के वश में आनेवाले तथा न आने वाले लोगों के द्वारा स्वपक्ष का रक्षण	१७
परदेश में कृत्य तथा अकृत्य पक्षके लोगों को वशमें करना	१६
गुप्त विचार तथा मंत्रणा	२२
दूत का प्रयोग तथा प्रबंध	२५
राज कुमार की रक्षा	२७
बंधन में पड़े राज कुमार का कर्त्तव्य	३०
राजा का प्रबंध तथा कर्त्तव्य	३१
अन्तः पुर का प्रबंध	३४
आत्म रक्षा	३६
२ अधिकरण अध्यक्ष प्रचार	३६–१३४
जनपद—निवेश	३६

भूमि का विभाग	४२
दुर्ग विधान	४४
दुर्ग निवेश	४७
सन्निधाता के कर्त्तव्य	५०
समाहर्ता द्वारा राज्यस्व एकत्रित करना	५२
गाणनिक्य का अक्षपटल में काम	५५
गबन किये गये धनका प्राप्त करना	५८
उपयुक्त परीक्षा	६१
शासनाधिकार	६३
कोश में ग्रहण करणे योग्य रत्नों की परीक्षा	६८
खनिज पदार्थों के व्यवसाय का संचालन	७१
सुवर्णाध्यक्ष का कार्य्य	७६
बिशिखा में सुनारों का काम	८०
कोष्ठागाराध्यक्ष	८४
पण्याध्यक्ष	८८
कुप्याध्यक्ष	९०
आयुधागाराध्यक्ष	९१
तोल माप	९३
देश तथा काल का मापना	९६
शुल्काध्यक्ष	९९
शुल्क व्यवहार	१०१
सूत्राध्यक्ष	१०२
सीताध्यक्ष	१०४
सुराध्यक्ष	१०६
सूनाध्यक्ष	१०९
गणिकाध्यक्ष	११०
नावध्यक्ष	११२
गोअध्यक्ष	११५
अश्वाध्यक्ष	११९
हस्त्यध्यक्ष	१२३

हस्तिप्रचार १२४
रथाध्यक्ष, पत्यध्यक्ष तथा सेनापति का काम १२७
मुद्राध्यक्ष तथा विवीताध्यक्ष १२८
समाहर्ता का प्रबंध तथा खुफिया पुलिस का प्रयोग १२६
नागरक का कार्य्य १३१
३ अधिकरण धर्म्मस्थीय १३५–१८५
व्यवहार का स्थापन तथा विवाद का निर्णय १३५
विवाह १३६
विवाहितों के संबंध में नियम १४१
विवाह विषयक नियम १४४
दाय-विभाग १४७
हिस्सों का बांटना १४६
पुत्र-विभाग १५०
गृह-वास्तुक १५२
वास्तु विक्रय १५४
चारागाह खेत तथा काम का नुकसान १५७
ऋण दान १६०
औपनिधिक १६४
दास-कल्प १६८
श्रम तथा पूंजी का विनियोग १७१
विक्रय क्रय तथा जाकड़ का प्रबंध १७३
दिये हुए धन का ग्रहण, अस्वामिक धन का विक्रय तथा पदार्थों पर स्वत्व १७५
साहस १७८
वाक् पारुष्य १७६
दंड--पारुष्य १८०
द्यूत समाह्वय तथा प्रकीर्णक १८३
४ अधिकरण कंटक शोधन १८५–२१७
कारीगरों की रक्षा १८५
व्यापारियों की रक्षा १८६

दैवी विपत्तियों का उपाय १९१
गूढ़ा जीवियों की रक्षा १९३
सिद्ध के भेस में बदमाशों का पकड़ना १९५
शंका-रूप तथा कर्म के अनुसार १९७
आशु मृतक परीक्षा २००
वाक्य कर्मानुयोग २०२
राजकीय विभागों का संरक्षण २०४
एक अंग काटने का निष्क्रय २०७
शुद्ध तथा चित्र दंड २०९
कन्या प्रकर्म २११
अतिचार दंड २१४
५ अधिकरण योग वृत्त २१७--२३६
दंड विधान २१७
कोश संग्रह २२१
भृत्य भरणीय २२६
राज्य सेवकों का कर्तव्य २२९
समय का ख्याल रखना २३१
राज्य का प्रबंध तथा एकैश्वर्य २३३
६ अधिकरण मंडलयोनि २३६--२४२
प्रकृति के गुण २३६
शान्ति तथा उद्योग २३९
७ अधिकरण षाड्गुण्य २४२--२६५
षाड्गुण्य का उद्देश तथा क्षय, स्थान तथा वृद्धि २४२
संश्रय वृत्ति २४५
सम हीन तथा ज्याय के गुण और हीन की संधि २४७
आसन तथा प्रयान २४९
युद्ध विषयक विचार २५२
साथ मिल कर चढ़ाई तथा संधियां २५६
द्वैधीभाव से संबंध संधि तथा विक्रम २६०
यातव्य तथा अनुग्राह्य मित्र का कर्तव्य २६३

मित्र संधि तथा हिरण्य संधि २६५
भूमि संधि २६९
औपनिवेशक संधि २७१
कर्म संधि २७४
पार्ष्णिग्राह चिंता २७६
हीन शक्ति-पूरण २८०
प्रबल शत्रु के साथ व्यवहार तथा विजित शत्रु का चरित्र २८३
पराजित राजा का व्यवहार २८६
संधिका करना तथा तोड़ना २८८
मध्यम तथा उदासीन मंडल के कार्य २९०
८ अधिकरण व्यसनाधिकारिक २९६–३१५
प्रकृति-व्यसन-वर्ग २९६
राजा तथा राज्य विषयक व्यसनों की चिन्ता ३००
पुरुष व्यसन वर्ग ३०१
पीडनवर्ग, स्तंभवर्ग तथा कोशसंगवर्ग ३०५
बलव्यसन वर्ग तथा मित्रव्यसन वर्ग ३११
९ अधिकरण अभियास्यत्कर्म ३१६–३४२
शक्ति देश काल तथा यात्रा काल ३१६
सेनाका इकट्ठा तथा तैयार करना और दूसरे सेनाके काम ३२०
पश्चात्कोप चिन्ता और बाह्याभ्यंतर प्रकृति कोपका प्रतिकार ३२४
क्षय व्यय तथा लाभ का विमर्श ३२७
बाह्य तथा आभ्यंतर आपत्तियां ३३०
राज्य द्रोहियों तथा शत्रुओं के साथी ३३२
अर्थानर्थसंशय विवेचन तथा उनकी उपाय विकल्पज सिद्धि ३३६
१० अधिकरण सांग्रामिक ३४२–३५७
स्कंधावार-निवेश ३४२
स्कन्धावार का प्रयाण, बलव्यसन, अवस्कंदकाल तथा सैनिक संरक्षण ३४३
कूट युद्ध, स्वसैन्योत्साहन तथा स्वबल तथा अन्यबल का प्रयोग ३४५

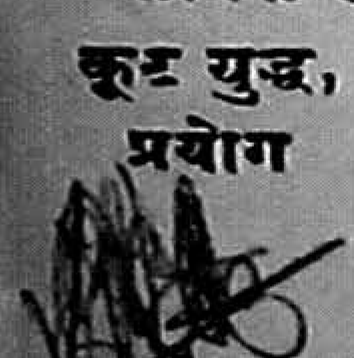

युद्ध भूमि, पदाति अश्व रथ हस्ति आदि के काम ३४९
व्यूहविभाग, बलविभाग तथा चतुरंग सेना द्वारा युद्ध ३५१
दंडभाग मंडल तथा असंहत सम्बन्धी व्यूह और प्रतिव्यूह का स्थापन ३५४

११ अधिकरण संघ वृत्त ३५७-३६१

भेदोपादान तथा उपांशु दंड ३५७

१२ अधिकरण आबलीयम ३६१-३७३

दूत के काम ३६१
मंत्र युद्ध ३६३
सेनापतियों का घात तथा राष्ट्र मंडल का प्रोत्साहन ३६६
शस्त्र, अग्नि तथा रस का प्रयोग । वीवध आसार तथा प्रसार का वध ३६८
योगाति संधान दंडातिसंधान तथा एक विजय ३७०

१३ अधिकरण दुर्ग लंभोपाय ३७३-३८९

उपजाप ३७३
योग वामन ३७५
खुफिया पुलिस का प्रयोग ३७६
किले का घेरना तथा शत्रु का नाश ३८२
विजित प्रदेश में शान्ति स्थापित करना ३८७

१४ अधिकरण औपनिषदिक ३८९-४०२

पर घात प्रयोग ३८९
अद्भुतोत्पादन ३९२
दवाई तथा मन्त्र का प्रयोग ३९५
शत्रु घातक योगों से स्वपक्ष का रक्षण ४०१

१५ अधिकरण तन्त्र युक्ति ४०२-४०७

शास्त्र के प्रतिपादन की युक्ति ४०२
चाणक्य के सूत्र ४०८

ॐ

कौटिल्य अर्थशास्त्र ।

१. प्रकरण ।

विद्या-विषयक विचार ।

(क)

दर्शन शास्त्र (आन्वीक्षकी), तीनों वेद (त्रयी), संपत्ति शास्त्र (वार्ता) तथा राजनीति शास्त्र (दंडनीति) यह चार विद्यायें हैं। मनु संप्रदाय के विद्वान् अंतिम तीन को ही विद्या समझते हैं और आन्वीक्षकी या दर्शन शास्त्र को तीनों वेद का एक भाग प्रगट करते हैं। वृहस्पति मतानुयायी केवल अन्तिम दो ही को विद्या मानते हैं और कहते हैं कि तीनों वेद तो दुनियादार लोगों (लोकयात्रा-दक्ष) के लिये आजीविका का सहारा (संवरण मात्र=संरक्षण का साधन) है। शुक्राचार्य्य के पक्षपातियों के लिये तो राजनीति शास्त्र (दंड-नीति ही एक मात्र विद्या है। शेष संपूर्ण विद्याओं का आरंभ

(१) कौटिल्य ने दुनियादार लोगों के लिये 'लोक यात्रा विद्' शब्द लिखा है। लोक यात्रा का तात्पर्य्य 'किसी तरीके से रुपया पैसा कमाकर जीवन निर्वाह करने वाले लोगों से' है। इसी वाक्य में कौटिल्य ने 'संवरण' शब्द का प्रयोग किया है। डाक्टर शाम शास्त्री ने संवरण का अर्थ 'संक्षेप' (abridgement) किया है परन्तु इस शब्द का दूसरा अर्थ 'आच्छादन' अर्थात् 'अपने आपको बचाना' 'किसी तरीके से अपनी रक्षा करना' है। यहां पर दूसरा अर्थ ही ठीक मालूम पड़ता है।

तथा विकास उसीके साथ बंधा हुआ है। कौटिल्य के विचार में उपरिलिखित चारों ही विद्यायें हैं। क्योंकि विद्या वही है जिससे धर्म तथा अर्थ की सिद्धि है। सांख्य, योग तथा लोकायत (नास्तिक दर्शन) दर्शन शास्त्र के ही अन्तर्गत हैं। तीनों वेदों से धर्म्म तथा अधर्म्म का, संपत्ति शास्त्र से अर्थ तथा अनर्थ का तथा राजनीति शास्त्र से शासन तथा कुशासन का ज्ञान प्राप्त होता है। उपरि लिखित चारों विद्याओं की प्रधानता तथा अप्रधानता (बलाबले) पर भिन्न भिन्न हेतुओं से विचार करने वाला—

दर्शन शास्त्र, सदा से ही सब विद्याओं का प्रकाशक (दीपक), सब कामों का साधक तथा सब धर्म्मों का आश्रय है।

और यही संसार का उपकार करता है, सुख दुःख में बुद्धि को स्थिर रखता है, दूरदर्शिता, स्पष्ट वादिता तथा कर्मण्यताकोबढ़ाताहै।

(ख)

साम ऋक् तथा यजुर्वेद इन तीनों का नाम ही त्रयी (तीनों वेद) है। अथर्ववेद तथा इतिहासवेद का नाम ही वेद है। शीक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्दोविवेक, तथा ज्योतिष ही इनके अंग हैं। त्रयी में निर्दिष्टधर्म्म (प्रगट किया हुआ धर्म्म) चारों वर्णों तथा आश्रमों के लोगों को अपने अपने धर्म्म में स्थिर रखने के कारण

(१) कौटिल्य के "बलाबले चैतासां हेतुभिरन्वीक्षमाणा" में जो बलाबले यह शब्द पड़ा है इसको डाक्टर शाम शास्त्री ने भूल से "दण्डनीत्यां नयानयौ" के साथ समझ कर सम्पूर्ण वाक्य का अर्थ बिगाड़ दिया है। आगे चलकर "एतासां हेतुभिरन्वीक्षमाणा" इनकी......भिन्न भिन्न हेतुओं से विचार करने वाली आन्वीक्षकी इस वाक्य में "इनकी" क्या? यह पता नहीं चलता। पास ही पड़े हुए 'बलाबले' को यदि "इनकी" के साथ लगा दिया जाय तो "इनकी प्रधानता तथा अप्रधानता" को भिन्न भिन्न हेतुओं से विचार करने वाली आन्वीक्षकी ऐसा अर्थ होता है और "एतासां" में पड़ी गड़बड़ी की भूल मिट जाती है। कौटिल्य ने बड़ी सफाई के साथ 'आन्वीक्षकी' का 'बलाबले चैतासां हेतुभिरन्वीक्षमाणा' यह वाक्य लिखकर लक्षण कर दिया है और इसकी विशेषता को इसी शब्द से खोल दिया है।

बहुत ही उपकारी हैं। ब्राह्मणोंका धर्म्म है कि वह पढ़ें, पढ़ावें, हवन करें करावें और दान देवें तथा लेवें। क्षत्रियों का धर्म्म है कि वह पढ़ें, हवन करें, दान दें, शस्त्र तथा सैनिक कार्य्य से जीवन निर्वाह करें तथा प्राणिमात्र की रक्षा करें। इसी प्रकार वैश्य भी पढ़ें तथा हवन करें, और साथ ही कृषि पशुपालन तथा व्यापार का काम करें। शूद्र द्विजों की सेवा, वार्ता, कारीगरी तथा चारण-वादक का काम करें। गृहस्थी अपनी मेहनत पर निर्वाह करें, असगोत्र वाले सजात में व्याह करें, ऋतुगामी हों, देवपितृ, अतिथि तथा भृत्यों के लिये त्याग करते हुए सब के अंत में भोजन करें। ब्रह्मचारी स्वाध्याय, हवन का काम तथा स्नान प्रतिदिन करें, भीख मांगे और जान को हथेली में लिये आचार्य्य की सेवा करें। यदि वह न हों तो उनके लड़के की या उसके साथी की शुश्रूषा करें। वानप्रस्थी लोग ब्रह्मचर्य्य से रहें, जमीन पर सोवें, जटा रखें, मृग चर्म्म धारण करें, अग्निहोत्र तथा स्नान करें और देवपितृ अतिथि की पूजा के साथ साथ जांगलिक फल फूलों पर ही निर्वाह करें। सन्यासी तथा परिव्राजक इन्द्रियों को वशमें रखते हुए किसी भी सांसारिक कामको न करें[१], धन तथा रुपये पैसे को न रखें, समाज में न रहें, एक स्थान में जंगल में न बसें, भिक्षा से निर्वाह करते हुए अन्दर तथा बाहर से पवित्र रहें, किसी की भी हिंसा न करें, सत्यबोलें, निन्दा तथा क्रूरता से दूर रहते हुए अपराधी को क्षमा करें।

अपने धर्म्म पर स्थिर रहने से ही स्वर्ग तथा मुक्ति मिलती है। इससे विपरीत चलने पर लोग वर्णसंकर तथा अधर्म्म से ग्रस्त होकर नाश को प्राप्त होते हैं:—

इसलिये राजा किसी को भी अपने धर्म्म से च्युत न होने दे। जो लोग, आर्यों की मर्यादा का पालन करते हुए, वेदों से रक्षा प्राप्तकर वर्णाश्रम धर्म्म पर चलते हैं तथा उसी

(१) डाक्टर शामशास्त्री ने "अनारंभः" का अर्थ "संपूर्णकामों से पृथक् रहना" किया है। हमारा ख्याल है कि यहां "सांसारिक कामों" से ही तात्पर्य्य है अतः उपरिलिखित भावान्तर में 'सांसारिक" शब्द जोड़दिया गया है।

पर स्थिर रहते हैं वह इस लोक तथा परलोक में सुखी रहते हैं और दिनपर दिन उन्नति करते हैं । उनको अवनति का सामना नहीं करना पड़ता ।

(ग)

कृषि पशुपालन तथा व्यापार वार्ताशास्त्र का विषय है । इसके द्वारा धान्य, पशु, हिरण्य, जांगलिकद्रव्य तथा स्वतंत्र श्रम के मिलने से यह बहुत ही उपकारी विषय है । इसी से कोश दंड के द्वारा राजा स्व-पक्ष तथा परपक्ष को वश में करता है । आन्वीक्षकी, त्रयी तथा वार्ताशास्त्र का योगक्षेम दंड पर निर्भर है । दंड की नीति प्रतिपादन करने वाले शास्त्र का नाम ही दंड नीति है । इससे अनुपलब्ध वस्तु प्राप्त होती है, उपलब्ध वस्तु की रक्षा की जाती है, रक्षित वस्तु बढ़ायी जाती है और बढ़ी हुई वस्तु योग्य योग्य व्यक्तियों में बांटी जाती है । इसी पर संसार में सफलता (लोक यात्रा) प्राप्त करना निर्भर है, इसलिये संसार में सफलता चाहने वालों (लोक यात्रार्थी) को सदा ही उद्यत दंड रहना चाहिये । पुराने आचार्यों का विचार है कि लोगों को काबू में रखने का दंड से बढ़कर कोई दूसरा साधन नहीं है । परन्तु कौटिल्य इससे सहमत नहीं है । कठोर-शासक (तीक्ष्ण दंड) से लोग तंग होते हैं, मृदुशासक (मृदुदंड) की अवहेलना करते हैं और उचितशासक (यथार्ह दंड) की पूजा करते हैं । सोच समझकर दंड का प्रयोग करने पर प्रजा धर्म, अर्थ तथा काम की ओर झुकती है । काम क्रोध या

---

(१) "इसीसे कोशदंडके द्वारा" इसका तात्पर्य है कि राजा वार्ताशास्त्र या संपत्तिशास्त्र में बताये हुए तरीकों से धान्य पशु हिरण्य आदि अनेक वस्तुएँ प्राप्त करता है । इससे 'कोश' अर्थात् खजाना बढ़ाता है और राजा "दंड" शासन कार्य उचित विधिपर चलाने में समर्थ होजाता है और अपने पक्षके लोगों को तथा दुश्मन के साथ मिले हुए लोगों को अपने वश में करने में समर्थ हो जाता है ।

(२) "योग क्षेम" का तात्पर्य सुख समृद्धि तथा कल्याण की वृद्धि ।

(३) दंड शास्त्र का तात्पर्य 'शासन' से है । आगे आए हुए 'उद्यतदंड' का मतलब 'शासनमें सन्नद्ध' है ।

अज्ञान से ऐसा करने पर वानप्रस्थी तथा सन्यासी भी कुपित हो हो जाते हैं, गृहस्थ लोगों का तो कहना ही क्या है? यदि दंड का सर्वथा ही प्रयोग न कियाजाय तो अराजकता तथा मात्स्य न्याय फैलजाय। शासक के अभाव में बली दुर्बलों को सताने लगें। ऐसे ही समय में "गुप्त" प्रभुत्व प्राप्त करता है[1]।

जब राजा चारों वर्णों के लोगों का शासन करता है,
लोग अपने अपने धर्म्म कर्म में लगे हुए अपने अपने
मार्गों पर चलते रहते हैं।

२. प्रकरण
वृद्ध संयोग[2]

यही कारण है कि आन्वीक्षकी, त्रयी तथा वार्ता दंडनीति पर निर्भर हैं। प्राणिमात्र के योग क्षेम का साधक दंड स्वयं विनय[3] पर आश्रित है। विनय कृतक[4] तथा स्वाभाविक के भेद से दो प्रकार है। शिक्षा पात्र को ही योग्य बना सकती है न कि अपात्रको।

(१) ऐसे ही समय में "गुप्त" प्रभुत्व को प्राप्त करता है, इस वाक्य में 'गुप्त' का तात्पर्य्य "चन्द्रगुप्त" से है। कौटिल्य अर्थ शास्त्र चाणक्य का बनाया हुआ है इसके पुष्ट करने में यह वाक्य भी उद्धृत किया जाता है।

(२) वृद्ध संयोग का तात्पर्य्य बुद्धिमान, विद्वान, सदाचारी वृद्ध लोगों के सत्संग से है।

(३) **विनय**। विनय शब्द शिक्षण, अर्थ में प्रायः आता है। प्रकरण वश इसका अर्थ दंगल तथा टूर्नामेंट हो जाता है। शिक्षण की अपेक्षा विनय शब्द बहुत विस्तृत अर्थ में आता है। गदका फटी पटा तलवार चलाना छुरामारना सीखना ड्रिलकरना, आदि सभी प्रकार का ज्ञान विनय शब्द द्वारा प्रगट किया जा सकता है।

(४) कृतक अर्थ कृत्रिम या बनावटी है। जो स्वाभाविक न हो और परिश्रम से बनाया गया हो या प्राप्त किया गया हो उसको "कृतक" कहते हैं।

विद्या से वही योग्य होते हैं जो कि शुश्रूषा, श्रवण, ग्रहण, धारण, विज्ञान, ऊहापोह (तर्क वितर्क) में विवेक तथा बुद्धि से काम लेते हैं। आचार्य्यों के अनुसार ही विद्याओंका नियम तथा विनय है।

मुंडन के बाद लिखना तथा गिनना सीखे। जनेऊ के बाद शिष्ट लोगों से त्रयी तथा आन्वीक्षकी, अध्यक्षों से वार्ता और वक्ता तथा प्रवक्ता लोगों से दंडनीति की शिक्षा ग्रहण करे। सोलह सालतक ब्रह्मचर्य्य धारण करे। इसके बाद गोदान तथा विवाह करे। विनय की वृद्धि के लिये प्रतिदिन विद्धानों का सत्संग करे क्योंकि विनय उन्हींपर निर्भर है। हाथी घोड़ा, रथ तथा हथियार चलाना सवेरे सीखे। दुपहरके बाद इतिहास सुने। इतिहासका तात्पर्य्य पुराण, इतिवृत्र, आख्यायिका, उदाहरण, धर्म्मशास्त्र तथा अर्थशास्त्रसे है। शेष दिनमें नया पाठ पढ़े, पढ़ा हुआ समझे और न समझा हुआ पुनः सुने। सुनने से बुद्धि बढ़ती है। बुद्धिसे पढ़े हुए को काममें लाना आता है और इससे सामर्थ्य युक्त होता है। यही विद्याका लाभ है।

जो राजा पढ़लिखकर प्राणिमात्र के हित में तत्पर होता है और प्रजा का शासन तथा शिक्षण करता है वह चिरकाल तक पृथ्वी का उपभोग करता है।

३. प्रकरण।

इन्द्रिय जय[१]।

(क)

काम, क्रोध, लोभ, मान, मद तथा हर्ष को त्यागकर इन्द्रियों पर विजय प्राप्त कीजाय। इसीसे विद्या तथा विनय उपलब्ध होता है। शास्त्र में कहे गये नियमों के अनुसार चलना अथवा पांचों इन्द्रियोंका अपने अपने विषयों की ओर न झुकने देनेका नाम ही

१ इन्द्रियजय का तात्पर्य इन्द्रियों पर विजय प्राप्तकरना।

इन्द्रिय जय है। संपूर्ण शास्त्र यही प्रति पादन करते हैं। सारे संसार का कोई राजा क्यों न हो यदि वह इसके विरुद्ध आचरण करता है और इन्द्रियों के वशमें है तो वह शीघ्र ही नष्ट होजायगा। दृष्टान्त स्वरूप दांडक्य नामक भोज कामवश ब्राह्मणकन्या पर उन्मत्त होकर राष्ट्र तथा वन्धु के सहित नाश को प्राप्त हुआ। वैदेह कराल की भी यही दशा हुई। जनमेजय गुस्से में आकर ब्राह्मणोंपराबिगड़ा और ताल जङ्घ भृगुओं पर। ऐल लोभ में आकर चारों वर्णों को सताने लगा और यही बात सौवीर अजविन्दु न की। रावण अभिमान में आकर दूसरेकी औरत को और दुर्योधन राज्य के कुछ भागको देनेपर तैय्यार न हुआ। डंभ का पुत्र तथा हैहय वंशी अर्जुन सबलोगों का अपमान करता था। खुशी में आकर वातापि अगस्त्य पर और वृष्णिसंघ द्वैपायन पर टूटपड़ा।

यह तथा अन्य बहुत से राजा छओं शत्रुओं के वशमें होकर राष्ट्र तथा वन्धुके सहित नष्ट हुए। जितेन्द्रिय परशुराम तथा नाभाग अंबरीष छःओं शत्रुओं को वशमें कर चिरकाल तक राज्य करते रहे।

(ग)

काम क्रोध आदि छःओं शत्रुओं का परित्याग कर इन्द्रियों पर विजय प्राप्तकरे। वृद्ध लोगों के सत्संग द्वारा बुद्धि को बढ़ावे और खुफिया पुलिस द्वारा प्रजा पर दृष्टि (चक्षु) रखे। कार्य्य शील होकर जनता का कल्याण करे। नये नये कामों के करनेकी आज्ञा देकर अपने कर्तव्य का पालन करे। विद्या तथा उपदेश के द्वारा शिक्षा (विनय) ग्रहण करे। देशकी संपत्ति तथा समृद्धि बढ़ाकर लोकप्रिय बने। दूसरों का हित करने में ही अपनी वृत्ति रखे।

इस ढंग पर इन्द्रियों को वशमें रखता हुआ परायी स्त्री तथा संपत्तिपर नजर तक न डाले। और न किसी को तंग ही करे। स्वप्न में भी भोगविलास का न सोचे। झूठ बोलने और भड़कीले कपड़ों के पहिननेसे अलग रहे और ऐसा कोई भी काम न करे जिससे नुकसान उठाना पड़े। क्योंकि ऐसे बहुतसे सांसारिक व्यवहार हैं। जिनका परिणाम पाप तथा हानि है। इस लिये इन्हीं इच्छाओं को पूराकरे जो कि धर्म्म तथा अर्थ के अनुकूल हों। दुःख तथा

कष्ट में जीवन न व्यतीत करे। या धर्म्म, अर्थ तथा काम का समान रूप से सेवन करे। इनमेंसे किसी का भी यदि अधिक सेवन किया जाय तो अपने तथा दूसरे को कष्ट पहुंचता है। कौटिल्य का मत है कि इनमें अर्थ ही प्रधान है। धर्म्म तथा काम उसीपर निर्भर हैं। आचार्य्य तथा अमात्य उसको मर्य्यादा-भंग करने से रोकते रहें। बुरी बातों में न फंसने दें। यदि वह एकान्त में प्रमाद करे तो उसको घंटे बजाकर (छायानालिका प्रतोदेन) काम पर संन्नद्ध करें।

एकपहिये की गाड़ी की तरह राजा का काम सहायता बिना नहीं चलता। इसलिये राजाको चाहिये कि वह बहुत से मन्त्री नियत करे और उनकी सम्मति सुना करे।

४. प्रकरण
अमात्योत्पत्ति[१]

भारद्वाज का मत है कि सहाध्यायियों को ही अमात्य बनाया जाय। क्योंकि उनकी विश्वासपात्रता (शौच) तथा सामर्थ्य का राजा को पहिले से ही अनुभव होता है। वह उनपर विश्वास भी कर सकता है। विशालाक्ष इसको ठीक नहीं समझते। उनका ख्याल है कि एक साथ खेले होने से यह लोग उसका अपमान करते हैं। इसलिये उनको अमात्य बनाया जाय जो कि गुप्त कामों में उसका साथ देते रहे हों। समान शील व्यसन होने के कारण वह लोग गुप्त बातों के खुलने के भयसे राजा का अपमान नहीं करते। पराशर के विचार में तो यह दोनों ओर एक जैसा साधारण दोष है। यह भी तो संभव है कि राजा अपनी गुप्त बातों के खुलने के भय से उन की कठ पुतली बनजाय। जैसा वह कहें वैसा करना शुरू करे। क्यों कि:—

---

१ अमात्योत्पत्ति का तात्पर्य्य "अमात्य की नियुक्ति" से है।

राजा जिन जिन लोगों पर अपनी जितनी गुप्त बातें खोलता है, उतना ही शक्ति से हीन होकर उनके वशमें आजाता है।

जो लोग उसको ऐसी विपत्तियों में बचावें जिनमें मौत का खतरा हो उन्ही को अमात्य नियुक्त किया जाय। क्यों कि उनके अनुराग की परीक्षा वह पहिले से ही करचुकता है। पिशुन का ख्याल है कि यह तो भक्ति हुई। इस में बुद्धि तथा योग्यता का कुछ भी संबंध नहीं। अमात्य पद पर उन्हींको नियुक्त कियाजाय जो कि खास खास राजकीय कामों पर नियुक्त होकर अपने काम को विशेष योग्यता के साथ करें। क्योंकि इस ढंग पर उनकी योग्यता तथा बुद्धि की परीक्षा तो होही जती है। कौणपदंत का कहना है कि अमात्यों में और जो गुण चाहियें वह इनमें नहीं होते। जिनके बाप दादा अमात्यपद पर रह चुके हों उन्ही को अमात्य बनायाजाय। अनुभव प्राप्त होने से और चिर कालतक साथ रहने से राजा को कुमार्ग में जाता हुआ देखकर भी यह लोग उसका साथ नहीं छोड़ते। पशुओं में भी यह बात देखी गयी है। गउएं दूसरी गउओं के झुंड में न रहकर अपनेही झुंड में बैठती हैं। वातव्याधि इस विचार के विरुद्ध हैं। वह कहते हैं कि क्रमागत अमात्य उसकी संपूर्ण शक्तियां अपने हाथ में कर राजा की तरह व्यवहार करने लगते हैं। इसीलिये राजनीति को समझने वाले राजा को चाहिये कि सदा नये नये व्यक्तियों को अमात्य बनावे। नये लोग राजा को यम का दूसरा अवतार समझते हुए कभी भी उसकी आज्ञा का अवहेलन नहीं करते। बाहुदंतीपुत्र को यह भी पसंद नहीं है। क्योंकि कोई कितना ही शास्त्र क्यों न पढ़ा हो, जिसने काम नहीं किया कठिन काम पड़ने पर घबड़ा सकता है। इसलिये जो लोग कुलीन, बुद्धिमान्, विश्वासपात्र, वीर तथा राजभक्त हों उनको अमात्यपद पर नियुक्त करे क्योंकि उनमें गुणों की प्रधानता होती है।

कौटिल्य की संमति में सब बातों में यही ठीक है। कार्य्य से ही पुरुष की शक्ति प्रतीत होती है। सामर्थ्य को आंखों के सामने रखते हुए:—

प्रत्येक अमात्य की प्रभुत्वशक्ति नियत कर समय स्थान तथा काम के अनुसार उनको भिन्न भिन्न राजकीय कार्य्यों

पर नियुक्त किया जाय । उनको अपना मन्त्री कभी भी न बनाया जाय ।

५. प्रकरण
मंत्री तथा पुरोहित की नियुक्ति ।

एक अमात्य के लिये आवश्यक है कि वह स्वदेशोत्पन्न,कुलीन, समृद्ध, शिक्षित, दूरदर्शी, विवेकपूर्ण, स्मृतिवान्, चतुर, वाक्पटु, गंभीर, प्रगल्भ, समझदार, उत्साही, प्रभावशाली, सहिष्णु, पवित्र, मित्रता के योग्य, दृढ़भक्ति, सुशील, समर्थ, स्वस्थ, गौरवयुक्त, अप्रमादी, अचपल, सर्वप्रिय तथा किसी को भी अपना शत्रु बनाने वाला न हो । जिनमें इसके एक चौथाई या आधे गुण हों उनको मध्यम या निकृष्ट समझना चाहिये । राजा को चाहिये कि वह प्रामाणिक सत्यवादी आप्त लोगों से उनके निवासस्थान तथा आर्थिक स्थिति का, समान विद्यावालों से उनकी योग्यता तथा शास्त्र प्रवेश का, नये नये कामों से उनकी बुद्धि स्मृति तथा चतुरता का,व्याख्यान से उनकी वाक्पटुता,बुद्धि तथा प्रतिभा का,आपत्तियों से उनके उत्साह, प्रभाव तथा क्लेश सहिष्णुता का, व्यवहार से उन की पवित्रता, मित्रता तथा दृढ़भक्ति का, पड़ोसियों से उनके शील, बल, स्वास्थ्य,गौरव, अप्रमाद तथा अचापल्य का, और स्वयं उनकी मीठी वाणी तथा प्रीति (अवैरित्व) का ज्ञान प्राप्त करे । राजा के कार्य्य प्रत्यक्ष तथा परोक्ष भेद से दो प्रकार के हैं । प्रत्यक्ष वह हैं जो कि स्वयं देखे जांय और परोक्ष वह हैं जो कि दूसरों से पूंछे जांय । किये हुए काम से न किये हुए काम का अनुमान करना ही अनुमेय है । एक समय में एक ही काम किया जा सकता है । कामों के अनेक तथा भिन्न भिन्न स्थानों पर होने से परोक्ष कामों को अमात्यों से करवाये ।

ऐसे मनुष्य को पुरोहित नियुक्त किया जाय जो क्रमशः उन्नति करते हुए परिवार में पैदा हुआ हो, सांग वेद, ज्योतिष (दैवशास्त्र, मुहूर्त्त शास्त्र) तथा दंडनीति में पारंगत हो और अथर्ववेद में बताये हुए तरीकों से विघ्नों को शांत करने में समर्थ हो । जैसे आचार्य्य

के पीछे शिष्य, पिता के पीछे पुत्र तथा स्वामी के पीछे भृत्य चलता है वैसे ही पुरोहित के कहने के पीछे राजा चले।

जो राजा, शास्त्रों की आज्ञा रूपी हथियारों से सुसज्जित होकर तथा ब्राह्मणों से उत्तेजना प्राप्त कर मन्त्रियों की सलाह के अनुसार चलता है वह अजेय से अजेय वस्तु को जीत लेता है।

---o---

६. प्रकरण।

भिन्न भिन्न उपायों से अमात्यों के हृदय की सफाई तथा खोट की परीक्षा।

अमात्यों को भिन्न भिन्न राजकीय विभागों पर नियुक्त करने के बाद मंत्री तथा पुरोहित से दोस्ती बनाकर राजा भिन्न भिन्न तरीकों से उनके हृदय की सफाई की परीक्षा ले। बनावटी तौर पर पुरोहित को अछूतों के पढ़ाने तथा हवन कराने के लिये कहे। जब वह निषेध करे तो उसको पुरोहिताई से जुदा कर दे। इसके बाद पुरोहित सत्री लोगों के द्वारा एक एक अमात्य को छिपेरूप से कसम केसाथ कहवाये कि "यह राजा अधार्मिक है। इसके स्थानपर ऐसे ही कुलीन, अकेले ही शासन में समर्थ, कैदमें पड़े, अमुक सामन्त, जंगल स्वामी या समर्थ व्यक्ति को यदि राजा बनाया जाय तो तुमको पसन्द होगा वा नहीं। अन्य लोगों ने इस प्रस्ताव को स्वीकृत किया है"। यदि वह इस प्रस्ताव का समर्थन न करें तो उनको धर्म्म-कसौटी पर खरा उतरा समझा जाय।

सेनापति दिखावे में पदच्युत किया जाकर सत्री लोगों के द्वारा अमात्यों को राजा के नाश करने में धन का प्रलोभन दे और कहे कि "सब को तो यह पसंद है तुम्हारी क्या संमति है"। यदि वह निषेध करें तो उनको "अर्थ परीक्षा" में उत्तीर्ण माना जाय।

अंतःपुर में लब्धविश्वास तथा लब्धप्रतिष्ठ परिव्राजिका (खुफियापुलिस का एक भेद) या संन्यासिन महामात्र लोगों के पास पहुंचे और कहे कि "पटरानी तुमको चाहती है। समागम का संपूर्ण

प्रबन्ध है। धन भी अधिक मिलेगा" । यदि उन्होंने निषेध कर दिया तो उनको काम परीक्षा में पास समझा जाय।

जब कोई अमात्य अन्य अमात्यों को नाव पर सैर करने के लिये बुलावे तो राजा घबड़ाहट तथा उद्वेग दिखाकर उनको कैद करदे । पहिले से ही कैद में रख छोड़ा कापटिक छात्र (खुफिया पुलिस का एक भेद) संपत्ति तथा इज्जत से रहित किये गये उन लोगों को एक एक करके भड़कावे कि 'यह राजा बहुत ही बुरा है। इसको मारकर अन्य किसी को राजा क्यों न बनाइये ? सबको मंजूर है, तुम्हारी क्या मर्जी है ?,,यदि वह राजी न हों तो उनको भय-कसौटी में भी कसा माना जाय।

जो लोग धर्म्म परीक्षा में खरे उतरें उनको धर्म्मस्थीय (दीवानी कचहरी) तथा कंटक शोधन (फौजदारी कचहरी) संबंधी कामों में नियुक्त किया जाय, अर्थ परीक्षा में उत्तीर्ण लोगों को समाहर्ता (टैक्स कलक्टर) तथा सन्निधाता (कोषाध्यक्ष) के पदों पर रखा जाय । काम-परीक्षा में पास हुए लोगों को बाह्य तथा अन्तरीय उद्यानों तथा विलास स्थानों (विहार) का प्रबंध कर्त्ता चुना जाय। इसी प्रकार भय-परीक्षा में जो अच्छे निकलें उनको राजा का शरीर रक्षक तथा समीप वर्त्ती बनाया जाय । जो सभी परीक्षाओं में खरे उतरें और किसी में भी तनिक सी भी आंच न खायें हों उनको मन्त्री और जो सभी परीक्षाओं में कच्चे निकले हों उनको खान, जंगल, हाथी वन तथा तत्संबंधी व्यवसाय का अध्यक्ष नियुक्त किया जाय।

पुराने आचार्यों का मत है कि धर्म्म, अर्थ, काम तथा भय की कसौटी पर खरे उतरे लोगों को भिन्न भिन्न कामों का आमात्य नियत किया जाय। कौटिल्य की संमति है कि अमात्यों की परीक्षा करने के लिये राजा अपना तथा पटरानी का प्रयोग कभी भी न करे। स्वच्छ निर्मल पानी में जहर न मिलावे। क्यों कि बहुत संभव है कि विगड़े का फिर इलाज न हो सके। भिन्न २ उपायों से एक बार चित्त वृत्ति विगड़ी बहुधा फिर नहीं सुधरती। इसलिये किसी बाहरी बातको साधन तथा बहाना बनाकर राजा सत्री लोगों के द्वारा अमात्यों की सफाई तथा खोट की परीक्षा करे।

७. प्रकरण ।

खुफिया पुलिस की नियुक्ति ।

भिन्न भिन्न तरीकों से अमात्यों की परीक्षा लेने के बाद, खुफिया पुलिस का प्रबंध किया जाय। खुफिया पुलिस के १ कापटिक, २ उदास्थित, ३ गृहपतिक, ४ वैदेहक, ५ तापस, ६ सत्री, ७ तीक्ष्ण, ८ रसद तथा ९ भिक्षुकी आदि अनेक विभाग हैं।

१. दूसरों के दोषों को जानने वाले चलते पुरजे विद्यार्थी के भेस में रहने वाले खुफिया का नाम ही कापटिक छात्र है। मन्त्री उसको इज्जत तथा धन से खुश करके कहे कि "तुमको राजाकी और मेरी कसम है। तुम जिस किसी का नुक्सान होता देखो, शीघ्रही मुझको बताओ"।

२. बुद्धिमान् सदाचारी उदासी संन्यासी के भेस में रहने वाले खुफिया का नाम उदास्थित है। वह बहुत से विद्यार्थियों तथा रुपयों को अपने साथ लेकर कृषि पशुपालन तथा व्यापार का काम करे। जो कुछ पैदा हो उससे सबके सब उदासी संन्यासियों के खाने पीने तथा कपड़े लत्ते का प्रबंध करे। नौकरी पर जाने वालों को यह कहकर इधर उधर भेजदे कि "इसी भेस में रहो और राजाका काम करो। तनखाह के समय उपस्थित हो जाना"। सभी उदासी अपने अपने वर्ग के लोगों को इसी ढंग की आज्ञा दें।

३. बुद्धिमान् सदाचारी गरीब तथा बेकार गृहस्थ किसान के भेसमें रहने वाले खुफिया का नाम गृहपतिक है। वह खेती तथा उद्योग धंधों के कामों को करते हुए शेषकाम पूर्ववत् करें।

४. बुद्धिमान् सदाचारी तथा गरीब बनिये के भेस में खुफिया का काम करने वाले लोग वैदेह (व्यापारी) नाम से पुकारे जाते हैं। वह बनियों का काम करते हुए शेष काम पूर्ववत् करें।

५. सिर मुंडे या जटाधारीके भेस में सरकारी काम करने वाले तापस (तपस्वी) कहाते हैं। वह बहुत से सिर मुंडे तथा जटाधारी

शिष्यों को लेकर शहर के पास बस जावें और महीने या दो महीने बाद प्रकाशरूपसे थोड़ा सा शाक तथा एक मुट्ठी जौ खावें। परंतु अप्रकाश रूप से भरपेट खालिया करें। वैदेहक तथा उनके अनुचर उनपर भारी चढ़ावा चढ़ावें। शिष्य लोग कहें कि यह तपस्वी सिद्ध और अलौकिक शक्ति संपन्न हैं। हाथ देकर तथा शिष्य लोगों को इशारा देकर आये हुए कुलीन लोगों को बतावे कि "कौन कौन सा काम किसके हाथ में है? कहां घाटा है? तथा कहां आग लगने की संभावना है। चोरका खतरा है और कौन सा राजा का विरोधी मारा जायगा तथा राजा किन २ आदमियों को पुरस्कार देगा, विदेशमें क्या होगा। यह आज और यह कल होगा और राजा यह करेगा" इत्यादि इत्यादि। सत्री लोग तपस्वी के कहने को प्रमाणों से ठीक प्रकट करें।

उपरि लिखित बातों के साथ साथ वह यह भी प्रकटकरे कि कौन सा मन्त्री किस कामपर बदला जायगा और किस दूरदर्शी बुद्धिमान तथा व्याख्यान दाता व्यक्तिको राजा की ओर से पुरस्कार मिलेगा। मन्त्री लोग, उसकी भविष्यद्वाणी के अनुसार ही लोगों को तनखाह तथा काम देवें। जो लोग किसी कारण से नाराज हैं उनको धन तथा इज्जत से शान्त करें और वे कारण नाराज तथा राजा के अहित करने वाले लोगों को छिपा दंड (तूष्णीं दण्ड) देवें।

धन तथा इज्जत से पूजे गये उपरिलिखित पांचों प्रकार के खुफिया लोग राजकर्मचारियों की सफाई तथा खोट को जानने की कोशिश करते रहें।

८. प्रकरण

खुफियापुलिस का प्रयोग तथा प्रबंध

राज्य से खाना पीना तथा कपड़ा पाने वाले जो अनाथ (६) साधारण विज्ञान (लक्षण?), हाथ देखना (अंग विद्या), मुंह में से गोला तथा आग निकालना (जंभक विद्या), जादूगरी, भिन्न भिन्न आश्रमों

के धर्म बताने के खातिर फलितज्योतिष (अन्तरचक्र), तथा दूसरों के साथ मिलने जुलने संबंधी काम (संसर्ग विद्या) को सीखें वह सत्री नाम से पुकारे जांय । (७) जो शूर निडर (त्यक्तात्मा), तथा रुपये के खातिर हाथी शेर लड़ाने वाले हों उनको तीक्ष्ण तथा (८) जो बन्धु बान्धवों से निःस्नेह (प्रेम रहित), क्रूर तथा आलसी हों उनको रसद (जहर देने वाला) नियत किया जाय। (९) अन्तःपुर में आदर सत्कार पाने वाली, बातूनी, नौकरी तलाश करने वाली दरिद्र विधवा ब्राह्मणी को परिव्राजिका (संन्यासिन के वेषमें खुफिया का काम करने वाली), बनाया जाय और वह महामात्र (राजमन्त्री अमात्य आदि) लोगों के घरों में आया जाया करे । मुंडा (सिर मुंडी औरत) तथा वृषली (दासी के वेषमें खुफिया) के का- भी इसी प्रकार समझने चाहिये। भिन्न भिन्न देशों के फैशन, बोली, कारीगरी, कुलीनों का रहन सहन तथा रीतिरिवाज को पूर्णरूप से जानने वाले, राजभक्त तथा कार्य्यपटु शक्ति शाली लोगों को राजा अपने ही देश में, मन्त्री, पुरोहित, सेनापति, युवराज, ड्योढ़ीदार, अन्तः पुर-रक्षक, कलक्टर, कोषाध्यक्ष, कमिश्नर, हवालदार, नगराध्यक्ष, व्यापाराध्यक्ष, व्यवसायाध्यक्ष, मन्त्री सभा, अध्यक्ष, दंडपाल, दुर्गपाल, सीमारक्षक तथा जंगल रक्षक आदि आदि राज्य कर्मचारियों के देखरेख के लिये खुफिया रूप से नियुक्त करे। यह लोग बाहर कहां आते जाते हैं और किनसे मिलते जुलते हैं इस बात का छाता, अतरदान तथा गुलाब पाश (भृंगार), पंखा, खडाऊं आसन, गाड़ी घोड़ा पकड़ने वाले तीक्ष्ण लोग जांच पड़ताल करते रहें। इन लोगों से जो कुछ समाचार मिले उसको सत्री लोग (खुफिया पुलिस) अपने अपने विभागों (संस्था) में पहुंचा देवें । सूद (दाल बनाने वाला) पाचक (आरालिक), स्नापक (नहवाने वाला), कहार, आस्तरक (बिछौना बिछौने वाला), नाई, प्रसाधक (गुलाब पाश छिड़कने वाला या इतर लगाने वाला), उदक परिचारक (पानी भरने वाला) के रूप में रसद लोग, तथा कुबड़े, बौने किरात (बदसूरत जंगली या काले लोग ?), गूंगे, बहरे, बेवकूफ, तथा अंधे के भेस में नट, नर्तक, गवैइये बजैइये, भांड तथा चारण (प्रशंसा में कविता करने वाले) लोग और खुफिया औरतें उपरि

लिखित राज्याधिकारियों के अन्दरूनी हाल तथा समाचार को जाने और खुफिया भिखमंगियों (भिक्षुकी, के द्वारा अपने विभाग को असली हाल पहुंचा देवें।

भिन्न भिन्न विभागों के प्रबंधकर्त्ता (अन्तेवासी) गुप्त लिपि तथा इशारों से ही खुफिया को इधर उधर भेजें। खुफिया तथा उनके विभाग एक दूसरे को न जानने पावें। जहां खुफिया भिखमंगी की पहुंच न हो वहां भिन्न २ ड्योढीदार आपस में माता पिता का ढोंग रचकर या कारीगारिन, गवैइन तथा दासी गीत, वाद्य (बाजा) वर्त्तन (भांड) गुप्तलिख तथा इशारों से अन्दरूनी समाचार बाहर पहुंचादे या सख्त बीमारी दर्द या पागलपन का बहाना बनाकर या आग लगाकर, जहर देकर चुप्पे से बाहर निकल जांय। तीन विभागों का समाचार यदि एक सदृश हो तो उसको सत्य समझा जाय। परन्तु यदि समाचार बारंबार भिन्न भिन्न मिले तो उससे संबंध रखने वाले खुफिया को तूष्णीं दण्ड (छिपे छिपे पिटवाना मरवाना आदि दंड) दिया जाय या नौकरी से बरखास्त कर दिया जाय। कंटक शोधन प्रकरण में जिन खुफिया लोगों का ज़िक्र है उनको अपनी ओर से तनखाह देकर दुश्मनों के राष्ट्र में बसाया जाय। यदि इस में चोरी से बचाने का मामला हो तो उनको दोनों ओर से तनखाह मिले।

वह लोग, जिनकी स्त्री तथा बाल बच्चों को राजाने अपने आधीन रखा है, दोनों रियासतों से तनखाह पावें। उनको दुश्मन का भेजा हुआ मानकर, उसीके सदृश काम करने वाले लोगों के द्वारा उनके दिलकी सफाई की परीक्षा की जाय। इस प्रकार शत्रु, मित्र तथा साधारण लोगों के पीछे खुफिया पुलिस लगायी जाय। उदासीन लोगों को तथा अट्ठारहवों राजकीय विभागों को (तीर्थ) भी इनसे मुक्त न किया जाय। घर में तथा अन्तःपुरमें, कुबड़े बौने, पाखंडी, नाचरंग आदि जानने वाली औरतें, गूंगे तथा भिन्न भिन्न सूरत शकल वाले म्लेच्छ लोग, किलों के अन्दर बनिये व्यापारी किलों के बाहर सिद्ध तथा तपस्वी, गंवईगांव में किसान सीमा प्रान्त में ग्वाले गड़रिये, जंगल में बनैले, जंगली तथा श्रमण लोग

शत्रु की गति तथा कार्य्य को जानने के लिये खुफिया का काम करें। शत्रु के भेजे गुप्तचरों को स्वराष्ट्र के गुप्त चर पता लगावें। गुप्तचरों तथा खुफिया लोगों को इधर उधर भेजने वाला विभाग प्रकाश्य (अगूढ़) तथा अप्रकाश्य (गूढ़) दो भेद का है। भिन्न भिन्न तरीकों तथा युक्तियों से जिनकी राजभक्ति की परीक्षा की जा चुकी है ऐसे लोगों को शत्रुके गुप्तचरों तथा खुफिया लोगों का पता लगाने के लिये राष्ट्रके अंतमें बसाया जाय।*

९. प्रकरण

अपने देशमें शत्रुओं के वशमें आने वाले तथा न आने वाले लोगों के द्वारा स्वपक्ष का रक्षण।

गुप्तचर विभाग का प्रबंध तथा महामात्यों के पीछे खुफिया का प्रयोग कर चुकने के बाद राजा नागरिकों तथा ग्रामीणों के पीछे

* पिछले वाक्य का भाषान्तर करते हुए डाक्टर शामशास्त्री ने "अकृत्य" का अर्थ "राजद्रोही या दुशमनी का काम करने वाला" (those chiefs whose inimical design has been found out) यह अर्थ किया है। वस्तुतः इस शब्द का अर्थ "राजभक्त" है। कौटिल्य ने "कृत्य" शब्द देशद्रोहियों के लिये और अकृत्य शब्द राजभक्तों के लिय प्रयोग किया है। दृष्टान्त स्वरूप "कृत्य" का तात्पर्य वह आगे चलकर "क्रुद्धलुब्धभीतावमानिन स्तुपरेषां कृत्याः" इस वाक्य से स्पष्ट करता है। कृत्य का अर्थ दुश्मन के काबू में आजाने वाला या जिसपर दुश्मन के षड़यंत्र चल सकें और फेंके जासके। इसी प्रकार "तेषां मुण्डजटिलव्यञ्जनैर्यो यद्भक्तिः कृत्ययपक्षीय" इस में कृत्यपक्षीय का तात्पर्य उन लोगों से है जो कि शत्रु के षड़यंत्र में फंस सकते हों। यही कारण है कि पिछले वाक्य का अर्थ सर्वथा बदलना पड़ा है। आश्चर्य्य की बात है कि डाक्टर शाम शास्त्रीने "लभेत सामदानाभ्यां कृत्यांश्च परभूमिषु, अकृत्यान् भेददंडाभ्यां परदोषांश्च दर्शयेत्" इसमें भी कृत्य तथा अकृत्य शब्दों के अर्थ को न समझकर गड़बड़ करदी है। आपने कृत्य का अर्थ शत्रु राजा के प्रति राजभक्त (Friends of a Foreign King) और अकृत्य का अर्थ भी "शत्रु राजा के प्रति दृढ़ रूप से राजभक्त" [implacable enemies] कर दिया है इस से श्लोक का अर्थ बहुत ही भद्दा हो गया है।

भी उनको लगावे। तीर्थ, सभा, शाला, व्यापारीय व्यावसायिकसंघ (पूग) तथा भीड़ में पहुंचकर खुफिया पुलिस के दो आदमी आपस में झगड़ने लगें और कहें कि—सुनते तो यह हैं कि यह राजा सर्व गुण युक्त है। परंतु हमको तो इसका कोई गुण दिखाई नहीं पड़ता है। यह नागरिकों तथा ग्रामीणों को राज्य दंड तथा टैक्स (कर) से बहुत ही अधिक सताता है। वहां पर जो लोग राजाकी प्रशंसा करें, उनके विरुद्ध दूसरा बोले और उसका भी यह कहकर विरोध किया जाय कि—आपसमें मात्स्य न्याय, या बली दुर्बलन्याय (एक दूसरेको सताना। बली का दुर्बलों को तंग करना) के प्रचलित होने पर लोगों ने वैवस्वत मनु को अपना राजा बनाया। उसको हिस्सेमें धान्य का छटाभाग व्यापारीय द्रव्यका दसवां भाग और सोना देना स्वीकृत किया। उसी को लेकर राजा प्रजा का कल्याण (योगक्षेम) करते हैं। जो लोग टैक्स नहीं देते हैं और राज्यदंड से बचते हैं उनपर प्रजाके अहितकरने का पाप चढ़ता है। यही कारण है कि जंगल में रहने वाले तपस्वी लोगभी अवशिष्ट तथा बचे खुचे अन्न (उञ्छ) का छठा भाग यह सोचकर राजाको देते हैं कि यह उसीका भाग है जो कि हमारी रक्षा करता है। राजा इन्द्र तथा यम के दूसरेरूप हैं। इनकी प्रसन्नता तथा अप्रसन्नता प्रत्यक्ष अनुभव की जा सकती है। जो लोग राजाका अपमान करते हैं उनको ईश्वरभी दंड देता है। इसलिये राजाओंका अपमान न करना चाहिये। इसढंगपर खुफिया पुलिस के लोग छोटे मोटे लोगों को राज-विद्रोह से रोकें तथा राष्ट्रमें जो किंवदन्तियां प्रचलित हों उनको जानें।

जो लोग राजा के धान्य पशु तथा संपत्ति की रक्षा करते हैं, या उसको इन चीजों के द्वारा सहायता पहुंचाते हैं,सुख दुःखमें कुपित राष्ट्र तथा बंधुको दूर रखते हैं तथा दुश्मनों या जांगलिकों को देश पर आक्रमण करने से रोकते हैं उनकी खुशी तथा नाखुशीको सिर-घुटे या जटा धारी वैरागीके भेसमें खुफिया पुलिस के लोग पता लगावें। जो लोग खुश हों उनपर विशेष कृपा की जाय। नाराज लोगों को पुरस्कार देकर या समझा बुझाकर प्रसन्न किया जाय।

यदि इसपरभी वह नाराज़ रहें तो उनको सामन्त,आटविक या देश-बहिष्कृत राजकुमार या कुलीन से लड़ादिया जाय। इसपर भी यदि वह शान्त न हों तो उनको राज्यकर इकट्ठा करने वाला या राज्यदंड देनेवाला बनाकर लोगों को उनसे कष्ट कर दिया जाय। इसके बाद उनको गदर पर उतारू लोगों के द्वारा या चुप्पे से दंड दिया जाय। शत्रुओं का वह सहारा न ले सकें इस उद्देश्य से खनिज पदार्थ संबंधी कारखानों के प्रबंध करने के लिये उनको जंगलों तथा पहाड़ों में भेजदिया जाय और उनकी स्त्री तथा बाल बच्चोंकी रक्षा का भार अपने ऊपर ले लिया जाय।

शत्रु, नाराज़ लोभी भयभीत तथा बेइज्जत लोगों से ही अपना काम निकालते हैं। इसलिये ज्योतिषी, शगुन बताने वाले तथा मुहूर्त्त निकालने वाले व्यक्ति के भेसमें खुफिया पुलिस के लोग उन का दुश्मन के साथ तथा एक दूसरे व्यक्ति के साथ संबंध जानते रहें। राजा संतुष्ट लोगों को धन तथा इज्जत से खुश रखे और अ-संतुष्ट लोगों को साम दान भेद तथा दंड से अपने काबूमें रखे। इस ढंगपर वह अपने देशमें छोटे बड़े कृत्य (जो शत्रुके काबूमें आसकें) तथा अकृत्य लोगों को दुश्मनों की गुप्तमंत्रणा से सुरक्षित रखे।

१०. प्रकरण।

परदेश में कृत्य तथा अकृत्य पक्ष के लोगों को वशमें करना।

कृत्य तथा अकृत्य पक्षके लोगों को अपने देशमें कैसे वशमें किया जाय इसपर प्रकाश डालाजाचुका। अब शत्रु के देश विषय में ही कहा जायगा।

वह सब लोग क्रुद्ध वर्ग में संमिलित हैं जिनको किसी वस्तु के देने की प्रतिज्ञा या वचन देकर धोखा दिया हो, कारीगरी में या पुरस्कार में एक सदृश काम करनेपर भी बेइज्जत कियागया हो,राज

दर्बारियों ने तंग कर रखा हो, जो कि बुलाकर धुत्कारे गये हों, चिरकाल तक विदेश में रहने के कारण तकलीफ उठाचुके हों, बहुत अधिक धन खर्च करने पर भी नुक्सान में हों, अपने अधिकार तथा दायाद से वंचित हों, इज्ज़त तथा राज्याधिकार से च्युत किये गये हों, समान पद के लोगों तथा संबंधियों के कारण ऊपर उठने से रोके गये हों, जिन की स्त्री का अनादर किया गया हो, जिन को कैद में डालागया हो, छिपे छिपे पिटवाया या दंड दिया गया हो, पापकर्म से रोकागया हो, जिनका सर्वस्व कुड़क करालिया गया हो, जिनको कैद में देरतक रहनेके कारण कष्ट हो तथा जिनके बन्धु बान्धवों में से किसी को देश निकाला देदियागया हो । भीत वर्ग में उन सब लोगों को रखना चाहिये जो कि अपनी गल्ती से नुक्सान उठा चुके हों, दूसरों के द्वारा बे इज्ज़त किये गये हों, जिन के पाप कर्म सबके सामने खुलगये हों, जो कि समान दोष करने वाले को दंड पाता हुआ देखकर घवड़ा गये हों, जिनकी जमींदारी छिनगई हो, जिनको राजकीयदंड से सीधा किया गया हो, जिन्होंने भिन्न भिन्न राजकीय पदोंपर पहुंचकर एकदम से बहुतसा धन बटोरलिया हो, जो कि अपने सम्बन्धी अमीर की संपत्तिको प्राप्तकरने की इच्छा रखते हों, राजाके साथ द्वेष करते हों तथा जिससे राजा स्वयं नाराज हो । लुब्धवर्ग (लोभी लोग) वह लोग समझे जाने चाहियें जो कि अमीरसे गरीब होगये हों, बहुत सा धन खोचुके हों, कंजूस हों, दुर्व्यसनों में फंसे हों तथा जिन्होंने बहुत बड़े काम में हाथ डाला हो, । इसी प्रकार मानि वर्ग (इज्ज़त चाहने वाले लोग) में उन सब लोगों को रखना चाहिये जो कि स्वावलंबी हों, मान के इच्छुक हों, प्रतिद्वन्द्वी के आदर से चिढ़े हुए हों, जिनका नीच लोग आदर सत्कार करते हों, जो कि तीक्ष्णस्वभाव के हों, साहस के कामों में हाथ डालते हों तथा अत्यंत भोगविलास से तृप्त न हुए हों ।

मुंड (सिर मुंडे हुए) तथा जटाधारी के भेस में खुफिया जो जिस ढंग का कृत्यपक्षीय (वह व्यक्ति जिसको राजाके विरुद्ध फाड़ा जासके) हो उसको उसीढंग की बात सुझावे । दृष्टान्त स्वरूप क्रुद्ध

वर्ग को कहे कि "मदवाला हाथी जिस प्रकार जो जो रास्ते में पाता है मींज डालता है इसी प्रकार शास्त्र से विपरीत काम करने वाला यह अंधा राजा नागरिकों तथा ग्रामीणों के बध करने पर उतारू होगया है, दूसरे शक्ति शाली राजा का सहारा लेकर इसके अपकार को दूर किया जासकता है। धैर्य्य से काम करो"। भीत वर्ग को कहा जाता सकता है कि "जिस प्रकार छिपा हुआ सांप जिससे डरता है उसी को काटता है। इसी प्रकार यह राजा तुमपर सन्देह रखता है और इसीलिये तुमपर क्रोधरूपी विष छोड़ता है, दूसरे देशमें चले जाओ"। लुब्ध वर्ग के लोगों को समझाया जाय कि "जैसे कुत्ते पालने वाले चांडालों की गउएं कुत्तों के लिये ही दूध देती हैं न कि ब्राह्मणों के लिये वैसे ही यह राजा आत्मसंमान, बुद्धि तथा वाक्य शक्ति रहित पुरुषों पर ही कृपा रखता है, अच्छा है कि तुम किसी दूसरे की नौकरी करलो"। इसी प्रकार मानि वर्ग को यह कहकर भड़काया जाय कि "जैसे चांडालका तालाब तथा कुआं चांडाल कोही पानीदेने के लायक है न कि औरों को। वैसे ही यह नीच राजा नीचों के लिये ही उपयोगी है न कि तुम्हारे जैसे आर्य्यों के लिये। अमुक राजा पुरुषों की विशेषताओं तथा गुणों का आदर करने वाला है। वहां ही चले जाओ"।

जो लोग खुफिया पुलिस की बातों में आ जांय उनको इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये खुफिया लोगों के साथ एक दृढ संघ में संगठित करे। कृत्य लोगों को दूसरे देशके अन्दर अपने साम तथा दान से वशमें करे और अकृत्य लोगों को दूसरे के दोषों को दिखाते हुए भेद तथा दंड द्वारा अपने काबू में करले ।

---

१ 'कृत्य तथा अकृत्य' शब्द के अर्थ को ठीक ढंगपर न समझकर डा. शामशास्त्री ने इसका अर्थ गड़बड़ करदिया है। उनके अनुसार दोनों ही शब्दों का एक ही अर्थ है। वस्तुतः 'कृत्य' का अर्थ (दुश्मन के फंदे में शीघ्रता से फंस जाने वाला) और अकृत्य का अर्थ (दृढ राजभक्त) हैं। यही कारण है कि कौटिल्य ने अकृत्य लोगों को काबू करने का तरीका "भेद तथा दंड" दिया है। दृढ से दृढ राजभक्त, गुप्त बातों के खुलने, आपसमें लड़ाई हो जाने तथा छिपीहुई धमकियों तथा दंडों से कुछ कुछढीले पड़जाते हैं तथा राजभक्ति परपूर्ववत दृढ नहीं रहते । जो लोग 'कृत्य' तथा आसानी से काबू में आजाने वाले हों उनको शान्ति देना तथा धनधान्य से सहायता पहुंचाते रहना ही अभीष्ट होता है परंतु 'कृत्य तथा अकृत्य' का एकही अर्थ माननेसे श्लोक का भाव कुछ भी खुलता नहीं हैं। ८ वें प्रकरण की टिप्पणीमें इसपर विशेष रूपसे प्रकाश डाला जा चुका है।

११. प्रकरण
गुप्तविचार तथा मंत्रणा।

स्वपक्ष तथा परपक्ष (परराष्ट्र के निवासी) के लोगों में प्रिय होकर राजा शासन विषयक कार्य्यों की चिंता करे। गुप्तविचार तथा मंत्रणा के बाद संपूर्ण कार्य्य प्रारंभ किये जांय। मंत्र भवन (वह स्थान जहांकि सलाह मश्वरा किया जाय) सब ओर से सुरक्षित तथा गुप्त होना चाहिये। वहां से कोई भी खबर बाहर न पहुंच सके। पक्षीतक उस स्थान को न देख सकें। किंवदंती है कि तोता मैना कुत्ता तथा अन्य जीव जंतुओं ने मंत्र (गुप्तविचार) को दूसरों पर प्रगट कर दिया। यही कारण है कि संरक्षण तथा प्रबंध किये बिना मंत्र भवन में प्रवेश न करे। मंत्रभेदी (जो मंत्र या गुप्तविचार खोलदे) को मृत्युदंड दिया जाय। दूत, अमात्य, स्वामी लोगों के आकार तथा इशारों से मंत्रभेद (गुप्तविचार का खुलना) का अनुमान करे। दूसरी ओर ध्यान बंटने से इशारे का और चेहरे में फरक आनेपर आकार का ज्ञान होता है। जबतक काम न होजाय तबतक मंत्रमें संमिलित लोगों पर कड़ी नजर रखे। इसीसे मंत्रकी रक्षा होती है। प्रमाद (बेपरवाही), शराब, स्वप्न में बोलना तथा प्रलाप करना, काम के वश में होकर किसी स्त्रीमें फंस जाना आदि अनेक कारणों से मन्त्र खुल जाता है। बहुधा छिपे हुए स्वभाव वाले (प्रच्छन्न) दुश्मन तथा राजा द्वारा वेइज्जत किये गये लोग मन्त्र खोल देते हैं। अतः राजा इनसे मन्त्र की रक्षा करे। राजा या राज्य कर्मचारियों के द्वारा मंत्र के खुलने पर दुश्मनों को ही लाभ पहुंचता है।

यही कारण है कि भारद्वाज का मत है कि राजा आवश्यक कार्य्यों पर अकेला स्वयं ही विचार करे और किसी से भी सलाह न ले। क्योंकि मंत्रियों के भी मंत्री होते हैं और उनके भी अपने। इस प्रकार मंत्रियों की लड़ी मंत्र को गुप्त नहीं रहने देती। इसलिये राजा क्या करना चाहता है यह किसी को भी न मालूम पड़े। काम

शुरू होने पर या शुरू किये हुए काम के खतम होने पर ही राजा का दिली हाल दूसरों पर खुले। विशालाक्ष का ख्याल है कि कहीं अकेले भी विचार या मंत्रसिद्धि हुई है। राजा के काम ही ऐसे हैं कि उसको अपने देखने के साथ साथ दूसरों के देखने पर निर्भर करना पड़ता है। यह मन्त्रियों का ही काम है कि जो बात मालूम नहीं है उसका पता लगावें, जिसका ज्ञान है उसका निश्चय करें, जहां संदेह हैं वहां संदेह मिटावें तथा जिस बात की पूरी खबर न हो उसको पता लगावें। इसलिये राजा अपने से बुद्धिमान लोगों के साथ मिलकर सलाह मश्वरा करे। सब की सलाह सुने। किसी की भी बात न काटे। बुद्धिमान् लोग छोटे बच्चे की भी उपयोगी बात को काम में ले आते हैं। पराशर कहते है कि इस ढंगपर मन्त्र का ज्ञान तो हो सकता है परंतु उसकी रक्षा संभव नहीं है। इसलिये राजा को जो काम करना हो उसी ढंगपर मंत्रियों से पूछे। "यह कार्य्य है, ऐसी हालत है, यदि इसको इस प्रकार किया जाय तो क्या फल हो?"। वह लोग जैसी सलाह दें वैसा ही करे। इस ढंगपर मंत्र का ज्ञान तथा रक्षण दोनों ही हो जाता है। पिशुन के मत में यह भी ठीक नहीं है। मंत्री लोगों से जब ऐसे पूर्ण या अपूर्ण काम के विषय में सलाह ली जाती है जिससे उनका कोई सीधा संबंध न हो तो बड़ी बेपरवाही के साथ सलाह देते हैं और बहुधा प्रकाशित भी कर देते हैं। इसलिये जिन लोगों के साथ जिन कामों का संबंध हो उन कामों के विषय में उन्ही से सलाह लीजाय। ऐसा करने से उचित सलाह भी मिलती है और मंत्रकी रक्षा भी हो जाती है, कौटिल्य इससे भी सहमत नहीं हैं। क्योंकि वह इसमें भी गड़बड़ तथा अनवस्था की आशंका करता है। उसका विचार है कि तीन चार मन्त्रियों के साथ ही एक समय में विचार कियाजाय। एक के साथ विचार करनेपर कठिन प्रश्न हल नहीं होता। और वह भी बेलगाम होकर कामकरने लगता है। दो के साथ संमिलित रूप में विचार करने पर यदि वह दोनों आपस में मिल कर कामकरें तब तो भला है। यदि यह न हुआ तो दोनों ही आपस में झगड़कर काम विगाड़देते हैं। तीन चार के साथ मिलकर सलाह करने में अकेलापन नहीं होता। नुक्सान भी आ-

सानी से नहीं पहुंचता। सब काम सिद्ध होजाता है यदि चार से भी संख्या अधिक करदी जाय तो किसी एक निर्णय पर पहुंचना कठिन होता है। मंत्र रक्षा भी सुगम नहीं रहती। असली बात तो यह है कि देश समय तथा कार्य्य को सामने रखते हुए आवश्यकतानुसार चाहे एक से और चाहे दो से सलाह ले।

मंत्र या सलाह मश्वरा के पांच अंग हैं। १ कार्य्य कैसे प्रारंभ किया जाय? २. उसमें कितने आदमी द्रव्य तथा संपत्ति की जरूरत पड़ेगी? ३. कौन से स्थानमें किया जाय और उसमें कितना समय लगेगा? ४. जो खतरे तथा विघ्न पड़ें उनको कैसे हटाया जाय? ५. कार्य्य का पूर्ण होना।

राजा पृथक् पृथक् कर या एक साथ संमिलित रूप में सलाह लेसकता है। भिन्न भिन्न हेतुओं के द्वारा वह मंत्रियों की बुद्धि तथा विवेक को जानता रहे। एकनिर्णयपर पहुंचते ही कार्य्य के शुरू या खतम करने में तनिकसा भी विलम्ब न करे। जिनके स्वार्थ को नुक्सान पहुंचता हो उनकेसाथ देरतक सलाह मश्वरा न करे।

मनुसंप्रदाय के विद्वानों का मत है कि मंत्रिपरिषद् के सभ्य बारह अमात्य होने चाहियें। वृहस्पति के पक्षपाती सोलह और उशना के अनुयायी बीस अमात्य का होना आवश्यक समझते हैं। कौटिल्य का विचार है कि सामर्थ्य तथा जरूरत के अनुसार संख्या होनी चाहिये।

अमात्य लोग अपने पक्ष तथा पर-पक्ष के विषयमें विचार करें, जो काम शुरू नहीं हुआ उसको शुरू करें, जो खतम होगया उसको विशेषरूप देवें, तथा भिन्न भिन्न कामों के करने की आज्ञा देवें राजा समीपवर्त्ती राज्य कर्मचारियों के साथ कार्य्यों का निरीक्षण करे। जो दूरदेशमें रहते हों उनसे चिट्ठी पत्री के द्वारा सलाह मश्वरा करे। इन्द्रकी मन्त्रिपरिषद्में हजार ऋषि थे। यही उसकी आंखें थे। यही कारण है कि दो आंखों वाले इन्द्रको हजार आंखों वालों के नाम से (सहस्राक्ष) पुकारते हैं। आवश्यक कार्य के आपड़ने पर मन्त्रिपरिषद् तथा मन्त्रियों को बुलावे इसमें जो बहुसंमातिसे पासहो या कार्य्य सिद्धि कर(कामखतम करने वाली सलाह)सलाहदे उसीके अनु-

सार काम करे। काम करते समय राजा की गुप्त बातें दूसरा न जानने पावे जब कि वह स्वयं दूसरों के छिद्रों से जानकार होता रहे। कछुए की तरह अपने बाहर फैले हुए अंगों को अन्दर करले। जिस प्रकार अश्रोत्रिय लोगों का श्राद्ध सज्जन लोग नहीं खाते उसी प्रकार शास्त्र तथा उसके अर्थ से अनभिज्ञ व्यक्ति राजा के सलाह मश्वरे के लायक नहीं है।

१२. प्रकरण।

दूत का प्रयोग तथा प्रबंध।

सलाह देने में चतुर व्यक्ति ही दूत होता है। जो अमात्य के गुणों से युक्त हो उसको राज्य कार्य्य सुपुर्द किया जाय (निसृष्टार्थ)। जो एक चौथाई गुण हीन हो उसको (परिमितार्थ) सहायक मन्त्री या प्राइवेट् सैक्रटरी बनाया जाय। आधे गुणों से रहित व्यक्ति को आज्ञा पत्र (शासन हर) ले जाने वाला नियुक्त किया जाय।

घोड़े गाड़ी तथा चपरासी का समुचित प्रबंध कर दूत राजा के काम पर जावे और मार्ग में सोचता जावे कि "राजा की आज्ञा को इस ढंगपर सुनाना है, यदि वह इसका उत्तर यह देवे तो इस का प्रत्युत्तर यह देना है और इस प्रकार संपूर्ण मामला सुलझा देना है"। साथ ही शत्रु के जंगल रक्षक (अटवी), सीमा रक्षक (अन्त-पाल), शहर तथा गांव के मुखिया से मिलता जुलता जावे। अपनी तथा दुश्मन की सेना, छावनी, लड़ाई का मैदान, किले आदि पर भी दृष्टि डालता जावे। किला तथा राष्ट्र कितना बड़ा है? कितनी अ-धिक शक्ति है? रक्षा का कैसा प्रबंध है? कमजोरी कहां पर है? इत्यादि संपूर्ण बातों का पता लगा लेवे। आज्ञा लेकर दुश्मन की राज-धानी में प्रवेश करे। राजा ने जो बात कही हो वही कहे। चाहे जान जाने का खतरा क्यों न हो?। मुंह तथा आंख में प्रसन्नता, मीठी वाणी, कुशल क्षेम पूछना, बड़ाई तथा प्रशंसा में भाग लेना, समीप में आसन देना, सत्कार करना, इष्ट लोगों का स्मरण करना, विश्वास करना आदि चिन्हों से दुश्मन राजा की प्रसन्नता तथा संतोष का

और विपरीत चिन्हों से विपरीत दशाका अनुमान करे। असंतुष्ट देखकर उसको कहे कि "चाहे आप हों और चाहे दूसरा हो, राजाओं का एक दूसेर के साथ बात चीत करना इनके ही सहारे ही है। तलवार खींच चुकने पर भी यदि कोई पास का रहने वाला यथोक्त बात कहे तो उसको न मारना चाहिये ब्राह्मण की तो बात क्या कहनी है। दूसेरने यह बात कही है। यह तो दूत का धर्म है"। जबतक बिदा न किया जाय तबतक दुश्मन के यहां ही रहे। बहुत आदर सत्कार पाकर फूल न जाय। शत्रु राजा को कभी भी शक्तिशाली न समझे। बुरी बात भी यदि कही जाय तो सहले। स्त्री तथा शराब के फंदे में न फंसे। अकेला सोवे। क्यों कि सोये हुए तथा शराब में मस्त लोग अन्दरूनी बात खोल देते हैं, तपस्वी तथा दुकानदार के भेस में गये हुए खुफिया लोगों से, या उनके पास रहने वालों तथा दोनों ओर से तनखाह पाने वाले वैद्य तथा वैरागी के भेस में मौजुद अपने आदमियों से अपने पक्ष के लोगों का, विपक्षके लोगों को फाड़ने के तरीकों का, राजा से प्रजा का अनुराग तथा प्रकोप का और प्रजा की कमजोरियों का हाल पूछें। यदि इस बात का मौका न मिले तो भिखमंगों, शराबियों, सोये हुए लोगों के प्रलापों से तथा तीर्थ, मन्दिर, घर के चित्र, गुप्त लेख आदिसे खुफिया लोगों के इशारों का ज्ञान प्राप्त करे और इनके द्वारा शत्रुके षड्यन्त्रों को समझ लेवे। शत्रु राजा के कहने पर भी अपनी शक्ति का उसको भांफ न दे और यही कहे कि "आप तो सब जानते ही हैं"। उसके अपने राजाने काम सिद्ध करने के लिये जो जो तरीके किये हों उसका उसको तनिकसा भी पता न देवे जिस काम के लिये वह भेजा गया हो यदि वह काम पूरा न हुआ हो और इसपर भी उसको लौटने के लिये आज्ञा न मिली हो तो इस बात का पता लेकर—क्या यह मेरे मालिक पर आने वाली तकलीफ की प्रतीक्षा कर रहा है? या अपनी कमज़ोरी तथा विपत्ति को दूर कर रहा है? क्या यह अड़ोस पड़ोस की रियासतों को या प्रजा को मेरे मालिक के विरुद्ध भड़काना चाहता है? कहीं हमारे मित्र राष्ट्र को साथ की दुश्मन रियासतों से नष्ट तो नहीं करना चाहता है? अपने ऊपर होने वाले दुश्मन के आक्रमण, प्रजा का

विद्रोह, तथा जंगलियों की गड़बड़ को तो दूर नहीं कर रहा है? कहीं हमारे मालिक के सफल हुए हुए आक्रमण को तो निरर्थक नहीं करना चाहता है? कहीं अनाज, जांगलिकपदार्थ तथा व्यापारीय द्रव्यों का संग्रह, किले बन्दी तथा सेना का संग्रह तो नहीं कर रहा है? कहीं अपनी सेना के शिक्षित होने का समय तथा मौका तो नहीं देख रहा है? कहीं अपने प्रमाद तथा पराजय के कारण जो यह घृणित तथा संमान रहित संधि करनी पड़ रही है उससे बचने के लिये तो नहीं रोकरहा है?—वहांपर रहे या चुपे से भाग आवे। या उसको कहे कि शीघ्र ही मामला तय करदीजिये। दुश्मन को अपने मालिक की सख्त तथा अप्रिय आज्ञा सुनाकर और यह कहकर कि मुझको कैद तथा मृत्यु दंड का भय है शीघ्र ही लौट आवे नहीं तो उसको दंड मिले।

समाचार तथा पत्र का भेजना, संधि का पालन करवाना, मित्रोंका संग्रह करना षड्यत्र रचना, मित्रों को फाड़ना, कैदियों का भगाना या गुप्तरूप से सेना एकत्रित करना, हीरे तथा संबंधियों को चुरालेना, खुफिया पुलिस का पता लगाना, आक्रमण करना, संधिभंग करना, शत्रु के कर्मचारियों को अपने साथ मिलाना इत्यादि इन के काम हैं। इनकामों को राजा अपने दूतों के द्वारा करवाये और प्रकट तथा अप्रकट पहरे दारों और प्रतिदूत तथा खुफिया पुलिस के लोगों के द्वारा शत्रु के दूतों से अपने आपको बचावे।

१३ प्रकरण।

राजकुमार की रक्षा।

स्त्रियों तथा बच्चों से अपनी रक्षा करने के बाद ही राजा निकटवर्त्ती लोगों तथा बाह्य शत्रुओं से राज्य की रक्षा करने में समर्थ होता है। 'स्त्रियों से रक्षा' पर, 'अंतःपुर का प्रबंध' नामक प्रकरणमें प्रकाश डाला जायगा। राजकुमारों की रक्षा उनके पैदा होने के बाद से ही शुरू की जाय। राजकुमार केकड़ों की तरह अपनेही पैदा करने वालों को खाजाते हैं। यही कारण है कि भारद्वाज का मत है कि जो राजकुमार पिता के साथ प्रेम न रखे उसको गुप्तरूप से दंड

दिया जाय या मरवा दिया जाय। विशालाक्ष इसकाम को क्रूर तथा नृशंस समझते हैं। उनका ख्याल है कि इससे भविष्य का नाश तथा क्षत्रिय वंश का लोप होना संभव है। इसलिये उनको किसी एक स्थान में पहिरे के अन्दर रखा जाय। पराशर संप्रदाय के विद्वान् इसमें 'सांप का भय' देखते हैं। क्योंकि बहुत संभव है कि राजकुमार यह समझकर कि पिता मेरी शक्ति तथा पराक्रम के डरसे मुझको पहिरे में रखता है, मौका पाते ही उसको काटले तथा मारदे। इसलिये उचित यह है कि राजकुमार को अन्तःपाल (सीमाप्रान्त का रक्षक) के पहिरे में या दुर्ग में रखे। पिशुन इसमें 'भेड़िये का भय' समझते हैं। क्योंकि राजकुमार बंदिश में रखे जाने के कारणों को जानकर अन्तपाल को ही अपना दोस्त बना सकता है। इसलिये उसको अपने देश से दूर रहने वाले आधीन राजा के किले में रखा जाय। कौणपदंत इसको गइया के बछड़े के तुल्य मानते हैं। जिसप्रकार बछड़ा दिखाकर गऊ का दूध दुहा जाता है उसीप्रकार आधीन राजा राजकुमार के बहाने राजा को दुहेंगे। इसलिये उस का मामा के घर रहना ही ठीक है। वातव्याधि के ख्यालमें यह तो "झंडी वाला मामला" है। अदिति तथा कौशिक के मामा के घर के लोग राजकुमार के नाम पर झंडा फहराते इधर उधर से भीख मांगकर धन इकट्ठा करते थे। इसलिये उसको ग्राम्य काममें लगावे। तकलीफ में पले बच्चे पिता के साथ दुश्मनी नहीं रखते। कौटिल्य के विचार में यह तो जीते जी मरना है। क्योंकि जिस राजकुल में लड़के उचित शिक्षा नहीं पाते वह घुनी लकड़ी की तरह भार पड़ते ही चूर चूर हो जाता है और नाशको प्राप्त होता है। इसलिये राजमहिषी के ऋतुधर्म होते ही पुरोहित तथा याज्ञिक इन्द्र बृहस्पति संबंधी चरु (यज्ञमें एक खास प्रकार का भोजन तैय्यार किया जाता है) से हवन करें। उसके गर्भवता होने पर दाई तथा वैद्य के अनुसार उसको भोजन दें तथा बच्चा पैदा करवायें। बच्चा पैदा होने पर, पुत्रका संस्कार पुरोहित करें। जब वह बड़ा होतो विद्वान् लोग उसको पढ़ावें लिखावें।

आंभीय नामक राजनीतिज्ञों का मत है कि खुफिया पुलिस के लोग इसको शिकार, जुआ शराब तथा स्त्रियों का प्रलोभनदें। "पिता

पर आक्रमण कर राज्य लेलेओ" जब एक यह कहे तो दूसरा उस को इस काम से रोके। कौटिल्य इस ढंग से राजकुमार को शिक्षा देना बहुत ही हानिकर समझते हैं। क्योंकि छोटे बच्चे को जो जो बात सिखाओ वही सीखता है। उसीको शास्त्रोपदेश समझता है। इसलिये उसको धर्म्म तथा अर्थ संबंधी शिक्षा दी जाय। अधर्म्म तथा अनर्थ का पाठ न पढ़ाया जाय। खुफिया पुलिस के लोग उस को "हम तुमारे ही हैं" यह कहकर ही उसका पालन पोषण करें। जवानी के जोश में आकर यदि वह दूसरों की औरतों पर मन चलावे तो आर्य्य औरतों के भेसमें बदमाश अपवित्र औरतें रातको उसको तंगकरें। यदि वह शराव पीने की ओर झुकेतो उसको बहुत ही तेज नशा (योगपान) पिलाकर सदाके लिये उसओर से घब-डायें। इसी प्रकार यदि वह जुए की ओर झुके तो बेईमान बदमाश के भेसमें और यदि शिकार की ओर झुके तो डाकू लुटेरे के भेसमें खुफिया पुलिस के लोग उसको परेशान करें। यदि वह पिता के विरुद्ध आचरण करे तो यह लोग उसके पेटमें घुस कर तथा उस के दोस्त बनकर उसको ऐसा करने से रोकदें। उसको समझावें कि "राजा पर किसी की भी प्रार्थना काम नहीं करती। यदि तुम पकड़े गये तो तुमको फांसी चढ़ना पड़ेगा। यदि तुम पिता के मारने में सफल होगये तो तुमको नरक मिलेगा। प्रजा भी पुराने राजा के लिये रोवेगी। संभव है कि तुमको कोई इकल्ला दुकल्ला पाकर मार भी देवे"। इकलौते दुलारे लड़के को अपने से विरक्त देखकर बंधन में रखे। यदि बहुत लड़के होंतो विरक्त लड़के को राष्ट्रके अंत में या ऐसे दूसरे राष्ट्र के राजा के पास भेजदे जिसके लडका न हो और न इसकी संभावना ही हो। जो लड़का समझदार तथा योग्य हो उसको सेनापति या युवराज बनाया जाय। कुछ लड़के बचपन से ही बुद्धिमान् कुछ दुर्बुद्धि, तथा कुछ आहार्य्यबुद्धि होते हैं। बुद्धिमान् वही हैं जो कि पढ़ाने पर धर्म्मार्थ समझ लें और उसके अनुसार काम भी करना शुरू करदें। जो समझलें परन्तु उस के अनुसार काम न करे उनको आहार्यबुद्धि समझना चाहिये। दुर्बुद्धि वह है जो कि बुरे काम करें तथा धर्म्मार्थ से द्वेष रखें। यदि इकलौता लड़का ही दुर्बुद्धि होतो दूसरे लड़के की उत्पत्तिमें यत्नकिया

जाय। यदि यह संभव नहो तो लड़की के लड़कों पर भरोसा रखा जाय। राजा बीमार हो या बुड्ढाहो तो मामा, गुणवान् सामंत (आधीन राजा) तथा कुलीन इनमें से किसी के भी द्वारा अपनी स्त्री का नियोग करवाये तथा पुत्र उत्पन्न करे। परंतु अशिक्षित बदमाश इकलौते लड़के को राज्यपर कभी भी न बैठावे।

पिता बहुतों का ख्याल रखते हुए पुत्र का ही हित करे। यदि कोई खतरा न हो तो बड़े लड़के को ही राज गद्दी पर बैठावे। कुल का भी संमिलित राज्य हो सकता है। इसमें अराजकता का भय नहीं रहता तथा स्थिरता रहती है और शत्रु इसपर विजय नहीं प्राप्त कर सकता।

१४ तथा १५. प्रकरण।

बंधन में पड़े राजकुमार का कर्त्तव्य

तकलीफ में तथा अपने से भारी काम में पड़कर राजकुमार पिता की आज्ञा के अनुसार तबतक काम करता जाय जबतक कि जान जाने का, जनता के कुपित होने का तथा भयंकर विपत्ति आ पड़ने का खतरा न हो। पुण्य काम में यदि उसको लगाया गया हो तो वह अपने से ऊपर काम करने वाले अध्यक्ष की कृपा तथा अनुग्रह की याचना करता रहे। जो बात वह करने के लिये कहें उसको विशेष रूपसे करे। कर्म के अनुसार फल लेते हुए विशेष लाभ पिता के पास पहुंचादे। यदि इसपर भी पिता असंतुष्ट रहे तथा अन्य लड़कों तथा स्त्रियों में विशेषरूप से स्नेह रखे तो जंगल में जानेके लिये आज्ञा मांगे। यदि उसको कैद में पड़ने या जानका भय हो तो जो सामन्त उसको न्यायवृत्ति, धार्मिक, सत्यवादी, सीधा, आदर सत्कार करने वाला तथा गुणियों का आश्रयदाता मालूम पड़े उसके यहां चला जावे। वहां पर रहकर धन शस्त्रास्त्र से संपन्न होकर किसी वीर पुरुष की लड़की के साथ शादी करले, जंगल के अध्यक्षों से दोस्ती बना लेवे और अपने पक्ष के लोगों को इकट्ठा करे। यदि अकेला ही हो तो सोना, हीरा पन्ना, चांदी,

व्यापारीय द्रव्य आदि के खानों तथा कारखानों में काम करना शुरू करे और उसके द्वारा अपना आभरण पोषण करे। पाखंडियों तथा कंपनियों के धन को, या अश्रोत्रिय लोगों के अयोग्य मंदिरों की संपत्तिको या किसी अच्छी अमीर औरत को फंसाकर उसके रुपये पैसे को या समुद्रके व्यापारियों को जहर देकर उनके मालको अपने हाथ में करले या ऐसे तरीके काम में लावे जिससे सुगमता से ही दुश्मन के गांवों पर अपना प्रभुत्व स्थापित हो जाय । पिता के विरुद्ध मामा के घर के नौकरों से भी सहारा लिया जासकता है। कारीगर, शिल्पी, चारण, वैद्य, भांड, वैरागी के भेस में और ऐसे ही लोगों से मित्रता रखकर किसी तरीके से अंतःपुर में जहर तथा हथियार लेकर घुस जाय और राजा से कहे कि "हम वही राजकुमार हैं। अकेले अकेले ही राज्य का भोग करना उचित नहीं है। दुगने अलाउंस या वेतन से हमारा काम नहीं चलता" इस ढंग के उपाय बंधन में जकड़े राजकुमार को काम में लाने चाहियें।

राजा को चाहिये कि ऐसे सब से बड़े राज कुमार को उसकी मां या खुफिया पुलिस के लोगों के द्वारा पकड़वा मंगवाये। घर से निकाल देने के बाद खुफिया पुलिस शस्त्र से या जहर से उसको मार डाले। यदि उसको घरसे न निकालना हो तो समान गुणवाली औरतों, शराब या शिकार में फंसे हुए को रात में पकड़वाये और दरबार में उपस्थित करे और कहे कि अपने मरने के बाद आधा राज्य मैं तुम्ही को दूंगा। यदि वह इकलौता लड़का हो तो उसको किसी एक स्थान में पहरा सुपुर्द रखे और यदि उसके बहुत से भाई हों तो उसको देश से बाहर निकाल दे।

१६ प्रकरण।

राजा का प्रबंध तथा कर्त्तव्य।

राजा के कर्मण्य होने पर राजकर्मचारी भी कर्मण्य रहते हैं। उसके प्रमादी होने पर वह भी प्रमादी होजाते हैं। उसका काम बिगाड़ देते हैं। और दुश्मन से मिलजाते हैं। इसलिये उसको सदा

ही सावधान रहना चाहिये। वह धूप घड़ी की छाया या नालिका (१½ घंटा) के अनुसार दिनरात को आठ आठ भागों में विभक्त करे। धूपघड़ी में २६, १२, ४,तथा०इञ्च के अनुसार छाया का विभाग करे और शून्य पर मध्यान्ह समझे। दिन तथा रात को आठ आठ भागों में बांटकरः—

(१) दिनके पहिले भाग में राष्ट्र-रक्षा का प्रबंध तथा आय व्यय विषयक बातें सुने।

(२) दूसरे भाग में नागरिकों तथा ग्रामीणों के कार्य्यों का निरीक्षण करे।

(३) तीसरे भाग में नहाये तथा खाना खाय। और स्वाध्याय भी करे।

(४) चौथे भाग में उपहार डाली लेने के साथ २ अध्यक्षों की नियुक्ति करे।

(५) पांचवें भाग में पत्रभेजकर मन्त्रिपरिषद् को बुलावे। खुफिया लोगों से गुप्त बातें सुने।

(६) छठे भागमें स्वच्छन्द विहार करे या सलाह मशवरा करे।

(७) सातवें भाग में हाथी घोड़ा रथ तथा पदातियों की देख रेख करे।

(८) आठवें भागमें सेनापति के साथ सैनिक कार्य्य तथा आक्रमण संबंधी विचार करे। दिन के खतम होने पर संध्या करे।

(१) रात के पहिले भाग में खुफिया पुलिस के लोगों से बात चीत करे।

(२) दूसरे भाग में स्नान, भोजन तथा स्वाध्याय करे।

(३) तीसरे भाग में तूरी की आवाज के साथ ही सोने के लिये कमरे में जाय और

(४,५) चौथे तथा पाचवें भाग तक सोवे।

(६) छठे भाग में तूरी की आवाज के साथही उठे, शास्त्रका विचार करे और आवश्यक कामों के करने की विचार करे।

(७) सातवें भागमें सलाह मशवरा करे और खुफिया लोगोंको इधर उधर भेजे।

(८) आठवें भागमें ऋत्विग् आचार्य्य तथा पुरोहित लोगों के साथ स्वस्त्ययन (वेदमंत्र-विशेष) पाठ करे। वैद्य, पाचक तथा ज्योतिषियों के साथ बात चीत करे। बछड़े सहित गौ बैल की प्रदक्षिणा कर राज दर्बार में जावे।

अथवा अपने सामर्थ्य के अनुसार रात दिनका विभाग कर काम करे। राजदर्बार में पहुंच कर प्रार्थी लोगों को बहुतदेर तक ड्योढ़ीपर न खड़ा रखे। जो स्वयं काम नहीं देखते उनके काम में निचले लोग गड़बड़ कर देते हैं। इससे प्रजा में असंतोष फैल जाता है और शत्रुके आक्रमण की संभावना हो जाती है। इसलिये मन्दिर, आश्रम, संन्यासी तथा पाषण्ड, श्रोत्रिय तथा याज्ञिक, पशु, तीर्थ, तथा बालक, वृद्ध, बीमार, दुःखित, अनाथ तथा स्त्री आदिकों का हाल चाल स्वयं जाकर पता लगावे। जो काम आवश्यक तथा महत्वपूर्ण हो उसका सबसे पहिले ख्याल रखे।

सपूर्ण आवश्यक कामों को स्वयं ही देखे तथा सुने परंतु टालने की कभी भी कोशिश न करे। क्योंकि टालने से काम कृच्छ्रसाध्य (बड़ी तकलीफ के बाद जो काम पूराकिया जासके) अतिकाल साध्या तथा असाध्य(जो कि पूर्ण न किये जासकें)होजाते हैं। पुरोहित तथा आचार्य्य लोगों के साथ यज्ञशाला में पहुंचकर वैद्य तथा तपस्वी लोगों को उचित रूपसे आदर सत्कार तथा अभिवादन कर उनकी जरूरतों को जाने। त्रैविद्य लोगों (तीनों शास्त्रों में पंडित) की सलाह से तपस्वियों की जरूरतों को पूराकरे। योग तथा जादू के कामों को करने वाले लोगों की नाराजगी का कारण न बने। कार्य्य में तत्पर होना, यज्ञ करना, कार्य्य संबंधी आज्ञा तथा हुकुम देना, दानदेना, सबके साथ समान व्यवहार करना, दीक्षाप्राप्त लोगों का अभिषेक करना आदि ही राजा के काम हैं। प्रजा के सुख तथा हित में ही राजा का सुख तथा हित है। राजा का अपने स्वार्थों को पूर्ण करने में हित नहीं है। उसका हित तो प्रजा के स्वार्थों तथा प्रिय वस्तुओं को पूरा करने में ही है। इसालिये राजा को चाहिये कि सावधान तथा कर्मण्य होकर आवश्यक कामों के करने का हुकुम दे। क्योंकि कर्मण्यता ही सुख तथा समृद्धि का मूल है।

सुस्ती तथा प्रमाद से सब कुछ नष्ट हो जाता है । जो कुछ पास है और जिसके मिलने की आशा है यह सब कुछ प्रमाद से पानी में मिल जाता है । कर्मण्यता से संपत्ति तथा आवश्यक वस्तु प्राप्त होती हैं और संपूर्ण प्रकार के फल उपलब्ध होते हैं ।

१७ प्रकरण ।

अन्तः पुर का प्रबंध ।

गृहनिर्माण के लिये जो स्थान उत्तम हो उसमें अन्तः पुर बनाया जाय । उसमें अनेक कमरे हों और उसके चारों ओर दीवार द्वार तथा खाई हों । राजा के रहने का मकान कोश गृह के नकल पर निर्माण किया जाय । एक मोहन गृह बनाया जाय जिसके दीवारों में से आने जाने के लिये गुप्त मार्ग हों । राजा का वास गृह इसके मध्य में भी हो सकता है । इसी प्रकार एक महल खड़ा किया जाय और भूमि गृह तय्यार किया जाय जिनके दरवाजों पर मूर्तियां बनी हों, दीवारों में सीढ़ियां लगी हों, अन्दर बाहर जाने के लिये अनेकों सुरंगे हों, सब के सब खंभे पोले हों और उनमें आने जाने का मार्ग हो और उनकी छत कलयन्त्र से इस प्रकार रची गई हो कि आवश्यकता पड़ने पर क्षण में नीचे बैठायी जासके । इस महल में भी राजा अपना निवास गृह बना सकता है । सहाध्यायी तथा बचपन के साथी लोगों से बचने के लिये और एक दम आ पड़ने वाली विपत्ति से आत्म रक्षा करने के लिये ही उपरि लिखित उपाय आवश्यक हैं ।

दाहिने से बांये ओर तीन बार मानुष–अग्नि यदि अन्तःपुर के चारों ओर घुमायी जाय तो उसमें आग लगने का डर नहीं रहता । वहां कोई दूसरी आग नहीं जलती यदि बिजली की राख को ओले के पानी तथा मिट्टी से सानकर दीवारों को लीपा जाय । *

---

* यह तान्त्रिक प्रयोग है । उस समय यह विश्वास प्रचलित था कि मानुष अग्नि के चारों ओर घुमाने से किसी भी आग की आशंका नहीं रहती । मानुष-अग्नि क्या चीज है इस पर डाक्टर शामशास्त्री के भाषान्तर से प्रकाश नहीं पड़ता उन्होंने मनुष्य-निर्मित अग्नि (A fire of human make) के रूप में जो भाषान्तर किया है वह ठीक नहीं जचता है । हमारी समझ में "प्रलंभने अद्भुतोत्पादनम्" नामक प्रकरण में "शस्त्रहतस्य शूलप्रोतस्य वा पुरुषस्य वामपार्श्वपशुकास्थिषु कल्माषवेणुना निर्मथितोऽग्निः............यत्र त्रिरपसव्यं गच्छति न चात्रान्योऽग्निर्ज्वलति" मरे हुए आदमी की हड्डी तथा कल्माष नामक बांस रगड़ने से जो आग पैदा होती है उस आग को यहां (मानुष-अग्नि)" शब्द से सूचित किया है ।

जीवन्ती, श्वेता, मुष्क, कसीस, बांदा के समीप पैदा हुए पीपल के तने से मकान में छिपे हुए सांपों का विष नष्ट हो जाता है ‡ बिल्ली, मोर, न्योवला तथा विन्दुमृग सांपों को खा जाते हैं। तोता मैना तथा भिंगराज सांप के विष की आशंका में शोर मचाने लगते हैं। कराकुल या घैंटी विष के समीप में आते ही पागल हो जाता है, यूनानी तीतर सुस्त पड़ जाता है, मत्तकोकिल मर जाता है और चकोर की आंखे लाल पड़जाती हैं। इस प्रकार अग्नि, विष तथा सांप से बचने का उपाय करे।

अन्तःपुर के पिछले भागमें स्त्रियों के रहने का स्थान, गर्भोपयोगी जड़ी बूटी तथा तालाव वनाया जायं। बाहरकी ओर लड़के लड़कियों के रहने का, तथा आगेकी ओर शृंगार गृह, दर्बार, तथा राजकुमार और अध्यक्ष लोगों के रहने का स्थान हो। कमरों के बीचमें अन्तःपुर के रक्षकों तथा पहरियों का पहरा हो।

घरके अन्दर पहुंचकर बूढ़ी औरत के द्वारा पटरानी को कहला दे और जब उसके पास कोई भी न रहे तब जावे। क्योंकि भाई ने रानी के कमरे में छिपकर ही भद्रसेन को, माता की चारपाईमें छिपकर लड़के ने कारूश को, खीलोंमें शहत के स्थान पर जहर लगाकर रानी ने काशिराज को, विषमें बुझे पायजेब (नूपुर) से वैरंत्य को, हीरे की कधनी से सौवीर को, मुंह देखने के शीशे से जालूथ को और बालों के जूड़े में हाथयार छिपाकर विदूरथ को मारा था। इसलिये इन विपत्तियों से बचता रहे। सिरमुंडे, जटाधारी, संन्यासियों भांडों तथा मस्खरी वालोंको और बाहरी लौंडियों को अन्दर न आने देवे। दाइयों तथा गर्भ व्याधि के इलाज में चतुर औरतों को छोड़कर और कोई भी कुलीन घरकी औरत उसको न देखे। नहाने तथा सुगंधित चीजों के लगाने के बाद नया कपड़ा तथा गहना पहिन कर रंडियां (रूपाजीवा) उससे मिलें। बाप मां के भेष में अस्सी मर्द और पच्चास औरतें बुड्ढे तथा बढ़ी उमर के नौकर बन

‡ डाक्टर शामशास्त्री ने भाषान्तर किया है कि "सांप अन्दर नहीं घुसते" परन्तु "सर्पा विषाणि वान प्रसहंते" इसका अर्थ "विष नष्ट हो जाता है" यही ठीक है।

कर अन्तःपुर के लौंडे लौंडियों की वफादारी की परीक्षा करते रहे और इस प्रकार राजा का कल्याण करें।

अपने अपने स्थानपर सब लोग काम करें। कोई भी दूसरे के स्थानपर न जाय। अन्दर का कोई भी आदमी बाहरी आदमी से न मिले। अन्दर तथा बाहर जाने वाले माल पर कड़ी नजर रखी जाय। कोई भी राजमुद्रा से रहित माल न अन्दर जाने पावे और न अन्दर से बाहर ही जावे।

१८. प्रकरण।

आत्म रक्षा।

सोकर उठते ही राजा का आदर सत्कार धनुषबाणधारी औरतें करें। दूसरे कमरे में चोगा पगड़ी आदि वर्दी पहिने बुड्ढे अंतःपुर के नौकर, तीसरे कमरे में कुबड़े बौने किरात लोग, और चौथे कमरे में मन्त्री, संबंधी तथा नंगी तलवार लिये ड्योढ़ीदार उसका स्वागत करें।

विदेशी लोगों तथा राजकीय पुरस्कार तथा आदर से वंचित स्वदेशी लोगों को छोड़ कर, नीचे से ऊंचे पद पर पहुंचाये गये लोग ही शरीर-रक्षक (आन्तर्वंशिक सैन्य) नियत किये जांय तथा राजा और अंतःपुर की रक्षा करें। संरक्षित स्थान में रसोईदार (महानसिक) पाचकों से स्वादिष्ट भोजन तैय्यार करावे। अग्नि तथा पक्षियों को बलि देकर राजा ताजा ताजा खाना खावे।

जहरीले भोजन को आग में डालते ही आग चट चटाने लगती है और नीला धुआं देने लगती है, पक्षी उसको खाते ही मर जाते हैं अन्न की भाफ मयूर पंखी रंग की हो जाती है। देखने में वह ठंडा मालूम पड़ता है। ताजी तरकारी का रंग जहर होने पर बदल जाता है। वह पानी छोड़ने लगती है या बिल्कुल ऐंठ जाती है। इसी प्रकार अन्य पदार्थ भी जहर पड़ने पर ऐंठ तथा सूख जाते हैं, उबाल आते ही उन में कभी कभी नीला फेना उठने लगता है और नीली भाफ निकलने लगती है। खुशबू, खूबसूरती तथा स्वाद उन

का नष्ट हो जाता है। गरम गरम रसे में से नीली, दूध में से लाल, शराब तथा पानी में से काली, दही में से हरे रंग की, और शहत में से सफेद रंगकी भाफ निकलने लगती है। जहरीली कच्ची तरकारी आदि मुरझा जाती है और उबली सी मालूम पड़ती है और उनका उबाल नीला हरा रंगलिये रहता है। सूखी चीजें झटपट कट जाती हैं और उनका रंग बदरंग हो जाता है। कठिन पदार्थ मृदु और मृदु पदार्थ कठिन हो जाते हैं। छोटे २ कीड़े मकौड़े उसके पास आते ही मर जाते हैं। गलीचों तथा परदों पर जहर छिड़कने से उनके रोमें झड़ जाते हैं या कभी कभी वह हरे नीले रंग के हो जाते हैं। हीरे जवाहर जड़े वर्त्तन जब मैले मालूम पड़ें, और जब उनकी चिकनाई, खूब सूरती, चमक, आब, रंग तथा सफाई नष्ट होजाय तो समझ लेना चाहिये कि उनमें जहर लगा है।

जहर दिये गये आदमी का मुंह सूख जाता है और नीला पड़ जाता है। जबान लड़खड़ाने लगती है और वह पसीने से तरबतर हो जाता है। जंभाई से शरीर ऐंठने लगता है। बहुत ही अधिक कंप कंपी आने लगती है। शरीर लड़खड़ाने लगता है और जबान बंद हो जाती है। वह बद हवास हो जाता है और अपने काम पर स्थिर नहीं रहता है। यही कारण है कि जड़ी बूटी जानने वाले डाक्टर हर समय उसके पास रहें। यह लोग दवाई खाने से कंपाउंडरों के हाथ से दोष रहित स्वादिष्ठ दवाई लेकर और अपने आप चाखकर राजा को दें। शराब तथा पानी में भी दवाई वाला ही नियम काम में लाया जाय।

स्नान तथा शुद्ध वस्त्र पहिने शरीररक्षक के हाथ से राजा के कपड़ों की सील लगी बंद पेटी लेकर कल्पक तथा प्रसाधक (राजा को नहाते समय कपडा तथा अन्य सामान देने वाले) लोग राजा की परिचर्य्या (सेवा-शुश्रूषा) करें। नहवाना (स्नापक), पानी लाना (संवाहक), बिस्तर बिछाना, कपड़ा धोना तथा माला बनाना आदि काम लौंडियां (दासी) (१) करें। अथवा कपड़ों

(१) डाक्टर शामशास्त्री ने 'दासी' का अर्थ वैश्या या रंडी (Prostitutes) किया है। 'लौंडी' अर्थ ही उचित जचता है। देशी रियास्तों में अबतक इसकी प्रथा है।

तथा मालाओं को अपनी आंखों पर रखकर, तथा बंटना, सुगन्धित चूर्ण, वस्त्र तथा नहाने के पानी को अपनी बाहु तथा छाती पर डालकर कारीगर लाग लौंडियों के साथ जावें और राजा को स्वयं देदेवें। बाहर से तथा दूसरे के हाथ से जो चीज अन्दर आवे उस सबमें यही नियम काम में लाया जावे। गाने बजाने वाले लोग राजा के चित्त को उन्हीं वातों से खुश करें जिनमें हथियार आग तथा जहर का कुछभी संबंध न हो। उनके बाजे, और हाथी घोड़े तथा रथ के गहने तथा आभूषण अन्दर ही रखे जांय। दर्बारी तथा ताल्लुकेदार जिस घोड़े गाड़ी को काममें लाचुके हों और देख चुके हों उसीपर चढ़ें। ऐसी नावपर ही सैर करे जिसके साथ दूसरी नाव बंधी हो और जिसके चलाने वाला अच्छे से अच्छा मल्लाह (आप्त नाविक) हो। जो नाव कभी आंधी में टूट फूट गई हो या वह चुकी हो उसपर पैर न धरे। पानी या नदी के पास छावनी बनावे तथा सेना रखे। मछली तथा नाके से रहित पानीमें तैरे। सांप तथा हिंसक जन्तुओं से रहित बागों में भ्रमण करे। दौड़ते हुए तथा चलते हुए लक्ष्य पर निशाना ठीक बैठे इस उद्देश्य से कुत्ते पालने वाले शिकारी लोगों के द्वारा चोर सांप तथा शत्रु से सुरक्षित बन्द जंगलों में शिकार खेलने के लिए जावे। हथियारों से सुसज्जित शरीर रक्षकों को साथ लेकर सिद्ध तथा तपस्वी लोगों का दर्शन करे। मन्त्रिपरिषद् में बैठकर सामन्त के दूत का स्वागत करे। वर्दी तथा राजकीय वस्त्र पहिनकर घोडे हाथी या रथ पर चढ़े और सुसज्जित तथा सन्नद्ध सेना को देखे। हथियार लिये लोगों, वैरागी तथा लूले लंगड़ों से राज मार्ग को रहितकर तथा दोनों ओर डंडा लिये सिपाहियों को खड़ा कर राजधानी से बाहर

---

(१) मौल पुरुष का अर्थ डाक्टर शामशास्त्री ने पुराना सईस या घुड़सवार किया है। स्मृतियों में मौल पुरुष का तात्पर्य उन ताल्लुकेदारों से लिया गया है जोकि अपनी जमींदारी से बहुत दूर पर किसी दूसरे स्थान में बस गये हों।

(२) डाक्टर शामशास्त्री ने उद्यान का अर्थ जंगल किया है। हमारे विचारें में बाग अर्थ होना चाहिये।

जावे और अन्दर आवे। भीड़ को चीरकर कभी भी न निकले। सैर (यात्रा) सत्संग (समाज) जलसा तथा नावमें तव तक मजलिस का साथ न दे जब तक उनमें दशवर्गिक (दस ढंगके या दस जात या संघ के) लोगों का पहरा न हो।

जिस प्रकार राजा खुफिया लोगों के द्वारा अन्य लोगों की रक्षा करता है उसी प्रकार अन्य विघ्न बाधाओं से उसको अपने शरीर की रक्षा करनी चाहिये।

द्वितीय-अधिकरण।

अध्यक्ष-प्रचार

१९ प्रकरण।

जनपद-निवेश।

परदेश या स्वदेश के निवासियों के द्वारा शून्य या नवीन जनपद को बसाया जाय। प्रत्येक ग्राम सौ परिवार से पांच सौ परिवार तक का हो। उसमें शूद्र कृषकों की संख्या अधिक हो और उनकी सीमा एक कोस से दो कोस तक विस्तृत हो। वह इस प्रकार स्थापित किये जांय कि एक दूसरे की रक्षा कर सकें। नदी, पहाड़, जंगल, पेड़, गुहा, नहरें तालाब सींभल, पीपल तथा बड़ आदि से उनकी सीमा नियत की जाय। आठ सौ ग्रामों के मध्य में स्था-

---

(१) डाक्टर शामशास्त्री ने 'न पुरुषसंबाधमवगाहेत' इस वाक्य का य छोड़ दिया है।

२ **सेतुबन्ध** शब्द का तात्पर्य्य डाक्टर शामशास्त्री ने कृत्रिम गृह (artificial building) से लिया है। वस्तुतः यह शब्द नहर नदी तथा प्रपात या झरनों से बनी कुल्या या तालाब के लिये प्रायः आता है। यही कारण है कि हमने नहर तथा तालाब ही अर्थ रखा है।

नीय, चार सौ ग्रामों के मध्य में द्रोण मुख, दो सौ ग्रामों के मध्य में खार्वटिक तथा दस ग्रामों के मध्य में संग्रहण नामक दुर्ग बनाये जांय, राष्ट्र सीमाओं पर अन्तपाल के दुर्ग खड़े किये जांय और प्रत्येक जनपद-द्वार उसके द्वारा सुरक्षित रखा जाय। वागुरिक, शबर, पुलिन्द, चंडाल तथा जंगली लोग शेष संपूर्ण सीमा की देख रेख करें।

ऋत्विक्, आचार्य्य, पुरोहित तथा श्रोत्रियों को अभिरूप-फल-दायक ब्रह्मदेय[1] दिया जाय और उनको राज्यदंड तथा राज्यकर से मुक्त किया जाय। अध्यक्ष, संख्यायक, गोप, स्थानीक, अनीकस्थ, चिकित्सक, अश्वदमक, जंघारिक आदि राजसेवकों को भूमि दी जाय परंतु उनको यह अधिकार न हो कि वह उसको बेच सकें या थाती (गिरवी) रख सकें। राज्यस्व देने वालों को ऐसे खेत दिये जांय जो कि एक पुरुष के लिये पर्याप्त हों। खेतीहरों को नई भूमि न दी जाय। जो खेती न करें, उनसे खेत छीनकर अन्यों के सुपुर्द किये जांय। ग्राम भृतक या बनिये ही उन पर खेती करें। जो खेत न जोतें वह सरकारी हर्जाना (अपहीन) भरें। जो सुगमता से राज्यस्व दें उनको धान्य पशु तथा हिरण्य से सहायता पहुंचायी जाय। साथ ही ख्याल रखा जाय कि अनुग्रह[2] तथा परिहार[3] से कोश की वृद्धि हो और जिससे कोश के नुकसान की संभावना हो उस को न किया जाय। क्योंकि अल्प कोश वाला राजा नागरिकों तथा ग्रामीणों को ही सताता है। नये बन्दोबस्त या अन्य आकस्मिक समय में ही विशेष विशेष व्यक्तियों को राज्यस्व से मुक्त किया जाय

---

१. **ब्रह्मदेय** वह दान है जोकि ब्राह्मणों को स्थिररूप से सदा के लिये दे दिया जाय। ताम्रपत्र तथा बहुत से शिलालेख खोदने से मिले हैं जिन में पुराने राजाओं ने भिन्न २ भूमिभागों को ब्रह्मदेय के रूप में ब्राह्मणों को दिया था।

२. अनुग्रह—उत्तम काम करने के बदले में कारीगरों किसानों को राजा जो धन आदि इनाम में दे उसको कौटिलीय में **अनुग्रह** शब्द से सूचित किया है।

३. परिहार—राज्यकर से मुक्तकरना। पुत्रोत्पत्ति, वर्षगांठ आदि समय में राजा लोग ऐसा करते थे, कौटिलीय ने इन सब समयों को "यथागतक" शब्द से सूचित है।

और जिनका राज्यकर-मुक्ति या परिहार का समय समाप्त हो गया हो उन पर पिता के तुल्य अनुग्रह रखा जाय।

खान खोदने, कारखाने चलाने, जंगलों से लकड़ी तथा हाथी प्राप्त करने, पशु पालने और व्यापारीय मार्ग बनाने का प्रबंध किया जाय तथा स्थलमार्ग, जलमार्ग और मंडियों (पण्यपत्तन) का निर्माण किया जाय। झरनों से या दूर से पानी इकट्ठा कर तालाब या नहर बनायी जाय और जो लोग अपनी ओर से बनावें उनको भूमि, मार्ग, वृक्ष तथा अन्य आवश्यक उपकरणों के द्वारा सहायता पहुंचायी जाय। तीर्थ तथा बागों को बनवाने वालों के संबंध में भी इसी नीति को काम में लाया जाय। साझे में नहर या तालाब बनवाना प्रारंभ कर जो स्वयं काम न करे उसके बैलों तथा नौकरों से काम लिया जाय, खर्च में जो धन उसके भाग में पड़े उससे ग्रहण किया जाय और लाभ में उसको भाग न मिले। राजा उन नदियों, तालाबों तथा नहरों पर अपनी मलकीयत स्थापित करे जिनमें मच्छियां तथा तरकारी बहुतायत से पैदा होती हो और नावें चलती हों। जो लोग दासों, थाती में रखे मनुष्यों तथा बंधु लोगों का कुछ भी ख्याल न करें उनको राजा कर्त्तव्य के लिये प्रेरित करे, और बालक, वृद्ध, बीमार, विपत्तिग्रस्त तथा अनाथों के आभरण पोषण का प्रवन्ध करे और गर्भिणी औरतों तथा नवजात बालकों की रक्षा करे। ग्राम वृद्ध मन्दिर की तथा नाबालिग बालक की संपत्ति का उसके युवावस्था को पहुंचने तक प्रबंध करें।

जाति से बहिष्कृत पतित व्यक्ति तथा माता से भिन्न यदि कोई समर्थ व्यक्ति स्त्री, बच्चों, मां बाप, भाई, नाबालिग बहिन, तथा विधवा लड़की के आभरण पोषण का प्रवन्ध न करे तो उस पर बारह पण जुरमाना कियाजाय। जो कोई स्त्री पुत्र का प्रबन्ध किये बिना ही संन्यासी बने या अपनी स्त्री को जबरन संन्यासी बनावे उसको 'साहसदंड' दिया जाय। वृद्धावस्था में पहुंचकर कोई भी व्यक्ति लड़कों में अपनी संपत्ति बांट कर संन्यासी बन सकता है, बिना संपत्ति बांटे जो संन्यासी बने उसको दंड दिया जाय। वान-प्रास्थयों को छोड़कर कोई भी संन्यासी, जात बिरादरी को छोड़

कर कोई भी संघ तथा सामुत्थायक को छोड़कर कोई भी कंपनी ग्राम में न बसे और न ग्राम में कोई भोग बिलास के लिये मकान ही बना सके। नट, नर्तक, गायक, वादक तथा भांड ग्रामीणों के काम का हर्जा न करने पावें। क्योंकि ग्रामीणों का खेतोंके सिवाय और कोई दूसरा सहारा नहीं। इससे कोश, स्वतन्त्र श्रम, लकड़ी धान्य तथा अनाज की भी विशेषरूप से वृद्धि होती है।

शत्रु के षड्यंत्र तथा जंगल से घिरे हुए, व्याधि तथा दुर्भिक्ष से पीडित देश को राजा ग्रहण न करे और खर्चीली खेलों को रोके दंड, स्वतन्त्र श्रम और राज्यकर संबंधी विघ्नों से कृषि की रक्षा करे। चोर शेर तथा जहरीले घातक जीव जन्तुओं से चरागाहों तथा गोचर भूमियों को सुरक्षित रखे। दर्बारी, मेहनती मजदूर, चोर, सीमारक्षक (अंतपाल) आदियों से तथा जानवरों के झुंडों से क्रमशः, हीन दशा को प्राप्त होते हुए व्यापारीय मार्ग (वणिक्पथ) को बचावे। इस प्रकार राजा लकड़ी के जंगल, हाथी बन, तालाब तथा नहर, खान आदि की रक्षा करे और नये नये कामों को शुरू करे।

२० प्रकरण।

भूमि का विभाग

जो भूमि जोती बोई नहीं जाती उसपर पशुओं के लिये चरागाहें बनाई जांय। सोमलता, धर्म्म कर्म्म तथा तपस्या के लिये ब्राह्मणों को ऐसे जंगल दिये जांय जिनमें जंगली जानवरों तथा अन्य बातों का भय नहो और उनका नाम उसी गोत्र पर रखा जाय जिस गोत्र का ब्राह्मण उनमें तपस्या करता हो। राजा के शिकार खेलने के लिये सरकारी बन्द जंगल बनाये जांय जिनमें प्रवेश करने का एक ही मार्ग हो, जोकि चारों ओर खाई से घिरे हों, स्वादु फल बेल गुच्छों से जो कि परिपूर्ण हों, जिनमें एक भी कंटीला पेड़ न हो, शान्त तथा सीधे चौपाये तथा बड़े बड़े तालाब जिनमें विद्यमान हों, जिनमें शेर चीते तथा हिंसक जंतु नख तथा दांत तोड़

कर छोड़े गये हों और जिनमें हाथी, हाथिनी, हाथी के बच्चे तथा मृग बहुतायत से हों। राष्ट्रनिवासियों के शिकार के लिये भूमि के अनुसार राष्ट्र की सीमापर एक दूसरा शिकारी जंगल बनाया जाय और उसमें शिकार खेलने का सबको अधिकार दिया जाय। भिन्न भिन्न आवश्यकीय जांगलिक द्रव्यों का जंगल पृथक् रूप से लगाया जाय। इनको साधारण जंगलों से पृथक् रखा जाय और व्यावसायिक पदार्थ तैय्यार करने के लिये इनके कारखाने खोले जांय। राष्ट्र के अन्तिम छोरपर साधारण जंगल के बाद हाथियों का जंगल स्थापितकिया जाय। इसका जो अध्यक्ष (नागवनाध्यक्ष) हो वह बनैलों (वनचर) के द्वारा पहाड़ी झील नदियों तथा नालों से घिरे हाथी-जंगल की रक्षा करे और उसमें घुसने तथा निकलने का रास्ता जाने। जो लोग हाथी को मारें उनको मृत्यु दंड मिले। मरे हुए हाथी के दांतों की जोड़ी जो स्वयं लाकर अध्यक्ष को दे उसको सवाचारपण इनाम में दिया जाय। बनैले—फीलवान, हाथी के पैर में फंदा डालने वाले (पादपाशिक), सीमा की रक्षा करने वाले (सैमिक), वन में फिरने वाले तथा हाथी पालने वाले (पारकर्मिक) लोगों से दोस्ती रखे और पांच या सात हथिनियों को साथ लेकर भलावे की शाखा से ढके जंगल में हाथी के पेशाब तथा लीद का सहारा लेते हुए हाथियों को ढूंढें और उनके सोने के स्थान, लीद, पेशाब तथा नदी के किनारों के टूटने के द्वारा यह अनुमान करें कि-वह झुंड का स्वामी है या अकेला है? उसके दांत हैं या बच्चा है? मस्त है या वह कहीं से छूटकर भागा है? हाथी-वैद्यों के कहने के अनुसार प्रशस्त आचार तथा चिन्ह वाले हाथियों को पकड़े। क्योंकि राजाओं का विजय हाथियों पर निर्भर है हाथियों का शरीर तथा डील डौल बहुत बड़ा होता है। दूसरों के व्यूह, दुर्ग, छावनियों के नष्ट करने के साथ साथ हाथी प्राणनाशक संपूर्ण घातक कामों के लिये बहुत ही उपयोगी होते हैं।

कलिंग अंग रीवां रियासत तथा पूर्वीय देश के हाथी सबसे अधिक उत्तम होते हैं। दशार्ण तथा पच्छिम के मध्यम समझे जाते हैं। सौराष्ट्र तथा पंचजन देशके निकृष्ट माने गये हैं। सिखाने से सभी देश के हाथियों की शक्ति, तेज तथा गति बढ़जाती हैं।

२१ प्रकरण।
दुर्ग–विधान।

दुश्मन के आक्रमण से बचने के लिये राष्ट्र के अन्त में चारों ओर स्वाभाविक-दुर्ग (दैव कृत) बनाये जांय। औदक-दुर्ग द्वीप या जमीन के बीच में खड़े किये जाते हैं और चारों ओर नीची जमीन तथा पानी से घिरे होते हैं। पार्वत-दुर्ग पथरीले टीले या गुहा पर बनते हैं। धान्वन दुर्ग (निर्जन प्रदेश पर बने दुर्ग) पेड़ पत्ती, जन्तु तथा जल से रहित स्थानपर और वन-दुर्ग पशु-पत्ती†, पानी तथा जंगल से परिपूर्ण स्थानपर बनाये जाते हैं। इनमें से औदक तथा पर्वत दुर्ग जनपद की और धान्वन तथा वनदुर्ग जंगल की रक्षा के काम में आते हैं।

जनपद के मध्य में राज्यस्व [समुदय] एकत्रित करने के योग्य × तथा आपत्ति पड़ने पर शरण स्थान के रूप में उपयोगी‡स्थानीय नामक दुर्ग या कस्बा (तहसील) बनाया जाय। मकान बनाने के लिये प्रशस्त-देश, नदी संगम, सदा पानी रहने वाली झील, ताल या तालाब के किनारे गोल, लंबा, या चौकोन, चारों ओर पानी से

---

† मूल ग्रंथ में "खजन तथा खंजन" दो पाठ मिलते हैं। डाक्टर शामशास्त्री ने खंजन (wag-tail) मानकर और हमने खजन मानकर पत्ती अर्थ किया है। वस्तुत: दोनों ही पाठ ठीक हो सकते हैं।

× मूल ग्रंथ में "समुदय स्थानं स्थानीयं" यह शब्द लिखा है डाक्टर शामशास्त्री ने 'समुदय' का अर्थ राजस्व ही प्रायः किया है। परन्तु यहां पर उन्होंने 'समुदयस्थान' का 'राज्यस्व एकत्रित करने के योग्य या तहसील' अर्थ करने के स्थान पर 'प्रभुत्व शक्ति का केन्द्र' 'या राजधानी' अर्थ करदिया है।

‡ मूल ग्रंथ में 'आपाद्य प्रसार' यह पाठ है। इसका उचित पाठ **'आपद्यप्रसार'** अर्थात् **"आपदि+अप्रसार"** यह मालूम पड़ता है। डाक्टर शामशास्त्री ने 'आपत्ति पड़ने पर शरणस्थान के रूप में उपयोगी' के स्थान पर 'आपत्ति पड़ते ही जिस स्थान से शीघ्र ही भागा जा सके' यह अर्थ कर दिया है जो कि कौटिलीय के 'आपद्यप्रसार' शब्द से किसी प्रकार भी नहीं निकलता है।

घिरा हुआ तथा अंसपथ तथा वारिपथ (जलमार्ग) से युक्त पक्का मकान तैय्यार किया जाय जो कि मंडी का भी कामदे (इसके चारों ओर एक दूसरे से दो गज दूरी पर तीन खाइयां खोदी जांय जो कि २८ या २४ या १० गज चौड़ी, इसकी एक तिहाई या आधी गहरी, तले पर चपटी चौकोन तथा समतल और पत्थर से भरी हों जिसके किनारे पक्की ईंटों या पत्थरों से पक्के बने हों, जिनमें सदा ही पानी रहे या बाहर से आता रहे और जिनके अन्दर मगरमच्छ भरे पड़े हों और साथ ही कमल के पेड़ लगे हों।

खाई से ८ गज दूरीपर १२ गज ऊंची और २४ गज चौड़ी ऐसी "शहर पनाह" (दीवार) बनाई जाय जिसका उपरला भाग समतल, बीच का भाग घड़ेकी तरह गोल हो, और जो कि हाथियों तथा गउओं के पैरों से कूटकर मजबूत की गई हो, जिसके बीच में मट्टी भरी हो और जो कि कंटीली झाड़ी, विषैली बेलें तथा पेड़ पौदों से नीचे से ऊपर तक ढंकी हो।

शहर पनाह (वप्र) के ऊपर चौड़ाई से दुगुनी ऊंची (प्राकार कंगूरेदार दिवार शेष) और १२ हाथ से २४ हाथ तक चौड़ी युग्म या अयुग्म संख्या में ईंटकी एक दूसरी कंगूरे दार दीवार बनाई जाय।

लंबे चौड़े तथा बन्दर के शिर की तरह चपटे पत्थरों या ताड़की जड़ों से चिनी हुई रथ चलने के योग्य [रथ चर्य्या संचार] सड़क तैय्यार की जाय। इसमें लकड़ी न लगनी चाहिये क्योंकि उसमें आग छिपेरूप से रहती है। इसीप्रकार के चौकोन बुर्ज बनाने चाहियें। जिनपर सीढ़ियां लटक रही हों। दो दो बुर्जों के बीचमें एक गली (प्रतोली) होनी चाहिये जो कि चौड़ाइ से ढ़ाई गुना लंबी और ३० दंड या ६० गज चौड़ी हो। बुर्ज तथा गली के बीच में तीन धनुषधारियों के बैठने योग्य चौकी (इन्द्रकोश) बनानी चाहिये। इनके बीचमें देवपथ (मन्दिर को जाने का मार्ग) बनाया जाय जो कि बुर्ज के बीच में २ हाथ, बाहर की ओर ८ हाथ और इतनाही कंगूरे के साथ साथ हो। दोगज से चार गज चौड़ी चार्या नामक सड़क बनानी चाहिये। जिस स्थान पर आक्रमण होना

सुगम न हो वहां पर भागने की सड़क(प्रधावितिका)तथा दरवाजा (निष्कुर द्वार) तैय्यार किया जाय। शहर पनाह के बाहर के संपूर्ण रास्ते जानुभगिनी (जिससे गोड़ा टूट जाय), त्रिशूल, प्रकार(मट्टी का ढ़ेर ?) नकली गड्ढा(कूट-अवपात), कांटे, झाड़, अहिपृष्ठ (?), ताड़ के पत्ते, सिंघाड़े, गोखरू, अर्गलोपस्कन्दन (?), पादुक, आंवड़ा तथा पानी से भरी तलइयों से ढंक दिये जांय।

शहर पनाह के बीच में दोनों ओर डेढ़ दंड चौड़ा एक गोल छेद बनाया जाय। प्रतोली नामक सड़क की चौड़ाई का छठा भाग जितना बड़ा एक दर्वाजा उसमें बनाया जाय। दरवाजा ५ दंड से एक एक दंड बढ़ाते हुए ८ दंड तक चौड़ा, ६ भाग से ८ भाग तक लंबा हो। वह १५ हाथ से शुरू कर १८ हाथ तक [एक एक हाथ तल से बढ़ाते हुए] ऊंचा हो। खंभे की चौड़ाई ८ हाथ, जमीन में २६ हाथ [जमीन में इतना गड़ा हो] और चूलिका (उपरलाभाग) इसकी चौथाई होनी चाहिये। शहर पनाह के उपरले ५वें भाग में मकान बावड़ी तथा सीमा संबंधी मकान बनाये जांय।इसके $^{2}/_{10}$ भाग में एक दूसरे के सामने दो वेदियां तैय्यार की जांय इनके ऊपर एक कोठा बनायाजाय जो कि चौड़ाई से दुगना ऊंचा हो। उनमें मूर्त्तियां बनी हों पहिली छत से आधा या तीन चौथाई चौड़ा एक और कोठा बनाया जाय जिसकी दीवारें ईंटों की हों और बांई ओर गोल सीढ़ी हो। सभी दीवारें अन्दर से पोली होनी चाहियें और उनके अन्दर गुप्त सीढ़ियां लगी रहनी चाहियें। बाहर की ओर दो दो हाथ चौड़े छज्जे बनाये जांय। तीन पांचवें भाग में दो दो दरवाजेहों जिनमें दो दो लोहे की छड़ें हों और इन्द्रकील २४ अंगुल लंबी हो। सीमा का दरवाजा ५ अरत्नि [१अरत्नि=२४ अंगुल] जितना बड़ा हो† दुर्ग में घुसने के लिये हस्तिनख नामक फाटक बनाया जाय जो कि मनुष्य के मुख के समान ऊंचा हो और जो कि स्थिर हो तथा समय

---

† कौटिलीय का यह भाग बहुत ही अस्पष्ट है। अर्थ करने में अनुमान से ही काम लिया है। मकान संबंधी बहुत से पारिभाषिक शब्दों के आजाने से ही कठिनाई बढ़ गई है।

पर हटाया जा सके। जहां पर रेगिस्तान हो या पानी न हो वहां पर यह दरवाजा मट्टी का ही बनाया जाय। महल के मुख के ऐन सामने शहर का मुख्य दरवाजा हो जो कि गोह के सदृश आकार का हो। महल के बीच में बावड़ी पोखरी तथा चार बड़े बड़े कमरों वाला मकान हो जिसके कमरे एक दूसरे के साथ जुड़े हों। साथ ही गोल आकार का एक दो तल्ला कुमारीपुर (लड़कियों के रहने का मकान) † बनाया जाय जिसमें गोल दरवाजा हो। इसके चारों ओर भूमि के अनुसार तीन गुना अधिक चौड़ी नहर बनाई जाय जिसके द्वारा सामान अन्दर बाहर ले जाया जा सके। ‡

नहर में पत्थर कुद्दाल, कुठार, डंडे, मुद्गर, यन्त्र, शतघ्नी [सौ आदमी एक साथ मारने का हथियार], भाला, बांस, बाण, उष्ट्र, ग्रीव्य (ऊंट की गर्दन के समान हथियार) जांगलिक पदार्थ तथा बारूद आदि इकट्ठे करके रखे जांय।

२२. प्रकरण।

दुर्गनिवेश।

किले के अन्दर पच्छिम से पूर्व और दक्खिन से उत्तर को जाने वाली तीन तीन सड़कें और बारह दरवाजे तैय्यार किये जांय।

राजमार्ग, द्रोण मुख, स्थानीय, राष्ट्र तथा चरागाह को जाने वाले मार्ग तथा रथ्या नामक सड़क ८ गज, सयोनीय, छावनी, श्मशान तथा ग्राम पथ १६ गज, सेतु तथा वनपथ ८ गज, हस्ति-क्षेत्र पथ ४ गज, रथपथ तथा पशुपथ २½ गज, और क्षुद्र पशु तथा

---

† डाक्टर शामशास्त्री ने 'कुमारीपुर' का अर्थ 'दुर्गा का मन्दिर' किया है। हमको तो 'राजकन्याओं के रहने का मकान' ही अर्थ ठीक जंचता है। आप्टे तथा अन्य संस्कृत-इंगलिश कोशकारों ने भी यही अर्थ दिया है।

‡ 'भांडवाहिनी' का अर्थ डाक्टर शामशास्त्री ने 'हथियार धारण करने में समर्थ' यह अर्थ किया है। हम समझते हैं कि उनका इस अर्थ से तात्पर्य्य 'जिसके द्वारा सामान अन्दर बाहर ले जाया जासके' यही होगा।

मनुष्य पथ २ गज चौड़े होते हैं।

मजबूत स्थान पर बने हुए महल में ही राजा रहे। किले के नवें हिस्से में, मध्य से (किलेके) उत्तरकी ओर, चारों वर्णों के लोगों के मकानो के बीचमें पूर्व वर्णित ढंगपर अन्तःपुर बनाया जाय। उसका मुंह चाहे उत्तर की ओर और चाहे पूर्व की ओर रखा जाय। उसके पूर्वोत्तर भाग में आचार्य्य पुरोहित के रहने का तथा हवन पानी का स्थान बनाया जाय और वहां पर ही मन्त्रियों के भी रहने के मकान हों। पूर्व दक्खिन भाग में भोजनालय, हास्तिशाला, तथा वस्तुभंडार, पूर्व में गन्ध, माल्य धान्य, तथा शराब की दुकानें, क्षत्रियों तथा प्रधान २ कारीगरों के मकान, दक्खिन पूर्व में खजाना, आयव्यय विभाग तथा कारखाने, दक्खिन पच्छिम में जांगलिक-पदार्थ भंडार(कुप्यगृह)तथा हथियार भंडार(आयुधागार), इसके बाद दक्खिन में नगर, धान्य, व्यापार-व्यवसाय, कारखाने तथा सेना आदि के अध्यक्षों के मकान, मिठाई, पक्कान्न, शराब मांस आदिकी दुकानें, तथा रंडियों और गाने बजाने में चतुर वेश्याओं के घर, पच्छिम दक्खिन में गदहों ऊटों के रहने के तबेले तथा मेहनती मजदूरों के मकान, पच्छिम उत्तर में घोड़ा गाड़ी रथादि की शाला, पच्छिम में ऊनका सूत, बांस, चाम, कवच, शस्त्र, आवरण आदि के कारीगरों के मकान, उत्तर-पच्छिम में दुकानें बाजार तथा दवाई खाने, उत्तर पूर्व में कोश तथा गौ घोड़े, इसके बाद उत्तर दिशा में नगर तथा राज देवताके मन्दिर, धातु तथा हीरे जवाहरात के कारीगर और ब्राह्मण लोग तथा बीच की गलियों में श्रेणी, प्रवहणी निकाय आदि व्यापारीय व्यावसायिक तथा श्रमीय संघों के मकान होने चाहियें।

शहर के बीच में—अपराजित, अप्रतिहत, जयंत, वैजयंत नामक देवताओं के मंदिर और शिव वैश्रवण तथा लक्ष्मी † के गृहों के साथ शराब खाने बनाये जांय।

---

† यहां पर शामशास्त्री ने लक्ष्मी के लिये प्रयुक्त किये गये **श्री** शब्द का अर्थ "**संमान योग्य**" किया है और इसको शराब खाने के साथ जोड़दिया है। उचित तो यह था कि शराबखानों को आनंरवल या संमान योग्य की उपाधि देने के स्थानपर श्री का अर्थ **लक्ष्मी** ही किया जाता।

मन्दिरों, कोठों तथा गृहों में † अपनी अपनी इच्छा के अनुसार मकान के भिन्न भिन्न देवताओं की स्थापना की जाय। बाहर के दरवाजों पर ब्रह्मा, इन्द्र, यम तथा सैनापत्य नामक देवताओं की स्थापना की जाय और खाई से १०० धनुष (१ धनुष=१०२ अंगुल,) दूर पर तीर्थ, वन तथा सेतुबन्ध नामक मकान बनाये जांय। भिन्न दिशाओं में दिशाओं के देवताओं को स्थापित किया जाय। उत्तर या पूरब में साधारण लोगों का और दक्षिण में ऊंच जात के लोगों का श्मशान होना चाहिये। जो इस नियम का उल्लंघन करे उसको प्रथम साहस दंड दिया जाय। पाखंडियों तथा चंडालों को श्मशान के अंत में बसाया जाय। प्रत्यक परिवार की हद व्यवसाय या खेत के अनुसार नियत करनी चाहिये। फूलफल के बगीचे, तरकारी के खेत तथा धान्य तथा बाजारी माल के संबंध में भी इसी ढंग पर प्रबंध करना चाहिये। प्रति दस मकान के पीछे एक कुआं अवश्य ही होना चाहिये। तेल, घी, धान्य, खार, नमक, दवाई, सूखी तरकारी, शक्कर, जौ, सूखामांस, भूसा, लकड़ी, लोहा, चाम, कोयला तांत, जहर, सींग, बांस, मूंज, वल्कल, सख्त तथा मजबूत लकड़ी हथियार, कवच, पत्थर आदि इतनी राशि तथा मात्रामें इकट्ठे करके रखने चाहिये जिससे कई सालों तक वह खतम न हों। फसल पर पुरानी चीज़ के स्थान पर नई चीज़ भर दीजाय। हाथी घोड़े तथा पदातियों का प्रबंध भिन्न भिन्न मुखियों के पास हो। इससे यह लोग एक दूसरे के डरसे षड्यंत्र नहीं करते। अन्तपाल के दुर्गोंका निर्माण तथा प्रबंध भी इसी ढंग पर होना चाहिये।

नगर तथा राष्ट्र को नुकसान पहुंचाने वाले बाहरी लोगों को किले में न बसाकर गांवों में ही बसावे अथवा इनसे किले में रहने का राज्यस्व ग्रहण करे।

---

† 'कोष्टकाल ग्रहेसु' इस वाक्य का अर्थ डाक्टर शामशास्त्री ने 'मकान के कोनों पर' यह अर्थ कर दिया है। "मन्दिरों कोठों तथा गृहों में" यह अर्थ उपरिलिखित वाक्य का सर्वथा स्पष्ट है।

२३ प्रकरण।

* सन्निधाता के कर्त्तव्य।

सन्निधाता—१ कोशगृह (खजाना रखने का मकान), २ पण्यगृह [गोदाम] ३ कोष्ठागार [धान्यभंडार] ४ कुप्यगृह (जांगलिक द्रव्यों का गोदाम) ५ आयुधागार (शस्त्रागार) तथा बंधनागार (कैदखाना) बनवावे।

१. **कोशगृह**। एक चौकोन कुआं खोदकर उसको चारों ओर से बड़ी बड़ी चट्टानों से पक्का बनाया जाय और उसको पानी तथा नमी से रहित कर दिया जाय। उसके अन्दर पक्की लकड़ी का पिंजड़े की तरह एक मकान बनाया जाय जिसमें बहुत से कमरे हों, दरवाजा केवल एक ही हो, फर्श पत्थर से पक्का बनाया गया हो, इधर उधर जा सकने वाली सीढ़ी लगी हो और देवता स्थापित किया गया हो। इसके ऊपर **कोशगृह** बनाया जाय। कोशगृह में एक भी दरवाजा न हो, दीवारें ईंटों की बनी हों और जो कि चारों ओर नदी से घिरा हो। राष्ट्र के अन्तमें अछूत लोगों के द्वारा ध्रुव निधि (जिसमें स्थिररूप से अनाज आदि भरा जाय) आपत्ति से बचने के लिये बनाया जाय।

२. **पण्यगृह**। पण्यगृह की दीवारें तथा खंभे पक्की ईंटों के बनाये जांय। उसमें एक दरवाजा बहुत से कमरे तथा बहुत से खंभे हों और जो कि चारों ओर चार मकानों से घिरा हो।

३. **कोष्ठागार**। में बहुत बड़े बड़े कमरे हों जिनके मध्य में ४ **कुप्यगृह** और ५ जमीन के तह में **आयुधागार** बनाया गया हो।

६. **बन्धनागार** के संपूर्ण कमरे सब ओर से सुरक्षित हों और स्त्री तथा पुरुष के रहने के कमरे पृथक् पृथक् बने हों। धर्म्मस्थीय तथा महामात्रीय लोगों के रहने का मकान पृथक् पृथक् ही बनाया जाय।

---

* सन्निधाता का अर्थ कोशाध्यक्ष है।

उपरिलिखित सभी मकानों में–बड़े बड़े कमरे, कुए, स्नानगृह तथा देवगृह [मन्दिर विशेष] बनाये जांय और उनमें– आग तथा जहर से बचने के लिये बिल्ली, न्युअले आदि रखे जांय।

कोष्ठागार में एक अरत्नि के बराबर (२४ अंगुल) मुख वाला वृष्टि मापने का वर्त्तन रखा जाय।

सन्निधाता योग्य २ व्यक्तियों के सहारे पुराने तथा नये रत्न, बहुमूल्य द्रव्य तथा जांगलिक पदार्थ ग्रहण करे। जो लोग रत्न के संबंध में छल कपट करे उनको तथा उनसे ऐसा काम करवाने वालों को उत्तम दंड दिया जाय। बहुमूल्य द्रव्य के संबंध में मध्यम और हीनमूल्य द्रव्य तथा जांगलिक द्रव्यके संबंध में जितना नुकसान हो उतना ही दंड दिया जाय।

रूप दर्शक के द्वारा हिरण्य † की परीक्षा करवा कर ग्रहण करे। जो जाली या नकली हो उसको काट दे। जो जाली हिरण्य लावे उसको प्रथम साहस दंड दिया जाय।

शुद्ध तथा परिपक्व धान्य को ग्रहण किया जाय। जो इससे विपरीत काम करे उस पर मूल्य का दुगना जुरमाना किया जाय। व्यापारीय द्रव्यों, जांगलिक पदार्थों तथा हथियारों के सम्बन्ध में भी यही नियम है। भिन्न भिन्न विभागों के मुखिया लेखक तथा नौकर आदियों को १ पण से ४ पण तक की चोरी में क्रमशः पूर्व, मध्यम, उत्तम तथा मृत्यु दंड दिया जाय। कोशकी चीज़ के चुराने पर कोशाध्यक्ष को कतल किया जाय। उसके सहायकों को आधा दंड दिया जाय। यदि चोर का पता न चले तो काम करने वालों को डांटा जाय। जो चोर को चोरी करते समय भागने का इशारा करे उसको तकलीफ देकर मरवाया जाय। सन्निधाता को चाहिये

---

† डाक्टर शामशास्त्री ने हिरण्य का अर्थ सोने का सिक्का और रूपदर्शक का अर्थ सिक्के का परीक्षक किया है। डाक्टर देवदत्त भंडारकर ने रूप को सिक्के का पर्याय वाचक मानकर डाक्टर शामशास्त्री के मत को पुष्ट किया है। मेरी संमति में रूप का अर्थ वस्तु विशेष, रूपदर्शक का अर्थ परीक्षक और हिरण्य का अर्थ सोना है।—

कि विश्वासपात्र व्यक्तियों की सहायता से राज्य कर एकत्रित करे।

(सन्निधाता को) सैकड़ों वर्ष की बाहरी तथा अन्दरूनी आमदनी खर्च का ज्ञान होना चाहिये जिससे वह पूछने पर बिना किसी प्रकार की घबड़ाहट में पड़े बचे हुए धन को बता सके।

२४ प्रकरण ।

समाहर्ता द्वारा राज्यस्व एकत्रित करना

समाहर्ता * १ दुर्ग २ राष्ट्र ३ खनि ४ सेतु ५ वन ६ व्रज तथा ७ वणिक् पथ का निरीक्षण करे।

१. दुर्ग । दुर्ग से तात्पर्य्य—चुंगी, जुरमाना, तोलमाप, नगर लेखक सिक्के का प्रबन्धकर्ता(लक्षणाध्यक्ष)सरकारी मुहरका अध्यक्ष (मुद्राध्यक्ष), शराबखाना, बूचड़खाना, सूत, तेल, घी, नमक या खार, राजकीय सुनार, दूकान, रंडी, जुआ, मकान, कारीगर, तथा शिल्पी, देवताध्यक्ष तथा दरवाजे के बाहर लिये जाने वाले राज्यकर आदि से है।

२. राष्ट्र । राष्ट्र का तात्पर्य्य—कृषि जन्यपदार्थ [सीता],धार्मिक कर [बलि], बटाई का कर (भाग), रुपये में लिया राज्यस्व, व्यापारीय कर, नदीपाल के द्वारा गृहीत नौका का भाड़ा, नौका नगर, चरागाह, सड़क कर, रस्सी तथा हथकड़ी आदि से है।

३.खनि । खनि से तात्पर्य्य—सोना चांदी, हीरा,माणिक, मोती मूंगा, शंख, लोहा, नमक, पत्थर तथा रस सम्बन्धी धातुओं से है।

४.सेतु । सेतु से तात्पर्य्य—फूल फल के बगीचे, तरकारी के खेत तथा मूली शलगम आदि जमीन के नीचे लगने वाले पदार्थों की कयारियों से है।

५. वन । वन से तात्पर्य्य—पशु, मृग, लकड़ी, हाथी आदि के जंगलों से है।

---

* समाहर्ता का तात्पर्य्य राज्यस्व इकट्ठा करने वाले राजकीय कर्मचारी से है। आज कल समाहर्ता का नाम कलक्टर तथा कमिश्नर है।

६. व्रज । व्रज का तात्पर्य्य—गौ भैंस भेड़ बकरी ऊंट घोड़ा खच्चर, गदहा आदियों से है।

७. वणिक् पथ । वणिक् पथ का तात्पर्य्य स्थल मार्ग तथा नदी मार्ग से है। यह सब आमदनी के भिन्न भिन्न भाग (आयशरीर) हैं।

पूंजी, बटाई, बयाई, स्थिर कर, धार्मिक कर, रुपये की कटौती, तथा जुरमाना आदि आमदनी के स्थान हैं।

देवता पिता की पूजा, स्वस्तिवाचन, अन्तःपुर, भोजनभंडार (महानस), दूत रखना कोष्ठागार, आयुधागार, पण्यगृह, कुप्यगृह, व्यवसाय, स्वतंत्रश्रम, पदाति घुड़सवार रथी तथा हाथी की सेना, कारखाना, गोमंडल, चिड़ियाघर, भूसा तथा लकड़ी का भंडार आदि ही खर्च के स्थान हैं।

राजवर्ष, मास, पक्ष, दिन, प्रातः, वर्षा, हेमन्त (सर्दी के दिन), ग्रीष्म, के एक एक दिन कम तीसरे तथा सातवें पक्ष बचे हुए शेष संपूर्ण पक्ष तथा मलमास आदि काल शब्द के द्वारा ग्रहण किये जाते हैं।

समाहर्ता को चाहिये कि वह १. करणीय. २ सिद्ध ३ शेष ४ आय ५ व्यय तथा ६ नीवी का निरीक्षण करे।

१. करणीय । राज्य कार्य्य चलाना, नया काम शुरू करना जीवनोपयोगी पदार्थों को एकत्रित करना, राज्यस्व इकट्ठा करना, संपूर्ण राज्यस्व की जांच करवाना आदि संपूर्ण काम करणीय (करने के योग्य) में संमिलित हैं।

२. सिद्ध । कोश में जमा किया गया, राजा के द्वारा ग्रहण किया गया, शहर पर खर्च किया गया, पिछले साल से चला आया हुआ, राजा की लिखी तथा मौखिक आज्ञा के द्वारा कोश में जमा किया गया आदि सिद्ध (समाप्त हुआ काम) में संमिलित हैं।

३. शेष । उत्पाद्य कामों के करने का विचार, बचा हुआ जुरमाना तथा राज्यस्व, हिसाब की गड़बड़, रद्दी तथा घटिया

माल आदि शेष (जो कि अभी बचा हुआ हो) में संमिलित हैं।

४. आय। आय तीन प्रकार की है। (क) वर्त्तमान। (ख) पर्युषित। (ग) अन्य जात।

[क] वर्त्तमान। प्रति दिन मिलने वाली आमदनी को "वर्त्तमान आय" के नाम से पुकारा जाता है।

[ख] पर्युषित। जो आमदनी पिछले साल की हो, दूसरे के हाथ में हो या चली गयी हो उसको "पर्युषित आय" अर्थात् पिछली आमदनी का नाम दिया जाता है।

[ग] अन्य जात। नष्ट, विस्मृत, राज्यकर्मचारियों का जुरमाना आकस्मिक आय, नुक्सान करने के बदले लिया गया धन, डाली या उपहार में आया हुआ, वह धन जिसका कोई भी मालिक न हो और या कोई हकदार लड़का न हो, आकस्मिक मिला हुआ खजाना आदि अन्य जात [आकस्मिक आय] आय कही जाती है।

५. व्यय। पूंजीविनियोग, अनुत्पादक काम में लगाया धन तथा बचत आदि व्यय कम करने वाली चीजें हैं।

बेचते समय कीमतों के बढ़ने पर या तोल माप के भिन्न होने पर जो आमदनी होती है उसको वयाई (व्याजी) के नाम से पुकारा जाता है। खरीदते समय खरीदारों की स्पर्धा से जो दाम बढ़ता है उसको भी आय में ही संमिलिति किया जाता है।

व्यय—I नित्य II नित्योत्पादक III लाभ IV लाभोत्पादिक के भेद से चार प्रकार का है।

I प्रतिदिन होने वाले व्यय को नित्य। III और पक्ष मास तथा वर्ष में होने वाले लाभोत्पादिक व्यय को लाभ कहा जाता है। II नित्य से जो उत्पन्न हो उसको नित्योत्पादिक और IV लाभ से जो उत्पन्न हो उसको लाभोत्पादिक नाम दिया जाता है।

६. नीवी। व्यय होने के बाद आय तथा व्यय से जो धन बचे उसको नीवी कहते हैं और जो कि अगले वर्ष के हिसाब में संमिलित करली जाती है।

समाहर्ता इसी ढंग पर राज्यस्व एकत्रित करे, आमदनी दिखावे और खर्च को विवेक पूर्वक घटावे।

२५ प्रकरण।

गाणनिक्य का अक्षपटल में काम।

गाणनिक्य या अध्यक्ष (वह राज्यकर्मचारी जो सरकारी जमा खर्च का प्रबंध तथा निरीक्षण करे) अक्षपटल (हिसाब किताब रखने वाला दफ्तर) इस ढंग का बनवावे जिसका मुंह उत्तर या पूर्व की ओर हो और जिसमें कर्म चारियों के बैठने का स्थान पृथक् २ हों और पृथक् पृथक् ही रजिस्टर (निबंध पुस्तक) रखें हों। और उनमें निम्न लिखित बातों का उल्लेख हो।

१. सरकारी दफ्तरों की संख्या। २. कारखानों में काम तथा उत्पत्ति। ३. जहां जहां पर रुपया लगा है उनमें कितना लाभ, नुकसान, खर्च, विलंब, तथा बयाई है और कितने काम हैं जिनमें रुपया फंसा है और तनखाह तथा बेगार की मात्रा क्या है। ४. रत्न, बहुमूल्य तथा साधारण पदाथ और जांगलिक द्रव्यों की कीमत क्या है ? उनके समान दूसरा कौनसा पदार्थ है ? उनका प्रतिमान, भार तथा तोल क्या है ? । ५. देश ग्राम जाति कुल तथा संघों के रीति रिवाज, उपनियम, चरित्र आदि क्या हैं ? । ६. सरकारी नौकरों की आमदनी, जमींदारी, राज्यकर छूटने की राशि, तथा भक्त वेतन या अलाउंस क्या है ?। ७. राजा राजमहिषी तथा राजकुमार को रत्न, जमीन, तथा लाभ क्या क्या मिले ? कौन कौन से पदार्थ मिले जो कि आपत्ति के समय काम आने वाले हैं ?। ८. शत्रुओं तथा मित्रों के साथ सन्धि, लड़ाई, धन देना तथा लेना।

अध्यक्ष का कर्त्तव्य है कि वह इन रजिस्टरों के द्वारा सूचित करे कि–कौन कौन सा काम करना है, किया जा चुका है तथा बचा पड़ा है, क्या आमदनी तथा जमा खर्च है ? कौन कौन से नये काम शुरू किये हैं और उनकी क्या हालत है ?। इसके साथ ही साथ अध्यक्ष को चाहिये कि उत्तम मध्यम तथा निकृष्ट कामों में उन्हीं

लोगों को नियुक्त करे जो कि उसके योग्य हों। यदि राजा उत्पादक कामों में उचित धन न खर्च करे तो उसको पीछे से पश्चाताप करना पड़ता हैं।

एक साथ मिलकर काम करने वाले तथा लाभ बांटने वाले कारीगरों के लड़के भाई स्त्रियां लड़कियां तथा नौकर काम की कमी को पूरा करें। ३५४ दिन तथा रात के काम को संवत्सर या वार्षिक काम कहते हैं। आषाढ़ के अन्त में उनको काम के अनुसार मेहनताना दिया जाय। बीच में किये गये नये कामों का हिसाब मासिक या अधिक मासिक होना चाहिये।

राजा को खुफिया के द्वारा कार्य्य तथा उसके संबंध की अन्य बातें पता लग जांयगी इस बात की पर्वाह न कर राजकर्मचारी प्रायः अज्ञान से, तकलीफ तथा मेहनत से बचते हुए आलस्य से, भोग विलास में लीन होकर प्रमाद से, डाट डपट अनर्थ अधर्म से डर कर भय से, दूसरों के अनुग्रह प्राप्त करने की इच्छा करते हुए लालच से, नुकसान पहुंचाने की इच्छा रखते हुए गुस्से से, विद्या धन तथा दर्बारी लोगों की दोस्ती का अभिमान कर दर्प से या तोल माप गणना में फरक कर लोभ से सरकारी आमदनी को प्राप्त करके भी रजिस्टर में दर्ज नहीं करते।

मनुसंप्रदाय के लोगों का मत है कि जो कर्मचारी जितने धन का नुकसान करे उस पर उतना ही जुरमाना किया जाय और अपराध के अनुसार क्रमशः कुछ २ जुरमाने की रकम बढ़ा दी जाय। पाराशरों के मत में अपराध का ८ गुणा, बार्हस्पत्यों के मतमें १० गुणा, औशनसों के मत में २० गुणा और कौटिल्य के मत में अपराध के अनुसार जुरमाना होना चाहिये।

गाणनिक्य हिसाब किताब करने के लिए आषाढ़ में आवें। भिन्न भिन्न जिलों तथा प्रान्तों के आये हुए गाणनिक्यों को एक स्थान में न रखा जाय और न उनको एक दूसरे के साथ वार्त्तालाप करने की आज्ञा दी जाय। गाणनिक्यों को रजिस्टर पदार्थ तथा धन साथ लाना चाहिये और उनपर राजकीय मुद्रा लगी रहनी चाहिये। आय व्यय का लेखा तथा कुल योग सुनने के बाद नीवी

(खर्च के बाद बची राजकीय संपत्ति) ग्रहण की जाय । यदि कोई हिसाब में किसी एक अंश को बढ़ा कर या घटाकर आमदनी अधिक करे तो उस को आठगुना इनाम दिया जाय । इससे विपरीत होने पर उसी से धन वसूल किया जाय। जो लोग समय पर रजिस्टर तथा नीवी को लेकर न पहुंचे उनपर देय धन का दस गुना जुरमाना किया जाय। यदि कारणिक (आय व्यय निरीक्षक) कार्मिक (राज्यस्व ग्रहण करने वाला) के आने पर आय व्यय का लेखा न ले उसको प्रथम साहस दंड दिया जाय। इससे विपरीत होने पर कार्मिक को दुगना दंड मिले।

महामात्र कार्य्य के संबंध में संपूर्ण बातें सुनावें। इनमें से जिसने मिलकर काम न किया हो, अलग जा बैठा हो तथा झूठ बोला हो उसको उत्तम दंड दिया जाय । जिसने दैनिक आय व्यय का लेखा तैय्यार न किया हो उसको महीने भरका समय दिया जाय। यदि इस पर भी वह तैय्यार न करे तो उसको महीने पीछे २०० पण दंड मिले । जिनका थोड़ा सा ही काम बच गया हो उनको ५ दिन का अवसर दिया जाय। इस के बाद दैनिक आय व्यय, राज्य नियम, देशप्रथा, व्यवहार आदि विषयक खर्च, आमदनी तथा अन्य बातों का निरीक्षण किया जाय। दिन, ५ दिन, पक्ष, मास, ४ मास तथा साल का आय व्यय का लेखा एक दूसरे के साथ मिलाकर ठीक कर लिया जाय। साथ ही देश,स्थान, कर स्थान, प्राप्त धन, राजकीय आय की मात्रा, आदि को, देने दिलाने, लिखने तथा ग्रहण करने वालों की रकमों के साथ मिला लिया जाय। इसी प्रकार निर्दिष्ट देश, स्थान, व्यय स्थान, देय धन, राजकीय व्यय आदि को करने, कराने, लिखने तथा ग्रहण करने वालों की रकमों के साथ खर्च के धन को समान कर लिया जाय।

यदि कोई कारणिक (राज्याधिकारी विशेष) राजा की आज्ञा के अनुसार काम न करे या दूसरे को काम करने से रोके या आय व्यय में गड़बड़ करे उसको प्रथम साहस दंड दिया जाय । जो कोई रकम लिखने में क्रम का ख्याल न करे, क्रम बिगाड़ दे, वे जानी रकम लिख या कई बार एकही रकम दर्ज करे उसको १२

पण दंड दिया जाय। नीवी को विगाड़ कर लिखने में दुगुना, खा जाने में आठ गुना, नाश करने में पांच गुना तथा नुकसान भरना (प्रतिदान), झूठ बोलने में चोरी संबंधी और याद कर पीछे से लिखने में भी दुगुना दंड दिया जाय।

राजा का कर्त्तव्य है कि छोटे मोटे कसूर को पी जाय, हल्के से भी अच्छे काम पर प्रसन्न हो जाय और बहुत ही अधिक लाभ पहुंचाने वाले अध्यक्ष का इनाम देकर आदर करे।

२६ प्रकरण।

ग़बन किये गये धन का प्राप्त करना।

कोश पर ही संपूर्ण कार्य्यों का निर्भर है। इसलिये सबसे अधिक ध्यान कोश पर ही देना चाहिये। कोश वृद्धि के–१प्रचार-समर्धि [उत्पादक कामों से अधिक लाभ होना] २ चरित्रानुग्रह [अच्छे आदमियों पर कृपा] ३ युक्त प्रतिषेध [अधिक संख्या में नियुक्त राज्य कर्मचारियों का कम करना] ४ सस्यसंपत् [फसल का अच्छा होना], ५ पण्यबाहुल्य [व्यापार-वृद्धि], ६ उपसर्ग प्रमोक्ष [दैवी विपत का कम होना], ७ परिहरक्षय (छोड़े राज्य करों का घटना) ८ हिरण्योपायन (सोने में उपहार या डाली का आना) ९चोरग्रह आदि नौ तरीके हैं कोश क्षय के भी१प्रतिबन्ध(रुकावट,२प्रयोग(सूदपर लगाना),३व्यवहार (व्यपार), ४ अवस्तार (ग़बन), ५ परिहापण (राजकीय आयको कम करना), ६ उपभोग (ग़बन का भेद), ७ परिवर्त्तन (वस्तुविनिमय) तथा ८ अपहार (हिसाब किताब में गड़बड़) आदि आठ ही भेद हैं।

१. प्रतिबन्ध। प्राप्त आमदनी का वही में न उतारना, सिद्ध न मानना तथा राज्य कोश में न भेजना प्रतिबन्ध कहाता है। इसमें नुक्सान हुए धनका दस गुना जुरमाना किया जाय।

२. प्रयोग । खजाने या कोश की चीज़ों को सूद पर लगाने का नाम प्रयोग है।

३. व्यवहार। चीजों का क्रय विक्रय ही व्यवहार है। इसमें लाभ का दुगुना दंड दिया जाय।

४. अवस्तार। समय आने पर भी जो रकम वसूल नहीं करता या वसूल हुई रकम को दर्ज नहीं करता इसका नाम अवस्तार है। इसमें नुक्सान का पांच गुना जुरमाना किया जाय।

५. परिहापण। जो प्राप्त आय को छिपाता है या व्यय को बढ़ाता है इसका नाम परिहापण है। इसमें नुक्सान का चारगुना जुरमाना करना चाहिये।

६. उपभोग। अपने आप या दूसरों के द्वारा जो राजकीय द्रव्यों के ग़बन करने का नाम उपभोग है। रत्न विषयक ग़बन में मृत्युदंड, सार द्रव्य विषयक ग़बन में मध्यमदंड तथा साधारण द्रव्य या जांगलिक ग़बन में नुक्सान के बराबर दंड दिया जाय।

७. परिवर्त्तन। राजकीय द्रव्यों का दूसरे द्रव्यों के साथ परिवर्त्तन करने का नाम परिवर्त्तन है। शेष नियम इसमें उपभोग के तुल्य हैं।

८. अपहार। प्राप्त हुई आय का प्रवेश न करना, वही में दर्ज किये खर्च को न करना तथा अवशिष्ट आय व्यय लेखा ठीक न रखना आदि का नाम अपहार है। इस अपराध में १२ गुना दंड देना चाहिये।

सरकारीधन ग़बन करने के चालीस तरीके हैं जो इस प्रकार दिखाये जा सकते हैं:—

१. धन तो लेलिया परन्तु वही पर दर्ज नहीं किया। २. वही पर दर्ज तो कर लिया परन्तु धन पीछे से ग्रहण किया। ३. प्राप्य धन को अप्राप्त लिखा। ४. अप्राप्यधन को प्राप्त लिखा। ५. प्राप्त धन को अप्राप्य लिखा। ६. अप्राप्त धन को प्राप्त लिखा। ७. मिला कम परन्तु वही पर अधिक करके लिखा। ८. मिला अधिक परन्तु

वही पर कम करके लिखा। ६. मिला किसी मद्दे और लिखा किसी मद्दे। १०. मिला कुछ और लिखा कुछ। ११. जो देना था न दिया १२. जो न देना था वह दिया। १३. समय पर न दिया। १४. असमय पर दिया। १५. दिया कम और लिखा बहुत। १६. दिया अधिक और लिखा कम। १७. दिया कुछ और लिखा कुछ। १८. दिया किसी मद्दे और लिखा किसी मद्दे। १६. वही में दर्ज कर न दर्ज किये हुए के खाने में लिख दिया। २०. वही में दर्ज न कर दर्ज किये हुए के खाने में लिख दिया। २१. जांगलिक द्रव्य को दाम न देकर खजाने में रख लिया। २-. दाम देकर भी जांगलिक द्र०य को खजाने में न रखा। २३. थोड़ी सी राशि को बहुत बड़ी राशि करके लिखा। २४. बहुत बड़ी राशि को थोड़ा करके लिखा। २५. दामी चीज को कम दामी चीज से बदल दिया। २६ कम दामी चीज को दामी से बदल दिया। २७. कीमत चढ़ा के लिखा। २८. दाम घटा के लिखा। २६. [तनखाह ग़बन करने के लिये] रात बढ़ा कर लिखा। ३०. रात घटा कर लिखा। ३१. साल में मास घटा दिया। ३२. मास में दिन घटा दिया। ३३. प्राप्त धन को घटा बढ़ा दिया। ३४. प्राप्त धन के मूल स्थान में गड़बड़ कर दिया या दान लिख लिया परन्तु दिया नहीं। ३५. कार्य्य तथा फल लिखने में गड़बड़ करदी। ३६. पूरी रकम न लिखी तथा जोड़ गड़बड़ किया। ३७ पदार्थों के गुण ठीक न लिखे या कीमत में फरक कर दिया। ३८. तोल न ठीक लिखा। ३६. माप न ठीक लिखा। ४०. नाप न ठीक लिखा।

खजाने की रकम गायब होने पर निधायक [खजांची] निबंधक (मुनीम), प्रतिग्राहक (खजाने में रखने के लिये पदार्थ ग्रहण करने वाला) दायक (देने वाला), दापक (दिलाने वाला) मन्त्रि (सलाहकार) वैयावृत्यकर (बेचने वाला) आदि सरकारी नौकरों की क्रमशः परीक्षा की जाय। जो झूठ बोले उसको अपराध के अनुसार दंड दिया जाय। जनता में डुगडुगी पीटी जाय कि जिन लोगों को इस व्यक्ति से नुक्सान पहुंचा है वह सरकार को खबर दें। जो सूचना दे उसकी सूचना के अनुसार उसको दंड दिया जाय। अनेक अपराधों में प्रत्येक अपराध का उससे उत्तर पूछा

जाय। एक भी अपराध के सिद्ध होजाने पर सब अपराधों का उत्तर उससे मांगा जाय। यदि उसने बहुत बड़ी रकम ग़बन की है तो उससे सारी की सारी रकम वसूल की जाय। जिसने ग़बन करने की सरकार को सूचना दी हो, यदि उसकी सूचना सत्य सिद्ध हो तो उसको वसूल किये हुए धन का छठा भाग मिले। यदि वह नौकर है तो उसको बारहवां भाग दिया जाय। अधिक धन ग़बन करने की सूचना देने पर जो थोड़े धन ग़बन करने को ही सिद्ध कर सके उसको सिद्ध किये हुए धन का भाग ही मिले। यदि वह ग़बन करने के अपराध को सिद्ध न कर सके तो उस पर कोड़े पड़ें या उस पर सोने में जुरमाना किया जाय। उसको दंड से किसी भी हालत में मुक्त न किया जाय।

यदि सूचना देने वाला अपराधी से मिल कर अपराध का निर्णय किसी दूसरे पर फेंक दे या अपने आप को किसी दूसरे तरीके से बचाने की कोशिश करे तो उसको मृत्यु दंड दिया जाये।

२७ प्रकरण।

उपयुक्त परीक्षा

अमात्य के गुणों से युक्त संपूर्ण अध्यक्ष भिन्न भिन्न कामों में नियुक्त किये जांय। मनुष्य के चित्त के स्थिर न होने से इनके कामों की प्रतिदिन देख भाल करता रहे। मनुष्य घोड़े की तरह काम में जोतते ही बिगड़ने लगते हैं। यही कारण है कि उनके-कार्य्य करने के साधन, स्थान, समय, कार्य्य, उत्पत्ति तथा शुद्ध लाभ के संबंध में सदा ही जानता रहे। वह लोग आपस में मिले या झगड़े बिना ही आज्ञा के अनुसार काम करते रहें। यदि कहीं मिल गये तो रुपया खा जांयगे और कहीं झगड़ गये तो सारा का सारा काम ही बिगाड़ देगें। आपत्ति या बीमारीको छोड़कर स्वामीकी आज्ञाके बिना वह कुछ भी नया काम न करें। यदि वह लोग प्रमाद करें तो उन पर दैनिक भृति का दुगुना जुरमाना किया जाय। जो कहे हुए काम को उत्तमता के साथ करे उसको इज्जत के साथ साथ ऊंचा

पद मिले। पुराने आचार्यों का मत है कि जो खर्चा तो अधिक करें और उसके बदले उतनी आमदनी न करें वह राज्यस्व खाजाते हैं और उससे उल्ट जो खर्च के अनुसार आमदनी इकट्ठी करे उन को ईमान् दार समझना चाहिये। कौटिल्य का मत इससे भिन्न है। वह इस बात के पता लगाने के लिये खुफिया पुलिस को ही उचित साधन समझता है। जो राज्स्व कम प्रकट करता है वह एक प्रकार से राजा को ही खारहा होता है। यदि उस से यह काम अज्ञानादिक से होगया हो तो उसको नुकसान अपनी ओर से भरना चाहिये। जो राज्यस्व दुगुना प्रगट करता है वह प्रजा को लूटता तथा तंग करता है। यदि वह राजा के लिये अधिक धन इकट्ठा करके लावे तो न्यून-अपराध होने पर आगे से उसको ऐसा बुरा काम करने से रोक देना चाहिये। यदि अपराध बहुत अधिक हो तो उसको दंड देना चाहिये।

जो खर्च को घटाकर आमदनी बढ़ाता है वह श्रमियों की मेहनत मजदूरी को खाता है। समय, काम, पदार्थ, मूल्य, तनखाह आदि जिसमात्रा में वह खावे उसी मात्रा में उसको राज्य दंड देना चाहिये। इस लिये जो जिस विभाग का शासक है वह भिन्न भिन्न कामों के वास्तविक जमा खर्च को संक्षेप या विस्तार से जाने और मूल हर, तादात्विक तथा कदर्य्य लोगों को रोकता रहे।

मूलहरः—जो बाप दादाकी संपत्ति को अन्याय से नष्ट करदे उसको मूलहर कहते है।

तादात्विकः—जो उत्पन्न पदार्थ या आमदनी के भविष्य का विना विचार किये शीघ्र ही उपभोग कर डाले उसको तादात्विक या फजूल खर्च कहते हैं।

कदर्यः—जो नौकरों को या अपने आपको कष्ट देकर धन इकट्ठा करता है उसको कदर्य या कंजूस कहते हैं।

जो कंजूस या कदर्य एक बहुत बड़ी आमदनी के स्थान का अध्यक्ष होकर प्राप्त आमदनी को घर में गाड़ देता है, नागरिकों या ग्रामीणों के पास रखदेता है या शत्रुके राष्ट्र में पहुंचा देता है—खुफिया पुलिस के लोग उसके सलाहकार, दोस्त, नौकर चाकर,

रिश्तेदार आदिकों के साथ साथ उस की आमदनी खर्च का पूरा हाल जानते रहें। जो शत्रु के राष्ट्र के साथ संबंध रखता हो उस से गुप्त हाल पूंछा जाय और इसके बाद दुश्मन राजा की आज्ञा लेकर उसको मरवा दिया जाय। अध्यक्षों को चाहिये कि संख्यायक, लेखक, रूप दर्शक, नीवी ग्राहक तथा उत्तराध्यक्ष के साथ दोस्ती रखते हुए उनके कामों को करें। उत्तराध्यक्ष का तात्पर्य्य हाथी, घोड़े, रथ, पर चढ़ने वाले लोगों के पीछे "अन्तेवासी" के रूप में और संख्यायक लेखक आदिकों के पीछे खुफिया पुलिस के रूप में काम करने वा ले लोगों से है।

प्रत्येक राजकीय विभाग में थोड़े ही समय के लिये भिन्न भिन्न लोग नियत किये जांय।

जैसे जीभ पर रखी शहत का स्वाद न लेना कठिन है वैसे ही राज्य कर्मचारियों का राजकीय आमदनी का न खाना असंभव है। जैसे मच्छी पानी के अन्दर पानी पीती हुई नहीं देखी जा सकती उसी प्रकार भिन्न २ कामों के करवाने के लिये नौकरी पर रखे राजकीय कर्मचारी रुपया खाते हुए नहीं पकड़े जा सकते। आकाश में उड़ते हुए पक्षियों की चाल जानी जा सकती है परन्तु छिपे दिल सरकारी नौकरों की चाल का जान लेना सर्वथा दुःसाध्य है। जो सरकारी नौकर अन्याय से बहुत सा धन इकट्ठा करे उस का धन ज़ब्त कर लिया जाय या उसको दूसरे काम पर नियुक्त किया जाय। ऐसा यत्न किया जाय जिससे वह राजकीय आमदनी को न खाने पावें और जिन्होंने खाई हो वह उसको उगल दें। जो राज्यस्व का अपहरण न करते हों और न्याय पूर्वक उसको बढ़ाते हों उनको राजभक्त समझ कर स्थिर रूप से राजकीय नौकरी मिलनी चाहिये।

२८ प्रकरण।

शासनाधिकार।

शासन का तात्पर्य्य राजाज्ञा है। राजा का मुख्य काम शासन

करना है। संधि तथा युद्ध भी उसी पर निर्भर है। इसलिये अमात्य के संपूर्ण गुणों से युक्त, उत्तम भाषा तथा पद शीघ्रही बनाने वाले, प्रशस्त लिपि लिखने वाले तथा दूसरों के लिखे लेख को शीघ्र ही पढ़ने में समर्थ व्यक्ति को लेखक नियुक्त करना चाहिये। लेखक का काम है कि वह दत्तचित्त होकर राजा की आज्ञा सुने और सोच विचार कर ऐसा लेख लिखे जिसका अर्थ स्पष्ट हो। राजाओं के संबंध में जो आज्ञापत्र हों उनमें उनके वंश नाम तथा देश का उल्लेख हो। औरों के संबंध में नाम तथा देश का उल्लेख ही पर्य्याप्त है। लेखक को चाहिये कि वह जाति, कुल, स्थान, उमर, प्रसिद्धि, काम, संपत्ति स्वभाव, देश-काल तथा रिश्तेदारी आदि पर गंभीर विचार कर जैसा पुरुष ही उसी के अनुरूप लेख लिखे। अच्छा लेख वही समझा जाता है जिसमें १ अर्थ क्रम २ संबंध ३ परिपूर्णता ४ माधुर्य्य ५ औदार्य्य तथा ६ स्पष्टता मौजूद है।

१. लेख में महत्व के अनुसार संपूर्ण बातों के क्रमशः लिखने का नाम अर्थक्रम है।

२. प्रस्तुत अर्थ के अनुसार ही समाप्ति पर्य्यन्त लेख लिखने का नाम संबंध है।

३. परिपूर्णता उसी को कहते हैं जिस में अर्थ पद तथा अक्षर न अधिक तथा न कम हो, और जिसमें हेतु उदाहरण तथा दृष्टान्त से अर्थ को परिपुष्ट किया गया हो और जिसका प्रत्येक पद निर्दिष्ट अर्थ को सूचित करता हो।

४. सरलता तथा विना किसी बड़ी मेहनत के उचित अर्थ को सूचित करने वाले सुन्दर शब्दों के प्रयोग का नाम माधुर्य्य है।

५. ग्राम्य शब्दों के प्रयोग न करने का नाम ही औदार्य्य है।

६. स्पष्टता उसी को कहते हैं जिस में सरल शब्दों का प्रयोग हो।

अकारादि वर्ण संख्या में ६३ हैं। वर्णों के समूह का नाम ही पद है। नाम, आख्यात, उपसर्ग तथा निपात के भेद से यह चार प्रकार का है। पदार्थ विशेष (सत्व) को प्रगट करने वाले शब्द को नाम तथा जिसका कोई लिंग न हो और जो कि क्रिया विशेष को सूचित करता हो, उसको आख्यात कहते हैं। क्रिया के पहिले लगाने वाले प्र आदि का नाम उपसर्ग और अव्ययादि का नाम

निपात है । एक अर्थ को पूर्ण रूप से प्रगट करने वाले पद समूह का नाम वाक्य है । कम से कम एक पद और अधिक से अधिक तीन पद, अर्थ के अनुसार प्रत्येक वर्ग में होने चाहियें । आज्ञापत्र की समाप्ति या मौखिक आज्ञा को सूचित करने के लिये इति शब्द का प्रयोग होना चाहिये । आज्ञापत्र लिखवाने के मुख्य उद्देश्य १ निन्दा २ प्रशंसा ३ पृच्छा ४ आख्यान ५ अर्थना ६ प्रत्याख्यान ७ उपालंभ ८ प्रतिषेध ६ चोदना १० सांत्व ११ अभ्यवपत्ति १२ भर्त्सना तथा १३ अनुनय आदि तेरह हैं ।

१. किसी के कुल, शरीर तथा काम के विषय में बुरी बात कहना 'निन्दा' और २ अच्छी बात कहना 'प्रशंसा' ३ "यह कैसे हुआ" इस ढंग पर पूछना 'पृच्छा' ४ यह बात ऐसे हुई इस ढंग पर कहना 'आख्यान' ५ मांगना 'अर्थना' ६ न दूंगा यह कहना 'प्रत्याख्यान' ७ "आप को ऐसा न करना चाहिये था" ऐसा कहना 'उपालंभ' ८ विरुद्ध करना या रोकना 'प्रतिषेध' ६ आज्ञा देना 'चोदना' १० "मेरे तथा आप में भेद ही क्या है । जो मेरी संपात्ति है वह सब आप के लिये उपस्थित है ।" इस ढंग की बात कहना 'सान्त्व' ११ 'तकलीफ में सहायता देना' 'अभ्यवपत्ति' १२. तेरा सत्यानास हो जायगा इस ढंग पर दोष दिखाते हुए झिड़कना 'भर्त्सना' तथा १३ समझाने का नाम 'अनुनय' है । रुपया, प्रतिज्ञा-भंग तथा कष्ट के समय में किये जाने के भेद से अनुनय तीन प्रकार का होता है ।

शासन या आज्ञापत्र के १ प्रज्ञापन २ आज्ञा ३ परिदान ४ परीहार ५ निसृष्टि ६ प्रावृत्तिक ७ प्रतिलेख ८ सर्वत्रग आदि आठ भेद हैं ।

१. प्रज्ञापन । अमुक ने यह कहा है, यदि इस में कुछ तत्व है तो यह चीज दे दीजिये, शत्रु यह कर कहा है, इत्यादि बातों के विषय में राजा को सूचना देने का नाम प्रज्ञापन है । यह कई प्रकार का होता है

२. आज्ञा। सरकारी नौकरों को जिस पत्र के द्वारा राजा इनाम या दंड दे उस को आज्ञालेख के नाम से पुकारते हैं।

३. परिदान। प्रीति से या दान देने की इच्छा से जब राजा योग्य व्यक्तियों को पुरस्कार देता है उसको परिदान कहते हैं।

४. परीहार। जाति ग्राम तथा देश के सम्बन्ध में राजा जो अनुग्रह करता है उसको परीहार के नाम से पुकारा जाता है।

५. निसृष्टि। कार्य्य करने की आज्ञा या लाइसैन्स देने का नाम चाहे वह वाचिक हो और चाहे वह लैखिक हो निसृष्टि कहा जाता है।

६. प्रावृत्तिक। दैवी तथा मानुषी विपत्ति राजा के प्रावृत्तिक लेख का ही परिणाम मानी जाती है।

७. प्रतिलेख। राजा के आज्ञा लेख को देख कर तथा समझ कर जो उत्तर लिखा जाता है उसको प्रतिलेख कहते हैं।

८. सर्वत्रग। राजा अपने नीचे के मांडलिक राजाओं तथा मुख्य शासकों को रक्षा, उपकार तथा उपाय के विषय में जो खुली आज्ञा देते हैं उसको सर्वत्रग नाम से पुकारा जाता है।

I साम, II उपप्रदान, III भेद तथा IV दंड के भेद से उपाय चार प्रकार के हैं। इन में साम—१ गुण संकीर्त्तन २सम्बन्धोपाख्यान ३ पर–उपकार संदर्शन ४ आयति प्रदर्शन तथा ५आत्मोपनिधान के भेद से पांच प्रकार का है।

I साम–१ गुण संकीर्त्तन। वंश, शरीर, कर्म, चरित्र, विद्या तथा समृद्धि के विषय में गुण तथा अगुण का पता लगा कर प्रशंसा या स्तुति करने का नाम गुण संकीर्त्तन है।

२. सम्बन्धोपाख्यान। जात, यौन [खून का सम्बन्ध], रिश्तेदारी, गुरु, पुरोहित, कुल तथा हृदय-मित्र (दोस्त) के संबंध में बात चीत करने का नाम संबंधोपाख्यान है।

३. पर-उपकार संदर्शन। स्वपक्ष तथा परपक्ष के पारस्परिक उपकारों को दिखाने का नाम पर-उपकार संदर्शन है।

४. आयति-प्रदर्शन। इस मामले में यह बात करने से हम दोनों को यह लाभ होगा इस ढंग की आशा दिलाने का नाम आयत्ति-प्रदर्शन है।

५. आत्मोपनिधान। मुझ में तथा आप में कोई भेद नहीं है। इस लिये मेरी चीज को आप अपने काम में ला सकते हैं इस ढंग की बात कहने का नाम आत्मोपनिधान है।

II उपप्रदान। धन के द्वारा उपकार करने का नाम उपप्रदान है।

III. भेद। झिड़कना तथा संदेह पैदा कराने का नाम भेद है।

IV. मारना, तकलीफ देना तथा रुपया ग्रहण करने का नाम दंड है।

१ अकान्ति २ व्याघात ३ पुनरुक्त ४ अपशब्द ५ संप्लव आदि लेख के पांच दोष हैं।

१. अकान्ति। कागज का मैलापन या रद्दी होना, अक्षरों का छोटा बड़ा होना तथा स्याही का फीका होना अकान्ति कहलाता है।

२. व्याघात। पहिले कुछ और पीछे कुछ लिखने का नाम व्याघात है।

३. पुनरुक्त। एक वार कही बात को बिना किसी विशेषता के दुहराने का नाम पुनरुक्त है।

४. अपशब्द। लिंग, वचन, काल तथा कारक के अन्यथा प्रयोग का नाम अपशब्द है।

५. संप्लव। लिखी बात का अनुचित विभाग तथा अन्य कई प्रकार का गड़बड़ का नाम संप्लव है।

सब शास्त्रों को विचार कर तथा उनके प्रयोगों को देखकर कौटिल्य ने राजा के लिये शासन का विधान किया।

२६ प्रकरण।

कोश में ग्रहण करने के योग्य रत्नोंकी परीक्षा।

कोशाध्यक्ष [खजांची] कोशमें ग्रहण करने के योग्य रत्न, सार द्रव्य, साधारण पदार्थ, जांगलिक द्रव्य आदियों की योग्य योग्य मनुष्यों के सहारे परीक्षा करे।

१ ताम्रपर्णिक २ पाराड्यकवाटक ३ पाशिक्य ४ कौलेय ५ चौर्णेय ६ माहेन्द्र ७ कार्दमिक ८ स्रौतसीय ९ ह्रादीय तथा १० हैमवत के भेद से मोती दस प्रकार का होता है। सीपी शंख तथा अन्य भिन्न २ पदार्थों में से ही मोती निकलता है।

मसूरक [मसूर की तरह], त्रिपुटक [तीन गांठ पड़ा], कूर्मक [कछुए की पीठ की तरह] अर्धचन्द्रक [आधा गोल] कंचुकित [मोटे छिलके वाला] यमक [जुड़िया], कर्तक (कटा हुआ), खरक (खुर्दरा) सिक्तक (दागी) कामंडलुक (कमंडलुकीतरह), काला, नीला तथा सख्त (जिसमें छेद न किया जासके) मोती अप्रशस्त या घटिया होता है। जो मोती मोटा गोल चमकीला सफेद भारी चिकना कोमल तथा निस्तल (जिसमें कहीं पर भी तल न हो) हो उसको प्रशस्त या बढ़िया समझना चाहिये। शीर्षक (एक मोटे दाने वाली) उपशीर्षक (५ मोटे दाने वाली) प्रकांड (क्रमशः बड़े होते हुए मोती वाली) अवघाटक (एक सदृश दाने वाली) तरल-प्रतिबंध (एक चमकीले दाने वाली) आदि मोती की मालाओं के नाम हैं। मोती की लरों के१००८को इन्द्रच्छन्द,५०४ को विजयच्छन्द, ६४ को अर्धहार, ५४ को रश्मिकलाप ३२ गुच्छा, २७ को नक्षत्र माला, २४ को अर्धगुच्छ, २० को माणवक, और १० को अर्धमाणवक कहते हैं। इन्हीं के बीच में यदि मणि हो तो उसको माणवक नामसे पुकारा जाता है। जब एक दाना तो बहुत बड़ा हो तो उसको शुद्ध हार कहते हैं। इसी प्रकार अन्यों के नाम

समझने चाहियें। यदि इनके बीच में मणि होतो इनका नाम अर्ध माणवक हो जाता है। जिस माला में तीन या पांच लंबे मोती के दाने हों उसको फलकहार नाम से पुकारते हैं। शुद्ध एक लरको एकावली और यदि इसके बीचमें मणि पड़ा हो तो इसको यष्टि कहते हैं। सोने तथा मणियों के हार को रत्नावली और यदि इसमें मोती भी हो तो इसको अपवर्तक और यदि सोने के सूतमें परोया गया हो तो सोपानक और यदि बीच में मणि लगी हो तो मणिसो· पानक नाम से पुकारते हैं। शिर, हाथ, पैर, कमर तथा अन्य स्थानों के गहनों के विषय में भी यही समझना चाहिये।

१ कौट २ मौलेयक ३ पारसमुद्रक के भेद से मणि तीन प्रकार की है।

माणिक कमल के रंगका, स्वच्छ लाल तथा पारिजात के फूल की तरह गुलाबी होता है। पन्ना नीला कमल, शिरीष का फूल, पानी, बांस, तोते के पर, के रंगका होता है। पुष्पराग, गोमूत्रक तथा गोमेदक इसी के भेद हैं। नीलम् नीला, चने मटर के फूल, गहरा नीला, जामुन, बादल आदिके रंगका होता है। नन्दक (चित्त को खुश करने वाला) स्रवन्मध्य (बीचमें आब वाला) शीत वृष्टि (ठंडक देने वाला) सूर्यकान्त आदि इसीके भेद हैं। मणि छः कोन, चौकोन तथा गोल होती है। गहरी लाल, स्वच्छ, भारी, चमकीली आब वाली तथा प्रकाश वाली आदि होना मणियों का गुण है। हल्की लाल, बालु सहित, अन्दर से छेद वाली, टूटी फूटी, कठोर तथा रेखा पड़ी होना मणियों का दोष है। विमलक, सस्यक, अंजनमूलक, पित्तक, सुलभक, लोहितक, अमृतांशुक, ज्योतीरसक, मैलेयक, आहिच्छत्रक, कूर्प, प्रतिकूर्प, सुगन्धि कूर्प, क्षीरपक, शुक्तिचूर्णक, शिला प्रवालक, पुलक, शुक्रपुलक, आदि मणियों की भिन्न भिन्न जातियां हैं। इनके अतिरिक्त जातिकी जो मणि मिले उसको काच मणि समझना चाहिये।

१ सभाराष्ट्रक २ मध्यमराष्ट्रक ३ काश्मक या कान्तीरराष्ट्रक ४ श्री कटनक ५ मणिमन्तक तथा ६ इन्द्रवानक आदि हीरे (वज्र) के ६ भेद हैं। खान स्रोत तथा ऐसे ही अन्य स्थान से हीरा प्राप्त

होता है । बिल्ली की आंख, शिरीष का फूल, गोमूत, गोमेद, स्फटिक, मूलारी का फूल आदि रंग के तथा मणियों से भिन्न रंगत के हीरे होते हैं । स्थूल, भारी, मजबूत, समान कोन युक्त, रेखा खींचने के योग्य, रोशनी देने वाला, चमकीला हीरा उत्तम और कोने रहित, चमक से शून्य, मुड़ा तथा असमान हीरा निकृष्ट समझा जाता है ।

१ आलकन्दिक तथा २ वैवर्णिक के भेद से प्रवाल दो प्रकार का होता है । इसका रंग लाल, कमल की तरह गुलाबी लिये होता है । इसके बीच में और कोई चीज नहीं होती है ।

चन्दनों में—सतन लाल तथा मट्टी की गंधका, गोर्शीषक काला–लाल तथा मच्छी की गंधका, हरिचन्दन तोते के पर की तरह हरा आम की गंधका, ताणार्स भी इसी प्रकार का, ग्रामेरुक लाल, लालकाला, पेशाब पाखाने की गंध का, दैवसभेय लाल तथा पद्म की गंधका, जापक भी ऐसा ही, जोंगक तथा तौरूप लाल, लालकाला तथा चिकना, मालेयक गुलाबी, कुचन्दन काला रूखा अगरू की तरह काला लाल या लाल काला, कालपर्वतक सफेद स्वच्छरंग का, कोशाकार पर्वतक काला–कालाचितकबरा, शीतोदकीय कमल की तरह लाल या काला तथा चिकना, नागपर्वतक रूखा तथा काई के रंगका और शाकल पीले-लाल रंग (नारंगी का रंग) का होता है । लघु, चिकना, सफेद, घी की तरह लेपते समय चिकना, खुशबूदार, चमड़े को ठंडक देना, गरमी को सुखाना, पीड़ा कम करना, छूने से अच्छा मालूम पड़ना आदि चन्दन के गुण हैं ।

अगर में—जोंगक काला, कालाचितकबरा या चितकबरा, दोंगक हल्का काला, पारसमुद्रक नाना रंगका, चन्दन की तरह गंध वाला या नई चमेली की गंध का होता है ।

तैलपर्णिक (चन्दन विशेष) में—अशोक ग्रामिक मांस के रंग का तथा पद्म के गंध का, जोंगक लाल पीला तथा कमल के गंधं

का या गोमूत के गंध का, ग्रामेरुक चिकना तथा गोमूत के गंध का, सौवर्ण कुडच्यक लाल पीला तथा निंबू के गंधका, पूर्णद्वीपक पद्म या मक्खन के गंध का, भद्रश्रीय लाल तथा जाति वृत्त के रंग का, आन्तरपत्य चन्दन के गंध का, दोनों ही कुष्ट के गंध का, कालेयक स्वर्ण भूमि में उत्पन्न होता है तथा चिकना पीला, तथा औत्तर पर्वतक रत्न की तरह पीले रंग का होता है।

सार शब्द के द्वारा उपरिलिखित संपूर्ण पदार्थों को ग्रहण किया जाता है। पीसने उबालने तथा जलाने पर तथा अन्यपदार्थों के साथ मिलाने पर इन का गंध ज्यों का त्यों बना रहता है। चंदन तथा अगरु के सदृश ही तैलपर्णिक पदार्थों के गुण हैं।

१ कान्तनावक २ प्रैयक तथा ३ उत्तरपर्वतक के भेद से चमड़ा तीन प्रकार का है। चमड़ों में कान्तनावक मयूर पंखी रंग का, तथा प्रैयक नीला पीला सफेद तथा बुंदकीदार होता है। दोनों ही ८ अंगुल लंबे होते हैं। द्वादश ग्रामीय में बिसी तथा महाबिसी नामक चमड़े होते हैं। इन में से बिसी अस्पष्ट रंग वालयुक्त तथा चित्र विचित्र और महाबिसी सख्त तथा सफेद होता है। दोनों ही १२ अंगुल लंबे होते हैं। आरोह देश में पैदा हुए चमड़ों के श्यामिका, कालिका, कदली, चन्द्रोत्तरा तथा शाकुला पांच भेद हैं। इन में श्यामिका लाल भूरा तथा बिन्दुयुक्त, कालिका भूरा तथा कबूतर के रंग का, दोनों ही ८ अंगुल लंबे, कदली सख्त तथा १ हाथ चौड़ा, चन्द्रोत्तरा १ हाथ लंबा तथा चित्रविचित्र और शाकुला कदली का तिहाई, कोड़ियों की तरह चितकबरा हरिण के चमड़े की तरह बिन्दु तथा लकीर दार होता है। वाह्लव देश के चमड़े के सामूर चीनसी तथा सामूली तीन भेद हैं। इनमें—सामूर काले रंग का तथा ३६ अंगुल लंबा, चीनसी लाल काला या सफेदी लिये काला

और सामूली गेहुंआं रंग का होता है। उद्र जन्तु या उद्रस्थान का चमड़ा १ सातिना २नलतूला तथा ३ वृत्तपुच्छा के भेद से तीन प्रकार का है। इन में—सातिना काला नलतूला नड़े के रंग का, और वृत्तपुच्छा भूरे रंग का होता है। चमड़े के यही कुल भेद हैं। नरम चिकना तथा वहुत रोयेंदार चमड़ा ही उत्तम होता है।

भेड़ का ऊन सफेद गुलाबी तथा पद्म की तरह लाल होता है। इसके खचित [बटे हुए सूतके विना], वानचित्र (भिन्न २ रंगके ऊनके सूत का बना), खंड संघात्य (पट्टियां जोड़कर बना), तथा तंतुविच्छिन्न (ऊनके सूतसे ताना वाना एक सदृश बिना गया)नामक चार प्रकार के कंबल बनाये जाते हैं। ऊनी कंबल है—कौचपक (मोटा कंबल), कुलमितिका [पगड़ी], सौमितिका (वैलके ऊपर डालने के योग्य) तुरंगास्तरण (घोड़ेपर डालने के योग्य) वर्णक (रंगीन) तलिच्छक (बिस्तर की चद्दर), वारवाण (कोट) परिस्तोम [लंबा कंबल] समन्तभद्रक (हाथी पर डालने का कपड़ा) आदि दस भेद हैं। महीन चिकना कोमल तथा नरम कंबल उत्तम होता है।

नैपाल के बने काले रंग के ८ टुकड़ों से बने कंवल का नाम भिंगिसी है। यह वृष्टि से वचने के काम में आता है। अपसारक नामक कंबल भी इसी प्रकार का होता है।

जंगलीपशु के उनके संपुटिका (पैजामे के कामका), चतुरश्रिका (९ अंगुल लंबे कंबल के कामका) लंबरा (लंबा) कटवानक (पर्दे के कामका) प्रावरक (कटवानक का भेद विशेष) सत्तलिका (गलीचे के काम का) आदि भिन्न भिन्न भेद हैं। इनमें से वंगाल का [वाङ्गक] सफेद चिकना, पुंड्र देशका [पौंड्र] काला तथा मणि की तरह चिकना, सुवर्णकुडयदेशका [सौवर्णकुडय] सूर्य की तरह सफेद चमकीला तथा मणिकी तरह चिकना पतीले रंगका चौ-

कोन या भिन्न भिन्न रंगका होता है। इनमें अकेला, जोड़ा, आधा, तिगुना चौगुना आदि अनेक भेद हैं। काशी तथा पुंड्र की सनिया भी इसी प्रकार की होती है। मगध पुंड्र तथा सुवर्णकुडय के भिन्न २ वृक्षों के पत्तों या छालों के रेशे प्रसिद्ध हैं। नागवृक्ष, बड़हर, मौसरी, तथा बढ़ से ही यह रेशे निकाले जाते हैं। नागवृक्ष के पीले, बड़हर के गेहुएं, मौसरी के सफेद और अन्य वृक्षों के मक्खन की तरह सफेद रेशे होते हैं। इनमें सुवर्ण कुडथ के सनिये उत्तम होते हैं। इसी प्रकार चीन भूमि का बना चीनी कपड़ा तथा रेशमी कपड़ा भी होता है।

सूती कपड़ों में---माधुर (दक्खिनी मदुरा), अपरान्तक (कोंकन) कालिंगक (कलिंग देश) काशिक (बनारस) वांगक [ढाका आदि बंगाल] वात्सक [कौशांबी] तथा माहिषक [महिष्मती के आस पास का देश] आदि उत्तम होते हैं।

अध्यक्ष का कर्तव्य है कि वह उन रत्नों के मूल्य, प्रमाण, लक्षण, जाति, रूप, प्रयोग, पुरानों का संशोधन, नया बनाना, देश तथा कालके अनुसार घिसना तथा नष्ट होना, मिलावट, हानिका उपाय आदि भिन्न भिन्न बातों का ज्ञान प्राप्त करे जिनका कि वर्णन इस प्रकरण में नहीं किया गया है।

३० प्रकरण।

खनिज पदार्थों के व्यवसाय का संचालन।

खानों का अध्यक्ष तांबा आदि धातुशास्त्र, पारा निकालना, माणिक पहिचानना आदि विद्याओं को जानकर या जानकार लोगों तथा मेहनती मजदूरों को साथ लेकर, कच्ची धात, कोयला, राख, खुदाई आदि चिन्हों को जमीन या पहाड़ी टीलेपर पाकर—भार रंग गंध तथा स्वाद के अनुसार खानकी परीक्षा करे। परिचित स्थानों, पहाड़ों, गड्ढों, गुफाओं, तराइयों तथा छिपे हुए छेदों में से बहने वाले-जामुन, आम, ताड़, हाथी, हड़ताल, शहत, सिंगरफ, कमल, तोता, मोर आदि के रंगके-काई की तरह चिकने चमकीले

तथा भार वाले जलको सोने से मिश्रित और यदि वह पानी में डालते ही नीचे बैठ जाय, तेल की तरह सब ओर फैल जाय तथा मटियाला रंग का होजाय तो उसको सैंकडा प्रति शतक तांबा तथा चांदी से मिश्रित समझना चाहिये। सोने तांबे से मिश्रित कच्ची धातु के डलों का रूप रंग-पीला, लाल, लाल-पीला परंतु मट्टी पत्थर से भिन्न रंगका, मूंग उर्द के रंगके साथ साथ दही के बूंद की सफेदी लिये, चित्र विचित्र, हल्दी हरड कमल पत्र काई यकृत् सोहा आदि रंगका होता है। उसमें प्रायः बालूकी रेखा, गोल लकीर तथा स्वस्तिका का चित्र पड़ा होता है और तपाने पर वह विना फटे ही धुआं देने लगता है। जिस कच्ची धातु का रंग-शंख कपूर स्फटिक मक्खन कबूतर कछुआ, विमल, मोर का गला, गोमेद, गुड़, शकर, या कोविदार, पद्म, पाटली के फूलों की तरह हो उसको अंजन धातु के साथ मिश्रित जस्ता समझना चाहिये। यदि यह तपाने पर फट जाय, चमकने लगे, काली पड़ जाय, काले रंग की छाया ले ले। चित्र विचित्र होजाय या गरम करने पर न फटे तथा धुआं देने लगे तो उसको चांदी की धातु समझना चाहिये। कच्ची धातु जितनी भारी हो उतनी ही अधिक उसमें असली धातु होती है। उनमें से जो अशुद्ध हों उनको यदि तीक्ष्ण (मनुष्य का पेशाब) गोमूत्र तथा खार में डालकर राजवृक्ष बड़ पीलु गोपित्त के साथ मिलाकर तपाया जाय तथा उसमें भैंस गदहा हाथी के पेशाब लीद आदि मिलाई जाय तो शुद्ध धातु बाहर निकल आती है।

जौ, उर्द, ढाक, पीलु का खार, भेड़ तथा गौ का दूध तथा केला वज्रकन्द (सूरण) आदि की राख धातुओं को मृदु करती है। हजारों हिस्सों में चूर चूर हो जाने वाली भी धातु—शहत मुलहटी, भेड़ी का दूध, तिल्लीका तेल, घी, गुड़, मसाले तथा केले के संमिश्रण में तीन वार डालते ही नरम पड़जाती है। गौ के सींग तथा दांत का चूरण धातुओं की मृदुता तथा कोमलता को स्थिर कर देता है।

तांबा—भारी, चिकना, कोमल या मृदु, होता है। यदि उसमें मट्टी या पत्थर मिला हो तो उसका रंग पीला हरा गुलाबी तथा

लाल होता है। जस्ता चितकबरा, कबूतर के रंग का, सफेद लकीर लिये तथा मांस के गंध का होता है। रांगा कुछ कुछ चितकबरा तथा फौलाद या पक्के लोहे के रंग का होता है। लोहे की रंगत गुलाबी, लाल पीली, नारंगी तथा सिन्दुआर के फूल की तरह होती है और भली मालूम पड़ती है। कच्चा हीरा या कांसुला कांड [पेड़ विशेष] या भुजपत्र [भोजपत्र] के रंग का होता है। माणिक, सफा, चिकना, चमकीला, खनखनाता, ठंडा, तीखा तथा हल्के रंग का होता है।

खानों से जो धातुएं निकलें उनको अपने अपने कारखानों में भेज दिया जाय। जो माल पैदा हो उसके बेचने का एक स्थान पर प्रबन्ध किया जाय और इस नियम का उल्लंघन करने वाले कर्ता [कारीगर या माल तय्यार करने वाला] क्रेता तथा विक्रेता को दंड दिया जाय। खानों में काम करने वाले रत्न को छोड़ कर यदि किसी अन्य वस्तु की चोरी करें तो उनसे उसका आठ गुना वसूल किया जाय। जो चोरी करे या विना आज्ञा के धातुओं में व्यापार करे, बंधुआ बना कर (उस से) काम लिया जाय। पदार्थों के बनाने में अत्यन्त उपयोगी परन्तु बहुत ही अधिक खर्चा चाहने वाली खान को कुछ समय के लिये बेच दे (प्रक्रम) या बंटाई विधि (भाग) पर खोदने के लिये दे। जिस में कुछ भी खर्च न हो (लाघविक) उसको अपने लिये रख छोड़े।

लोहाध्यक्ष तांबा, जस्ता, रांगा, कांसुला, कच्चा हीरा, हड़ताल, तथा लोध के व्यवसायों को खोले तथा इन में बनी चीजों के क्रय विक्रय का प्रबंध करे। लक्षणाध्यक्ष लोहा रांगा जस्ता काला सुरमा आदियों में से किसी एक का एक मासा, चौथाई तांबा तथा चांदी लेकर रुपया (रूप्य-रूप) बनवावे। इसी प्रकार तांबे के पण, अर्धपण, पादिक, एक आठवां (1/8) पण, माषक, अर्धमाषक, काकिणी तथा अर्धकाकिणी बनवावे। रूपदर्शक (मुद्रा-परीक्षक) कौनसा पण, असली (कोश प्रवेश्य) और कौनसा चलतू (व्यावहारिक) है इसका निर्णय करे। रुपयों के बनवाने में ८ प्र० श० रूपिक ५ प्र० श० वयाई (व्याजी) और 1/8 पण पारी-

त्तिक (परीत्ता करवाई) लिया जाय। जो इस नियम का उल्लंघन कर सिक्के बनावें, उन में क्रय विक्रय करें तथा उनकी परीत्ता करें उन पर २५ पण जुरमाना किया जाय। खन्यध्यत्त (सामुद्रिक खान का अध्यत्त) शंख, वज्र, मणि, मुक्ता, प्रवाल तथा त्तार के व्यवसायों को स्थापित करे और इन चीजों का व्यापार करे। लवणाध्यत्त नमक तैय्यार होते ही नमक तथा धन में सरकारी कर एकत्रित करे और उसके बेंचने वालों से मूल्य, रूप (धार्मिक कर) तथा बयाई ग्रहण करे। आगत लवण का छठा भाग ले। भाग ग्रहण करने के बाद जब वह लवण व्यापारियों में बंट जाय तो ५ प्र० श० विक्रय कर, बयाई, रूप (धर्म्म काम के लिये ग्रहण किया गया कर) तथा रूपिक ले। क्रेता चुंगी तथा राज पण्य के नुकसान के रूप में वैधरण (हरजाना) नामक करदें। जो इन राज्यकरों को दिये बिना ही बेंचे उस पर ६०० पण जुरमाना किया जाय।

जो नमक में मिलावट करे या सरकारी आज्ञा के बिना ही उस का क्रय विक्रय करे, बशर्ते कि वह वानप्रस्ती न हो तो उसको उत्तम दंड दिया जाय। श्रोत्रिय तपस्वी तथा बेगार लोगों को खाने के लिये मुफ्त में ही नमक मिले। इससे अतिरिक्त प्रत्येक प्रकार के नमक तथा खार से चुंगी ली जाय।

राजा का कर्त्तव्य है कि मूल्य (कीमत), विभाग (बटाई), व्याजी (बयाई), परिघ (धर्म्मविषयक कर), अत्यय (जुरमाना), शुल्क (चुंगी), वैधरण (हरजाना), दंड (जुरमाना), रूप (धन में धर्म्म विषयक कर) तथा रूपिक (रुपये बनाने का कर) आदि राज्यकरों के साथ साथ खानों से बारह प्रकार की धातुएं ग्रहण करे और इस प्रकार संपूर्ण पदार्थों में राजकीय एकाधिकार स्थापित करे। खान से कोश तथा कोश से दंड उत्पन्न होता है। कोश तथा दंड से संपत्ति से सुशोभित(कोश भूषणा)पृथ्वी प्राप्त होती है।

३१ प्रकरण।

सुवर्णाध्यत्त का कार्य्य।

सुवर्णाध्यत्त सोने चांदी के गहने बनवाने के लिये अत्तशाला

[सुनारघर टकसाल] बनवावे जिस में पृथक् पृथक् चार कमरे हों और एक दरवाजा हो। विशिखा नामक सड़क के बीच में कुलीन विश्वसनीय चतुर सुनार को रखा जाय।

१ जाम्बूनद २ शातकुंभ ३ हाटक ४ वैणव ५ शृंगशुक्तिज ६ जातरूप ७ रसविद्ध तथा ८ आकरोद्गत (खान से निकला) के भेद से सोना आठ प्रकार का है। कमल के केसर रंग का, मृदु, चमकीला तथा ठनठनाने वाला सोना, श्रेष्ठ, लाल पीले रंगका मध्यम तथा लाल रंगका निकृष्ट (अपर) होता है । श्रेष्ठ सोने में से कुछ कुछ सफेद रंगका सोना नहीं मिलता है। यदि कहीं पर यह मिल जाय तो इसमें चार गुना जस्ता मिलाया जाय और इसको पत्ते में पीट कर तपाया जाय। तपाने के बाद लाल पड़ने तथा पिघलने पर इसको तेल तथा गोमूत में डाल दिया जाय। जो सोना खान से निकला हो, जस्ता मिलाकर उसके पत्रे पीटे जांय तथा खरल में उसको कूटा जाय। इसके बाद उसको तपाया तथा पिघलाया जाय तथा उसको केला तथा वज्रकन्द के कल्क में डाला जाय।

१ तुत्थोद्गत २ गौडिक ३ काममल ४ कवक तथा ५ चाक्रवालिक के भेद से चांदी पांच प्रकार की है । श्वेत चिकनी तथा मृदु चांदी श्रेष्ठ होती है । इससे विपरीत जो चांदी तपाने पर फटे उसको निकृष्ट या दुष्ट समझना चाहिये। एक चौथाई जस्ता मिलाकर निकृष्ट चांदी को शुद्ध किया जाय । पिण्डाकार स्वच्छ चमकीली तथा दहीकी तरह सफेद चांदी शुद्ध होती है । कसौटी पर कसने पर जब सोने का रंग हल्दी की तरह हो तो उसको सुवर्ण कहते हैं। एक सुवर्ण में से एक काकणी से सोलह काकणी तक क्रमशः ताम्बे के मिलाने से सोना सोलह प्रकार का हो जाता है। कसौटी पर पहिले उत्तम सोने की रेखा बनाकर उसके बाद दूसरे सोने की रेखा खींची जाय। कसौटी के समतल भाग पर जब सोने की लकीर खींची जाय तो वह नख से या अंगूठे से मलने पर मिट जानी चाहिये। यदि उसको मिटाने के लिये खड़िया डालनी पड़े तो बेईमानी का अनुमान करना चाहिये । गोमूत में जाति हिंगुलुक (चमेली तथा सिंगरफ) तथा कसीस का फूल

डालकर उसमें सोना डाला जाय और उसको अंगूठे से रगड़ा जाय तो सोना सफेद हो जाता है। केसर की तरह चिकनी मृदु चमकीली कसौटी श्रेष्ठ होती है। इसीप्रकार कलिंग देशकी मूंगके रंगकी पत्थर की कसौटी भी श्रेष्ठ मानी जाती है। एक सदृश लाल रंग वाली कसौटी बेचने खरीदने के ही काम में आती है। हाथी के रंगकी या हरी कसौटी बेचने के तथा स्थिर, सख्त, भिन्न वर्ण तथा काले रंग की खरीदने के योग्य होती है। इनमें भी सफेद, चिकनी, समवर्ण, मृदु तथा चमकीली श्रेष्ठ मानी जाती है।

जो सोना तपाने के बाद अन्दर बाहर से केसरिया रंग का या कारण्ड पुष्प के रंग का हो वह उत्तम और जो नीला या काला पड़जाय वह मिलावटी समझना चाहिये। पौतवाध्यक्ष के प्रकरण में इनके तोल तथा बट्टे के विषय में प्रकाश डाला जायगा। उसीके अनुसार सोना दिया तथा लिया जाय। अक्षशाला में राजकीय कर्मचारियों के सिवाय और कोई भी न जाना पावे। इनके अतिरिक्त जो कोई व्यक्ति अन्दर जाय उसको दंड दिया जाय। यदि कोई राज्य कर्मचारी सोना चांदी लेकर वहां जाय तो उसका सोना चांदी छीन लिया जाय। नाना प्रकार के गहने बनाने वाले ठोस पोला जड़ाऊ काम करने वाले, ध्मायक [भट्टी में हवा देने वाले] तथा झाड़ू देने वाले विना रोक टोक के अन्दर आवें तथा जावें। इनके औजार, अपूर्ण काम आदि जहां के तहां ही रखे रहें। सोना, तोला, गहना आदि अक्षशाला के बीच में रखा जाय। सवेरे तथा सायंकाल बना माल देखने के बाद करने तथा कराने वाले की मुद्रा उसपर डाली जाय और इसके बाद उसको सुरक्षित रखा जाय।

सोने के १ क्षेपण, २ गुण ३ क्षुद्र आदि तीन काम हैं।

१. क्षेपण। सोने में हीरादि जड़ना क्षेपण कहाता है।

२. गुण। सोने का सूत खींचना तथा उसका बटना गुण कहाता है।

३. क्षुद्रक। ठोस सोने में छेद करना या उसको पोला करना क्षुद्रक कहाता है।

ठोस कामों में असली सोना ५ भाग और तांबा या चांदी मिला

सोना १० भाग होता है। $\frac{1}{4}$ तांबे से युक्त चांदी या $\frac{1}{4}$ चांदी से युक्त सोना प्रायः काम में लाया जाता है उससे गहनों को बचाया जाय। पोले कामों में ३ भाग माल और २ भाग साधारण पदार्थ या ३ भाग माल और ४ भाग साधारण पदार्थ होता है। जड़ाऊ कामों में तांबा सोना बराबर होते हैं। ठोस या पोले चांदी के गहने पर आधे सोने का पानी चढ़ाया जाय। या चौथाई सोने को सिंगरफ या बालुकाहिंगुलक में मिला दिया जाय।

चमकीला तथा पवित्र सोना तपनीय कहाता है। इसमें जस्ता तथा सैन्धव मिलाया जाय तथा इसके बाद इसको तपाया जाय तो इसका रंग नीला पीला सफेद हरा तोता तथा कबूतर रंग का हो जाता है। सोने में रंगत देने के लिये मयूर पंखी सफेद चमकीले पीले रंग का तीक्ष्ण नामक मसाला दिया जाय।

शुद्ध या अशुद्ध चांदी तूतिया जस्ता, हड्डी, आदि में क्रमशः चार चार वार,गोमय में तीन वार,और पुनः १७ वार तूतिया में तथा नमक में मिलाकर तपाया जाय। इसको १ काकिणी से दो मासे तक यदि सुवर्ण में डालाजाय तो सुवर्ण का रंग सफेद हो जाता है (श्वेततार)। सफेद रंगके सोने के ३० भाग यदि तपनीय सोने के ३ भाग के साथ मिलाकर तपाये जांय तो सोना लाल रंग का और लाल सोना पीले रंगका हो जाता है। तपनीय सोने को गरम कर यदि उसमें रंगका तीन भाग दिया जाय तो उसका रंग लाल पीला हो जाता है। तपनीय का एक भाग यदि सफेद सोने के दो भाग से मिलाया जाय तो उसका मूंग के सदृश रंग हो जाता है। यदि यह काले लोहे के आधे भाग के साथ मिलाया जाय तो इसका रंग काला पड़ जाता है। यदि तपनीय उपरिलिखित योग में पारा मिलाने के बाद दो बार तपाया जाय तो उसका तोते के पंख की तरह रंग हरा हो जाता है। भिन्न भिन्न रंग के सोने को प्रयोग में लाने से पूर्व उसको कसौटी पर कस लेना चाहिये। तीक्ष्ण तथा ताम्र मिलाने का ढंग ठीक तरह जान लेना चाहिये। हीरा माणिक मोती प्रवाल आदि के गहने तथा तोल माप और सोने चांदी के गहनों का प्रमाण सुवर्णाध्यक्ष को मालूम होना चाहिये।

सोना वही उत्तम है जो कि—रंग में एक सदृश हो। कसौटी पर कसा जाकर एक जैसी लकीर दे। खोखला तथा पोला न हो। पक्का चिकना तथा शुद्ध हो। पहिनने पर शोभा बढ़ावे। सदा ही नया मालूम पड़े तथा चमकता रहे। आंखों तथा दिल को प्यारा मालूम पड़े। और जिस के बने गहने बहुत ही भले तथा प्यारे प्रतीत हों।

३२ प्रकरण।

विशिखा में सुनारों का काम।

सौवर्णिक (राजकीय सुनारों का अध्यक्ष) ग्रामीणों तथा नागरिकों का सोना चांदी लेकर कारीगरों से उनकी चीजें बनवावे। कारीगर नियत समय तथा काम के अनुसार काम करें। जो काम का बहाना कर नियत समय में काम न पूरा करें या काम बिगाड़ दें उनकी तनखाह काट लीजाय तथा उससे दुगुना उनपर जुरमाना किया जाय। देर करने पर चौथाई वेतन काटा जाय तथा उसका दुगुना दंड दिया जाय।

जितना तथा जैसा माल लिया जाय वैसा ही लौटाया जाय। देर हो जाने पर भी क्षीण तथा घिसे हुए सिक्कों को छोड़कर पूर्ववत् खरी धातु के सिक्के ही ग्रहण किये जांय। कारीगरों के द्वारा सिक्कों के सोने के चिन्ह तथा विनिमयकर का ज्ञान प्राप्त करे। नये सिक्कों के बनवाने में १ काकणी सुवर्ण-क्षय के रूप में दे। चमक देने के लिये दो काकिणी तीक्ष्ण (लोह धातु का भेद) डाला जाय जिसका छठा भाग सिक्के बनाते समय नष्ट हो ज ता है। रंग बिगड़ने तथा एक मासा सोना कम होने पर प्रथम साहस दंड, मात्रा के कम होने पर उत्तम साहस दंड और तोल तथा वट्टे में वेईमानी होने पर या दूसरी घटिया चीज मिलाने पर उत्तम साहस दंड दिया जाय। सौवर्णिक के देखे विना जो किसी दूसरे स्थान पर चीज बनवावे उस पर १२ पण जुरमाना किया जाय। जो चीज बनावे तथा बनाता हुआ पकड़ा जाय उसको दुगुना दंड दिया

जाय। यदि न पकड़ा जाय तो कण्टक शोधन में विदित तरीकों को काम में लाकर उसका पता लगाना चाहिये और इसके बाद उस पर २०० पण जुरमाना किया जाय या उसका अंगूठा काट डाला जाय।

तुला तथा वट्ट पौतवाध्यक्ष से खरीदे जायं। जो ऐसा न करे उस पर १२ पण जुरमाना किया जाय।

कारीगरों के—घन (ठोस करना), घनसुषिर (पोला करना), संयूह्य (मोड़ना), अवलेप्य (मिलाना), संघात्य (जोड़ना) तथा वासितक (पानी चढ़ाना) आदि काम हैं। सोने चुराने के—१ तुला विषम (डंडी मारना), २ अपसारण (निकाल लेना) ३ विस्रावण (पिघला कर निकाल लेना), ४ पेटक (मोड़ कर निकाल लेना) तथा ५ पिंक (तपाना) आदि ढंग हैं।

(१) तुलाविषम। खराब तुला के–I सन्नामिनी [मुड़ी डंडी की], II उत्कीर्णिका (पकड़ने का स्थान जिसका ऊंचा हो) III भिन्नमस्तका (टूटी हुई), IV उपकंठी (खोखले गले वाली), V कुशिक्या (जिसकी रस्सी खराब हो) VI सकटुकच्या (बुरे पलड़े वाली) VII पारिवेल्या (मुड़ी हुई) तथा VIII अयस्कान्त (चुंबक लगी) आदि आठ भेद हैं।

(२) अपसारण। दो भाग चांदी तथा एक भाग तांबे का नाम त्रिपुटक है। जब खान से निकालने के बाद चांदी तांबा चोरी से अलग किया जाता है। तो उसको त्रिपुटक से निकाला हुआ (त्रिपुटकावसारित) कहते हैं। तांबे से शुल्वावसारित (तांबे से निकाला हुआ), वेल्लक (तीक्ष्ण तथा चांदी का मिश्रण) वेल्लकावसारित (वेल्लक से चुराया हुआ) और आधे तांबा मिले सोने से हेमावसारित (सोने से निकाला हुआ) धातुओं की चोरी के भिन्न भिन्न नाम हैं।

मूकसूषा, पूतिकिट्ट, करटुकमुख, नालीसंदश, जोंगनी, शोरा, सज्जीखार आदि सोना निकालने के भिन्न भिन्न तरीके हैं।

(३) विस्रावण । सुनार लोग चालाकी कर सोने को इस तरह पिघलाते हैं कि उसका कुछ भाग आगमें पहिले से ही पड़े धातु के साथ मिल जाय। बहुधा परीक्षा के समय उसको दूसरी धातु स बदल लेते हैं और इस प्रकार सोना निकाल लेते हैं । इस को विस्रावण कहते हैं। किसी एक धातु को दूसरी धातु के सहारे चुराने को भी यही नाम दिया जाता है।

(४) पेटक । पत्तर पीट कर बनाये जाने वाले गहनों में मोड़ना जोड़ना तथा पत्तर चढ़ाना आदि काम करना पड़ता है। प्रायः उक्त पर सोने का पत्ता चढ़ाया जाता है और उसको मोम से जोड़ा जाता है। इस को गाढ़पटक या पत्तर पीटकर गहना बनाना कहते हैं। इसमें पत्तरों के बीच में कोई दूसरी चीज डाल कर सोना चुरा लिया जाता है । प्रायः एक पत्ते से दोपत्ते तक चढ़ाये जाते हैं। बीचमें तांबा या तांबे का तार या तांबे का पत्ता रखकर सोना निकाला जाता है। जिन गहनों में अन्दर तांबा और बाहर सोना होता है उसका पासा बहुत ही चिकना होता है। जिनमें सोने के दोपत्ते होते हैं उनमें तांबे के तार या पत्ते क सदृश चिकनाहट रहती है। ऐसे गहनों में कोगई बेईमानी को कसौटी के द्वारा या तपाने के द्वारा पता लगाया जाय। यदि बिना किसी प्रकार की किरकिराहट के कसौटी पर लकीर आवे तो उसको शुद्ध समझना चाहिये । लवण के तथा बेर के तेजाब में डालकर जो सोना चुराया जाता है उसको भी पेटक ही कहते हैं।

बालू तथा सिंगरफ के साथ मिलाकर पोली घरिया में या जतुगांधार तथा बालू के साथ मिलाकर पक्की घरिया में डाला सोना तपाया तथा पिघलाया जाय तो स्वच्छ हो जाता है। लवण कोयला तथा कटुशर्करा के साथ मिलाकर साधारण बर्त्तन में गरम करने पर सोना ज्यों का त्यों बना रहता है । क्वाथ में डालते ही यह शुद्ध हो जाता है। अमुक अभ्रक के साथ दोहरी घरिया में गरम करने पर ठीक हो जाता है। यदि उसको बन्द कांचके बर्त्तन में रखे पानी में डाला जाय तो उसका एक भाग उसीमें घुल जाता है। मणि चांदी सोना आदि घने तथा पोले धातुओं का पिंक किया जाता है।

[५] पिंक। धातुओं के तपाने पिघलाने तथा शुद्ध करने का नाम ही पिंक है।

इसलिये अध्यक्ष को चाहिये कि हीरा मणि मोती मूंगा तथा चांदी की जात रूप रंगत राशि तथा चिन्ह आदि को देख कर गहने के लिये दे।

पुराने गहनों के सुधरवाने तथा नये गहनों के बनवाने में—१ परिकुट्टन, २ अवच्छेदन ३ उल्लेखन तथा ४ परिमर्दन यह सोने के चुराने के चार तरीके हैं।

१. परिकुट्टन। पोले सख्त या सोने के डले को पत्तर पीटने के बहाने जब कूटते हैं [और इस प्रकार कूट कर सोना चुरा लेते हैं] तो उसको परिकुट्टन कहते हैं।

२. अवच्छेदन। बिगड़े हुए गहने को जब किसी बर्त्तन में रखकर अन्दर ही अन्दर छीलते हैं तथा जस्ते पर से सोने का पत्तर अलग करते हैं तो उसको अवच्छेदन, कहते हैं।

३. उल्लेखन। ठोस गहने पर जब नकाशी करते हैं तो उसको उल्लेखन कहते हैं।

४. परिमर्दन। हड़ताल मनासिल सिंगरफ आदिकों में से किसी एक को कुरुविन्द (रत्न या धातु विशेष) के चूर्ण के साथ मिला कर और उसको कपड़े में रखकर रगड़ने का नाम परिमर्दन है। परिमर्दन से सोने तथा चांदी के वर्त्तन घिस जाते हैं और देखने में ज्यों के त्यों बने रहते हैं।

टूटे हुए टुकड़े हुए तथा घिसे हुए गहनों में सोने की चोरी का अनुमान उसी के समान गहने के द्वारा पत्तर वाले गहनों में जितना पत्तर टूटा हो उसी के द्वारा और बिगड़े हुए गहनों में तपाने तथा पानी में रगड़ने के द्वारा सोने की चोरी को पता लगाना चाहिये।

सुवर्णाध्यक्ष—अवक्षेप [इधर उधर सोने को रखना], प्रतिमान [बट्टे], अग्नि, गंडिका, (निहाई), भंडिका (घरिया), अधिकरणी (आसन या बैठने की चौकी), पिच्छ (कटिया), सूत्र (सूत) चेल्लबोल्लन (कपड़ा ?), पगड़ी, उत्संग (जंघा), मक्षिका (मक्खी ? ,,

शरीर निरीक्षण (शरीर को इधर उधर देखना), उदक शराव (सोना बुझाने का पानी से भरा बर्त्तन), तथा अग्निष्ठ (जिस में आग रहती है) इत्यादि बातों को देखकर सोने की चोरी तथा सुनार की बेईमानी का अनुमान करे। मैली, बदबूदार, सख्त, दरारपड़ी, बदरंग चांदी को रद्दी समझे।

इस प्रकार नयी पुरानी तथा बदसूरत तथा बिगड़ी हुई चीजों की परीक्षा करे और अपराधी पर पूर्व लिखित नियमों के अनुसार जुरमाना करे।

३३ प्रकरण।

कोष्ठागाराध्यक्ष।

कोष्ठागाराध्यक्ष—१ सीता, २ राष्ट्र, ३ क्रयिम, ४ परिवर्त्तक, ५ प्रामित्यक, ६ आपमित्यक, ७ सिंहानिका ८ अन्यजात, व्ययप्रत्याय, १० व्याजी, तथा ११ उपस्थान नामक राज्य करों को एकत्रित करे।

१. **सीताः**—सीताध्यक्ष के द्वारा एकत्रित किये गये अनाज आदि को सीता कहते हैं।

२. **राष्ट्रः**—राष्ट्र से तात्पर्य—पिंडकर [स्थिर या नियत कर], छठा भाग, सेनाभक्त [सेना के लिये गांव से रसद तथा बेगार लेना], बलि [धर्म विषयक कर], कर [राज्यस्व], उत्संग [राज कुमार के जन्म पर डाली उपहार नजराना आदि के रूपमें आया हुआ राज्य कर], पार्श्व [बचा हुआ राज्य कर], पारिहीणिक [हरजाना, या नुकसान भरना], औपायानिक [अन्य समयों में भेजी गई डाली उपहार आदि] तथा कौष्ठेयक (वस्तु भंडार से संबद्ध अन्य बहुत से कर) आदिक राज्य करों से है।

३. **क्रयिमः**—क्रयिम (खरीदने से प्राप्त) से तात्पर्य—धान्य मूल्य (धान्य का दाम), कोशर्निहार (खजाने के लिये जो चीजें खरीदीं तथा प्राप्त की गई हों) तथा प्रयोग-प्रत्यादान (प्रयोग करने के बदले में जो चीजें ग्रहण की जांय) से है।

४. परिवर्त्तकः—अनाज आदि का दूसरी चीज से विनिमय करने का नाम परिवर्त्तक (परिवर्त्तन से प्राप्त करना—barter) है।

५. प्रामित्यकः—दूसरे राष्ट्र से अनाज आदि समय पर मांग लेना प्रामित्यक कहाता है।

६. आपामित्यकः—मांगे हुए अनाज के बदले अपने यहां से जो अनाज दूसरों को दिया जाय उसको आपामित्यक कहते हैं।

७. सिंहनिकाः—कूटने (कुट्टक), दरेरने (रोचक), सत्तू पीसने, सिरका या शराब ढालने, कोल्हू में तेल पिराने तथा ईंख पेरने आदि को सिंहनिका कहते हैं।

८. अन्यजातः—नुक्सान हुई तथा खोयी हुई चीजों को अन्य-जात कहा जाता है।

९. व्ययप्रत्यायः—किसी दूसरे स्थान में धन को व्याज पर लगाना, कुस्थान में लगे हुए धन की बचत तथा अवशिष्ट धनको व्ययप्रत्याय कहते हैं।

१०. तोलने या मापने के बाद जो एक मुट्ठी अनाज या थोड़ा सा द्रवपदार्थ और अधिक दिया जाता है उसको व्याजी कहते है।

११. उपस्थानः—राज्य कर को एकत्रित करना तथा पुराने छोड़े हुए टैक्स को वसूल करना उपस्थान कहाता है।

धान्य, स्नेह क्षार तथा नमक तथा धान्य की भिन्न भिन्न किसम के विषय में सीताध्यक्ष के प्रकरण में प्रकाश डाला जायगा।

घी तेल, वसा तथा मज्जा (चर्बी) आदि स्नेह (चिकने द्रव्य) के भेद हैं (स्नेह वर्ग)

राब, गुड़, गुड़ की सफेद डली (मत्स्यंडिका), खांड तथा शक्कर क्षार के भेद हैं (क्षार वर्ग)

सेंधा, सामुद्र, बिटिया, जवखार, सज्जी, तथा रेंदका नमक आदि नमक के भेद हैं (लवण वर्ग)

मक्खी तथा मुनक्के की शहद मधु कहलाती है [मधुवर्ग)

ईख का रस, गुड़, शहत् ,राब,जामुन,कटहल आदि मेढ़ासिंगी तथा पीपर, के क्वाथ में महीना, छः महीना तक तथा साल भर तक डालने के वाद या खिकसा, जेठुई ककड़ी, ऊंख, आम, आंवला, आदि में सड़ाने के वाद जो चीज तैय्यार हो उसको सिरका कहते हैं (शुक्र–वर्ग)

अमलवेंत, करोंदा, आम, अनार, आंवला, विजौरा निंबू, झर-वेरी, बेर, प्योंदी बेर, फालसा आदि खट्टे फलों के भेद हैं (फलाम्ल वर्ग)।

दही तथा कांजी आदि पनीली खट्टी चीजें समझी जाती हैं (द्रवाम्ल वर्ग)

पिप्परी, मिर्च, अदरक, मंगरैला, चिरायता, सफेद सरसों, धनियां, चोरक, मरुआ, दौना, तथा सहजन की फली आदि कडुए पदार्थ हैं (कटुक वर्ग)

सूखा मच्छी का मांस, कन्द, मूल, फल शाकादि शाक के भेद हैं (शाक वर्ग)

इन सब उपरिलिखित पदार्थों का आधाभाग ही सालमें खर्च किया जाय और आधा भाग आपत्ति पड़ने पर जनता को वचाने के लिये रखा जाय। जब नई फसल आवे तो पुराने को नये से बदल दिया जाय।

कूटने, घिसने, पीसने तथा भूनने पर गीले, सूखे तथा पके हुए धान्यों में कितनी वृद्धि तथा ह्रास होता है और उनकी कितनी आकृति बढ़ती है इसको अन्दाज करके देखा जाय।

कूटने तथा भूसी निकालने पर कोदों के धान में आधा, शाली धान में $\frac{1}{5}$ भाग कम (आधा) कंकुनी के चावल में आधा और मोटे चावल में $\frac{1}{3}$ भाग कम (आधा) असली चावल निकलता है। चमसी मूंग तथा उर्द में $\frac{1}{2}$ कम (आधा), शैव्य में आधा और मसूर में $\frac{1}{3}$ कम (आधा) असली दाल निकलती है।

भिगोये हुए चने तथा मटर $1\frac{1}{2}$ और जौ २ गुना हो जाते हैं। आटा या तुच्छ धान भी भिगने पर दुगुने हो जाते हैं।

कोदों का धान, वनकुलथी, कोदों (उदारक), तथा कंकुनी के चावल पकाने पर तीनगुना, साधारण चावल चारगुना तथा महीन

चावल (शाली) पांचगुना हो जाते हैं । भिगोने पर अनाज दुगने और यदि उनके अंकुआ निकल आया है तो ड्योढे होजाते हैं । भुंजुआ के यहां से भुंजुआई हुई चीज़ें भिगोने पर पांचवा भाग बढ़जाती है । मटर लावा तथा भरुआ (भरुजा) दुगने हो जाते हैं ।

तीसी तथा अलसी में छठा भाग, नींब, कुशा घास, आम तथा कैथे में पांचवां भाग और तिल्ली वरें महुआ तथा गोंदी में चौथा भाग तेल निकलता है । कपास तथा तीसी के डंठल के पांच पल में पलभर सूत निकलता है ।

भोजन के लिये (सरकारी भत्ता) हाथी के बच्चे को—महीन चावल ५ द्रोण तथा मोटा चावल १० आढ़क, हाथी को ११ आ०, सवारी के घोड़े को १० आ०, लड़ाई के घोड़े को ९ आ०, पदातियों को ८ आढ़क, मुखियों को ७ आढ़क, देवी तथा राजकुमार को ६ आ०, और राजा को ५ आढक,—एक आर्य्य को, किनी रहित शुद्ध चावल १ प्रस्थ, $^1/_4$ प्रस्थ दाल, दाल का $^1/_{16}$ भाग नमक तथा $^1/_4$ भाग घी या तैल—साधारण आदमियों या मेहनती मजदूरों को उपरिलिखित दाल का $^1/_6$ भाग तथा घी तेल का $^1/_2$ भाग—स्त्रियों को सब चीजों का $^3/_4$ भाग—और बच्चों को $^1/_2$ भाग दिया जाय । इसी प्रकार मांस २० पल, घी या तेल $^1/_2$ कुडुंब नमक १ पल,खार १ पल, मसाला२धरण और दही $^1/_2$प्रस्थ भत्ते के रूप में बांटा जाय । अन्य चीजों के भत्ते के नियमों का अनुमान इसी से कर लेना चाहियें । दृष्टान्त स्वरूप तरकारी ड्यौढ़ी और सूखी चीजें दुगुनी करके देनी चाहिये । हाथी तथ घोड़े के विषय में उनके अपने अपने अध्यक्षों के प्रकरण में प्रकाश डाला जा चुका है । बैलों को—१ द्रोण उर्द तथा जौ का पुलाव-घोड़ों से अधिक मिले और साथ ही उनको खली १ तुला और अनाज की किनी या भूसी १० आढ़क दी जाय । भैंस तथा ऊंट को इस का दुगुना, गदहे तथा बुंदकी पार हिरनों को $\frac{1}{2}$ द्रोण, बड़े हिरनों को १ आढ़क, भेड़ बकरा तथा सुअर को $\frac{1}{2}$ आढ़क, कुत्तों को १ प्रस्थ चावल, हंस क्रौंच तथा मोरों को $\frac{1}{2}$ प्रस्थ और शेष बचे मृग, पशु पक्षि तथा हिंसक जन्तुओं को अनुमान से अनाज दे । कोयला तथा भूसी लोहार तथा भीत लेपने वाले लोग लेवें । दास मेहनती मजदूर अनाज फटकने तथा

सूप बनाने वाले अनाज की कनियां पावें और इसके बाद जो अनाज बचे वह चावल पकाने वाले तथा पूड़ी बनाने वाले ग्रहण करें।

उपकरण (औज़ार, साधन आदि) शब्द का तात्पर्य-तराजू, बट्टा, चाकिया, मुसल, उलूखल, कुट्टक (हमामदिस्ता, कूटने का बर्त्तन), रोचक यंत्र (दाल दरने वाला) पत्रक (छिलका अलग करने वाला), सूप, छलनी, संदूकड़ी, पिटारा तथा झाड़ू आदिक से है। विष्टि (बेगार, मेहनती, मजदूर) शब्द का मतलब-झाड़ू देने वाला (मार्जक), रखवाला (रक्षक), धरने वाला (धरक), मायक (तोलने वाला), मापक (मापने वाला), देने वाला (दायक), दिलाने वाला (दापक), डंडीदार (शलाकाप्रति ग्राहक), दास तथा कर्म-कर (मेहनती) आदि लोगों से है।

आनज ढ़ेरी में, खार बोरों (मूत) में, घी तेल मट्टी तथा लकड़ी के बर्त्तनों में और नमक जमीन में रखा जाता है।

३४ प्रकरण।

पण्याध्यक्ष।

पण्याध्यक्ष स्थल पथ तथा वारि पथ से आने वाले स्थल वा जल में पैदा होने वाले पदार्थों की उपयोगिता (सार) अनुपयोगिता (फल्गु) बाजारी कीमत का उतार चढ़ाव, मांग (प्रियता) तथा अप्रियता का ज्ञान रखे। और साथ ही यह भी जाने कि उनके विभाग (विक्षेप), एकत्रीकरण (संक्षेप), क्रय, विक्रय तथा प्रयोग का कौन सा समय है।

जो चीज़ अधिक हो उसको सब ओर से एकत्रित कर एक कीमत पर बेंचे। जब उस कीमत पर मांग अधिक हो तो दूसरी कीमत नियत करे। स्वदेशी राजकीय पदार्थों को एक कीमत पर और विदेशी माल को भिन्न भिन्न कीमत पर बेंचे। परन्तु सब कीमतों में प्रजा के हित को ही मुख्य रखना चाहिये। प्रजा को जिससे नुकसान पहुंचे ऐसा थोड़ा सा लाभ भी न ग्रहण करे। जो चीज़ें रोज़ाना जरूरत की हों उनकी प्राप्ति में देर न लगावे और उनका एकाधिकार कर अधिक दाम भी न ग्रहण करे।

दूकान दार भिन्न भिन्न प्रकार के राजकीय पदार्थों को नियत दाम पर ही वेंचें। यदि उनसे माल नुक्सान हो जाय तो सरकार को नुक्सान भरे (वेधरण दें) नापकर बेंचे जाने वाले पदार्थों का १/१६ भाग, तोलकर बेंचे जाने वाले पदार्थों का १/२० भाग और गिन कर वेंचे जाने वाले पदार्थों का १/११ भाग राज्यस्व के रूपमें लियाजाय।

विदेशी माल मंगाने वाले व्यापारियों पर अनुग्रह रखा जाय। नाविकों तथा विदेशी व्यापारियों को लाभ के अनुसार चुंगी माफ करदी जाय। हिस्सेदारों तथा स्थानीय सभ्यों को छोड़कर विदेश से माल मंगाने वाले विदेशियों पर कर्ज के संबंध में मुकदमा न किया जाय।

सरकारी माल के वेंचने से जो आमदनी हो उसको—पण्याधिष्ठाता छिद्रवाली बन्द संदूकची में डाल दें। दिनके आठवें भागमें "इतना माल बिका है और इतना बचा है" यह कह कर संपूर्ण धन पण्याध्यक्ष को सुपुर्द कर दें और साथ ही तराजू गज तथा संपूर्ण पदार्थ भी उसीको दे दें। स्वदेश में इन्हीं नियमों के अनुसार क्रय विक्रय है। परदेश में तो—पण्य-प्रतिपण्य (एक दूसरे के बदले में आने वाला माल) के मूल्य में से चुंगी, सड़क कर, गाड़ी का खर्चा, छावनी का कर, नौका भाड़ा, आदि का खर्चा घटाकर शुद्ध लाभ का अनुमान करे। यदि इस ढंगपर लाभ न मालूम पड़े तो यह देखे कि स्वदेशी पदार्थ के बदले कोई ऐसा विदेशी पदार्थ लिया जा सकता है जो कि लाभ कर हो। इस ढंगपर विचार करने के बाद कुछ माल तो जमीन के रास्ते से रवाना करे और जंगल-रक्षक, अंतपाल, नागरक तथा राष्ट्र मुखिया लोगों से मेल जोल बढ़ाता रहे ताकि सरकारी माल पर वह लोग विशेष अनुग्रह रखें। विपत्ति से अपने आपको तथा बहुमूल्य माल को बचावे। यदि वह अपने इष्ट स्थान तक न पहुंच सकता हो तो जो चुंगी आदि टैक्सों से रहित बाजार हो उसमें बेंच दे।

जल मार्ग से विदेश में माल भेजने से पूर्व—गाड़ी खर्चा, भोजन व्यय, विनिमय में आने वाले विदेशी माल का दाम तथा मात्रा, यात्रा काल, भयसे बचने का उपाय और बन्दरगाहों के नियमों के विषय में पूंछ तांछ करे।

भिन्न २ नगरों के नियमों को जान कर नदी मार्ग से दूसरे राष्ट्रों में [बेंचने के लिये] जहां लाभ देखे वहां माल भेजे और जहां नुकसान मालूम पड़े वहां से दूर रहे।

३५ प्रकरण।

कुप्याध्यक्ष।

(कुप्याध्यक्ष (जांगलिक पदार्थों का अध्यक्ष) द्रव्यपालों तथा वनपालों के द्वारा जांगालिक पदार्थों को एकत्रित करवाये और जंगलों में कारखाने स्थापित करे। जो लोग जंगलों को काटें उनसे राज्यस्व तथा जुरमाना ग्रहण करे बशर्तेकि वह किसी विपत्ति में पड़ कर ऐसा करने के लिये तैय्यार न हुए हों।)

कुप्य से तात्पर्य्य—शाक, तिन्नीपसाई (तिन्नी का चावल), अर्जुन, महुआ, तिल, लोध्र, सागवान, शीसम, विट्खैर, खिन्नी, शिरीष, खैर, देवदार, ताड़, राल, अश्वकर्ण, कत्था, मांसरोहिणी, रोहिणी आम्रप्रियक, धव का फूल, इत्यादिक पदार्थों से है (कुप्यवर्ग)

उटज, चिमिय, चत्र, वेणु, सातिन, कंटक, मोरठ तृण आदि बांस की जाति हैं (वेणुवर्ग)

बेंत, अशोक, बेल, वासी, श्यामलता, नागलता (नागफली) आदि वेलों की जाति हैं (वल्ली वर्ग)

चमेली, दूर्वाघास, आक का पेड़, सन, छोटी ज्वार, अलसी आदि डंठल वाले पौदों की जाति हैं (वल्क वर्ग)

मूंज तथा बल्वज रस्सी बनाने के पदार्थ हैं (रज्जुभांड)

ताड़ी, ताल, भूर्जपत्र आदि के कागज बनते हैं (पत्र)

पलाश, बेरें तथा केसर फूल कहाते हैं (पुष्प)

कन्दमूलफल आदिक औषधियां हैं (औषधि-वर्ग)

कालकूट, वत्सनाभ, हालाहल, मेषशृंग, नागरमोथा, कुष्ठ, महाविष, वेल्लितक, गौर, आर्द्रवालक, मार्कट, हैमवत, कालिंग, पारद, कांकोल, सार, कोष्टक, आदिक विष के भेद हैं (विष वर्ग) इसी प्रकार घड़े में बन्द किये हुए सांप तथा कीड़े आदि भी विष वर्ग में ही माने जाते हैं।

गोह, सेरक, चीता, सूंस, सिंह, व्याघ्र, हाथी, भैंस, सुरागाय, गैंड़ा, गऊ, हरिन तथा गवय आदि का और अन्य मृग पशु पक्षि तथा शिकारी जानवरों का चमड़ा, हड्डी, पित्त, अंतड़ी, दांत, सींग, खुर पूंछ आदि एकत्रित की जांय।

कालालोहा, तांबा, वृत्त, कांसा, जस्ता, रांग, कच्चाहीरा तथा पीतल लोह नाम से पुकारे जाते हैं।

छाल बेंत या मट्टी के बर्त्तन बनाये जाते हैं।

अंगार, तुषभस्म (भूसी का कोयला) आदि कोयला। मृग पशु पक्षि तथा व्याल और लकड़ी तृण आदि का संग्रह किया जाय।

किले तथा नगर की रक्षा के लिये जो जो पदार्थ उपयोगी हों उनको शहर के बाहर या अन्दर कारखाने स्थापित कर एक एक करके तैय्यार करवाया जाय।

३६ प्रकरण।

आयुधागाराध्यक्ष।

आयुधागाराध्यक्ष [हथियारों का प्रबंधकर्ता] कार्य्य काल तथा वेतन के अनुसार काम करने वाले कारीगरों से ऐसे चक्र, यंत्र, हथियार, कवच तथा उपकरण तैय्यार करवाये जोकि संग्राम, दुर्ग तथा शत्रु के नगर पर आक्रमण करने के लिये उपयोगी हों। जो कारीगर जिस योग्य हो उसको उसी पद पर नियुक्त करे। वारंवार उनके स्थान का परिवर्त्तन करे और धूप तथा हवा मिलने का प्रबंध करे। जो हथियार भाफ, नमी, गरमी सरदी, क्रिमि [कीड़े] से खराब हो जाने वाले हों उनको अन्यत्र रखे। उनकी जाति, रूप, लक्षण, प्रमाण [आकृति] आगम [प्राप्ति] मूल्य तथा गुण कार्य्य (निक्षेप) के अनुसार निम्न लिखित वर्गीकरण करे।

(१) स्थितयन्त्र। सर्वतोभद्र (सब ओर मार करने वाला), जामदग्न्य (शस्त्र विशेष) बहुमुख (जिसके बहुत मुख हों), विश्वासघाती, संघाटी (किलों में आग लगाने वाला लंबा बांस) यानक (रथ पर से फेंकने योग्य यंत्र) पर्जन्यक (पानी बुझाने का यंत्र),

अर्धबाहु तथा ऊर्ध्वबाहु (शत्रु पर गिराने के योग्य खंभा) स्थित यंत्र कहाते हैं।

(२) चलयंत्र। पंचालिक (कीलों वाला फट्टा), देवदंड (कीलें लगा बांस), सूकरिका, मुसल, यष्टि (डंडा), हस्तिवारक, तालवृंत, मुद्गर, गदा, स्पृक्तला, कुद्दाल (कुद्दाली) स्फाटिम, औद्घाटिम (उखाड़ने वाला), शतघ्नि (सौ को मारने वाला), त्रिशूल, चक्र यह चल-यंत्र के नाम हैं।

(३) हुलमुख शक्ति, प्रास, कुन्त, हाटक, भिंडिवाल, शूल, तोमर वराहकर्ण, कणय, कर्पण तथा त्रास हुलमुख (घातक मुख वाले) श्रेणी के हाथियार हैं।

(४) धनुष। कार्मुक, कोदंड, द्रूण तथा धनुष क्रमशः ताड़, बांस लकड़ी तथा हड्डी के होते हैं।

(५) ज्या। मूर्वा, आक या मंदार, सन, गवेधु, बांस तथा अंतड़ी या आंत की ज्या होती है।

(६) इषु। वेणु, शर, शलाका, दंडासन तथा नाराच इषु (वाण) के भिन्न भिन्न भेद हैं।

(७) खड्ग। निर्स्त्रिंश, मंडलाग्र, असि तथा यष्टि खड्ग (तलवार) की हो भिन्न भिन्न जातियां हैं।

(८) त्सरु (मूठ)। गेंड़ा, भैंस, हाथीदांत, लकड़ी तथा बांस की मूठ होती है।

(९) क्षुर (छुरा)। परशु (फरसा), कुठार (कुल्हाड़ी), पट्टस (पटा), खनित्र (फावड़ा आदि), चक्र तथा कांडच्छेदन क्षुर वर्ग के हथियार हैं।

(१०) आयुध (हथियार)। यंत्र, गोष्पण, मुष्टि, पाषाण तथा रोचनी दृषद् (चाकिया के पाट) आयुध के भेद हैं।

(११) वर्म(कवच का भेद)। लोह चालिका सारे शरीर को ढांपने वाला), पट्ट (हांथ छोड़कर सारे शरीर को ढांपने वाला), कवच, सूत्रक (तार का बना) आदिक वर्म या कवच कर्कट, शिशुमारक, खड्गि (गेंड़ा), धेनुक, हस्ति, गोचर्म, खुर तथा सींग से बनाये जाते हैं।

(१२) आवरण (ढाल तथा शरीररक्षक)। शिरस्त्राण (सिर का रक्षक टोपा), कंठत्राण (गले का रक्षक), कूर्पास (शरीर या पैर ढांकने का) कंचुक,वारवाण (पैर तक लंबा कोट),पट्ट,नागोदरिका (दस्ताने) वेरि, चर्म,हस्तिक, तालमूल, धमनिका, कपाट, किटिक, अप्रतिहत तथा वलाहकान्त आदि आवरण के भेद हैं।

(१३) उपकरण। हाथी रथ तथा घोड़े आदिकों के योग्य गहने कपड़े लत्ते तथा युद्ध संबंधी सामान को ही उपकरण (सामिग्री) कहते हैं।

कारखानों (कर्मान्त) के ऐन्द्रजालिक और औपनिषदिक (परघात संबंधी चमत्कारपूर्ण काम) काम भी आयुधागार में रखा जाय।

आयुधेश्वर (हथियारों का प्रबंधकर्त्ता) युद्ध उपयोगी पदार्थों की मांग, उत्पत्ति, उपलब्धि, प्रयोग, उत्पत्तिव्यय तथा क्षयव्यय (नाश तथा खर्च) का ज्ञान प्राप्त करे।

३७ प्रकरण।

तोल माप।

पौतवाध्यक्ष (तोल-मापका अध्यक्ष) तुला तथा बाट बनवाये। दृष्टांतस्वरूप--

१० उर्द का दाल	=५ रत्ती
५ रत्ती	=१ सुवर्णमाषक
१६ सुवर्णमाषक	=१ सुवर्ण वा कर्ष।
४ कर्ष	=१ पल।

* * *

८८ सफेद सरसों	=१ रूप्य माषक
१६ रूप्य माषक	= २० शैब्य
	=१ धरण

* * *

२० चावल	=१ वज्रधरण।

अर्धमाषक, माषक, दो मासा, चार मासा, आठ मासा, दो सुवर्ण, चार सुवर्ण, आठ सुवर्ण, दस सुवर्ण, बीस सुवर्ण, तीस सुवर्ण, चालीस सुवर्ण, सौ सुवर्ण—नामक तोलने के बट्ट बनाये जांय। धरण से सबंध रखने वाले बट्ट भी इसी ढंग पर तैय्यार किये जांय।

मागध तथा मेकल देश में मिलने वाले लोहे तथा पत्थर के या किसी ऐसी चीज़ के, जो कि पानी से न बढ़े और गरमी से न घटे—बट्ट बनाये जांय। छै अंगुल लंबी तथा १ पल भारी तुला से प्रारम्भ कर क्रमशः एक पल भार में तथा ८ अंगुल लम्बाई में बढ़ती हुई १० तुला तैय्यार की जांय। लम्बाई में एक ओर या दोनों ओर नम्बर लगा दिये जांय और बीच में कांटा रखा जाय। समवृत्ता नामक तुला ७२ अंगुल लंबी और ५३ पल भारी होती है। इसमें ५ पल का कांटा होता है। १कर्ष,पल, १० पल,१२पल, १५ पल, २० पल, से प्रारम्भ कर १०० पल तक के नम्बर लगे होते हैं। बीच में स्वस्तिका का चिन्ह बनाया जाता है। समवृत्ता से भी बड़ी परिमाणी होती है जो कि दुगुनी भारी और ९६ अंगुल लंबी होती है। इसमें भी २०, ५० तथा १०० की संख्यायें अंकित होती हैं।

२० तुला	= १ भार
१० धरण	= १ पल
१०० पल	= १ आयमानी (राजकीय आयमापक)

सार्वजनिक तथा अन्तःपुर भाजिनी तुला (अन्तःपुर में काम आने वाली) क्रमशः ५ पल कम होती है। इनमें पल आधा धरण, उत्तर लोह दो पल और लम्बाई ६ अंगुल कम होती है। *

* १०	धरण =	१ पल (आयमानी)
९ 1/2	,, =	१ पल (साधारण या व्यावहारिकी तुला)
९	,, =	१ पल (राजकीय सेवकों की तुला = भाजिनी)
८ 1/2	,, =	१ पल (अन्तः पुरभाजिनी तुला)

—o—

	लं० इंचों में	भार पलों में—
आयमानी	७२	५३
व्यावहारिकी	६६	५१
भाजनी	६०	४९
अन्तःपुरभाजनी	५४	४७

मांस, लोह, नमक तथा मणि को छोड़ कर अन्य चीजों को उपरिलिखित दोनों तुलाओं में तोलने से ५ पल अधिक तुलता है जो कि राजकीय कोष में जाना चाहिये। लकड़ी की तराजू में आठ हाथ लंबा डंडा, तोलमाप के चिन्ह, पलड़ा तथा बीच में पकड़ने के लिये रस्सी आदि लगी रहनी चाहिये। २५ तोल पल लकड़ी १ प्रस्थ चावल को पकाने में पर्य्याप्त है। इससे कम तथा अधिक भी लग सकता है। यह तो एक प्रकार की मध्यमा है। सारांश यह है कि तराजू तुला तथा बट्ट इसी नियम के अनुसार बनाये जांय।

२०० उर्द के दाने	=१ द्रोण (यह लोहे का बट्टा है)
१८७½ ,,	=हर रोज चलने वाला १ द्रोण।
१७५ ,,	=नौकरों में चलने वाला १ द्रोण।
१६२½ ,,	=अन्तःपुर में चलने वाला १ द्रोण।

आढक, प्रस्थ तथा कुडुंब एक दूसरे के चौथाई है †

१६ द्रोण	=१ वारी
२० द्रोण	=१ कुंभ
१० कुंभ	=१ वह।

अनाज तोलने के लिये सूखी लकड़ी का ऐसा मापक बर्त्तन बनाया जाय जिस का उपरला भाग नीचे के भाग का चौथाई या निचला भाग उपरले भाग का चौथाई हो। रस, सुरा, फूल, फल, कोयला, चूना आदि तोलने का बर्त्तन नीचे से ऊपर तक क्रमशः दुगुना बड़ा होता है। भिन्न बट्टों या बर्त्तनों का दाम इस प्रकार है।

१ द्रोण का मूल्य	=१¼ पण
१ आढक का मूल्य	=¾ पण
१ प्रस्थ का मूल्य	=६ माषक
१ कुडुंब का मूल्य	=१ माषक

† १ आढक	=	१/४ द्रोण।
१ प्रस्थ	=	१/४ आढक।
१/४ कुडंब	=	१/४ प्रस्थ।

रस आदिक तोलने के वर्त्तनों का दाम दुगुना और संपूर्ण वट्टों का दाम २० पण और तुला का दाम इनका तिहाई होना चाहिये। पौतवाध्यक्ष तोल के वट्टों तथा वर्त्तनों को "प्रामाणिक" बनाने का कर (प्रतिवेधनिक) ४ माषक ले। जो "प्रामाणिक" वट्टों या वर्त्तनों को काम में न लावे उस पर २७$\frac{१}{२}$ पण जुरमाना किया जाय। व्यापारी लोग कारोबार करने के कर के रूप में १ काकिणी प्रतिदिन पौतवाध्यक्ष को दिया करें। घी बनाने तथा गरम करने का राज्यस्व (व्याजी) $\frac{१}{३२}$ भाग और तेल का $\frac{१}{६४}$ भाग ग्रहण किया जाय। पनीली पतली चीजों का पच्चासवां भाग बह कर नष्ट हो जाता है। अतः उतनी कमी का ख्याल न रखा जाय। कुडुंब के $\frac{१}{२}$, $\frac{१}{४}$ तथा $\frac{१}{८}$ भाग के वट्ट तथा मान बनाये जांय। घी के तोलन में ८४ कुडुंब का और तेल के तोलने में ६४ कुडुंब का एक वारक होता है और इस का $\frac{१}{४}$ घटिका कहा जाता है।

३८. प्रकरण।

देश तथा काल का मापना।

मानाध्यक्ष देश तथा कालके मापने के कामों को पूर्णरूप से जाने।

(क)

स्थान या देश का मापना।

८ परमाणु	=	रथके पहिये से उठे हुए धूली के एक कण के बराबर है।
८ धूलीकण	=	१ लिक्षा
८ लिक्षा	=	१ यूकामध्य
८ यूकामध्य	=	१ यवमध्य
८ यवमध्य	=	१ अंगुल। मझले कद के मनुष्य की बीच की अंगुली की बीचकी गांठ का नाम अंगुल है।
४ अंगुल	=	धनुर्ग्रह।
८ अंगुल	=	धनुर्मुष्टि।
१२ अंगुल	=	वितस्ति (एक बीता) या छाया पौरुष।

१४ अंगुल = शम = शाल = परिरय = पद (एक पैर)
२ वितस्ति = १ अरत्नि (२ बीता) = प्राजापत्य(हस्त)
२ वितस्ति = तालमाप तथा चरागाह मापन में)
+ १धनुग्रह]
२वितस्ति×]
१ धनुर्मुष्टि] = १ किष्कु = १ कंस
४२ अंगुल = १किष्कु (तरखानों, लोहारों के लिये। छावनी, किला, राजकीय माप आदि के यही काम आता है)
५४ अंगुल = १हस्त (हाथ)। यह जंगल के मापने में काम आता है।
८४ अंगुल १ व्याम। यह गड्ढा, ऊंचाई तथा रस्सी नापने के काम में आता है।
४ अरत्नि = १ दंड, = १धनु१ = १ नालिक = १पौरूष
१०८ अंगुल = गार्हपत्य धनु। यह मार्ग मकान आदि के नापने में काम आता है। याज्ञिक लोग इसीका १ पौरुष मानते हैं।
६ कंस या १९२ अंगुल = १दंड ।ब्राह्मणों को जो ब्रह्मदेय नामक भूमियां दी जातीहैं उनके मापने में यह काम आताहै।

१० दंड	=	१ रज्जु
२ रज्जु	=	१ परिदेश
३ रज्जु	=	१ निवर्त्तन।
२ दंड+२रज्जु	=	१ बाहु
१००० धनु	=	गोरूत (१मील)
४ गोरूत	=	१ योजन (२ कोस)

(क)

समय का मापना

समय को— त्रुट, लव, निमेष, काष्ठा, कला नालिका, मुहूर्त, पूर्वभाग, अपरभाग, दिन, रात, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, वर्ष, युग आदिमें विभक्त किया जाता है।

२ त्रुट	=	१ लव।

२ लव	=	१ निमेष।
५ निमेष	=	१ काष्ठा।
३० काष्ठा	=	१ कला।
४० कला	=	१ नालिका । चार मासे सोनेकी ४ अंगुल लंबी तार जितने छोटे छेद में से एक आढ़क पानी को वहने में जितना समय लगता है उसको १ नालिका कहते हैं।
२ नालिका	=	१ मुहूर्त्त।
१५ मुहूर्त्त	=	१ दिन। चैत महीने का (२२मार्च)
१५ मुहूर्त्त	=	१ रात। अश्वयुजमहीनेका(२२सितंबर)

इस तारीख के बाद तीन तीन मुहूर्त्त दिनरात प्रतिदिन छः मास तक घटते बढ़ते रहते हैं। जव धूप घड़ी में छाया ९६ अंगुल लंबी हो तो इसको दिनका आठारहवां भाग समझना चाहिये। और जव ७२ अंगुल लंबीहो तो $\frac{1}{14}$ वां भाग, ४ पौरूष लंबी हो तो $\frac{1}{8}$ भाग और २ पौरूष लंबी हो तो $\frac{1}{6}$ भाग दिनका मानना चाहिये। इसीप्रकार ८अंगुल लंबाई में $\frac{3}{10}$ भाग, ४ अंगुल लंबाई में $\frac{3}{8}$ भाग और शून्यलम्बाई में मध्यान्ह समझना चाहिये। मध्यान्ह के वाद भी छाया का क्रमइसी प्रकार होताहै। आषाढ़ के महीने में मध्यान्ह में छया शून्यपर पहुंच जाती है इसके वाद श्रावण के महीने ६ महीने तक छाया २ अंगुल बढ़ती है और माघके महीने से छ महीने तक छाया २ अंगुल घटतीहै।

१५ दिनरात	=	१पक्ष–चांदकीवृद्धिमें शुक्लपक्ष और ह्रास में कृष्ण पक्ष या वहुल पक्ष होता है।
२ पक्ष	=	१ महीना = मास
३० दिनरात	=	१ प्रकर्म मास
३०$\frac{1}{2}$,,	=	१ सौरमास
२९$\frac{1}{2}$,,	=	१ चान्द्रमास
२७ ,,	=	नक्षत्रमास।
३२ ,,	=	मलमास।
३५ ,,	=	अश्ववाह मास।

४० दिनरात	=	हास्ति वाह।
२ मास	=	१ ऋतु
वर्षा ऋतु	=	श्रावण तथा प्रोष्टपद
१ शरत् ऋतु	=	आश्वयुज तथा कार्त्तिक
हेमन्त	=	मार्गशीर्ष तथा पौष
शिशिर	=	माघ फाल्गुन
वसन्त	=	चैत्र वैशाख
ग्रीष्म	=	ज्येष्ठ तथा अषाढ़
उत्तरायण	=	शिशिर के बाद ६ मासतक।
दक्षिणायन	=	वर्ष के बाद ६ मासतक।

उत्तरायण+दक्षिणायन = १संवत्सर या वर्ष

५ संवत्सर या वर्षा = युग।

प्रत्येक दिन में सूर्य्य दिनका साठवां भाग कम करता है और यही बात चन्द्रमा करता है। इसीसे प्रत्येक ऋतु में एक दिन बढ़जाता है। यही बात हर तीसरे सालके बीचमें होतीहै जिस से पहिले ग्रीष्ममें अर्ध मास पड़ता है और पांचवें सालके बिद अन्त में अर्ध मास होता है।

३९ प्रकरण।

शुल्काध्यक्ष।

शुल्काध्यक्ष नगर के मुख्यद्वार के निकट उत्तर या दक्षिण में चुंगीघर तथा उसका झंडा खड़ा करे। चुंगी लेने वाले चार या पांच आदमी विक्रेय माल के सहित आये हुए बनियों से पूछें कि "आप कौन हैं। आप कहां से आए हैं। कितना माल है। आपने कहां पर माल पर मुहर लगवाई"। वे मुहर माल पर दुगनी तथा जाली मुहर माल पर आठगुनी चुंगी लीजाय। जिस माल की मुहर टूटगई हो उसको चुंगी गोदाम (घाटिका स्थान) में पड़ेरह-ने का ही दंड दिया जाय। राज मुहर तथा नाम के बदलने पर

१½ पण भार पीछे वहन नामक राज्य कर लिया जाय। झंडे के नीचे रखे माल का प्रमाण तथा दाम बनिये लोग बतावें। "अमुक माल को अमुक दाम पर कौन खरीदेगा" इस प्रकार तीन बार बोली बोलने के बाद जो मांगे उसको दे दिया जाय। क्रेताओं की स्पर्धा से जितना अधिक दाम लगे वह सबका सब मय चुंगी के सरकारी खजाने में पहुंचाया जाय। चुंगी के डरसे माल या कीमत के कम बताने पर जितना माल अधिक निकले और जो अधिक कीमत मिले वह सबकीसब खजानेमें जावे। अथवा उसपर आठगुन चुंगी लगाई जाय। यही नियम उससमय काम में लाया जावे जबकि व्योपारी ने चुंगी से बचने की खातिर बन्द पेटी में उपरला माल रद्दी और निचला अच्छा रखा हो या बहुमूल्य पदार्थ को अल्प मूल्य पदार्थ से छिपादिया हो। जो लोग दूसरे खरीदार के डरसे माल की वास्तविक कीमतसे अधिक कीमत बतावें तो अधिक कीमत राजा लेले अथवा दुगुनी चुंगी लगादेवे। यदि यही अपराध अध्यक्ष स्वयं करे तो उससे चुंगीका आठगुना धन जुरमाने में लिया जाय। पदार्थों का विक्रय तोल कर,मापकर या गिनकर किया जाय। साधारण या आनुग्राहिक (जिनपर चुंगी न लगती हो या कम लगानी हो) द्रव्यों पर अन्दाज से चुंगी नियत कीजाय। चुंगी बिनादिये ही जो लोग चुंगी घरकी सीमाको पार करगये हों उनपर असलीचुंगीका आठ गुना जुरमाना किया जाय और इसकी जांच पड़ताल आते जाते लोगों से की जाय। जो माल विवाह से संबंध रखता हो, दहेज में मिलाहो, उपहार के लिये आया हो, यज्ञ या प्रसव के निमित्तहो, मन्दिर, मुंडन, जनेऊ, विवाह, व्रत, दीक्षा, आदि कार्यों के लिये मंगाई गई हो उसपर चुंगी न लगाई जाय। जोलोग चुपके से माल निकाल ले आवें उनको चोरी विषयक दंड दिया जाय। चुंगी दिये मालके साथ वे चुंगी दिये माल को तथा एकही पास पोर्ट से दो बार माल अंदर ले जाने वाले व्योपारी को भी पूर्ववत् दंड दिया जाय। कंडों की ढेरी में छिपाकर बे चुंगी माल ले आनेवाला को उत्तम दंड दिया जाय जोशस्त्र,वस्त्र,कवच,लोह,रथ,रत्न,धान्य,पशु,आदि प्रतिषिद्ध पदार्थों को अन्दर ले आवे उसको पूर्ववत् दंडादिया जाय तथा उसके मालको छीन लिया जाय। यदि उनमें से किसी एक पदार्थ

को वाहर ही लावे तो उसको चुंगी घरके बाहर ही वेचदिया जावे और उसपर चुंगी न ली जाय । अन्तपाल १¼ पण सड़क के कर (वर्त्तिनी) के रूपमें ग्रहण करें ।

बाजारीमालको ढोने वाले एकखुरवाले पशुओं पर १पण, साधारण पशुओं पर ½ पण, छोटे पशुओं पर ¼ पण तथा वहंगी वालों पर १ मापक चुंगी लगाई जाय । यदि किसी का माल नष्ट होजाय या चुराया जाय तो उसको अपनी ओरसे पूराकरे । वहुमूल्य तथा अल्प मूल्य विदेशी माल की भली भांति जांच पड़ताल कर उसपर मुहर लगाई जाय और उसको अध्यक्ष के पास भेजदिया जाय । व्योपारी के भेसमें घूमने वाले खुफिया राजा को वजारीमाल के विषय में समाचार देते रहें । राजा अपने आपको सर्वज्ञप्रसिद्ध करने के लिये अध्यक्ष से मालके आने जानेके विषय में अपनी ओर से कहे इसकेवाद अध्यक्ष व्योपारियों को कह देवो यह इसका वहुमूल्य माल है और यह इसका अल्प मूल्य मालहै ", राजाके प्रभाव से ही मुझ को यह मालू हुआ । तुमको कुछभी न छिपाना चाहिये । जो लोग इसपर भी अल्प मूल्य वाले माल को छिपावें उनपर ८ गुना चुंगी लगाई जाय और जो वहुमूल्य वाले मालको छिपावें उनका संपूर्ण माल छीन लिया जाय ।

जिस माल से राष्ट्को नुकसान पहुंचे या कुछभी उत्तम फल न मिले उसको नष्टकर दिया जाय और जो वहुत ही उपकारी हो या दुर्लभ बीजहो उसपर किसी ढंग की भी चुगी न लगाई जाय ।

४० प्रकरण ।

शुल्क व्यवहार ।

अन्दरुनी, बाहरी तथा विदेशी माल पर ही चुंगी (शुल्क) ली जाय । आयात कर (प्रवेश्य शुल्क) तथा निर्यात कर(निष्क्राम्य शुल्क) के भेद से चुंगी दो प्रकार की है । आयात के मूल्य का पांचवा भाग तथा फूल फल, शाक, मूल, कंद, पालक का बीज तथा सूखी मच्छी के मांस का छठा भाग चुंगी में लिया जाय । ठेके पर सरकारी

काम करने वाले करने वाले भिन्न भिन्न चीजों के जानकार शंख, वज्र, मणि, मोती, प्रवाल तथा मोती की लरी आदि की परीक्षा कर उसपर चुंगी नियत करें। खानिया, मलमल, रेशमी माल, कवच, हड़ताल, मंसिल, सिंगरफ, लोह, रंग विषयक धातु, चन्दन, अगर, मरिच, मद्य-सामिग्री (किएव), परदा, शराव, दांत, चमड़ा, रेशे-दार पदार्थ, पतला कपड़ा, गलीचा, ऊपर डालने का कपड़ा (प्राव-रण), बकरी या भेड़ी के ऊन का बना वस्त्र आदि के मूल्य का दस-वां या पन्द्रहवां भाग चुंगी हो। साधारण कपड़ा, दो पैर के जान-वर, चौपाये, सूत, रुई, गन्ध, दवाई, लकड़ी बांस, रेशे वाले पदार्थ, चमड़ा, मट्टी का वर्तन, धान्य, तेल, खार, नमक, शराब, मिठाई या पक्वान्न आदि के मूल्य का बीसवां या पच्चीसवां भाग चुंगी में ग्रहण किया जाय।

नगर द्वार प्रवेश का कर चुंगी का पांचवां भाग हो। भिन्न भिन्न देशों के अनुसार यह कर छोड़ा भी जा सकता है।

उत्पत्ति स्थान पर कोई भी पदार्थ बेंचा नहीं जा सकता। खानों पर से खनिज पदार्थ खरीदने पर ६०० पण, फूल फल तथा बगीचे से फूल फल लेने पर ५४ पण, तरकारी के खेतों (पंड) से शाक मूल तथा कंद के मोल लेने पर ५१ $\frac{3}{4}$ पण तथा खेतों पर से अनाज मोल लेने पर ५३ पण जुरमाना किया जाय। खेत को नुकसान पहुंचाने वाले पर १ पण से १$\frac{3}{8}$ पण दंड दिया जाय।

इस लिये देश जाति तथा गुण के अनुसार नये तथा पुराने माल पर चुंगी तथा नुकसान के अनुसार जुरमाना नियत करे।

४० प्रकरण।

सूत्राध्यक्ष।

सूत्राध्यक्ष कारीगरों (तज्जात पुरुष) से सूत कवच कपड़ा तथा रस्सी के काम को करवाये। विधवा, अंगविकल, लकड़ी, वैरागिन (प्रव्रजिता), राज्य दंडित, रंडियों की बुड्ढी माता, बुड्ढी राजदासी, मन्दिर के काम से छुटी देवदासी आदियों से ऊन, रेशे, रुई, जूट,

सन आदि के सूत को कतवाये। सूत की चिकना-
हट, मुटाई तथा मध्यमपना देखकर उनका मेहनताना नियत करे।
सूत की अधिकता तथा न्यूनता के अनुसार उनको तेल, आंवला
तथा वटना पारितोषिक के रूप में दे। अधिक मेहनताना तथा
मान देकर उनसे तिथि दिनों में काम लिया जाय। द्रव्य के अनु-
सार सूत की कमी में मेहनताना कम किया जाय। कार्य की मात्रा,
समय, वेतन, फल आदि का ठीका लेकर काम करने वाले कारी-
गरों से मिलजुल तथा उनसे काम ले। जो लोग सनिया, रेशमी,
अंडी, ऊनी, सूती आदि पदार्थों के कारखानों को खोलें उनको गंध
माला, दान आदि पारितोषिकों से प्रसन्न तथा संतुष्ट रखे। वस्त्र,
गलीचे तथा परदे आदि के कारखानों को नये सिरे से खड़ाकरे।
कवच आदि बनाने वाले कारीगरों से कवच बनवाये। जो स्त्रियें
पर्दे नशीन, विधवा, प्रोषिता (जिसका पति विदेश में हो) अंग
विहीन या कम उमर हों और अपना पेट पालना चाहती हों उनसे
अपनी दासियों के द्वारा काम ले और बड़ी इज़्ज़त के साथ उनसे
बर्ते। जोप्रातः काल स्वयं ही सूत घर (सूत्रशाला) में पहुंच उनसे
पदार्थ ग्रहण करे और उसके बदले उनको धन देदे। इतनी ही
रोशनी की जाय जिससे सूत की परीक्षा की जासके। स्त्री का
मुंह देखने पर या अन्यविषयक बात करने पर साहस दंड दिया
जाय। मेहनताना देने में देरी करने पर या काम बिना ही वेतन
देने पर मध्यम दंड दिया जाय। जो मेहनताना लेकर काम न करें
उनका अंगूठा काट दिया जाय। यही दंड उनको भी मिले जो कि
माल खागई हों, माल लेकर भाग गई हों या माल को चुरा लेगई
हों। अपराध के अनुसार ही मेहनतियों का मेहनताना काटा जाय।
रस्सी बंटने वाले तथा कवच बनाने वाले कारीगरों से स्वयं मिल
कर सूत्राध्यक्ष बेंत तथा बांस की रस्सी बटवाये।

सूत या रेशे की बंटी रस्सी का नाम रज्जू और बांस तथा
बेंत की बंटी रस्सी का नाम वरत्रा है। गाड़ी की जोड़ियां इन्हीं
से बांधी जाती हैं और उनकी लगाम भी इन्ही की बनाई जाती है।

४१. प्रकरण।

सीताऽध्यक्ष।

सीताऽध्यक्ष (कृषि का अध्यक्ष या प्रबंधकर्ता) कृषि-विज्ञान, गुल्मशास्त्र, (झाड़ियों की विद्या) वृक्ष विद्या तथा आयुर्वेद में पांडित्य प्राप्तकर, या उन लोगों से मैत्री कर जो कि इन विद्याओं में पंडित हैं—धान्य फूल फल शाक कन्द मूल पालक सन जूट कपास बीज आदि समय पर इकट्ठा करे। बहुत हलों से जोती हुई भूमि पर दास, कर्मकर, अपराधी आदियों से बीज डलवाये और हल, कृषि संबंधी-उपकरण तथा बैल उनको अपनी ओर से दे तथा काम होजाने के बाद लौटाले † तरखान (कर्मार) खटिक (कुट्टाक), तेली, रस्सी बंटने वाले बेहरिये लोगों से उनको सहायता पहुंचावे। यदि काम ठीक न हो तो उनसे हरजाना वसूल किया जाय।

जांगलिक देशों में १६ द्रोण, दलदल वाले देशों (आनूप) में २४ द्रोण, अश्मक देश में १३½ द्रोण, उज्जैनी में २३ द्रोण, अपरान्त में अपरिमित, और हिमालय की तराई में इतनी अधिक वृष्टि होती है कि खेती को छोटी छोटी नहरों से ही लोग सींचते हैं। वर्षा ऋतु के आदि अन्त में ⅓, और बीच में ⅔ वृष्टि होती है।

बृहस्पति के स्थान गमन गर्भाधानादियों से, शुक्र के उदय, अस्त तथा गमन से और सूर्य्य के स्वरूप में विकार होने से वृष्टि का अनुमान किया जा सकता है सूर्य्य से बीज पड़ता है। बृहस्पतिसे सस्य में डंठल आता है। शुक्र से वृष्टि होती है। जब तीन बादल ऐसे आयें जो कि सात दिन तक लगा तार बरसें, अस्सी बादल ऐसे आयें जो कि बूंद बूंद कर बरसें और साठ ऐसे हों जो कि बदली के रूप में धूप के साथ रहें तब तीन वार खेत जोतने तथा बोने पर अनाज का होना पक्का समझना चाहिये। वृष्टि का

---

† डाक्टर शाम शास्त्रीने यहां पर शब्दार्थ छोड़कर "हल कृषियान्त्र बैलआदिके ......उनके काममें विलंब न होने पावे" यह अर्थ कर दिया है। जोकि कटिल्यकी पंक्ति से सर्वथा भिन्न अर्थ है।

हालत देखकर ही खेत में कम पानी लेने वाला या अधिक पानी लेने वाला बीज डाला जाय। साठी, साधारण चावल, कोदों का धान, तिल, कंगनी या काकुन चेना तथा मोठ वृष्टि के प्रारंभ में, मूंग उर्द तथा शैब्य बीच में, और कुसुंबा, मसूर, कुल्थी, जौ, गेहूं, चना, अतसी तथा सरसों पीछे बोये जाते हैं। ऋतु देखकर ही बीज डाला जाय। अर्धसीरी लोग खाली पड़े खेतों को जोतें बोयें। अपनी मेहनत से पैदा करने वाले उपज का चौथा या पांचवां भाग दें बशर्ते पानी लाने में बहुत तकलीफ न पहुंची हो। जिन खेतों को हाथ से पानी भरकर सींचा जाता है उन से $\frac{1}{5}$ भाग, जिन को बहंगी के पानी से सींचा जाता है उन से $\frac{1}{4}$ भाग, जिन में सोते या अरहट्ट का पानी लगता है उनसे $\frac{1}{3}$ भाग तथा जिनमें नदी ताल तलाव तथा कुंए का पानी पड़ता है उनसे $\frac{1}{4}$ भाग उपज का लिया जाय। मेहनती मजदूर तथा पानी का ख्याल करके गरमी सरदी तथा वसन्त का अनाज बोया जाय। चावलादि उत्तम, तरकारी आदि मध्यम और ईख निकृष्ट गिना जाता है। ईख बोने में बहुत सी तकलीफें झेलनी पड़ती हैं और खर्चा भी अधिक होता है। तर्बूज खर्बूजा आदि बेलवाली चीजें नदीके किनारे, पिप्पली अंगूर ईखादि नदी की बाढ़ की जमीन में, शाक मूल आदि कुंएसे सींची जाने वाली भूमिमें, हरियाली चीजें दलदल तथा नीची जमीन में, गन्ध, भैषज्य (दवाई), विष, खस, कन्द गुडूची, आल,मैनफल आदि खेतके किनारे या मेंड की जमीन में पैदा होते हैं-इसबात को समझ कर सूखी तथा गीली ज़मीन में होने वाली चीज़ें तथा औषधियां जमीन के अनुसार बोई जांय।

बोने से पहिले धानके बीजों को सात रात तक ओस तथा धूप में,—दाल आदि कोशीधान को तीन रात तक पाले तथा घाम में-कांड बीजों (जिनकी शाखा लगतीहों)को शहत घी सुअर की चर्बी से युक्त खादमें—,उनके उपरले भाग में मधु तथा घी का लेप तथा कपास के बिये या बिनौले में गोवर का लेप, करके खेतों तथा क्यारियों में,-पेड़ों के बीजोंको जलाये हुये तथा गोबर तथा गौ की हड्डी की खाद से परिपूर्ण गड्ढोंमें—डालाजाय। अंकुर निकलने पर उन-

को सूखी कटु मच्छी की खाद तथा हथूर के दूध से सींचा जाय।

सांप की किचुली तथा विनौला एक साथ मिलाकर जलाने से जो धुआं निकलता है उसमें सांप नहीं ठहरते।

सभी प्रकार के बीजों के शुरू शुरू में बोने से पहिले सोना तथा पानी लेकर इस मंत्र को पढ़कर खेत में डाले कि—" प्रजापति काश्यप तथा देवताओं को नमस्कार है। देवी सीता कृपाकर बीजों तथा धनों की वृद्धि करें "

रखवारों, ग्वालों, दासों तथा मजदूरोंको काम के अनुसार भत्ता मिले और साथ ही उनको १ $\frac{1}{4}$ पण महीना वेतन दिया जाय। कारीगरों का मेहनताना तथा भत्ता काम के अनुसार नियत किया जाय।

श्रोत्रिय तथा तपस्वि लोग देवताओं पर चढ़ाने के लिये पेड़ों के नीचे गिरे हुए फूल फल तथा आग्रयण नामक यज्ञ के लिये चावल तथा जौ उठालें। अवशिष्ट वृत्ति या उञ्छ वृत्ति (वह मनुष्य जो कि खेत में बिखरे रह गये धान पर निर्वाह करते हों) के लोग बिखरे हुए धान को ग्रहण करें।

अनाज आदि ज्यों ज्यों पकता जाय त्यों त्यों उसको इकट्ठा कर लिया जाय। बुद्धिमान् मनुष्य को चाहिये कि खेत में एक दाना भी न छोड़े। खेतों की मेड़ें चौड़ी तथा ऊंची हों और दूरदूरपर बनाई जाय। वह ऊपर से चपटी होनी चाहिये [जिससे उन पर मनुष्य चल सकें] † मंडल के अंत में बहुत से खल्यान बनाये जांय। उन में वही मजदूर काम के लिये जाने पावें जिनके पास पानी तो हो परंतु आग न हो।

४२ प्रकरण।

सुराध्यक्ष।

सुराध्यक्ष दुर्ग, राष्ट्र, या छावनी में कारीगरों के द्वारा सुराबीजों को तय्यार करावे। कर्ता, क्रेता तथा विक्रेताओं को छोड़कर

† डाक्टर शाम शास्त्री ने "प्रकाराणां समुच्छ्रायान् वलभीर्वा तथाविधाः। न संहतानि कुर्वीत न तुच्छानि शिरांसि च" इसका अर्थ यों किया है कि "अनाज के ढेर इकट्ठे न रखे जांय, उनकी चोटी ऊंची हो" परंतु वस्तुतः श्लोक में प्रकार का तात्पर्य अनाज के ढेर से न होकर मेड़ से है। यही कारण है कि उपरि लिखित अर्थ अधिक अच्छा मालूम पड़ता है।

जो कोई ग्राम से बाहर या अन्दर शराब को लेजावे या लावे उस पर ६०० पण जुरमाना किया जाय। विक्रय तथा क्रय को देखकर शराब के भट्ट एक स्थान पर एक या अनक लगवाये जांय। अमी निर्दिष्ट काम में प्रमाद न करें,आर्य मर्यादा का भंग न करें, तीक्ष्ण उत्साह हीन न हो जांय इस कारण लोगों के चरित्र तथा आचार को देखकर छिटांक आधपाव, पाव तथा आधसेर से अधिक शराब किसी को भी न दी जाय। जो इधर उधर न जांय उनको शराब खाने में ही शराब पिलायी जाय।

पेटी में बन्द या खुला गिरों रखा धन, चुराया हुआ धन, स्वामी रहित जांगलिक द्रव्य तथा सुवर्ण को प्राप्त कर और किसी व्यक्ति को बहुत ही फजूल खर्च या अपनी हैसियत से अधिक खर्चीला देख कर किसी बहाने से उनकी सूचना राजा को देदे और उनको पकड़वा देवे।

हानि कर खराब शराब को छोड़कर अच्छी शराब [कालिका सुरा] को बहुत महंगा न बेचे। खराब शराब को अन्यत्र बिक-वावे। दास तथा कर्म करों से तनखाह देकर काम ले। उनको सुअर पालने के लिये तथा पशुओं को पिलाने के लिये थोड़ी सी मुफ्त ही में दे दिया करे।

शराब खानों में अनेक कमरे हों और उनमें सोने के लिये अलग अलग बिस्तर बिछे हों। गंध माला तथा पानी आदि ऋतु के अनु-सार रखे जांय। शराब खाने के कर्मचारी तथा खुफिया पुलिस के लोग इस बात को जानें कि कौन विशेष या साधारण खर्च कर रहा है। सोये हुए तथा बेहोश हुए हुए शराब खरीदने वालों के गहने कपड़े तथा संपत्ति का ज्ञान प्राप्त किया जाय। यदि किसी की कुछ भी चीज नुकसान हो जाय तो शराब के दुकानदारी पर उतना ही जुरमाना किया जाय। शराब बेचने वाले भिन्न भिन्न कमरों में खूबसूरत लौंडियों को भेजें और बाहर के आये हुए विदे-शियों तथा बेहोश या सोये हुए आर्यों के दिली हाल का उनसे पता लगवावें।

शराब के १ मेदक २ प्रसन्न ३ आसव ४ अरिष्ट ५ मैरेय तथा

६ मधु आदि छः भेद हैं।

१ मेदक—१ द्रोण पानी, $\frac{1}{2}$ आढ़क चावल तथा ३ प्रस्थ सुराबीज के योग से मेदक नामक शराब तैय्यार होती है।

२ प्रसन्न—१२ आढ़क पिसा चावल, ५ प्रस्थ सुराबीज, पुत्रक, दाल चीनी तथा अन्य मसालों के योग से प्रसन्न नामक शराब बनाई जाती है।

३ आसव—आसव में १०० पल कैथा, ५०० पल राब, १ प्रस्थ मधु पड़ती है। सभी चीजें $\frac{1}{4}$ बढ़ाने पर उत्तम और $\frac{1}{4}$ कम करने पर निकृष्ट समझी जाती है।

४. अरिष्ट—प्रत्येक चीजों का अरिष्ट चिकित्सकों के अनुसार ही बनाया जाय।

५. मेरेय—मैरेय में मेढ़ासिंगी तथा दाल चीनी का क्वाथ, मिरच पीपल त्रिफला तथा मसालों से युक्त गुड़ पड़ता है। जिनमें गुड़ पड़ता हो उसमें त्रिफला [हरड़ बहेड़ा आंवला] अवश्य, ही पड़े।

६. मधु—मुनक्के तथा आवजोश के रस का नाम ही मधु [अंगूरी शराब] है। जिन जिन देशों में यह बनती है उनके नाम पर ही इनका कापिशायन तथा हारहूरक नाम है।

सुराबीज का तात्पर्य—१ द्रोण कच्ची या पक्की धोई की दाल, तीन भाग अधिक चावल, १ कर्ष ईख आदि की जड़ (मोरट) आदि से है। मेदक में—पाढ़ा, पठानी लोध, तुंबुरु, पत्थर फूल, शहत, मुर्वा, प्रियंगुफूल, दारु हर्दी मरिच तथा पिप्पली आदि ५ कर्षभर पड़े। प्रसन्ना में—मुलहटी का काढ़ा, शक्कर, हल्दी, आदि मसाला पड़ता है। आसव में—दालचीनी, चीता, वायविडंग, गज पीपल आदि एकएक कर्ष और सुपारी मुलहटी, नागरमोथा, पठानी लोध आदि दो दो कर्ष डाली जाती है। इनका दसवां हिस्सा सुराबीज ... चाहिये। श्वेतसुरा में प्रसन्ना के ही मसाले पड़ते हैं। आम की शराब (सहकार सुरा) आम के रस के विशेष रूप में पड़ने से

या सुराबीज के नियत अनुपान में डालने से महासुरा या संभारि-की नाम से पुकारी जाती है इनमें-ईखकी जड़, पलाश, पत्तूर (शाक विशेष), मेढ़ासिंगी, दूधी वृक्ष (पीपर, पाकर, गुल्लर, वट, महुआ) के कषाय में शक्कर की चासनी बनाकर और उसमें इन्द्र जव, देवदारु, हलदी, कमल, सौंफ, चिचिड़ा, धितवन, नींब, पठानी लोध, चीता वायविडंग पाढ़ा, स्योता आदि को पानी के साथ महीन पीस कर मुट्ठी भर डाला जाय। (अन्तर्नखमुष्टि)। घड़े भर बनाई गई ऐसी शराब राजाओं के पीने के योग्य होती है। इसमें रस की वृद्धि के लिये ५ पल राब डालनी चाहिये।

घरेलू कामों मे श्वेत सुरा और ओषधि में आरिष्टका प्रयोग करना चाहिये। अथवा उस समय जो मिलजाय उसीको काममें ले आना चाहिये। उत्सव, समाज तथा यात्रा में चार दिनतक सौरिक दियाजाय। जो लोग ऐसे समयों में राजाज्ञा से शराब बनावें उनसे दैनिक राज्यकर अत्यय ग्रहण कियाजाय।

स्त्रियें तथा बच्चे सुराबीजों का संग्रह करें। वे सरकारी मालपर ५ सैकड़ा चुंगी ली जाय। सुरका, मेदक, आरिष्ट, महुआ, खटाई, शराब आदिके संबंध में :—

दैनिक विक्रय, तोलमाप के भेदसे प्राप्त आय, व्याजी, तथा वैधरण [राज्यभाग] को ग्रहण कर उचित बातों को कियाजाय।

४३ प्रकरण।

सूनाध्यक्ष।

सरकारी बन्द जंगल के पालतू मृग पशु पक्षि मत्स्यों के बंधन, वध तथा घात में उत्तम दण्ड तथा गृहस्थ लोगों को इसी अपराध में मध्यमदण्ड दियाजाय। आक्रमण न करनेवाले मत्स्यों तथा पक्षियों के बन्धन, वध तथा घात में २६ $\frac{3}{4}$ पण दंड तथा मृगों और पशुओं के संबंध में दुगना दंड होना चाहिये। शिकारी पशुओं का छठा भाग, मत्स्य-पक्षियों का दसवां भाग और मृग-पशुओं का दसवें से भी अधिक भाग शुल्क में ग्रहण किया जाय। पक्षि मृगों

की छठवीं संख्या बन्द जंगल में छोड़दीजाय। मत्स्य झील नद ताल तलाव तथा नहरों में पैदाहोती हैं और उनकी आकृति सामुद्रिक हस्ति, अश्व, पुरुष, बैल तथा गदहों के समान होती है। क्रौंच (कराकुल या घेंटी) दात्यूह (कायल विशेष), उत्क्रोश, हंस, चकवा, यूनानी तीतर, भृंगराज, चकोर, मत्तकोकिल, मोर, तोता, मैना आदि जी बहलाने वाले (विहार पक्षी) पक्षी, अन्य शुभ मंगलदायक प्राणी तथा पक्षि–मृग आदिकों को शिकार तथा अन्य प्रकार की चोटसे बचाया जाय। जो इस नियम को तोड़े उसको उत्तमदण्ड दिया जाय।

ताजे मारे हुए मृगों तथा पशुओं का अस्थि-मांस वेंचाजाय। वेंचते समय हड्डी का दाम निकाल दियाजाय। तोल में जो कोई कमदे उसपर कमी का आठगुना दंड दिया जाय। बछड़ों, बैलों तथा गउओं को कोई भी न मारे। जो इनको तकलीफ पहुंचावे यामारे उसपर ५० पण जुरमाना कियाजाय। बूचड़खाने से बाहर मरे, शिर पैर हड्डी रहित, बदबूदार, अपनी मौत से मरे पशुओं का मांस न वेंचाजाय। इस नियम को तोड़ने में १२ पण दंड दियाजाय।

संरक्षित दुष्ट पशु मृग तथा हाथी सरकारी बन्द जंगल से बाहर फिरते हुए पकड़े तथा मारे जासकते हैं।

४४ प्रकरण।

गणिकाध्यक्ष।

गणिकाध्यक्ष खूब सूरत, जवान तथा गाने बजाने आदि में चतुर लड़की को चाहे वह वेश्या के वंश में उत्पन्न हुई हो और चाहे न उत्पन्न हुई हो १००० पण वार्षिक पर वेश्याके तौरपर नौकर रखे। इसकी सहायक एक दूसरी वेश्या ५०० पण पर रखी जाय। इनमें से कोई यदि बाहर जाय, बीमार पड़ जाय या मरजाय तो उसकी लड़की या बहिन उसका काम करे और उसकी संपत्ति को ग्रहण करे। उसकी माता उसकी सहायक वेश्या को नियत करे। यदि इनमें

से कोई भी न हो तो उसकी संपत्ति राजा स्वयं ग्रहण करे खूबसूरती जवानी गहना आदि के अनुसार वेश्याओं के कनिष्ठ, मध्यम तथा उत्तम यह तीन भेद हैं और इनकी तनखाह भी हजार से ही शुरू होती है। इनका काम राजा के छत्र, इतरदान, पंखा, पालकी, पीढ़ी (पीठिका) रथ आदियों के साथ रहकर राजा की शोभा बढ़ाना है। जवानी नष्ट होने पर इनको दायी बनाया जाय। वेश्या का निष्क्रय (स्वतंत्रता प्राप्त करने का धन) २४००० पण और उसके पुत्रका १२००० पण है। यह लोग आठ वर्ष के बाद से ही राजा के यहां गाने बजाने का काम करें। वेश्या तथा दासी जवानी खतम होने पर कोष्ठागार या पाकगृह (महानस) में काम करें। जिसको यह बात न मंजूर हो वह सरकार को १/४ पण मासिक दे।

वेश्याओं की आमदनी, खर्चा, बचत तथा दाय भाग नियत किया जाय। उनकी फजूल खर्ची रोकी जाय। माता को छोड़कर और किसी के पास गहना रखने पर ४ १/४ पण जुरमाना किया जाय। अपनी संपत्ति बेंचने या गिरों रखने पर ५० १/४ पण, गाली देने पर दुगुना, कान काटने पर ५१ ३/४ दंड दिया जाय। जो अनिच्छुक कन्यापर बलात्कार करे या इच्छुक कन्यापर ही ऐसा काम करे उसको क्रमशः उत्तम दंड, तथा साहस दंड जो अनिच्छुक वेश्या को रोके, पटके, मारे या बदसूरत करे उसको १००० पण दंड मिले। जैसा स्थान हो वैसे ही दंड बढ़ाया जाय। या उसका जो निष्क्रय (छुटकारे या स्वतंत्रता प्राप्त करने का रुपया) हो उससे दुगुना या १००० पण दंड मिले। परन्तु जो मनुष्य राजकीय दर्बार की वेश्या को मारे उसपर निष्क्रय से तिगुना जुरमाना किया जाय। माता, लड़की, रूपाजीवा तथा दासियों के मार डालने में उत्तम साहस दंड दिया जाय। सभी स्थानों में पहिले अपराध में प्रथम दंड, दूसरे अपराध में दुगुना, तीसरे में तिगुना और चौथे में जितनी मर्जी हो उतना दंड नियत किया जाय। जो राजा की आज्ञा होने पर भी पुरुष विशेष के पास न जाय उस पर कोड़े पड़ें या ५००० पण जुरमाना किया जाय। मेहनताना लेकर जो ऐसा ही काम करे उस पर दंड २०० या मेहनताने का दुगुना हो। यदि पास

बुलाकर भी किसी का संग न करे तो मेहनताने का आठ गुना जुरमाना दे बशर्ते कि पुरुष बीमार हो उसमें कोई और बुराई न हो। जो पुरुष को मार डाले उसको जीते जी जला दिया जाय या पानी में डुबाकार मार दिया जाय। यदि कोई वेश्या गहने के खातिर धन ले या मेहनताना लेकर उसका बदला न चुकावे तो उसपर ८ गुना जुरमाना किया जाय । प्रत्येक वेश्या गणिकाध्यक्ष को सूचना दे कि उसकी भृति तथा आमदनी कितनी है, उसकी हैसियत क्या है और उसका किस पुरुष के साथ संबंध है। नट, नर्तक, गायक, वादक, भांड, भाट, रस्सीपर नाच करने वाले, अन्य प्रकार का तमाशा दिखाने वाले, चारण, स्त्रियों में व्यपार करने वाले तथा खुफिया या गुप्तरूप से आजीविका करने वाली औरतों के विषय में भी इसी ढंग को नियम समझना चाहिये। यदि यह लोग दूसरे राष्ट्र के हों तो ५ पण राज्यस्व प्रेक्षावेतन (तमाशा दिखाने की आज्ञा प्राप्ति विषयक राज्यस्व) के रूप में दें ।

रूपाजीवा नामक वेश्यायें दैनिक आमदनी का दुगुना प्रतिमास राज्य को कर के रूप में दें। जो वेश्यायें गणिका, दासी नटी आदि को गाना, बजाना, पढ़ाना, नाचना, नाट्य, अक्षर विज्ञान, चित्रकला वीणा बांसरी तथा मृदंगबजाना, दूसरे के हृदय को पहिचानना, गन्ध मालव गूंधना, शरीर को सजाना धजाना, आदि विषयक विद्यायें सिखावें उनको राजा की ओर से खर्चा मिले। सब तालों को जानने वाले वेश्या-पुत्रों को नाट्य करना सिखाया जावे ।

भिन्न२ देशों की भाषा तथा इशारा समझने वाली औरतें अपने बन्धु बांधवों सहित दूसरों का खुफिया लोगों को तथा नाशक कामों का पता लगावें ।

४५. प्रकरण ।

नावध्यक्ष ।

नावध्यक्ष, स्थानीययादियों के निकट समुद्र, नदी का मुहाना (नदी मुख), झील, ताल, नदी आदियों में चलने वाली नावों का

प्रबंध करे। समुद्र तथा नदी के किनारे बसे हुए गांव क्लृप्त नामक राजकीय कर दें। मच्छी पकड़ने वाले छटा भाग नावों के भाड़ के रूप में दें। बनिये बन्दरगाह के नियमों के अनुसार चुंगी दें। शंख मोती पकड़ने वाले नौकाका भाड़ा दें या अपनी नावों से तरें। खन्य-ध्यक्ष के सदृश ही इनके अध्यक्ष के काम हैं।

नावध्यक्ष बन्दरगाह के अध्यक्ष की आज्ञा तथा नियम का पालन करे। आंधी पानी से वही या टूटी नाव पर पिता के तुल्य अनुग्रह करे। जो माल पानी से भीगगया हो उसपर आधी चुंगी ले या सर्वथा ही चुंगी न ले। समय आने पर व्यापारीय बन्दरगाहों या शहरों की ओर नावों को रवाना करे। दूसरे स्थान पर जाने वाली नाव जब बन्दर गाह में ठहरे तो उनसे चुंगी ली जाय। डाकू नावों को तथा शत्रुदेश में जाने वाली या बन्दर गाह के नियमों को तोड़ने वाली नावों को नष्ट करदिया जाय।

गरमी सरदी में एकसदृश बहने वाली बड़ीबड़ी नदियों में वही नावें चलें जिनमें शासक (मुखिया), नियामक (चप्पू चलाने वाले) दात्र रश्मि ग्राहक (बांस, पिछला हिस्सा तथा रस्सीपकड़ने वाले) तथा उत्सेचक (पानी निकालने वाले) लोगों का उचित प्रबन्ध हो। छोटी छोटी बरसाती नदियों में छोटी छोटी नावों का प्रबन्ध होना चाहिये। राजाज्ञा विना कोई भी नदियों के पार न जाने पावे। यह नियम इसीलिये बनाया कि कहीं राज द्रोही लोग भाग न जावें। बिना राजाज्ञा के जो लोग अनुचित स्थान तथा कुवेलामें नदी पार करें उनको साहस दंड दिया जाय। उचितस्थान तथाउचित वेला में जो विना आज्ञा के नदी पार उतरे उनको २६ $\frac{3}{4}$ पण दंड दिया जाय।

मछियारे, लकड़ हारे, घसियारे, माली, कुंजड़े, ग्वाले, खुफिया, इनके पीछे जाने वाले दूत, सैनिक, सामिग्री, कमसरियट के लोग, अपनी नावों से पार होने वाले, बीज अलाउंस तथा जीवनोपयोगी पदार्थ ले जाने वाले तथा पानी के किनारे बसे गांवों के लोग उपरि-लिखित नियम से मुक्त किये जांय (अर्थात् जिस स्थान से और जिस समय चाहें नदी से पार उतर जांय)। ब्राह्मण, संन्यासी, बच्चे, बुड्ढे, बीमार, शासनहर (राजाकी आज्ञा लेजाने वाला) तथा

गर्भिणी औरतों को नावध्यक्ष का आज्ञा पत्र मुफ्तमें ही दिया जाय जिससे वह नदी के पार विना धन खर्च किये जासकें।

प्रतिदिन आने जाने वाले या स्वदेशी बनियों के जान पहिचान के विदेशी व्यापारी बन्दरगाहों में बिना बाधा के उतरने दिये जांय। जो मनुष्य दूसरे की स्त्री लड़की या संपत्ति को ले कर भागा हो या शंकनीय हो, जिसके पास कुछ भी माल न हो, सिर पर बहुत बड़ा भार रख कर कुछ छिपाये हुए हो, जिसने शीघ्र ही भेस बदल लिया हो, सादा कपड़ा पहिना हो या शीघ्र ही संन्यासी का भेस बना लिया हो, जिस की बीमारी प्रत्यक्ष न हो, जो डरा हुआ हो, छिपाकर बहुमूल्य पदार्थ ले जाता हो, गुप्त काम के लिये जारहा हो, हाथ में जहर या लड़ाई के हथियार लिये हुए हो, दूर से आरहा हो तथा जिसके पास न हो उसको पकड़ लिया जाय।

बोझा लादे छोटे जानवर तथा मनुष्य से १ माषक, वंहगी लिये या सिरपर बोझा लिये मनुष्य से तथा घोड़ा गौ से २ माषक, ऊंट तथा भैंस से ३ माषक, छोटी बहिया से ५ माषक, रथ से ६ माषक बैलगाड़ी से ७ माषक तथा व्यापारी माल से भरी गाड़ी से एक चौथाई पण लिया जाय। अन्य भारों के संबंध में इसी ढंग पर किराया लिया जाय। पानी के किनारे बसे हुए गांवों क्लृप्त नामक कर या अनाज तथा तनखाह ली जाय (उन मल्लाहों के लिये जो कि नदी से पार उतारने के लिये सरकार ने नौकर रखें हों)। राष्ट्र के अन्त में नाव का किराया, चुंगी, गाड़ीभाड़ा तथा सड़क संबंधी कर ग्रहण किया जाय। बिना पास के जो बाहर जाना चाहे उसका माल छीन लिया जाय। कुवेला तथा अनुचित स्थान में बहुत भारी बोझे के साथ तैरने वालों बिना मल्लाह की टूटी फूटी या बे सुधारी नाव में माल ले जाने वालों से नुकसान भर लिया जाय।

आषाढ़ के दूसरे सप्ताह तथा कार्त्तिक के बीचमें नदियों में नावों का विशेष रूप से प्रबंध किया जाय। काम करने वाले लोगों पर विश्वास करते हुए तथा उनकी मजदूरी देते हुए बचे हुए धन को प्रति दिन ग्रहण करे।

४६ प्रकरण ।

गोऽध्यक्ष ।

गोऽध्यक्ष १ वेतनोपग्राहिक (तनखाह लेकर) २ कर प्रति कर (चमड़ा घी आदि लेकर) ३ भग्नोत्सृष्टक (उत्पत्ति का भाग लेते हुए) ४ भागानुप्रविष्टक (दसवां भाग लेकर) ५ व्रजपर्य्यग्र (गणना), ६ नष्ट (खोई हुई) ७ विनष्ट और दूध घी आदि की उत्पत्ति का प्रबंध करे।

१. वेतनोपग्राहिकः—गोपालक, पिंडारक (?) दोहक (दूध दुहने वाले) मंथक (दूध मथने वाले) तथा व्याध लोगों को तनखाह देकर पशुओं की रक्षा के लिये नियुक्त किया जाय। दूध घी देकर उनसे काम लेने पर वह लोग बछड़ों को भूखा मार डालते हैं।

२. कर प्रतिकरः—बुड्ढी, दुधारी, जवान तथा बछड़ी आदियों की सौ सौ संख्या का प्रबंध एक एक गोपाल करे। इस प्रबंध के बदले उसको प्रति वर्ष ८ वारक घी (१०४ सेर—८ छिटांक) † एक पण लाभ देने वाली पूंछ, चमड़ा, आदि मिले।

३. भग्नोत्सृष्टकः—बीमार, लंगड़ी लूली, एक हथा (जो दूसरे से दूध न दुहवावे), मुश्किल से दूध दुहाने वाली तथा बच्चे को मार डालने वाली गउओं को सौ सौ में विभक्त कर गोपालकों के प्रबंध में रखा जाय। उनसे जो कुछ पैदा हो वह गोपालक स्वयं ग्रहण करें।

४. भागानुप्रविष्टकः—अन्य लोगों ने शत्रु या जंगल के भयसे अपने पशुओं की रक्षा का भार जब गोऽध्यक्ष पर डाला हो तो उन पशुओं से जो कुछ उत्पन्न हो उसका दसवां भाग ग्रहण किया जाय।

---

† तुलामान पौतव में लिखा है कि "कुटुम्बाश्चतुराशीतिः वारकस्सर्पिषो मतः" अर्थात् घी के वारक में ८४ कुडुम्ब घी होता है। एक कुडुम्ब लग भग २½ छिटांक के होता है।

५. व्रजपर्य्यग्र–व्रजपर्य्यग्र का तात्पर्य्य पशुगणना से है। इसके अनुसार गोऽध्यक्ष—बछड़ा, बड़ा बछड़ा, सिखाने लायक जवान बछड़ा (दम्या) भार ढोने लायक (वही), बैल, सांड—हल में जोतने लायक (युग वाहन), गाड़ी में जोतने लायक (शकटवह) बूचड़ खाने के योग्य(सूनाः), भैंस, पीठ या कंधे पर भार ढोने लायक भैंस,—बछड़ी, जवान बछड़ी, बच्चा देने के योग्य गो, गाभिन, दुधारी गाय, अप्रजाता (जिसके अभी बच्चा पैदा न हुआ), वन्ध्या-एक महीने या दो महीने की गाय भैंस या इससे बड़ी—इत्यादि बातों के साथ साथ उनकी–संख्या, (अंक) चिन्ह, रंग, सींगों का अंतर, उत्पत्ति तथा अन्य बहुत से चिन्हों का उल्लेख रजिष्टर में करे।

६. नष्ट–खोई हुई चुराई हुई या दूसरे संघ में मिली हुई को नष्ट समझा जाय।

७. विनष्ट–कीचड़ में फंसी, बीमार, पानी में बही, बुड्ढी, पेड़, नदी का किनारा लकड़ी पत्थर आदि से घायल, बिजली शेर सांप मगरमच्छ जंगल की आग आदि से मरी गाय भैंस को विनष्ट (सदा के लिये खोई हुई) समझा जाय।

जो पशुओं को स्वयं मारे या मरवाये अथवा स्वयं चुरावे या चुरवाये उसको मृत्यु दंड दिया जाय। जो चुराई हुई गाय को ले आवे तो–यदि वह अपने ही देश के किसी आदमी की हो तो १ पण और यदि किसी विदेशी की हो तो आधा पण-प्रति गाय लेवे। गोपालक लोग बच्चे बुड्ढे तथा बीमार लोगों की गउओं की रक्षा का प्रबंध करें †

---

† डाक्टर शाम शास्त्री ने "बालवृद्ध-व्याधितानां गोपालकाः प्रतिकुर्युः" इसका अर्थ "ग्वाले बालक बीमार तथा बुड्ढी गउओं को दवाई दें" यह कियाहै जो कि अस्वाभाविक मालुम पड़ता है। हमारी समझ में इस वाक्य में बाल वृद्ध व्याधित यह शब्द पुरुषों के लिये हैं। उपरिलिखित वाक्य में "परदेशीयानां" भी इसी अर्थ का इशारा करता है—

व्याध तथा शिकारी लोगों से जंगलों को चोर शेर तथा शत्रु से सुरक्षित करवाकर और ऋतुओं के अनुसार उनका विभाग कर उनमें पशुओं को चरने के लिये भेजा जाय। सांप शेर को डराने के लिये तथा ग्वालों गडरियों (गोचर) तथा चरवाहों के ज्ञान के लिये डरपोक गाय के गले में घंटा आदि बांध दिया जाय। कीचड़ तथा मगरमच्छ से रहित तथा समान रूप से ढालू किनारे वाले घाटों में पशुओं को पानी पिलाया जाय। यदि किसी गाय भैंस को चोर शेर सांप या मगरमच्छ ने पकड़ लिया हो तो उसकी सूचना गोऽध्यक्ष को दी जाय अन्यथा उसका दाम चरवाहे को स्वयं देना पड़ेगा। यदि कोई पशु किसी कारण से मर जाय तो गाय भैंस का अंकित चमड़ा, भेड़ी बकरी का चिन्हित कान, घोड़े गदहे तथा ऊंटका अंकित चमड़ा तथा पूंछ और साथ ही बाल, चमड़ा, चरबी, आंत, दांत, खुर, सींग तथा हड्डी चरवाहों को मिले।

ताजे या सूखे मांस के बेचने का प्रबंध किया जाय। कुत्तों तथा सुअरों को मट्ठा पिलाया जाय। थोड़ा सा मट्ठा कांसी के बर्त्तन में अपने खाने के लिये भी रख लिया जाय। जो खुरचन बचे उसको खली नरम करने के लिये रख छोड़ा जाय। पशुओं को बेचने वाला हर पशु के पीछे सरकार को एक पण दे।

वर्षा, शरत् तथा हेमन्त में दोनों समय और शिशिर बसन्त तथा ग्रीष्म में अनेक समय गउओं तथा भैंसियों को दुहा जाय। नियत समय से अन्य समय में दोहने वाले को अंगूठे काटने का दंड दिया जाय। यदि कोई दुहने के समय में गाय को न दुहे तो उससे नुकसान का धन ग्रहण किया जाय। नाक में रस्सी डालना, समय पर बछड़ों को काम सिखाना तथा हल या गाड़ी में जोतना आदि जो समय पर न करे उसको भी उपरि लिखित प्रकार दंड दिया जाय।

गऊ के द्रोणभर (१० सेर) दूध से प्रस्थ भर (१० छिटांक) घी और भैंसी के दूध से पांच भाग (१२ छिटांक) अधिक घी निकलता है। इसी प्रकार भेड़ी बकरी में दो भाग घी अधिक होता है।

वस्तुतः दूध घी की मात्रा मथने पर तथा भूमि, घास पानी आदि की विशेषता पर निर्भर है।

जवान बैल को जो बैल से लड़ा कर गिरवाये या मरवाये उस को उत्तम साहस दंड दिया जाय। एक एक रंग की दस गउओं का एक संघ या वर्ग बनाया जाय और इस ढंग पर उनकी रक्षा का प्रबंध किया जाय। जिधर गांव बसे हों उसी ओर गउओं को उतनी दूर तक चरने के लिये ले जाया जाय जहां तक वह जांय या उनकी रक्षा उत्तम विधि पर की जासके। भेड़ी बकरी आदि का छठे महीने ऊन लिया जाय। घोड़े गदहे तथा ऊंटों का भी प्रबंध इसी ढंग पर किया जाय।

वह बैल जिनकी नाक में नथ पड़ी हो और जो कि घोड़े के बराबर चलते हों उनको आधा बोझ जौ, दुगुनी घास, १०० पल खली, १० आढ़क धान के कन, ५ पल सेंधा नमक, १ कुडुंब नाकमें डालने या मलने के लिये तेल, १ प्रस्थ शराब, १०० पल मांस, १ आढ़क दही, १ द्रोण जौ या उर्द का पुलाव, १ द्रोण दूध या $\frac{1}{2}$ आढ़क सुरा, १ प्रस्थ तेल, १० पल खार † और १० पल अदरक प्रतिपान (दूध) के रूप में दीजाय। भैंस तथा ऊंट को दुगुना और खच्चर, गौ तथा गदहे को $\frac{1}{4}$ कम दिया जाय। लद्दू बैलों तथा मेहनत करने वाले बैलों को भी इसी प्रकार भोजन मिले। दुधारी गउओं को समय काम तथा फल के अनुसार भोजन दिया जाय। घास तथा पानी तो यथेष्ट राशि में सभी पशुओं को मिलना चाहिये। गउओं बैलों आदि का प्रतिपालन इसी प्रकार किया जाय।

सौ सौ के जत्थों में—घोड़ियों गदहियों में ५, भेड़ी बकरियों में १० और गौ भैंसी तथा ऊंटनियों के दस दस के झुंड में ४ नर होने चाहियें।

---

† क्षार का अर्थ डाक्टर शाम शास्त्री ने राव तथा शक्कर किया है। वैद्यक शास्त्र में यह शब्द प्रायः "जवक्षार, सज्जीक्षार, सुहागा क्षार" आदिके लिये आता है। हमारी समझ में **क्षार** का सीधा अर्थ खारही क्यों न किया जाय?

४७ प्रकरण ।

अश्वाध्यक्ष ।

अश्वाध्यक्ष विक्रेय, क्रीत, युद्ध प्राप्त, स्वदेशोत्पन्न, सहायतार्थ-प्राप्त, गिरों में रखे तथा कुछ समय के लिये सरकारी तबेले में बांधे घोड़ों के वंश, उमर, रंग, चिन्ह, वर्ग तथा प्राप्तिस्थान का उल्लेख करे। जो अप्रशस्त, लंगड़े लूले तथा बीमार हों उनकी ऊपर सूचना दे। अश्ववाह (सईस) लोग कोश तथा वस्तु भंडार से चीजों को प्राप्तकर मितव्ययता से काम करें।

घोड़े की आकृति तथा स्थिति के अनुसार तबेला जितना लंबा बनाया जाय, उसकी चौड़ाई उससे दुगुनी हो। चारों ओर दरवाजे तथा बीच में फिरने का स्थान हो। उसमें आने जाने का मार्ग तथा बैठने की चौकी हो। उसका बरांडा आगे से झुका हो। चारों ओर बन्दर मोर हिरन न्यूउले चकोर तोता मैना आदि पशु पक्षियों से परीपूर्ण हो।

घोड़े की लंबाई से चार गुना चौकोन चिकना फर्श हो। उसमें खाना खाने की नांद बनी हो साथ ही मूत्र लीद आदि के बाहर निकालने का प्रबन्ध हो। उसका मूंह उत्तर या पूरब हो। या जैसा तबेला हो वैसा ही उसका मुख्य द्वार हो। घोड़ी, बछिया तथा बच्चे को अकेले रखा जाय।

पैदा होते ही घोड़ी को तीन रात तक १० छिटांक घी दिया जाय। इसके दस रात तक १० छिटांक सतुआ तथा तेल तथा दवाई दी जाय। शनैः शनैः जौका पुलाव और ऋतु के अनुसार भोजन देना शुरू किया जाय। दस रात बाद घोड़े के बच्चे को ढ़ाई छिटांक सतुआ चौथाई घी के साथ मिले। छः महीने तक १० छिटांक दूध भी उसको मिलता रहे। इसके बाद क्रमशः प्रतिमास आधा आधा बढ़ाते हुए चौथे साल तक १० सेर जौ या जौ का सतुआ दिया जाय। चौथे पांचवे साल पर आते ही घोड़ा पूरा जवान तथा काम-लायक हो जाता है।

अच्छे घोड़े के मुंह की लंबाई ३२ अंगुल, देह की लंबाई मुंह से पांच गुना, जंघा २० अंगुल, ऊंचाई जंघा का चार गुना, होती है । मध्यम तथा निकृष्ट घोड़े की लंबाई क्रमशः तीन तीन अंगुल कम हो जाती है । घोड़े की मुटाई १०० अंगुल होती है । मध्यम तथा निकृष्ट घोड़े इससे क्रमशः पांच गुना कम मोटे होते हैं ।

अच्छे घोड़े को उत्तम या मध्यम चावल, जौ या काकिनी का धान अधिक से अधिक २० सेर सूखा मिलना चाहिये । यदि पका कर देना हो तो आधा ही दिया जाय । मूंग तथा उर्द के विषय में भी यही नियम है उनके खाने के समान को नरम करने के लिये १० छिटांक तेल, ५ पल नमक, ५० पल मांस, २½ सेर शोरबा या दुगुनी दही डाली जाय । पीने के लिये ५ पल शक्कर, १० छिटांक शराब, या दुगुना दूध दिया जाय । यदि घोड़ा बहुत दूर से चल कर आया हो या बहुत भार उठाने के कारण थका हुआ हो तो उसके खाने के लिये १० छिटांक तेल, नाक तथा नथुनों पर मलने के लिये २½ छिटांक तेल, आधा बोझ जौ या पूरा बोझ घास दिया जाय और दो हाथ या ६ अरत्नि तक उसके चारों ओर नीचे घास बिछा दिया जाय ।

मध्यम तथा निकृष्ट घोड़ों को उत्तम घोड़ों से ¼ कम रथ में लगने वाले घोड़ों को उत्तम के समान, बच्चे पैदा करने के लिये रखे घोड़ों को और निकृष्ठ घोड़ों को मध्यम के समान घोड़ी तथा पारशमा [?] को ¼ कम और बच्चों को इसका आधा भोजन दिया जाय । खाना बनाने वालों, बागडोर पकड़ने वालों तथा वैद्यों को घोड़ों के खानेमें से कुछ भाग मिले । जो घोड़े लड़ाई बीमारी बुढ़ापे आदि के कारण काम तथा लड़ाई के अयोग्य हों उनको बच्चे पैदाकरने के [पिंडगोरिका] काम में लाना चाहिये । पौर तथा ग्रामीणों के लिये ताकतवर घोड़ [वृष] घोड़ियों के लिये छोड़े जांय ।

काम्भोज, सैन्धव,आरट्टज,वानायुज आदि घोड़े सवारी के काम के लिये उत्तम, वाह्लीक पापेयक, सौवीरक, तैतल आदि मध्यम और शेष निकृष्ठ [अवर] समझे जाते हैं । तेजी, सीधगी तथा धीमे पन को देखकर उनको लड़ाई या सवारी के काम के लिये रखा

जाय। लड़ाई के लिये घोड़ों को तैय्यार करने के लिये नियमबद्ध शिक्षण मिलना चाहिये।

सवारी घोड़ों के १ वल्गन २ नीचैर्गत ३ लंघन ४ धोरण ५ नारोष्ट्र आदि पांच भेद हैं।

१.वल्गन। उपवेणुक, वर्धमानक, यमक, आलीढ़प्लुत, पृथग, तथा तृवचाली वल्गन [गोल घूमना] के भेद हैं। *

२.नीचैर्गत। शिर तथा कान खड़ाकर दौड़ने वाले नीचै र्गत [एक चाल चलने वाले] घोड़ों की—१ प्रकीर्णक २ प्रकीर्णोत्तर ३ निषण्ण ४ पार्श्वानुवृत्त ५ ऊर्मिमार्ग ६ शरभ क्रीडित ७ शरभप्लुत ८ त्रिताल ९ वाह्यानुवृत्त १० पंचपाणि ११ सिंहायत १२ स्वाधूत १३ क्लिष्ठ १४श्लाघित १५ बृंहित १५ पुष्पाभिकीर्ण आदि सोलह चालें हैं। †

३.लंघन। लंघन [कूदना+छलांग मारना] के१कपिप्लुत,२ भेक प्लुत, ३ एकप्लुत ४ एकपादप्लुत ५ कोकिल संचारी ६ उरस्य ७वकचारी आदि सात भेद हैं। ††

---

*—उपवेणुक = एक हाथ व्यास वाले चक्र में घुमाना। वर्धमानक = गोल-घूमने का एक प्रकार विशेष। यमक = जोड़ी में घूमना। आलीढ़ प्लुत = दौड़ना तथा साथ ही साथ कूदना। पृथग = अगले भाग पर जोर दे कर दौड़ना॥

† प्रकीर्णक = संपूर्ण प्रकार कीगति। प्रकीर्णोत्तर = संपूर्ण प्रकार कीगति के साथ किसी एक प्रकार की गति के लिये प्रसिद्ध। निषण्ण। शरीर के पिछले भाग को स्थिर रख कर दौड़ना। पार्श्वानुवृत्त = पार्श्व से गति। ऊर्मिमार्ग = लहर की तरह उछलना तथा दौड़ना। शरभ क्रीडित = शरभ की तरह खेलना। शरभप्लुत = शरभ की तरह कूदना। त्रिताल = तीन पैर से दौड़ना। वाह्यानुवृत्त = दहिने बांयें घूमना। पंचपाणि = पहिले तीन, फिर दो पैरों के सहारे घूमना। सिंहायत = शेरकी तरह उछलना। स्वाधूत = लम्बी कूद कूदना। क्लिष्ट = विना सवार के सीधा दौड़ना। श्लाघित = शरीर के अगले भाग को झुका कर दौड़ना। बृंहित= शरीर के पिछले भागको झुकाकर दौड़ना। पुष्पाभिकीर्ण = चित्र विचित्र चालें।

†† कपि प्लुत = बन्दर की तरह कूदना। भेक प्लुत = मेंडक की तरह कूदना। कोकिल संचारी = कोयल की तरह फुदकना। उरस्य = जमीन के साथ छाती लगा कर सरपट दौड़ना। वकचारी = बगुले की तरह उछलना कूदना।

४ धोरण। धोरण (दुड्की चाल) के कांक (गिद्ध की तरह), वारि कांक (बत्तख की तरह) मयूर (मोर की तरह), अर्धमयूर (मोर की तरह कुछ कुछ), नाकुल [न्यूवला की तरह], अर्ध नाकुल (कुछ २ न्यूवले की तरह), वाराह (सुअर) तथा अर्ध वाराह (कुछ कुछ सुअर की तरह) आदि आठ भेद हैं।

५ नारोष्ट्र। इशारे पर घोड़े के चलने का नाम ही नारोष्ट्र है। गाड़ी के घोड़े ६, ६ तथा १२ योजन और सवारी के घोड़े ५, ८ तथा १० योजन चलते हैं। तेजी, धीमी तथा लद्दू यह तीन चालें हैं। तेजी, घूमना, साधारण चाल, मध्यम चाल तथा सरपट चाल आदि घोड़ों के दौड़ने के भेद हैं।

योग्य योग्य व्यक्ति उनके बन्धन आदि साधनों का, सूत लोग लड़ाई के रथों तथा गहनों का और चिकित्सक उनके शरीक के ह्रास वृद्धि तथा ऋतु के अनुकूल भोजन का प्रबंध करें।

सूत्र ग्राहक (बागडोर थांभने वाले) अश्व बंधक (घोड़ा बांधने वाले) यावसिक (जौ का पुलाव बनाने वाले), विधापाचक (भोजन पकाने वाले स्थान पाल (रखवारे), केशकार (बाल काटने वाले), जांगलीविद् (जड़ी बूटी जानने वाले) आदिक घोड़ों के रक्षा विषयक अपने अपने कामों को करें। जो काम न करे उसकी रोजाना मजदूरी काट ली जाय। जो कि थका हो या जिसको चलने से डाक्टर ने रोका हो उसको यदि कोई काम पर बाहर ले जावे उस पर १२ पण जुरमाना किया जाय। काम करवाने से या दवाई से घोड़ों की यदि बीमारी बढ़ जाय तो खर्चे का दुगुना दंड दिया जाय। ठीक दवाई न देने से यदि घोड़ा मर जाय तो उसका दाम ले लिया जाय। गउओं, गदहों, ऊंटों, भैंसों, भेड़ों तथा बकरियों का भी इसी ढंग पर प्रबंध किया जाय।

घोड़ों को दिन में दो वार नहवाया जाय। उनपर सुगन्धित द्रव्य तथा माला आदि चढ़ाई जांय। प्रतिपद् तथा पूर्णिमा में क्रमशः भूतों की पूजा तथा स्वस्ति वाचन पढ़ाजाय। अश्वयुज महीने के नवमें दिनउनकी आरती उतारी जाय। यही बात उनकी बीमारी में, प्रलंब यात्रा के प्रारंभ तथा अन्त में भी की जाय।

४८ प्रकरण ।

हस्त्यध्यक्ष ।

हस्त्यध्यक्ष हस्ति-वन (हाथी का जंगल) की रक्षा का प्रबंध करे। सीखने तथा परेट से थके हुए हाथी, हथिनी तथा हाथी के बच्चों के सोने, सोने के स्थान, घास जौ आदि की राशि के साथ साथ उनके अन्य कार्य्यों का प्रबंध, पैरों की जंजीर तथा युद्ध में पहिनने के गहनों का और चिकित्सक, शिक्षक फीलवान आदि कर्म चारियों के कार्य्यों का निरीक्षण करे।

हाथी की लंबाई से दुगुनी ऊंची तथा चौड़ी हस्ति-शाला (हाथी का तवेला) और उसमें हाथी हथिनी के रहने के कमरे जुदे जुदे बनाये जांय। बीच बीच में लोहे के खूंटे गड़े हों। उसका मुंह पूर्व या उत्तर और उसका वरांडा आगे से झुका हो।

हाथी की लंबाई जितना लंबा चौड़ा फर्श बनाया जाय जिसमें पेशाब तथा लीद के बाहर निकलने का स्थान पृथक् बना हो। उन के रहने के स्थान के बराबर सोने का स्थान बनाना चाहिये जो कि आकृति में आधा हो।

दिन के पहिले, सातवें तथा आठवें भाग में स्नान, उसके बाद भोजन, पूर्वाह्न में व्यायाम और अपराह्न में प्रति पान (शराब आदि पीने के लिये देना) कराया जाय। रात के पहिले दो भाग सोने और तीसरा भाग जागने तथा उठने के लिये उनको दिया जाय। गरमियों में हाथी पकड़े जांय।

बीस वर्ष की उमर का हाथी पकड़ने लायक होता है। बच्चा, मूढ़, अदांत, बीमार हाथी और गाभिन, दुधारी हाथिन न पकड़ना चाहिये। सात अरत्नि ऊंचा, नौ अरत्नि लंबा तथा दस अरत्नि चौड़ा ४० साल का हाथी उत्तम होता है। तीस वर्ष तथा पच्चीस वर्ष की उमर का हाथी क्रमशः मध्यम तथा निकृष्ट समझा जाता है। उत्तम मध्यम निकृष्ट का भोजन क्रमशः एक चौथाई कम हो।

सात अरत्नि ऊंचे हाथी को खाने के लिये—१ द्रोण चावल, $\frac{1}{2}$ आढ़क तेल, ३प्रस्थ घी, १० पल नमक, ५०पल मांस, १आढ़क शोरबा, या २ आढ़क दही और इसको स्वादिष्ट तथा गीला करने के लिये १० पल खार, १ आढ़क शराब, या २ आढ़क दूध, १ प्रस्थ तेल मालिश के लिये, $\frac{1}{8}$ प्रस्थ तेल शिर पर लगाने के लिये तथा तबेले में जलाने के लिये, २ भाग जौ, २$\frac{1}{2}$ भाग हरा घास, २$\frac{1}{2}$ भाग सूखा घास तथा चरी आदि के डंठल दिये जांय।

आठ अरत्नि ऊंचे मदांध हाथी को सात अरत्नि ऊंचे हाथी के बराबर भोजन दिया जाय। ६ तथा ५ अरत्नि ऊंचे हाथियों को उनकी आकृति के अनुसार खाना मिले। शिकार खेलने के काम के लिये जो हाथी का बच्चा पकड़ा गया हो उसको दूध तथा जौ की लप्सी † दी जाय।

लाल रंग का मोटा, जिसकी पसली बाहर न दिखाई देती हो, सुडौल, मांस से परिपूर्ण, समतल पीठ वाला और जातद्रोणिक (?) हाथी खूब सूरत समझा जाता है।

शोभा तथा ऋतु का ख्याल रखते हुए भिन्न२ पशुओं के चिन्हों से युक्त सीधे तथा गम्भीर (भद्र तथा मन्द्र ?) हाथियों को भिन्न भिन्न कामों में लगावे।

४८. प्रकरण।

हस्ति प्रचार।

कार्य के अनुसार हाथी के १ दम्य २ सान्नाह्य ३ औपवाह्य तथा ४ व्याल आदि चार भेद हैं।

१ दम्य। दम्य [शिक्षण के योग्य] हाथी के १ स्कंधगत [कंधे पर मनुष्य को सवार करवाने वाला] २ स्तंभगत [खूंटे से

† डाक्टर शाम शास्त्री ने "यावसिक" का अर्थ घास किया है। हमको इसका अर्थ जौकी लप्सी ही ठीक मालूम पड़ता है। क्यों कि यावसिक" शब्द **यव** (जौ) से बना है।

बंधा] ३ वारिगत [पानी में नहाने के लियेगया] ४ अवपातगत [गड्ढेमें लेटा] तथा ५ यूथगत [झुंडमें गया] आदि पांच भेद हैं। बच्चे की तरह दम्य हाथी के साथ व्यवहार करना चाहिये।

२ सान्नाह्य। सान्नाह्य [युद्ध के योग्य] हाथी के १ उपस्थान [कवायद] २ संवर्तन [इधर उधर घुमाना] ३ संयान[आगे बढ़ना] ४ वधावध [पैरों के तले कुचलना तथा मारना] ५ हस्तियुद्ध [हाथी से लड़ना] ६ नागरायण [शहर तथा किले पर आक्रमण करना] ७ सांग्रामिक [लड़ाई लड़ना] आदि सात काम हैं। बांधना, गले में रस्सी डालना तथा झुंड में काम लेना आदि उसके सिखाने के क्रम हैं।

३ औपवाह्य। औपवाह्य [सवारी के योग्य] हाथी—१ आचरण [दूसरों को अपने ऊपर चढ़ाना] २ कुंजरौपवाह्य [हाथियों के साथ चलते समय अपने ऊपर सवार बैठाने वाला] ३ धोरण [दुड़की चलने वाला] ४ आधानगतिक [भिन्न२ चालें चलने वाला] ५ यष्ट्युपवाह्य [अंकुश मारने से चलने वाला], ६ तोत्रोपवाह्य [लोहे की कील से चलने वाला] ७ शुद्धोपवाह्य [अपने आप चलने वाला], ८ मार्गायुक [शिकारी] आदि आठ प्रकार का होता है। इन कामों को करना सिखाने के लिये हाथियों से ठंड में काम, या उनसे मोटा मोटा काम या उनसे इशारे से काम लेना चाहिये।

४ व्याल। व्याल (बदमाश या मदमत्त) हाथी एक ही ढंग पर सिखाया जा सकता है। उनको सीधा रखने के लिये दंड देना चाहिये। प्रायः यह काम से डरते हैं और जिद्दी होते हैं। इनके स्वभाव का पता नहीं चलता और अस्थिर चित्त तथा मदांध होते हैं। उलट पुलट काम करने वाले हाथी का नाम ही व्याल है। यह १ शुद्ध (पूरा बदमाश), २ सुव्रत (जिद्दी), ३ विषम (टेढ़े मेढ़े स्वभाव का) तथा सर्वदोषदुष्ट (सब दोषों से भरा हुआ) आदि चार प्रकार का होता है।

हाथी को काबू में रखने के लिये जंजीर आदि साधनों का

प्रयोग हस्ति वैद्य की आज्ञा के अनुसार होना चाहिये ।

खूंटा, गले की जंजीर, पेटी, पैरों की अंजीर, आदि अनेक प्रकार के हाथी को बांधने के साधन हैं ।

अंकुश, खपची, यंत्र, आदि हाथी के चलाने के साधन हैं ।

वैजयंती (गल का हार), क्षुर प्रमाल (पैरों का घुंघुरू) हौदे का कपड़ा आदि हाथी के गहने हैं ।

कवच, तोमर (जिसमें वाण रख जांय), तथा यन्त्रादिक लड़ाई के आभूषण हैं ।

चिकित्सक (हाथियों का वैद्य), अनीकस्थ (शिक्षक), आरोहक (हाथी पर चढ़ने वाला) आधोरण(हाथियों का साईस), औपचारिक (सेवक), विधापाचक [भोजन बनाने वाला], यावसिक (घास डालने वाला), पादपाशिक (जंजीर बांधने वाला) कुटी रक्षक (तबेलों का रक्षक तथा औपशायिक (रात के चौकीदार) आदि हाथियों का काम करने वाले राज सेवक हैं ।

चिकित्सक, कुटी रक्षक तथा विधापाचक आदियों को एक प्रस्थ चावल, चुल्लूभर तेल, थोड़ी सी शक्कर तथा नमक मिले। चिकित्सकों को छोड़ कर औरों को १० पल मांस भी दिया जाय।

काम करने से या चलने से जो हाथी बीमार होगये हों, मद या बुढ़ापे से तकलीफ उठारहे हों उनका इलाज चिकित्सक लोग करें ।

जो लोग तबेले का कूड़ा कर्कट न सफा करें, समय पर जौ तथा घास न दें, सख्त जमीन पर सुलावें, मर्मस्थान में चोट पहुंचावें, दूसरों को चढ़ावें, असमय में काम पर लेजावें, अनुचित भूमि या घाट पर उन को उतारें और घने जंगल में चरावें उनपर जुरमाना किया जाय । और जुरमाने की रकम भत्ते में से काट ली जाय ।

चौमासे के दिनों में तथा ऋतुओं की संधि में हाथियों की आरती उतारी जाय । सेनापति प्रतिपद तथा पूर्णिमा के दिन में हाथियों की रक्षा के लिये भूतों की पूजा करें ।

नदी वाले देशों के हाथियों के दांत २½ साल बाद और पहाड़ी

हाथियों के दांत ५ साल बाद काटे जांय और दांत की जड़ के पास उनके दांत जितने मोटे हों उससे दुगुनी लंबाई तक दांत छोड़ दिये जाय।

४९–५१ प्रकरण।

रथाध्यक्ष, पत्यध्यक्ष तथा सेनापति का काम।

अश्वाध्यक्ष के तुल्य ही रथाध्यक्ष के काम हैं। रथाध्यक्ष को चाहिये कि वह रथों के कारखानों को खोले। उनमें दस पुरुष (१२० अंगुल) ऊंचे तथा १२ पुरुष (१४४ अंगुल) तक चौड़े रथ बनवावे। १२ पुरुष से ६ पुरुष तक क्रमशः एक एक पुरुष घटते हुए सात प्रकार के रथ होते हैं। इनके अतिरिक्त वह १ देवरथ [देवता का रथ], २ पुष्परथ (उत्सव संबंधी रथ), ३ सांग्रामिक रथ [लड़ाई के काम में आने वाला] ४ पारियाणिक रथ [यात्रा के लिये उपयोगी] ५ परपुराभियानिक [दूसरे के शहर पर चढ़ाई करने के लिये उपयोगी] तथा ६ वैनयिक [रथ चलाना सिखाने के लिये उपयोगी] आदि रथों को बनवावे।

वाण चलाना, अस्त्र फेंकना, कवच, हथियार, सारथि तथा रथी लोगों के रथ आदि का निरीक्षण करे और उनके कामों को देखे। तनखाह पाये हुए तथा न पाये हुए लोगों के भक्त वेतन [भत्ता या अलाउंस], योग्य कारीगरों की रक्षा तथा उनके पारितोषक का विशेष रूप से प्रवंध करे। साथ ही सड़कों को नपवाये।

पत्यध्यक्ष के काम भी इसी प्रकार हैं। वह प्रवासी ताल्लुकेदार, † तनखाह खोर सैनिक, सैनिक संघ (श्रेणी), शत्रु मित्र तथा जांगलिकों की सेना की शक्ति तथा दुर्बलता का ज्ञान करता रहे। नीचे स्थानों, मैदान, कूट गड्ढे, टीले पर और दिन तथा

---

‡ मौलका अर्थ डाक्टर शामशास्त्री ने (hereditary troops) वंशागत सेना किया है। हमरी समझ में इसका अर्थ प्रवासी ताल्लुकेदार (Absented landlord) होना चाहिये। क्योंकि उसी अर्थ में यह रूढ़ी है।

रात में कैसे युद्ध करना चाहिये इसको पत्यध्यक्ष पूरी तरह से जाने। और साथ ही इस बात का पता रखे कि कौन सी सेना किस समय के लिये उपयुक्त तथा अनुपयुक्त है।

(पत्यध्यक्ष) युद्ध तथा प्रहरण (हथियार चलाना) विद्या में चतुर होकर, हाथी घोड़े रथ के संचालन में समर्थ चतुरंग सेना के कार्य्य तथा स्थान का निरीक्षण करे और अपनी भूमि, युद्ध का समय, शत्रु की सेना, उसके गठे हुए व्यूह का भेदन, टूटे हुए व्यूह का फिरसे बनाना, इकट्ठी सेना का तितर वितर करना, पृथक् पृथक् हुओं का मारना, किला तोड़ना तथा आक्रमण का समय आदि देखता रहे।

(पत्यध्यक्ष) डेरा डालना, आक्रमण करना, हथियार चलाना आदि सैनिकों को सिखाकर उनको तुर्री की आवाज, झंडी झंडे आदि के इशारों से व्यूह आदि बनाना सिखावे।

५२–५३ प्रकरण।

मुद्राध्यक्ष तथा विवीताध्यक्ष।

मुद्राध्यक्ष एक ताम्र माषक लेकर पास पार्ट दे। जिसके पास पास हो वही जनपद में आने जाने पावें। जो विना पास के राष्ट्र में घुसे उसपर १२ पण, जो जाली पास बनावे उसको साहस दंड और यदि वह विदेशी (तिरोजन) हो तो उसको उत्तम दंड दियाजाय। गोचर भूमियों के प्रबंध कर्त्ता विवीताध्यक्ष को ही पास देखना चाहिये।

खतरनाक मध्यवर्त्ती स्थानों को ही गोचर भूमि बनाया जाय। चोरों तथा हिंसक जंतुओं से घाटियों को सुरक्षित रखा जाय। जहां पानी न हो वहां पर कुयें तथा तालाब बनाये जांय। जगह जगह पर फूल फल के बगीचे लगाये जांय। व्याध तथा शिकारी लोग शिकारी कुत्तों को साथ लिये हुए जंगलों की देख रेख किया करें। चोर तथा दुश्मन के पास आते ही उनको शंख तथा नगारा बजा

देना चाहिये। पेड़ या पहाड़ी पर चढ़कर या तेज घोड़ेपर सवार होकर उनको धूमाग्नि परंपरा या पास युक्त राजकीय कबूतरों के सहारे राजा के पास जंगल में दुश्मन के पहुंचने की खबर पहुंचा देनी चाहिये।

विवीताध्यक्ष का कर्त्तव्य है कि वह हाथी वन तथा जंगल की रक्षा करे। जंगलात विभाग की सड़कों को बनवावे और टूटी तथा खराब हुई सड़कों को सुधारे। चोरों को पकड़े और व्यापारियों के माल की रक्षा करे। गउओं के पालन पोषण के साथ साथ जांगलिक द्रव्योंका लोगों को ठेका देवे।

५४·५५ प्रकरण।

समाहर्ता का प्रबंध तथा खुफिया पुलिस का प्रयोग।

(क)

समाहर्ता का प्रबंध।

समाहर्ता (राज्यस्व एकत्रित करने वाला) जनपद को चारभागों में विभक्तकर, ज्येष्ठ, मध्यम, कनिष्ठ, आदि के भेद से ग्रामों का निम्नलिखित प्रकार वर्गीकरण करे।

(i) ग्रामाग्र। (साधारण ग्राम)

(ii) परिहारक (राज्य कर से सर्वथा ही मुक्त)

(iii) आयुधीय (सैनिकों को राज्यकर में देने वाला)

(iv) धान्य, पशु, सोना, जांगलिकद्रव्य, स्वतंत्रश्रम, ल आदि कर में देना वाला।

पांच गांव से दस गांव तक का प्रबंध गोप नामक राज्य कर्मचारी करे। गांवों की सीमा निश्चित करने के बाद—जुताहुआ, बेजुताहुआ, खालीपड़ा, चावल का खेत, बाग, तरकारी का खेत, बगीचा, जंगल, मकान, मन्दिर, चैत्य, तालाब, श्मशान, सत्र (भोजन जहां मुफ्तमें मिले) या यज्ञस्थान, प्रपा (जहां पानी मुफ्तमें ही यात्रियों को पिलाया जाय), तीर्थ, चरागाह, मार्ग—आदि के अनुसार भूमिका विभाग कियाजाय तथा गांवों तथा भूमियों

के विषय में निर्णय कियाजाय कि उनकी आपस की क्या सीमा है? कितनेमें जंगल तथा मार्ग है? कौनसी जमीन खरीदी या दानसे प्राप्तहुई है? किसको किसढ़ंग की राजकीय सहायता मिली है और कौन राज्यकर से मुक्त है?। मकानों के विषय में भी रजिस्टर में दर्ज कियाजाय कि कौनसा मकान राज्यकर देता है और कौनसा मकान नहीं? और साथ ही स्पष्टरूप से यह प्रगट कियाजाय कि अमुक गांव में इतने चारों वर्णों के लोग हैं, किसान, ग्वाले, बनिये, कारीगर, मेहनती मजदूर तथा दास इतने हैं, दो पैर वाले जानवरों तथा चौपायों की संख्या इतनी है और इतना इतना सोना, स्वतंत्रश्रम, चुंगीया शुल्क तथा जुरमाना इन इन गांवों से प्राप्त होता है। किन किन स्त्रियों तथा पुरुषों को कौन कौन सी विद्या आती है? उनमें बालक, वृद्ध, कितने हैं? उनका काम पेशा, आमदनी तथा खर्च कितना है? इत्यादि बातों का परिगणन करते हुए स्थानिक जनपद के चौथे भाग का प्रबन्ध करे। प्रदेष्टा लोग गोप तथा स्थानिक के कामों का निरीक्षण करें और बलि (धर्म विषयक कर) नामक कर को एकत्रित करें।

(ख)

खुफिया पुलिसका प्रयोग।

समाहर्ता गृहस्थ के भेसमें खुफिया का काम करने वाले लोगों (गृहपतिकव्यंजन) को भिन्न भिन्न गांवों में इस बात को जानने के लिये भेजे कि किन किन गांवों में खेतों, मकानों तथा लोगों की क्या स्थिति है। खुफिया लोग खेतों के परिमाण तथा पैदावार को, मकानों के आय तथा परिहार (राज्यकर से छुटकारा) को तथा लोगों के वर्ण (जात) तथा कर्म को जानें और उनकी कुल संख्याके साथ साथ जमाखर्च का पता लेवें। गांव में कौन आया तथा कौन गया, उनके आने जाने का क्या कारण है, कौन स्त्री पुरुष बुराकाम करते हैं और दुश्मनों ने कहां कहां पर अपना खुफिया रख छोड़ा है इत्यादि बातों का भी साथही में वह लोग ज्ञान प्राप्त करते रहें।

बनिये के भेस में खुफिया का काम करने वाले (वैदेहक व्यंजन) लोग अपने ही देशकी खान, सेतु (पानी से युक्त स्थान), वन, कारखाना तथा खेत आदिकों में पैदा होने वाले सरकारी पदार्थों की राशि तथा कीमत का ज्ञान रखें। और परदेश में पैदा होने वाले तथा वारिपथ तथा स्थलपथ से आने वाले अल्पमूल्य तथा बहुमूल्य पदार्थों के विषय में—चुंगी, सड़ककर, गाड़ी का खर्चा, छावनी का कर, नौका भाड़ा आदि का खर्चा घटा कर बचे हुए व्यापारीय पदार्थों की राशि का पता लेवें।

इसी प्रकार समाहर्ता द्वारा भेजे गये तपस्वी के भेस में रहने वाले खुफिया खेतिहर, गोरक्षक, बनिये आदिकों और अध्यक्षों की राजभक्ति के विषय में तहकीकात करते रहें।

पुराने चोर तथा विद्यार्थी के भेस में खुफिया का काम करने वाले लोग—चैत्य (यज्ञ स्थान), चौरास्ता, खंडरात या उजड़ा स्थान, तालाब, नदी, घाट, तीर्थ, आश्रम, जंगल, पर्वत—आदि स्थानों में चोर, दुश्मन तथा साहसी लोगों में से कौन क्यों आया? कहाँ गया? उसका क्या प्रयोजन है? इत्यादि बातें जानें।

इस प्रकार समाहर्ता कार्य्य शील हुआ हुआ जनपद की रक्षा का प्रबंध करे। उसके नीचे काम करने वाले भिन्न २ प्रकार के स्वदेशी खुफिया अपने अपने कर्त्तव्य कर्म का प्रतिपालन करें तथा उस पर दृढ़ रहें।

५६ प्रकरण।

नागरक का कार्य्य।

समाहर्ता के सदृश ही नागरक नगर का प्रबंध करे। गोप दस बीस घर से चालीस घर तक का प्रबंध करे। स्त्री पुरुषों की जाति, गोत्र कर्म के साथ साथ कुल संख्या तथा आय व्यय का ज्ञान प्राप्त करे। किलों के चौथाई भाग का प्रबंध स्थानिक करे। धर्म्माध्यक्ष (धर्म्मावसथी) पाखंडियों तथा यात्रियों को रहने के लिये स्थान दे। गृहस्थ लोग अपनी जिम्मेवारी पर तपस्वियों तथा श्रोत्रियों को, और कारीगर तथा शिल्पी अपने अपने काम के स्थानों पर संबंधियों

तथा बंधु बांधवों को ठहरावें। जो लोग कारखानों में या रोके हुए स्थानों में बना माल बेंचें या पराये माल को अपने स्थान पर रखें उनके विषय में बनिये लोग राज्य को सूचना दे देवें। कलवार, पक्का चावल तथा मांस बेंचने वाले (पक्व मांसिक औदनिक), और रंडियां जाने बूझे आदमी को ही अपने घर में टिकावें। फजूल खर्च तथा गुंडे लोगों का पता देवें। मकान का मालिक तथा डाक्टर गोप तथा स्थानिक को खबर देवें कि अमुक आदमी के गरमी या सूजाक है और अमुक आदमी अपथ्य करता है। अन्यथा दोनों ही राज्यापराधी ठहराये जांय। कौन आया तथा कौन गया इसकी सूचना भी राज्य को मिलनी चाहिये नहीं तो चोरी हो जाने पर चोरी के अपराध में दूसरों को अपने घर में ठहराने वाले लोग पकड़े जांय। यदि चोरी न हुई तो उनपर तीन पण जुरमाना किया जाय। इधर उधर फिरने वाले लोग, नगर के बाहर या अन्त में बने हुए मन्दिर तीर्थस्थान बन तथा श्मशान में यदि किसी ऐसे मनुष्य को ठहरा हुआ पावें जिसके घाव हो, जिसके पास हथियार या बहुत सा माल हो, जो कि घबड़ाया हुआ, बहुत थका हुआ या घुर्राटे की नींद लेता हुआ सो रहा हो—उसको पकड़ लेवें। शहर के अंदर उजड़े मकानों में, पका हुआ चावल मांस बेचने वाले, जुआरी, पाखंडी तथा कलवारों के रहने के स्थानों में बदमाशों को ढूंढा जाय।

गरमी के दिनों में दुपहर को आग न जलाई जाय। जो इस नियम को तोड़े उसपर $\frac{1}{8}$ पण जुरमाना किया जाय। भोजन मकान के बाहर पकाया जा सकता है। $\frac{1}{4}$ पण जुरमाना उन लोगों पर किया जाय जो कि पञ्चघटी (पांच पानी से भरे घड़े), घड़ा, द्रोणी (बांस का लंबा बर्त्तन जिसमें पानी भरा हो), सीढ़ी, फरसा, सूप, अंकुस, कचग्रहणी (उखाड़ने का यंत्र) तथा मशक अपने घर में न रखें। फूस के टट्टर मकानों के पास न रखे जांय। आग से काम करने वाले लोहार आदि एक ही स्थान में बसाये जांय। घर के मालिक अपने अपने घर के दरवाजों पर सदा ही उपस्थित रहें। चौरास्तों, राजकीय प्रासादों, तथा गलियों में हजारों की

संख्या में पानी से भरे घड़े रखे रहें। आग लगने पर सहायता के लिये न दौड़ने पर गृहस्थको १२ पण और दूकानदार को ६ पण दंड दिया जाय। प्रमाद से यदि किसी से आग लगगई हो तो उसपर ५४ पण जुरमाना किया जाय। जिसने जान बूझ कर यही काम किया हो उसको आग में डालकर जला देना चाहिये।

गली में कूडा फेंकने पर $\frac{1}{8}$ पण, सड़कमें कीचड़ फेंकने पर $\frac{1}{4}$ पण और राजमहिल के आस पास में इसी ढंगका अपराध करने पर दुगुना दंड दिया जाय। पुण्य स्थान, तालाव, मन्दिर, तथा राजमहिल के पास पाखाना करने पर १ पण से ऊपर और पेशाव करने पर आधा दंड मिलना चाहिये। परन्तु यदि यही बातें डर बीमारी या दवाई के कारण होगई हों तो कुछ भी दंड न देना चाहिये। शहर के अन्त में मरे हुए विलाव, कुत्ता, न्युवला, तथा सांप के फेंकने पर तीन पण, गदहे ऊंट, खच्चड़, घोड़े तथा पशुके फेंकने पर ६ पण और मुर्दे के डालने पर ५० पण जुरमाना किया जाय। सड़क बिगाड़ने तथा मुर्दा ले जाने के रास्ते को छोड़कर किसी दूसरे रास्ते से मुर्दा निकालने पर साहस दंड और ड्योढ़ी-दारों को २०० पण दंड मिले। श्मशान से अन्यत्र मुर्दा डालने या जलाने पर १२ पण दंड दिया जाय।

रात पड़ने के $2\frac{1}{2}$ घंटा बाद और सवेरा होने से $2\frac{1}{2}$ घंटा पहिले तूरी बजने पर कोई भी बाहर न निकले। तूरी के बजने के बाद जो कोई राजा के महल के पास पकड़ा जाय उस पर $1\frac{1}{4}$ पण जुरमाना किया जाय। पहिले, बीच के तथा अंत के घंटों (याम) में जो राजा के महल के पास देखा जाय उस पर दुगुना और जो किले के बाहर फिरे उस पर चार गुना जुरमाना हो। जो कोई संदिध स्थान में पकड़ा जाय या पाप कर्म करता हुआ देखा जाय उसपर अभियोग चलाया जाय। रात में राजा के महल के पास जाने या शहर पनाह पर चढ़ने पर मध्यम साहस दंड दिया जाय। बीमार, प्रसूता, प्रेत, दीवा सहित, नागरक, तूर्य, (तूरी की आवाज सुनने या बजने), प्रेक्षा (नाटक खेल तमाशा), अग्नि आदि के निमित्त सरकारी पास लिये हुए जो लोग बाहर निकलें उनको न पकड़ा जाय।

स्वतंत्र रात (वह रात जिसमें लोगों का बाहर निकलना बन्द न हो) में जो लोग अनूठे नकली भस में, संन्यासी के रूप में या दंडा तथा हथियार हाथ में लेकर बाहर निकलें उनको अपराध के अनुसार दंड दिया जाय। जो पाहरेदार फजूल ही रोके या रोकने के योग्य व्यक्ति को खुले जाने दें दुगुना दंड (असमय में बाहर निकलने का जो दंड है उसका) दिया जाय।

स्त्री या दासी के साथ बदमाशी करने पर प्रथम साहस दंड दिया जाय। अदासी के साथ (इसी बात के करने पर) मध्यम और बदमाश औरत के साथ यही करने पर उत्तम दंड मिलना चाहिये। कुलीन स्त्री के घात करने पर भी यही दंड हो। कर्त्तव्य पालन में प्रमाद करने पर तथा "रात्रि संबंधी अपराध चेतन या अचेतन दशा में कैसे हुआ" इस बात की राजा को सूचना न देने पर नागरक को अपराध के अनुसार दंड दिया जाय।

तालाव, सड़क, जमीन, गुप्त मार्ग, शहर पनाह आदि की रक्षा तथा खोई, भूली तथा पीछे रही चीजों का प्रबंध नागरक को प्रति दिन नियम पूर्वक करना चाहिये।

राजा की वर्ष गांठ तिथि तथा पौर्णमासी के दिनों में कैद में पड़े बालकों बुड्ढों बीमारों तथा अनाथों को कैद से मुक्त किया जाय। पुण्य शील या प्रतिज्ञा बद्ध लोग दोष-निष्क्रय (वह धन जो कि कैदी को कैद से मुक्त करने के लिये राजा को देना आवश्यक हो) का धन देकर कैदियों को छुड़ावें।

काम या शारीरिक दंड या जुरमाने का धन आदि के अनुसार प्रतिदिन या पांच रात के बाद कैदियों को कैद से मुक्त कियाजाय।

नये देश के जीतने, युवराज के राज्याभिषेक तथा पुत्र जन्म के समय में भी कैदियों को कैद से छोड़ा जाता है।

तीसरा अधिकरण।

धर्म्मस्थीय।

५७-५८ प्रकरण

व्यवहार का स्थापन तथा विवादका निर्णय।

संग्रहण, द्रोणमुख स्थानीय तथा सीमाप्रान्त (जहांपर दो गांवों की या दो राष्ट्रों की सीमा मिलती हो = जनपदसंधि) में तीन धर्म्मस्थ (जज तथा तीन अमात्य व्यवहार विषयक कार्य्यों का प्रबंध करें।

[क]

व्यवहार का स्थापन

छिपाकर, गृहके अन्दर रात्रि, जंगल तथा एकांत में तथा कपट रूपमें किये गये व्यवहारों (शर्तों, शर्तनामों तथा प्रणों) को नियम विरुद्ध समझा जाय। करने तथा कराने वाले को साहस दंड दिया जाय यदिवह साक्षी हों तो उनको आधादंड और यदि वह श्रद्धेय हों तो वह द्रव्य हानि रूपी दंड भोगें। जिसको दूसरे ने सुन लिया हो या जो अनुचित न हो वह यदि छिपाकर भी किया गया हो तो उसको। राज्यनियम के अनुकूल मान लिया जाय। दाय विभाग, थाती धरोहर, विवाह विषयक व्यवहार पर्दे नशीन स्त्री, बीमार तथा समझदार मनुष्य द्वारा यदि गृह के अन्दर ही किये गये हों तो उनको नियमानुकूल माना जाय। साहस (डाका आदि), घरमें घुसना, झगड़ा विवाद, राजाज्ञा पर लोगों को चलाना आदि के संबंध में, रात के पाहले भाग में काम करने वाले लोग यदि किसी ढ़ंग की शर्त करें तो उसको ज़ायज़ समझाजाय। व्यापारी, गडरिये, वानप्रस्थी, व्याध, खुफिया तथा जंगल में रहने वाले जंगली जंगल में और गुप्त रूपसे आजीविका करने वाले एकान्त में एक दूसरे के साथ व्यवहार क

सकते हैं । यदि परस्पर विरोधी दल मंजूर करलें तो कपट रूपमें किया गया व्यवहार भी ठीक है। परंतु यदि यह न हो उसको नियम विरुद्ध समझा जाय ।

आश्रय हीन मनुष्य, लड़का जिसका बाप मौजूद हो तथा पिता जिसका लड़का मौजूद हो, कुल रहित भाई, छोटा भाई जिसकी संपत्ति का विभाग न हुआ हो, पति या पुत्र वाली स्त्री, दास या जमानत में रखे मनुष्य, नाबालिग, राज्य दंडित (अभिशस्त), संन्यासी, लंगड़े लूले आदि अंगविकल, बीमार आदि यदि किसी ढंग का व्यवहार करें तो नाजायज़ समझा जाय बशर्ते कि उनको राजा की ओर से आज्ञा न मिलगई हो । इसी ढंग पर क्रुद्ध दुःखित, मत्त, उन्मत्त, अपगृहीत (जिसपर भूत सवार हो या घबड़ाया हुआ हो) पुरुषों का व्यवहार नियम विरुद्ध माना जाय । करने कराने तथा सुनने वालों को पूर्ववर्णित पृथक् पृथक् दंड दिया जाय । उचित स्थान तथा कालमें यदि स्वजात के लोगों ने कोई व्यवहार किया हो तो उसको ठीक माना जाय बशर्ते कि उसका स्वरूप, लक्षण तथा गुण विश्वसनीय हो ॥ आदेश *(जबरन आज्ञा देकर करवाया गया, तथा तकलीफमें आकर किये गये व्यवहार को छोड़ कर अन्य संपूर्ण व्यवहार नियमानुकूल समझे जांय ।

(ख)

विवाद का निर्णय ।

अभियोक्ता तथा अभियुक्त की अवस्था, सामर्थ्य, देश, ग्राम, गोत्र, नाम, तथा कार्य के लिखने के बाद "किस साल, किसऋतु, किस पक्ष तथा किस दिनमें किस स्थानपर कितना ऋण लिया या दियागया" इसको तथा वादी तथा प्रतिवादी के अर्थानुसार प्रश्नों को लिखाजाय और इसके बाद उसपर गंभीर विचार कियाजाय ।

---

* **आदेश** इसका डाक्टर शामशास्त्री ने विनिमयबिल (bill of exchange) अर्थ किया है। परंतु यह अर्थ भ्रांति रहित नहीं माना जा सकता । आदेश का सीधा अर्थ आज्ञा (order) है जैसा कि उनकाभी ख्याल है ।

परोक्ष संबंधी अपराध।

परोक्ष दोष में अपराधी वही व्यक्ति समझाजाता है जोकि जिरह करने पर—प्रकरण में आई हुई बात को छोड़कर दूसरी बात कहने लगे, पहिले कुछ कहे और पीछे कुछ कहे, दूसरे व्यक्ति की संमति लेने के लिये बारम्बार कहे, प्रश्न पूछा जाकर उत्तर न दे, पूछा कुछ जाय और उत्तर कुछदे, कहकर मुकरजाय, साक्षियों के द्वारा कहीगई बात को मंजूर न करे तथा अनुचित स्थान में साक्षियों से सलाह मशवरा करे।

परोक्ष दंड।

परोक्ष अपराध में दंड पांचगुना और स्वयंवादि (विना साक्षि के अपनी बात को बारंबार सत्यकहना) अपराध में दसगुना है। साक्षियों की भृति आठवां भाग है। अपराधी मुकदमे का संपूर्ण खर्चा भरे।

प्रत्यभियोग।

द्वन्द्व युद्ध या कलह, डाका, व्यपारियों या कंपनियों का झगड़ा आदिक को छोड़कर अभियुक्त अभियोक्ता पर उलटा मुकदमा नहीं चला सकता। इसी प्रकार अभियुक्त के विरुद्ध भी मुकदमा दूसरी बार नहीं चलाया जासकता। यदि अभियोक्ता पूछे जानेपर शीघ्रही उत्तर नदे तो उसको परोक्ष दंड दिया जाय। क्योंकि अभियोक्ता को संपूर्ण बातें पहिले से ही मालूम होती हैं। अभियुक्त के साथ यही बात नहीं है। अतः उसको तीन रात से सात रात तक का समय उत्तर देने के लिये मिलना चाहिये। यदि वह इससे अधिक समय लगावे तो उसको ३ पण से १२ पण तक दंड दियाजाय। तीन पक्ष यदि इसीढंग पर गुजरजांय तो उसको परोक्ष दंड दियाजाय। और उसकी संपत्तिमें से अभियोक्ता को आवश्यक धन मिलजाय। यदि अभियोक्ता दोषी सिद्ध हो तो अभियुक्त को यही अधिकार मिलें, और अभियुक्ता को परोक्ष दंड दियाजाय। यदि अभियुक्त मृत या बीमार हो तो साक्षियोंके निर्णय के अनुसार अभियोक्ता धन दे तथा दंड भोगता हुआ काम करे और राक्षसों के विघ्नों के शान्त करने वाले

यज्ञादिकों को करवाये। यदि वह ब्राह्मण होतो उसके लिये यह नियम नहीं है।

चारों वर्ण, देशप्रथा, नष्ट होतेहुए धर्मों की रक्षा करने के कारण राजा को धर्म प्रवर्त्तक [धर्म्म को प्रचलित करने वाला] माना है।

धर्म्म, व्यवहार, चरित्र तथा राजाज्ञा विवाद के निर्णय में उपयोगी होने के कारण धर्म्म के चारपैर समझेगये हैं। इनमें अगला पिछले का बाधक है।

धर्म्म सत्यमें व्यवहार साक्षियों में, चरित्र व्यक्तियों के रीति रिवाज के संग्रह में और राजाज्ञा राजकीय शासन में स्थिर रहती है।

प्रजाके धर्म्म की रक्षा करना ही राजाका कर्त्तव्य है। इसीसे उसको स्वर्ग मिलता है। जो राजा प्रजाकी रक्षा नहीं करता या निरपराधियों को वृथाही दंड देता है उसको राजाही न समझना चाहिये।

यदि राजा शत्रु तथा पुत्र में निष्पक्ष होकर दंडका प्रयोग करे तो दंड इसलोक तथा परलोक की रक्षा करता है।

धर्म, व्यवहार [साक्षी], चरित्र [संस्था] तथा न्याय के अनुसार शासन करता हुआ राजा सारे संसार को जीत सकता है।

चरित्र या देश प्रथा का धर्म से या धर्म का व्यवहार से जिस बात में विरोध हो उसमें धर्म्म को ही प्रामाणिक मानाजाय।

यदि धर्म्म तथा न्याय से शास्त्र न मिलता हो तो उसमें न्याय को ही प्रामाणिक मानाजाय और यह समझाजाय कि शास्त्र का असली पाठ नहीं मिलता है।

भिन्न भिन्न पक्ष के लोग प्रायः अपनी बात को ठीक प्रगट करते हैं। इसमें कोई न कोई झूठा अवश्य ही होता है। इसलिये जिरह परीक्षा [अनुयोग], विश्वास पात्रता, कसम, निमित्त हेतु आदिके सहारे अभियोग का निर्णय कियाजाय।

साक्षिके कहने तथा खुफिया पुलिस के अनुसंधान के द्वारा जो झूठा मालूम पड़े उसीको पराजित ठहराया जाय।

५९ प्रकरण।

विवाह।

(क)

विवाह विषयक विचार।

संपूर्ण सांसारिक व्यवहार विवाह के बाद ही प्रारंभ होते हैं। ब्राह्मविवाह में कन्या को सजाधजा कर दियाजाता है और प्राजापत्य विवाह में एक दूसरे के साथ मिलकर धर्म्मकाम करना ही आवश्यक समझा जाता है। आर्य विवाह में गऊ के जोड़े का दान और दैव विवाह में यज्ञवेदी के संमुख ऋत्विज की स्वीकृति ही मुख्य है। बिना माता पिता की स्वीकृति के लड़के लड़की का संबंध गान्धर्व, धनलेकर लड़की देना आसुर, सोईहुई को उठा-लेजाना या जबरन छीनलेना क्रमशः पैशाच तथा राक्षस विवाह माने जाते हैं। इनमें से पहिले चार विवाह ही धर्म्मानुकूल समझने चाहिये। शेष विवाह तो माता पिता की अनुमति पर निर्भर हैं। क्यों कि वही तो लड़की देनेके बदले धन (शुल्क) प्राप्त करते हैं। यदि वही न हों तो उनके स्थानपर परिवार संभालने वाला व्यक्ति उस धनको ग्रहण करे। यदि कोई भी नहो तो लड़की ही उसधन की मालकिन होती है। संपूर्ण विवाहों में स्त्री-पुरुष का पारस्परिक प्रेम नितांत आवश्यक है।

(ख)

स्त्रीधन।

भोजन छादन विषयक धन तथा गहना ही "स्त्रीधन" नाम से पुकारा जाता है। २००० पण आजोवन भोजन छादन देने के लिये पर्याप्त हैं। गहने के विषय में कोई भी नियम नहीं है। भोजन छादन का विशेष प्रबंध किये विना ही मालिक के विदेश में जाने पर स्त्री लड़के लड़की तथा बहू के पालन पोषण के लिये और मालिक के विपत्ति, बीमारी, दुर्भिक्ष, तथा खतरे में पड़जाने पर

उसके उद्धार के लिये अपने धन को खर्च कर सकती है। धर्म्म युक्त विवाहों में दो बच्चे होने पर यदि स्त्री पुरुष आपस में मिलकर स्त्रीधन को खर्चकर डालें तो इसमें कुछभी दोष नहीं माना-जाता। गांधर्व तथा आसुर में व्याजसहित स्त्रीधन लौटाना आवश्यक है। राक्षस तथा पैशाचमें स्त्री धनका ग्रहण करना चोरी समझा जाता है।

पति के मरजाने पर धर्म्म कामकी इच्छा से स्त्री अपना गहना तथा सगाई का धन लेसकती है। यदि गहना तथा धन दूसरे के पास हो तो वह उससे व्याज सहित वसूल करे। यदि वह दूसरा विवाह करना चाहती हो तो श्वसुर तथा पतिका दिया धन विवाह के समय में ग्रहण करे। दीर्घ प्रवास के प्रकरण में पुनर्विवाह के संवंध में प्रकाश डाला जायगा।

यदि कोई श्वसुरकी आज्ञा के विपरीत किसी दूसरे पुरुष से विवाह करे तो उसको श्वसुर तथा पतिका दिया धन न मिले। जिन जिन संबंधियों के पास उसने अपना धन रक्खा हो वह उसको लौटादें। जो स्त्री की रक्षा करना धर्म्म समझता है स्वभाविक है कि वह उसके धन की भी रक्षा करे। पतिका दायभाग कोई भी स्त्री नहीं लेसकती। जो स्त्री धर्म्म पूर्वक जीवन विताना चाहती हो उसको अपनी संपत्ति प्राप्त हो सकती है। जिन स्त्रियों के लड़के हैं वह अपने धनको खर्चनहीं करसतीं। उसको लड़केही ग्रहणकरें।

बाल बच्चों के पालन पोषण के लिये स्त्री अपने धन को व्याज पर लगा दे। बहुत से पुरुषों से यदि लड़के पैदा हुए हों तो उनके पिताओं का दिया हुआ धन सुरक्षित रक्खा जाय। जो संपत्ति उस को स्वतंत्रता पूर्वक खर्च करने के लिये मिली हो उसको लड़कों के नाम ही जमा करे। यदि किसी पतिव्रता विधवा के लड़का न हो तो गुरु के समीप रहते हुए अपने धन को आयु पर्य्यंत उपभोग करे। इसके बाद जो धन बचे वह दाय के हकदारों को मिले। मालिक के रहते हुए यदि कोई स्त्री मर जाय तो उसका धन लड़के लड़कियां आपस में बांट लें। यदि वह न हो तो मालिक स्वयं उस धन को ग्रहण करे। तथा बन्धु बांधवों ने जो धन शादी आदि के समय में दिया हुआ हो वह अपना अपना लौटा लें।

[ग]

यदि किसी स्त्री के आठ साल तक बच्चा न हो तो उसको वंध्या समझा जाय। यदि उसके एक मृत बालक पैदा हुआ हो तो दस साल तक और यदि उसके लड़कियां ही होती हों तो बारह साल तक प्रतीक्षा करे। इसके बाद शुल्क (दहेज का धन), स्त्री धन तथा अन्य प्रकार का धन (आधि वेदनिक) लौटा दे तथा २४ पण राज्य को दंड स्वरूप दे। जिसको शुल्क या स्त्री धन न मिला हो वह अपनी स्त्री को— शुल्क, स्त्री धन, आधिवेदनिक (अन्य प्रकार का धन) तथा अनुरूप मासिक वृत्ति देकर जितनी स्त्रियों के साथ चाहे विवाह करे। क्योंकि स्त्रियां लड़के उत्पन्न करने के खातिर ही हैं।

यदि सभी एक समय में ही मासिक धर्म्म से हों तो उसके पास सब से पहिले जाय। जिसके कोई लड़का जीता हो या जिसके साथ सबसे पहिले शादी की हो। मासिक धर्म्म के बाद यदि पुरुष स्त्री से संसर्ग न करे तो उसपर ९६ पण जुरमाना किया जाय। पुत्रवती, धर्म्म कामा, वन्ध्या, मृत पुत्र स्राविनी (जिसके मरा बच्चा पैदा हुआ हो) मासिक धर्म्म से रहित स्त्री के साथ उस की इच्छा के विरुद्ध संसर्ग न करे। पुरुष भी (इच्छा के न होते हुए) कोढ़ी तथा उन्मत्त स्त्री के पास न जावे। यदि स्त्री पुत्रकी इच्छुक हो तो इसी बीमारी से ग्रसित पुरुष के पास जासकती है।

नीच, परदेश में गये, राज्य का अपराध किये, दूसरे का खून किये, पतित, त्याज्य तथा नपुंसक पति को सदा के लिये छोड़ सकती है।

५९ प्रकरण।
विवाहितों के संबंध में नियम।

[क]

शुश्रूषा।

बारह साल की लड़की और सोलह सालका लड़का बालिग (प्राप्त-व्यवहार) होता है। इससे अधिक उमर होने पर यदि वह

बड़ों की सेवा शुश्रूषा न करे तो लड़की को १२ पण और लड़के को इससे दुगुना दंड दिया जाय।

[ख]

आभरण पोषण।

यदि समय निश्चित न हो तो स्त्री को कपड़े लत्ते (ग्रासाच्छादन) के साथ साथ मालिक की आमदनी के अनुसार अधिक भी दिया जाय। जहां समय निश्चित हो वहां हिसाब से जो धन उसके हिस्से में निकले उसको दिया जाय और उसका शुल्क (दहेज) स्त्री धन (उसकी अपनी संपत्ति) तथा हानि पूर्ति का पुरस्कार (आधिवेदनिका) भी मिले[1]। यदि वह सुसराल के लोगों के पास रहती हो या सबसे जुदा होकर स्वतंत्र रूप से रहती हो तो मालिक उसके आभरण पोषण के लिये बाधित नहीं किया जा सकता।

[ग]

कठोर व्यवहार।

"नंगी, अधनंगी, लूली लंगड़ी, बाप मरी मां मरी" आदि गालियों को बिना दिये ही[2] ढंग की बातें सिखायीजांय। यदि यह संभव न हो तो बांसकी खपची, कोड़ा या थप्पड़ पीठ पर तीनवार माराजाय। यदि इसपरभी वह नियम तोड़े तो उसको वाग्दंड (६२ प्रकरण) तथा पारुष्य दंड (७२ प्रकरण) नामक प्रकरण में विधान कियेगये दंडों का आधा दंड दियाजाय। ईर्ष्या तथा द्वेष से पतिके साथ जो दुर्व्यवहार करे उसको भी यही दंड मिले। घरके दरवाजे पर या बाहर बगीचे में होनेवाले खेल तमाशों में जो संमिलित हो उसके लिये दंड आगे चलकर कहा जायगा।

१. डाक्टर शामशास्त्री ने इसवाक्य का अर्थ बिल्कुल उलटा किया है। **अनादाने** का अर्थ "न लेने पर या न ग्रहण करने पर है"। यदि स्त्री से शुल्क स्त्रीधन तथा पुरस्कार न लियाजाय तो उसको हिसाब से धन मिले यह संपूर्ण वाक्य का तात्पर्य होता है। "अनादाने" का अर्थ "न दियाजाय" यह अर्थ नहीं है।

२. डाक्टर शामशास्त्री ने "अनिर्देश" का अर्थ "निर्देश का कहना" करदिया है। गाली को देकर लड़कियों तथा स्त्रियों को काम सिखाना राज्य नियम द्वारा पुष्ट करना कहां तक उचित है? वस्तुतः अनिर्देश का अर्थ न कहना है। इससे उपरि लिखित अर्थ ही ठीक प्रतीत होता है।

[घ]

स्त्री पुरुष का द्वेष ।

जो स्त्री पति से द्वेष रखती हुई सात मासिकधर्म्म तक दूसरे पुरुष की कामना करती रही हो वह अपने गहने पति को लौटा दे और उसको दूसरी स्त्री के साथ सोने की आज्ञा देदे । इसी प्रकार जो पुरुष अपनी स्त्री को न चाहता हो वह उसको वैरागिन, संबंधी, रिश्तेदार या परिवार के लोगों के पास रहने से न रोके । जो पुरुष झूठ मूठ ही अपनी स्त्री के विषय में कहे कि "यह मुझको संतुष्ट नहीं करती या अमुक रिश्तेदार या खुफिया के साथ गुप्त संबंध रखती है" उस पर १२ पण जुरमाना किया जाय । यदि पति न चाहे तो स्त्री नाराज होते हुए भी उसका परित्याग नहीं कर सकती । इसी प्रकार पति स्त्री का । परित्यागन भी संभव है जबकि दोनों ही एक दूसरे के साथ द्वेष रखते हों और जुदा होना चाहते हों । स्त्री से तंग आकर यदि पुरुष उससे छुटकारा पाना चाहे तो जो धन स्त्री की ओर से उसको मिला है वह उसको लौटा देना चाहिये । परंतु यदि स्त्री पति से तंग आकर छुटकारा पाना चाहे तो उसको उसका धन न लौटाया जावे । पहिले चार विवाहों (धर्म्म विवाह) में परित्याग का नियम नहीं है ।

(ङ)

स्वेच्छाचार ।

बारंबार मने करने पर भी जो रंगीले रसिये पन (दर्प मद्य क्रीडा) की खेलों में संमिलित हो उस पर ३ पण जुरमाना किया जाय । औरत संबंधी खेल तमाशों तथा बगीचों में जो दिन में जाय उस पर ६ पण और मर्द संबंधी खेल तमाशों तथा बाग बगीचों में जो जाय उस पर १२ पण दंड किया जाय । रात में यदि यही अपराध किया जाय तो दंड दुगुना होना चाहिये । पति को बाहर ले आने या सोये हुए तथा शराब में बदहोश के साथ बदमाशी करने पर १२ पण तथा रात में बाहर भगा लाने पर दुगुना जुरमाना किया जाय । स्त्री पुरुष की मैथुन विषयक इशारेबाजी में या एकान्त में बात चीत करने पर स्त्री पर २४ पण और पुरुष पर

दुगुना दंड करना चाहिये। बाल तथा वस्त्र के पकड़ने तथा दांत तथा नख के चिन्ह होने पर स्त्री को साहस दंड और पुरुष को दुगुना दंड मिलना चाहिये। शंकित स्थान में बातचीत करने पर पण के स्थान कोड़े मारे जांय। चंडाल गांव के बीच में हर पन्द्रहवें दिन या शरीर के दोनों ओर पांच पांच कोड़े अपराधी औरतों के मारे। एक पण देने पर एक कोड़ा कम कर दिया जाय।

(च)

राज्य नियम विरुद्ध-व्यवहार।

रोके जाने पर भी जो स्त्री एक दूसरे को छोटी मोटी चीज़ों से सहायता पहुंचावें उस पर १२ पण, जो दामी चीज़ें दे उस पर २४ पण और जो संपत्ति तथा सोना भेजे उस पर ५४ पण जुरमाना किया जाय। पुरुष को इससे दुगुना दंड मिले। बिना आपस में साक्षात्कार किये ही जब ऐसा काम किया जाता हो तो आधा दंड दिया जाय। प्रतिसिद्ध पुरुष के साथ व्यवहार करने के संबंध में भी इसी नियम को काम में लाया जाय।

राज्य द्वेष, नियम भंग तथा स्वच्छाचार से स्त्रियों का अपने, दहेज के तथा पति द्वारा दिये गये में धन (शुल्क) पर प्रभुत्व नहीं रहता।

५९ प्रकरण।

विवाह विषयक नियम।

(क)

घर से भागजाना।

खतरे को छोड़कर यदि किसी अन्य कारण से कोई स्त्री घर से बाहर भागजाय तो उसपर ६ पण और जो बारंबार रोकने पर यही काम करे तो उसपर १२ पण जुरमाना कियाजाय। यदि वह पड़ोसी के घर से दूसरे घरमें जाय तो उसके ६ पण दंड दियाजाय।

पड़ोसी, भिखमंगे, व्यापारी, आदियों को घर में ठहराने, भीख देने तथा मालआदि के देने पर १२ पण और प्रतिषिद्ध व्यक्तियों के

साथ यही बात करने पर साहस दंड और दूसरे के घर में आईहुई वैरागिन आदि को सहायता या दान देने पर २४ पण दंड दियाजाय।

विपत्ति या खतरे को छोड़ कर जो कोई दूसरे की औरत को अपने यहां ठहरावे तो उसको दंड मिले। यदि कोई बिना आज्ञा के उसके घरमें घुस आया हो इसमें उसका कुछ भी अपराध न समझना चाहिये।

प्राचीन आचार्य्यों का मत है कि पति के, संबंधी, अमीर, गांव-मुखिया, संरक्षक, भिक्षुकी, रिश्तेदार आदि के यहां स्त्रियों के जाने में कुछ भी दोष नहीं है। कौटिल्य का मत है कि आदमियों से भरे हुए संबंधी का घर अच्छा है या बुरा है, उनकी दोस्ती छल पूर्ण है या नहीं? इसको कोई स्त्री कैसे जान सकती है? इसमें सन्देह भी नहीं है कि मृत्यु, रोग, गर्भ आदि के मामले में संबंधियों के यहां जाना उचित ही है। ऐसे मौकों पर जो स्त्री को संबंधियों के घर में जाने से रोके उस पर १२ पण और जो स्त्री स्वयं बहाना बनाकर न जाय उसका स्त्रीधन जब्त कर लिया जाय। यदि संबंधी लोग लेनदेन से बचने के लिये उसको किसी बहाने से न बुलावें तो उनको उनके हक का धन वह न दे।

(ख)

मार्ग में किसीके साथ हो लेना।

पति के घरसे भागकर जो किसी दूसरे गांव में जाय उसपर १२ पण जुरमाना कियाजाय। यदि वह अपना गहना किसी दूसरे के यहां रक्खे तो वह उसको न मिले। यदि वह किसी गमन योग्य पुरुष के साथ गई हो तो उसपर २४ पण जुरमाना कियाजाय और उसको जातबिरादरी से बाहर करादिया जाय बशर्ते कि गर्भ, भक्त-बेतन, दान या तीर्थ गमन आदि उसके जाने का कारण न हो। एक उद्देश्य वाले पापी स्त्री पुरुषों को समान दंड दियाजाय। बन्धु के साथ यदि वह जाय तो उसको दंड न मिले। परन्तु यदि यही बात रोके जाने पर की हो तो उसको आधा दंड दियाजाय। संदेह युक्त तथा प्रतिषिद्ध व्यक्ति के साथ यदि कोई स्त्री मैथुन के उद्देश्य से मार्ग जंगल या गुप्त स्थान में जाय तो उसको व्यभिचार पाद

में पकड़ा जाय और उसीके अनुसार उसपर दंडका विधान कियाजाय।

गवैइये, बजैइये, नट मछियारे, व्याध, ग्वाले, कलवार आदि या अपनी स्त्री को साथ लेकर चलने वाले लोगों के साथ यदि कोई स्त्री जाय इसमें किसी ढंग का भी दोष नहीं है। बदमाश आदमी के साथ स्त्री को लेजाने पर या ऐसे आदमी के साथ स्त्री के स्वयं जानेपर आधा दंड दियाजाय।

(ग)

देर तक विदेश में रहना।

यदि कुछ समय के लिये, शूद्र वैश्य, क्षत्रिय तथा ब्राह्मणजाति के कोई मनुष्य बाहर गये हों तो उनकी स्त्रियें कम से कम एक साल तक, यदि उनके बच्चे हों तो वह अधिक समय तक, यदि मालिक खानेपीने का प्रबंध करगया हो तो दुगुने समय तक उसके आने की प्रतीक्षा करें। जिनके खानेपीने का प्रबंध न हो उनको धन धान्य से समृद्ध उनके भाई बन्द सहारा दें। चार या आठ साल के बाद उनका भार जात बिरादरी के लोग संभालें। इसके बाद वह विवाह कालीन धन लौटाकर दूसरे के साथ विवाह करसकती हैं।

यदि कोई ब्रह्मण बाहर कहीं पढ़नेगया हो तोउनकी स्त्रियें दस सालतक और उनके बच्चा हो तो बारह सालतक और यदि कोई क्षत्रिय राजाके काम से बाहर गये हों तो उनकी स्त्रियें जीवन पर्यंत उनकी प्रतीक्षा करें। यदि किसी समाज के व्यक्ति के द्वारा उनके बच्चा पैदा होगया हो तो इसमें उनकी बदनामी किसीको भी न करनी चाहिये। यदि किसी के पास खानेपीने को रुपया न हो और अमीर संबंधी उसको छोड़ बैठे हों तो वह दूसरा विवाह करले। सगाई होजाने के बाद यदि किसी कुमारी लड़की का भावीपति विनाकहे विदेश चलागया हो और उसकेपास खानेपीने लायक धन न हो तो वह सात मासिक धर्म तक, और यदि वह कहकर बाहर गया हो तो एकसाल तक प्रतीक्षा करे। इसी प्रकार उसके विषयमें समाचार न मिलने पर पांच समाचार मिलने पर दस, शुल्क का कुछधन ले चुकने के बाद खबर प्राप्त होनेपर सात और न प्राप्त होने पर तीन और पूरा शुल्क लेचुकने के बाद पूर्ववत पांच तथा

दस मासिक धर्म्म तक उसकी बाट देखे। इसके बाद धर्म्मस्थ से आज्ञा लेकर दूसरा विवाह करले। कौटिल्य की सम्मति है कि गर्भ होजाने तथा मासिक धर्म्म बन्द होनेपर ही स्त्रियों के धर्म्म का नाश समझना चाहिये।

दीर्घ काल के लिये जिन्हों ने वैराग्य धारण करलिया हो उनकी स्त्रियें सात मासिक धर्म्म तक और यदि उनके बच्चा हो तो साल भरतक प्रतीक्षा करें। इसके बाद छोटे भाई के पास बैठजांय। यदि बहुतसे छोटेभाई हों तो जो सबसे छोटा भाई जवान धार्मिक, स्त्री रहित, तथा नजदीकी रिश्तेदार या प्रतिदिन समीप रहता हो उसके साथ रहे। यदि वह भी न हो तो किसी समान गोत्रके संबंधी के पास चली जाय। सारांश यह है कि उसको जो सबसे अधिक नजदीक का मिले उसके पास बैठे।

यदि कोई स्त्री ऐसे पुरुष के साथ विवाह करती है जो कि उसके मालिक का रिश्तेदार या संपत्तिका हकदार नहीं है तो वह दोनों और उनके विवाह में जो शरीक हों वह सबके सब व्यभिचार संबंधी अपराध में अपराधी समझे जांय।

६० प्रकरण।

दाय—विभाग।

पिता या पिता माता के जीवित रहते लड़के संपत्ति बांटने में स्वतंत्र नहीं हैं। उनके मरने के बाद ही वह संपत्ति को आपस में बांट सकते हैं। जो धन किसी ने स्वयं परिश्रम कर कमाया है वह उसी का है उसको कोई दूसरा नहीं ले सकता। बशर्ते कि वह पिता की संपत्ति के सहारे न प्राप्त किया गया हो। चिरकाल से चली आई पैतृकसंपत्ति चौथी पीढ़ी तक लड़कों तथा पोतों में बांटी जासकती है बशर्ते कि उनका गोत्र खंडित न हुआ हो। खंडित गोत्र वालों में संपत्ति समान रूप से बांट दी जाय। जो लड़के पिता से धन न प्राप्त करने या उसको आपस में बांट लेने पर भी एक साथ रहते तथा कमाते हों वह अपनी संपत्ति को आपस में पुनः बांट सकते हैं। जिसके कारण संपत्ति विशेष रूप

बढ़ी हो उसको संपत्ति का अधिक भाग मिलना चाहिये । जिसके कोई भी लड़का न हो उसके भाई या साथी उसकी संपत्ति को और लड़की गहने आदि स्थिर धन को प्राप्त करे। जिनके धार्मिक विवाह से लड़के लड़कियां हों उनकी संपत्ति उनके लड़के लड़कियों को ही मिले। यदि उनमें से कोई भी न हो तो उनके पिता को और यदि वह भी न हो तो उनके भाई को संपत्ति मिले । भाई के लड़के भी एक हिस्सा प्राप्त करें यदि बहुत से भाइयों में एक भाई मरगया हो भिन्न भिन्न माता पिताओं से उत्पन्न भाइयों में पिता के अनुसार ही संपत्ति का विभाग होना चाहिये। चचेरे भाई एक दूसरे को सहारा नहीं देते अतः बड़े के रहने पर छोटे को आधा हिस्सा मिले।

यदि पिता जीतेजी विभाग करना चाहे तो सब को समान रूप से धन दे। किसीको भी अकारण संपत्ति से वंचित न करे। यदि पिता कुछ भी धन न छोड़ गया हो तो बड़े लड़के छोटे पर अनुग्रह करें बशर्ते कि वह बुराइयों में न फंसगया हो।

पिता का धन बालिगों में ही बांटा जाता है। जो नाबालिग हों उनका धन मामा, या ग्रामवृद्ध लोगों के पास रखदिया जाय। जो विदेश में गया हुआ हो उसके विषय में भी इसी नियम को काम में लाना चाहिये।

विवाहित भाई पिता के मरने पर अविवाहित भाईयों को विवाह का खर्च दें और लड़कियों को दहेज़ का धन दें। ऋण तथा प्राप्त धनका समान रूप से विभाग कर लिया जाय । पुराने आचार्यों का मत है कि धन धान्य रहित लड़के घरके पानी के वर्तन तक आपस में बांट लें। कौटिल्य इसको छल समझते हैं। क्यों कि जो चीज़ मौजूद हो उसीका विभाग किया जाता है और जो चीज़ हैही नहीं उसका क्या विभाग किया जाय? "इतनी संपत्ति है और इतना इतना प्रत्येक के हिस्से में आती है" इसबात को कह कर साक्षियों के द्वारा विभाग करवाया जाय । अविभाज्य, चोरी गई हुई, खोई हुई तथा आकस्मिक रूपसे मिली पुरानी सम्पत्ति का पुनः विभाग कर लिया जाय। श्रोत्रिय स्त्री, मृतक

संस्कार रहित मृत, नीच आदि की संपत्ति को छोड़कर अन्य सम्पत्ति को राजा स्वयं ग्रहण करे यदि कोई भी उसका हकदार न हो। जात बिरादरी से बाहर किये गए मनुष्यों तथा नपुंसकों को दाय भाग नहीं मिलता। जड़ उन्मत्त अन्धे तथा कोढ़ी लोगों के विषय में भी इसी नियम को काम में लाना चाहिये। यदि इनके लड़के इनके सदृश न हों तो उनको दादा की संपत्ति का भाग मिलना चाहिये। जात बिरादरी से बाहर निकाले हुए व्यक्तिको छोड़ कर अन्य सबको खाना कपड़ा मुफ्त में मिले।

यदि इनके स्त्रियें हों परंतु इनसे कोई बच्चा न हो तो बंधु बांधवों के द्वारा उनमें नियोग करवा के जो बच्चा पैदा कियाजाय उसको पुरानी संपत्ति का भाग मिले।

६०. प्रकरण।
हिस्सों का बांटना

I एक स्त्री के लड़कों में बड़े को—ब्राह्मणों में बकरी, क्षत्रियों में घोड़ा, वैश्यों में गौ तथा शूद्रों में भेड़ी—मंझले को काने और छोटे को रंग बिरंगे मिलें। यदि चौपाये न हों तो हीरे जवाहरात को छोड़कर संपूर्ण संपत्ति का दसवां भाग बड़ा ले। इसीसे वह पूर्वजों के ऋण से मुक्त होता है। उशना के अनुयायियों का यह विभाग है।

पिता के मरने पर गाड़ी घोड़ा तथा गहना बड़े को, चारपाई चौकी तथा पुराने बर्तन, मंझले को और काला धान लोहा घरेलू सामान, तथा बैलगाड़ी छोटे को मिले और इसके बाद जो सामान बचे वह बराबर बराबर बांट दिया जाय। लड़कियों को पिता की संपत्ति में भाग न मिले। माता की सामिग्री में से वह पुराने बर्तन तथा गहने को ग्रहण करें। यदि बड़ा लड़का नपुंसक हो तो उसको अपने हिस्से का तीसरा भाग, यदि वह बदमाश हो तो चौथा भाग मिले। यदि सर्वथा ही उच्छृंखल हो और धर्म कार्य्य की कुछ भी परवाह न करता हो तो उसको कुछ भी न दिया जाय। मंझले तथा कनिष्ठ के विषय में भी इसी नियम को समझना चाहिये।

यदि इन दोनों में से किसी के बाल बच्चे अधिक हों तो उसको बड़े का आधा भाग अधिक मिले।

II कई स्त्रियों के लड़के हों तो उनमें से कौन वास्तविक तथा अवास्तविक का है? दोनों ही बिना विवाह संस्कार हुई हुई स्त्रियों के हों तो उनमें से कौन पीछे तथा कौन पहिले पैदा हुआ है? यदि जुड़िया हों तो कौन पहिले बाहर आया है? इत्यादि बातों को सामने रख कर संपत्ति का विभाग किया जाय।

सूत मागध व्रात्य रथकार आदि जातों में संपत्ति के अनुसार विभाग हो। जिनके कुछ भी संपत्ति न हों वहां घरकी चीजें बराबर बराबर बांट दी जाय। यदि किसी के चारों वर्णों की स्त्रियों से बच्चे हों तो ब्राह्मणी के लड़के को चौथा भाग, क्षत्रिया के लड़के को तीसरा भाग, वैश्या के लड़के को दो भाग और शूद्रा के लड़के को एक भाग मिले। क्षत्रियों तथा वैश्यों के तीन वर्णों या दो वर्णों की स्त्रियों से जो बच्चे हों उनके विभाग के नियमों को इसीसे अनुमान करलेना चाहिये। ब्राह्मणों के अन्तरा पुत्र (एक जात नीचे की स्त्री से उत्पन्न) को बराबर भाग और क्षत्रियों वैश्यों के अन्तरा पुत्र को आधा भाग मिले। जिसके जादा बालबच्चे हों उसको बराबर भाग मिले। भिन्न २ जातियों के स्त्रियों से यदि एक ही पुत्र उत्पन्न हुआ हो तो उसको संपूर्ण संपत्ति मिले और वह बन्धु लोगों का पालण पोषण करे। ब्राह्मण से शूद्रा में उत्पन्न पारशव तीसरा भाग सगोत्र या समीप के रिश्तेदार स्त्री से उत्पन्न लड़के शेष दो भाग ग्रहण करें और पिता का पिण्ड दानादि करें। यदि कोई भी न हो तो पिताकी संपत्ति आचार्य या उसके विद्यार्थी को या माता के रिश्तेदार या सगोत्र को या नियोग से उत्पन्न बालक को पिताकी संपत्ति मिले।

६० प्रकरण।
पुत्र--विभाग।

पुराने आचार्यों के मत में स्त्री के साथ साथ जिन जिन पुरुष का संबंध हो उनको पिता या क्षेत्री समझना चाहिये। कुछ लोग

जिसके वीर्य से जो बालक पैदा हुआ हो उसी को बालक का पिता मानते हैं। कौटिल्य के विचार में दोनों ही एक प्रकार से पिता हैं।

संपूर्ण संस्कार हो चुकने बाद जो स्वयं पैदा हुआ हो उसको औरस नाम दिया जाता है। लड़की के लड़के को इसी के तुल्य समझना चाहिये। सगोत्र से अन्य गोत्र वाली स्त्री में जो बालक पैदा किया जाय उसको क्षेत्रज कहते हैं। जिसके बाप का पता न हो उसको द्विपितृक (दो बाप का) तथा द्विगोत्र मानना चाहिये और उसको दोनों के ही मृतक संस्कार तथा दाय में अधिकार होना चाहिये। उसी के समान जो रिश्तेदार के यहां पैदा हुआ हो उसको गूढ़ज नाम से पुकारा जाता है। यदि रिश्तेदार उसको अपने यहां न रक्खे तो उसको संस्कार करने वाले का लड़का और लड़की के गर्भ से जो पैदा हो उसको कानीन कहते हैं। सगर्भ स्त्री से विवाह करने के बाद उत्पन्न हुए बालक को सहोढ़ और दूसरी शादी के बाद उत्पन्न हुए बालक को पौनर्भव कहा जाता है। पिता या बन्धुओं से जो स्वयं पैदा किया गया है उसी को दाय भाग मिलता है। जो दूसरे के द्वारा पैदा हुआ हो उसको संस्कार करने वाले की संपत्ति में ही हक है न कि रिश्तेदारों की संपत्ति में।

उसी के तुल्य दत्त हैं जिन को माता पिता ने पानी हाथ में लेकर दूसरे के हाथ में देदिया है। जो स्वयं ही बन्धु लोगों के लड़के बन गये या जिनको बन्धुओं ने लड़का करके मान लिया है या जो खरीद कर पुत्र बनाये गये हैं उनको क्रमशः उपगत, कृतक तथा क्रीत नाम से पुकारा जाता है। औरस के सवर्ण भाइयों को पिता की संपत्ति का तीसरा भाग और जो असवर्ण हों उनको केवल खाना पीना मिले। ब्राह्मण से क्षत्रिया स्त्री में जो बालक पैदा हों उनको असवर्ण और वैश्या तथा शूद्रा से जो पैदा हों उनको अम्बष्ठ तथा निषाद या पारशव कहा जाता है। क्षत्रिय से शूद्रा में उत्पन्न बालक उग्र होते हैं। इनको शूद्र ही समझना चाहिये। व्रात्य वह है जो राज्यापराधी अभिशस्त लोगों से सजात की स्त्री में पैदा हों। इसी ढंगपर उलट भी है। शूद्र से अयोग व क्षत्र तथा चांडाल, वैश्य से मागध तथा वैदेहक (बनिये) और क्षत्रिय से सूत तभी उत्पन्न होते हैं जब कि उनका अपने से ऊपर जाति की स्त्री के साथ संबंध हो

जाय । मागध ब्राह्मण क्षत्रिय से और पौराणिक सूत से भिन्न हैं। राजा जब अपने धर्म्म का प्रति पालन नहीं करता है तभी सूत आदि पैदा होते हैं ।

उग्र से नैषादिन में कुटक, निषाद से उग्रा में पुल्कस, अम्बष्ठ से वैदेहिका (बनिया जाति की स्त्री) में वैण, वैण से वैदेहिका में कुशीलव, उग्र से क्षत्ता में श्वपाक जात के लोग पैदा होते हैं । इन को अनन्तर्वर्ती जात का समझना चाहिये । वैण्य काम करने से रथकार नाम प्राप्त करता है । इनका अपनी जातिमें ही विवाह होता है कार्य्य तथा रीतिरिवाज में इनको अपने पूर्वजों का ही अनुकरण करना चाहिये । चंडाल को छोड़कर उपरि लिखित संपूर्ण शूद्र के सदृश ही मानने चाहिये । उपरि लिखित नियमों का पालन करता हुआ राजा स्वर्ग को प्राप्त करता है । इससे विपरीत चलने पर नरक का भागी होता है । देश जाति संघ तथा गोत्र का जो नियम हो उसी के अनुसार दाय विषयक नियम बनाने चाहिये ।

६१ प्रकरण ।

गृह—वास्तुक ।

सामन्त (अमीर पड़ोसी) लोग वास्तु विषयक विवाद का निर्णय करें । वास्तु से तात्पर्य्य गृह, खेत, बाग, सेतुबंध, तलाव आदि से लिया जाता है । सेतुबंध में सेतु शब्द उस मकान के लिये प्रयुक्त होता है जिसमें कड़ी छत के साथ लोहे की कीलें जड़ी गई हों कड़ी के अनुसार ही मकान बनाना चाहिये । मकान बनाते समय इस बात का ख्याल रखना चाहिये दूसरे की भूमि तक न पहुंच जाय । नींव दो अरत्नी या तीन पाद हो । दस दिन के लिये खड़े किये गये सूतिका गृह को छोड़ कर अन्य गृहों में पाखाना तथा नाली के साथ साथ रसोई तथा पीने के पानी को प्राप्त करने के लिये एक अच्छा सा कुंआ बनाया जाय । जो इस नियम का उल्लंघन करें उनको साहस दंड दिया जाय । उत्सव के समय आगज लाने तथा चुल्ली के पानी बहने का प्रबंध भी इसी

प्रकार करना चाहिये। ३ पद या आधी अरत्नि से अधिक बहुत बड़ी मोरी या नाली आदि बनाई जाय। जो इस नियम का उल्लंघन करे उसपर ५४ पण जुरमाना किया जाय। एक पद या अरत्नि से लेकर३पद या४पद तक का यज्ञ स्थान जलस्थान(उदंजर-स्थान), चकिया तथा मूसल कूटने का स्थान बनाया जाय। सभी मकानों के बीच में तीन पद चौड़ी गली रखी जाय। दो मकानों की छतें या तो एक दूसरे के साथ आपस में मिली हों या उनमें कम से कम चार अंगुल का फरक हो। किन्तु जितना बड़ा दरवाजा बनाया जाय और दरवाजे के खुलने का स्थान छोड़ दिया जाय। प्रकाश आसकने के लिये ऊपर खिड़की रखी जाय। दूसरे को नुक्सान न पहुंचाते हुए बहुत से लोग आपस में मिलकर घर बना सकते हैं। वृष्टि की बाधा से बचने के लिये छत को ऐसी चटाई से ढ़ाक दिया जाय जो कि हवा से उड़ न सके। जो इस नियम का उल्लंघन करें उनको प्रथम साहस दंड दिया जाय। यही दंड उन लोगों को मिले जो कि राज मार्ग या गली को छोड़कर अन्यत्र अपने मकान के दरवाजे तथा खिड़कियां इस ढंग पर बनावें जिससे दूसरे के मकान को नुक्सान पहुंचता हो।

गड्ढे, सीढ़ियां, नालियां, बांस की सीढ़ी,कूड़ा कर्कट आदियों से दूसरे मकान में रहने वालों को तकलीफ पहुंचावे या पानी निकलने का प्रबंध न कर दूसरे के मकान की दीवार को कमजोर करे उसपर १२ पण जुरमाना और मूत्र तथा पाखाने के बाहर न निकलने के प्रबन्ध करने पर २४ पण जुरमाना किया जाय। नाली ऐसी होनी चाहिये कि वर्षा का पानी बाहर निकल जाय अन्यथा अपराधी को १२ पण दंड दिया जाय।

जो किराये दार खाली कर देने के लिये सूचना पाकर भी मकान में रहें, या जो मकान मालिक भाड़ा पाकर भी जबरन मकान खाली करने के लिये कहे उसपर१२पण जुरमाना किया जाय बशर्ते कि गाली मार पीट खून, चोरी, डाका, व्यभिचार तथा असत्य आदि का मामला न हो। जो अपने आप खाली करे वह साल भर का किराया देवे।

जो मकान सब लोगों के लिये बनाया जाता हो उसमें यदि कोई सहायता न दे या जो कोई ऐसे मकान के उपभोग से किसी भी सहायता देने वाले को रोके उसपर १२ पण जुरमाना किया जाय। जो ऐसे मकान को नुकसान पहुंचावे उससे दंड की दुगुनी रकम वसूल की जाय।

कोठा तथा आंगन को छोड़ कर अग्नि शाला, कुट्टन शाला [धान आदि कूटने का स्थान] तथा अन्य खुले स्थानों का प्रयोग सवलोग सामान्य रूप से करें।

६१ प्रकरण।

वास्तु--विक्रय।

(क)

मकान बेचना।

संबंधी सामन्त तथा धनिक लोग क्रमशः मकान खरीदने के लिये कहेजांय। यदि वह तैयार न हों तो बाहरी सामन्त तथा कुलीनों को घर के सामने दाम सुनाया जाय। खेत, बाग, पक्का-मकान, तालाब आदि की सीमा सामन्त तथा ग्राम वृद्ध लोगों के संमुख प्रकट की जाय और तीनवार उद्घोषित कियाजाय के"इस दाम पर अमुक मकान को कौन खरीदेगा" जो बोली बोले उसके हाथ बेच दियाजाय। स्पर्धाकर यदि लोग उसका दाम बढ़ायें तो शुल्क के सहित मूल्य वृद्धि राज्य कोष में जाय। जो खरीदे या बोली बोले वही उसका शुल्कभी दे। स्वामी के बाहर होतेहुए मकान को जो नीलाम करे उसपर २४ पण जुरमाना कियाजाय। सातरात से अधिक समय तक यदि मालिक मकान न आवे तो बोली बोलने वाला उस मकान को खरीदले। जो बोली बोलने के बाद मकान न खरीदे उसपर २०० पण जुरमाना कियाजाय। अन्य वस्तुओं के मामले में दंड २४ पण होना चाहिये।

[ख]

हद का झगड़ा।

पांच गांव या दस गांवके सामंत वास्तविक या कृत्रिम चिन्हों के द्वारा हद का झगड़ा तय करें। पहिले से गांवमें रहने वाले खेतिहर ग्वाले तथा वृद्ध हद के चिन्हों को बिना जाने ही कपड़ा बदलकर हदपर एक या बहुत से आदमियों को लेजावें। कहने के अनुसार जो सीमा विषयक चिन्हों को न दिखासकें उनपर १००० पण जुरमाना कियाजाय। जो सीमा संबंधी चिन्हों को हटा दें या नष्ट करदें उनको भी यही दंड दियाजाय। जिसकी सीमा का कोईभी चिन्ह विद्यमान नहो उसका विभाग राजा इस ढंगपर करे जिससे अधिक से अधिक लाभप्राप्त।

[ग]

खेतों का झगड़ा।

सामन्त तथा ग्रामवृद्ध खेतों के झगड़ेको तयकरें। यदि वह लोग एक मत न हों तो धार्मिक लोग जो निर्णय करें वही माना जाय। जो समझौता वह पेशकरें उसीपर चलाजाय। यदि इन दोनों तरीकों से झगड़ा न निपटे तो राजा स्वयं लेलेवे। जिस चीज़का कोई भी स्वामी न हो तो अधिक से अधिक लाभ जिस ढंगपर हो वैसे ही उसका विभाग करादिया जाय। जो किसी वस्तु पर जबरन् अपनी मलकीयत स्थापित करे उसको चोरीका दंड मिले। यदि ऐसा करने में कोई उचित्त कारण हो तो मेहनत तथा खर्च का हिसाब लगाकर उसपदार्थ का लगान (बंध) उससे ग्रहण कियाजाय। सीमा के चिन्हों को नष्ट करने पर साहस दंड और हटादेने पर २४ पण दंड दियाजाय। तपोवन, चरागाह, बड़ामार्ग, श्मशान, देवकुल, यज्ञस्थान तथा पुण्यस्थान विषयक विवादों का निर्णय भी इसीढंग पर करना चाहिये।

[घ]

संपूर्ण विवादों का निर्णय।

सांमंत लोगों के निर्णय के अनुसार ही सब प्रकार के विवादों का निर्णय किया जाय। ब्रह्मारण्य, सोमारण्य,देव स्थान,यज्ञ स्थान तथा पुण्य स्थान विषयक विवादों को छोड़ कर चरागाह, जमीन

खेत, बाग, वगीचा, खल्पान, मकान, तवेले आदिक विषयों के झगड़े का निर्णय क्रमशः एक दूसरे को प्रधानता देते हुए किया जाय। स्थल विषयक झगड़ों में यदि किसी ने जल भंडार, कुल्या, मेड़ आदिकों के प्रयोग करते समय दूसरे के खेत में पड़े या उगे बीजों को नुकसान पहुंचाया हो तो उससे नुकसान का बदला ले लिया जाय। खेत, बाग, तलाब तथा मकान आदिकों के मालिक यदि एक दूसरे को नुकसान पहुंचावें तो उनपर नुकसान का दुगुना जुरमाना किया जाय। ऊपर के तालाब से सींचे जाने वाले खेत में नीचे के तालाब से पानी न लिया जावे। ऊपर के तालाब से नीचे के तालाब में तबतक पानी आना न रोका जावे जबतक कि तीन साल तक लगातार उससे काम लेना न छोड़ दिया गया हो। जो इस नियम का उल्लंघन करे या तालाब का पानी बाहर निकाल दें उनपर प्रथम साहस निर्दिष्ट जुरमाना किया जाय।

[ङ]

राज्य कर से मुक्ति।

आपत्ति के बिना ही यदि कोई पांच साल तक किसी मकान या तालाब से काम न ले तो उसपरस्वत्व न रहे। यदि कोई तालाब या पक्के मकान को नये सिर से बनवावे तो उसको पांच साल तक राज्य करसे मुक्त किया जाय। टूटे फूटे के सुधारने में ४ साल तक और बने हुए को उन्नत करने में तीन साल तक राज्य कर न लिया जाय। यदि किसी ने बे जुता खेत गिरों रखा हो या बेचा हो तो उस खेतसे दो साल तक राज्य कर न ग्रहण किया जाय।

हवा या बैलसे चलने वाले अरहट्ट का जिन खेतों, बगीचों, तरकारी की क्यारियों में पानी लगता हो उनसे उतना ही राज्यकर ग्रहण किया जाय जिससे उत्पादकों को भार न मालूम पड़े। प्रक्रय [नियत लगान] अवक्रय [वार्षिक लगान] विभाग [बंटाई की रीति] भोग [हिस्सेदारी ढंगपर] तथा निसृष्ट [मुक्त] विधिपर जो खेते जोतें वह सरकारी अनुग्रहके अनुसार उत्पादकों को सहायता देवें। जो सहायता न दे उनपर नुकसान का दुगुना जुरमाना कियाजाय।

जो उचित स्थान से अतिरिक्त अन्यस्थान से पानी लें या जो प्रमाद से दूसरे का पानी रोकें उनपर ६ पण जुरमाना कियाजाय।

६१--६२ प्रकरण।

चरागाह खेत तथा काम का नुक्सान।

[क]

मार्ग निरोध।

जो लोग पानी बहने के मार्ग या अन्य इसी प्रकार के काम को नुक्सान पंहुचावे उनको साहस दंड दियाजाय। टूटे फूटे उजड़ मकान को छोड़ कर यदि कोई पहिले से बने पक्के मकान को गिरों रखे बेचे तथा बिकवावे या दूसरे की जमीन में पक्का मकान, पुण्यस्थान, चैत्य या मंदिर बनवावे तो उसकोमध्यमदंड दियाजाय। यदि वह श्रोत्रिय हो तो उसको दुगुना दंड मिले। यदि किसी टूटे फूटे उजड़ मकान का कोई भी मालिक न हो तो पुण्यात्मा ग्रमीण उसका उद्धार करवावें। मार्ग कितना बड़ा हो इसपर "दुर्गनिवेश" विषयक प्रकरण में प्रकाश डालागया है। भिन्न भिन्न सड़कों के रोकने पर दंड इसप्रकार होना चाहिये। क्षुद्रपशु या मनुष्य-पथ में १२ पण, महापशु पथ में २४ पण, हस्तियक्षेत्रपथ में ५४ पण, सेतु वनपथ में १०६ पण, श्मशान ग्रामपथ में २००, द्रोणमुख पथ में ५००, स्थानीय, राष्ट्र तथा विवीत पथमें १००० पण दंड दियाजाय। इनको जो नुक्सान पंहुंचावे या ऊपर से खोददे उसपर उपरि-लिखित दंडका चौथा भाग दंड मिले।

(ख)

ग्राम-निवास।

यदि बीज डालने के समय में खेतिहर खेत खाली छोड़ दे या मजदूर काम न करे तो उसपर १२ पण जुरमाना कियाजाय बशर्ते उनके ऐसा करने में-दोष, उपनिपात तथा अविषह्य आदिक कारण न हों। करद लोग करदों के पास ही और ब्रह्मदायिक ब्रह्म-

दायिकों के पास ही जमीन को गिरों रखें या बेचें। जो इसनियम का पालन न करे उसको साहसदंड मिले। यदि करद अकरद लोगों के गांव में घुसे तो उसको यही दंड दियाजाय। यदि वह करद गांव में जाकर वसे तो मकान को छोड़कर अन्य सब गांव संबंधी बातों में उसको स्वतंत्रता रहे। यदि संभव हो तो मकान भी उसको देदिया जाय। बेजुते खेतको जोतकर जो पांचसाल तक आजीविका करे वह निष्क्रय (खर्चाआदि) लेकर स्वामी को खेत लौटावे। अकरद किसी भी गांवमें जाकर रहें, पुरानी संपत्ति पर उनका अधिकार पूर्ववत् बनारहता है।

(ग)

ग्राम—प्रबंध ।

यदि ग्रामिक (ग्रामका मुखिया) ग्रामके कामसे दूसरे स्थान पर जावे तो नीच जातके लोग नंबर नंबर से उसके साथ जांय। जो न जाय वह भोजन पीछे १$\frac{1}{2}$ पण ग्रामिक को दे। चोर तथा व्यभिचार के अतिरिक्त यदि किसी दूसरे व्यक्तिको ग्रामिक गांवसे बाहर निकाले तो २४ पण और यदि इस अपराध में सारा का सारा गांव संमिलित हो उसको उत्तम दंड दियाजाय। बाहरगये हुए ग्राममें कैसे बसें इसपर प्रकाश डाला जा चुका है। ग्रामसे ८०० अंगुल दूरपर बड़े बड़े खंभेसे युक्त उपशाल (मकान विशेष) बनाया जाय।

(घ)

चरागाह विषयक नियम।

पशुओं को चराने के लिये खाली जमीनों को चरागाह बनाया जाय। विना आज्ञा के चरागाह में चरकर भागे हुए भैंस तथा ऊंट पर $\frac{1}{8}$ पण, गौ घोड़े गदहे पर $\frac{1}{2}$ पादिक, क्षुद्र पशुओं पर $\frac{1}{16}$ पण और यदि वह चर कर वहीं पर बैठे हों तो दुगुना और यदि उसी पर प्रति दिन निर्वाह करते हों तो उनपर चार गुना जुरमाना किया जाय। देवता के नाम पर खुले छोड़े सांड, दस दिन की व्याई गाय, दूध देने वाली गाय तथा ऐसे ही बैल आदिकों पर कुछ भी जुरमाना न किया जाय।

खेत चर जाने पर मालिकों से दुगुना नुकसान भरा जाय। यदि किसी ने कह कर चरवाया हो तो उस पर १२ पण और जो रोज यही करे उसपर २४पण जुरमाना किया जाय। पाली या रख-वारों को आधा दंड मिले। तरकारी तथा फल फूल के बगीचों में खाने या नुकसान पहुंचाने के विषय में भी यही नियम हैं। खलपान भंडार तथा घेरे हुए स्थान में रखे अनाज को यदि जानवर खा जांय तो उनके मालिकों से "नुकसान" लिया जाय। यदि अभयवन (चिड़ियाघर या बन्द जंगल) के मृग खाते हुए पकड़े जांय तो उसकी सूचना उसके संरक्षक राज्य कर्मचारी को दी जाय तथा उनको इस ढंगपर रोका जाय जिससे उनको चोट न पहुंचे। कोड़े या रस्सी से ही पशुओं को मारकर भगाना चाहिये। यदि कोई उनको दूसरे ढंग पर मारे या मारडाले तो, दंड पारुष्य प्रकरण में विधान किये गये दंडों के अनुसार उसको दंड दिया जाय। जो लोग जान बूझकर ऐसा काम करें या जिनका अपराध प्रत्यक्ष हो चुका हो उनको आगे से ऐसे कामों से रोकने के लिये प्रत्येक प्रकार के उपाय को काम में लाना चाहिये।

(ङ)

प्रण भंग।

यदि कोई खेति हर गांव में आकर खेत न जोते तो जुरमाना गांव स्वयं ले। यदि वह काम करने का अगाउधन तथा भोजन छादन लेलेवे और फिर काम न करे तो उससे दुगुना धन तथा भोजन छादन वसूल किया जाय। यदि काम "समाजिक" हो या सब से संबंध रखता हो तो उससे दुगुना भाग ग्रहण कियाजाय।

नाटक आदि तमाशे के लिये जो काम किया जारहा हो उसमें भाग न लेने वाले को तमाशा आदि देखना न मिले। जो छिपे छिपे ऐसे काम के विषय में सुने तथा देखे और बचने के खातिर सामने न आवे तो, औरों के हिस्से से दुगुना हिस्सा उससे लिया जाय। यदि कोई सब को लाभ पहुंचने वाले काम को करना चाहे तो सब लोग उसकी आज्ञा पर चलें। जो उसका कहना न माने या काम न करे उस पर १२ पण जुरमाना किया जाय। यदि आपस में मिले

कर वह लोग काम बिगाड़ दें तो उनपर नुकसान का दुगुना जुरमाना किया जाय। उन में जो ब्राह्मण या उससे श्रेष्ठ हों सब से अधिक दंड मिले। कोई ब्राह्मण सार्वजनिक काम में भाग न ले तो उससे उसका भाग ले लिया जाय। देश, जाति, कुल तथा संघ विषयक काम में जो शरीक होकर वादा न पूरा करें उनके साथ भी इसी ढंग पर व्यवहार करना चाहिये।

जो लोग देश के कल्याण करने वाले मकानों को या सड़कों को बनाते हैं तथा गांव की शोभा को बढ़ाते हैं उन पर राजा अपनी कृपा सदा ही करता है।

६३ प्रकरण।

ऋण दान।

[क]

व्याज विषयक नियम।

सौ पण पर १$\frac{1}{4}$ पण व्याज ही न्याय युक्त है। व्यापारियों से ५ पण, जंगल में रहने वालों से १० पण तथा समुद्र व्यापारियों से २० पण तक व्याज लिया जा सकता है इससे अधिक जो व्याज ले या दे उसको साहस दंड और साक्षियों को आधा दंड दियाजाय।

राष्ट्र पर प्रभाव डालने वाले कर्जों में धनिक तथा धारणिक (कर्ज लेने वालों) की दशा तथा चरित्र पर दृष्टि रखी जाय। धान्य विषयक कर्ज फसल के समय में यदि चुकता किये जांय तो वह ड्योढ़े से जादा न होने पावें। गिरों रख कर जो कर्जा लिया उसका व्याज साल के अन्त में मूल धन के आधे से अधिक न होने पावें। चिर प्रवास के कारण जिसपर व्याज ऊपरिमित सीमातक बढ़ गया हो कह कुल पूंजी बढ़ावें या मूल धन को भी उसमें संमिलित कर लें उन पर व्याज का चार गुना जुरमाना किया जाय। जो मूल धन से चार गुना धन व्याज में मांगे, उसका चारगुना धन जुरमाने के तौरपर वसूल किया जाय। इसका तीन चौथाई व्याज लेने वाले और एक चौथाई व्याज देने वाले से लिया जाय।

चिरकाल तक होने वाले यज्ञ, बीमारी, गुरुकुल आदि में रहने वाले बालक पर ब्याज न बढ़ाया जाय। अधमर्ण के अदा करने पर जो उधार का धन न ग्रहण करे उसपर १२ पण जुरमाना किया जाय। यदि न ग्रहण करने का कोई विशेष कारण हो तो मूल धन उसी के पास वे ब्याज पड़ा रहे। बालक, वृद्ध, बीमार, राज्यदंडित विदेश में रहने वाले, देश त्यागी तथा राजनैतिक कारणों से बाहर रहने वालों को छोड़कर यदि कोई अन्य व्यक्ति दस सालके बीचमें अपना मूल धन न लौटा ले तो उसका उस धन पर से हक सदा के लिये जाता रहे।

लड़के मृत पुरुष के ऋण का ब्याज दें। यदि लड़के न हों तो उसके दायाद या रिक्थहर (स्थिर संपत्ति लेने वाले) या साथ रहने वाले जो हिस्सेदार हों वह ब्याज का धन अदा करें। इनके सिवाय और कोई भी मृत पुरुष के ऋण का जिम्मेवार नहीं हो सकता। बालक को जिम्मे वार माना ही नहीं जाता। यदि ऋण तथा ब्याज का स्थान तथा समय नियत न हो तो उसको पुत्र पौत्र तथा दायाद अदा करें। जीवन विवाह तथा भूमि विषयक कर्जे को भी पुत्रपौत्र ही चुकता करें। विदेशमें गये हुए ऋणी को छोड़कर अन्य किसी भी ऋणी पर एक साथ बहुत से उत्तमर्ण मुकदमा नहीं चला सकते हैं। दिवालियों से ब्राह्मण तथा सरकार का ऋण पहिले चुकता किया जाय। उसके बाद क्रमशः जिन्हों जिन्हों ने ऋण दिया हो उनको मूल धन लौटाया जाय।

स्त्री पुरुष, पिता पुत्र, भाई-भाई, आदिकों ने आपस में मिल कर जो ऋण ग्रहण किया हो उसका संशोधन नहीं किया जासकता खेति हर तथा राज पुरुष काम करते समय कर्जे के संबंध में नहीं पकड़े जासकते। स्त्री व प्रतिश्रावणी पति विषयक ऋण की जिम्मेवार नहीं हैं यदि उसके जान बूझ में ऋण लिया गया हो। ग्वाले तथा अर्ध सीरी लोगों के संबंध में यह नियम नहीं है। स्त्री के ऋण लेने पर पति को पकड़ा जासकता है। जो इससे बचने के लिये विदेशमें भागने की कोशिश करे उसको उत्तम दंड दिया जाय। जिसके विदेश जानेका कारण निश्चित न हो उसके विषयमें साक्षी लोग जो कुछ कहें वही प्रमाणिक माना जाय।

(ख)

साक्षि-विषयक नियम

विश्वास योग्य, शुद्ध चरित्र तथा दोनों पक्षों को अनुमत लोग ही साक्षी कहाते है। प्रायः यह संख्या में तीन होने चाहिये यदि दोनों पक्षों को मंजूर हो तो दो साक्षियों से भी निर्णय करवाया जासकता है। ऋण विषयक झगड़ों में एक साक्षी से अधिक साक्षी होने आवश्यक हैं। प्रतिषिद्ध, साले, सहायक, आबद्ध जो (किसी पर निर्भर करते हों), धनिक, धारणिक, दुश्मन, अंग हीन तथा राज्य दंडित पुरुष साक्षी नहीं हो सकते। पतित चंडाल बदमाश, अन्धे, बहिरे गूंगे, घमंडी आदि तथा स्त्री और राजकीय कर्म चारी अपने वर्गके मामले को छोड़कर अन्यत्र साक्षी का काम कर सकते हैं। पारुष्य, चोरी तथा व्यभिचार के मामलों में साले सहायक तथा दुश्मन साक्षी नहीं हो सकते। गुप्त कार्यों के मामलों में राजा तथा तपस्वी को छोड़कर अकेली स्त्री, पुरुष सुनने वाला या देखने वाला भी साक्षी माना जा सकता है। स्वामीभृत्य, ऋत्विग, आचार्य तथा शिष्य और माता पिता तथा पुत्र एक दूसरे के मामले में साक्षी हो सकते हैं। यदि इनका आपसका झगड़ा हो तो जो बड़ा तथा पूज्य हो उसीकी बात मानी जाय। जो झूठा सिद्धहो वह दसगुना और यदि असमर्थ हो तो पांचगुना जुरमानादे।

(ग)

शपथ लेना।

साक्षियों को पानीसे भरे घड़े, अग्नि तथा ब्राह्मण के संमुख ले जाया जाय और यदि वह ब्राह्मण है तो "सत्य बोलो" इसढंगपर,—यदि वह वैश्य तथा क्षत्रिय है तो " (यदि तुम झूठ बोलोगे तो)—तुमको यज्ञका फल न मिले। शत्रुकी सेनाको जीतने के बाद खप्पर हाथमें लेकर तुम इधर उधर भीख मांगते फिरो" इसप्रकार, और यदि वह शूद्र है तो " [यदि तुमझूठ बोलो तो]—मरनेके बाद तुह्मारा पुण्यफल राजा को मिले। राजा के पाप तुह्मारे सिर चढ़े। दंडभी तुमको मिले "—इस तरीके पर उनसे क्रमशः शपथ लीजाय। यदि पीछे से भी सत्य मामला मालूम पड़े तो उसकी परीक्षा की जाय।

"एक साथ मिलकर सच्च बोलो" यह कहने पर भी यदि साक्षी आपस में गुट बनाकर सप्तरात से अधिक समय गुजरने पर भी सच्च न बोलें तो उनपर १२ पण जुरमाना किया जाय। तीन पक्ष से अधिक समय गुजरने पर विवाद ग्रस्त धन वसूल कियाजाय।

यदि किसी मामले में साक्षियों का मतभेद हो तो जिसबात पर प्रामाणिक चारित्रवत् साक्षी एकमत हों उसीके अनुसार या उनकीबातों का निचोड़ निकाल कर निर्णय कियाजाय। [यदि कुछभी निर्णय न हो सके तो] संपूर्ण धन को राजा ग्रहण करे। यदि साक्षि अभियुक्त की अपेक्षा धनकी राशि कम बतावें तो जितना अधिक धन अभियोक्ताने कहाहो उससे वसूल कर राज्य कोशमें जुरमाने के रूपमें जमाकिया जाय। यदि साक्षी लोग धनकी राशि अधिक बतावें तो अधिक धन राजा ग्रहण करे। यदि अभियोक्ता या किसी अनपढ़ के खराब लिखने या ठीक ढंगपर साक्षियों के द्वारा न सुनने या पुरुष के मरजाने के कारण विवाद ग्रस्त मामले का निर्णय करना कठिन हो तो जो कुछ साक्षी कहें उसीकेअनुसार फैसला करादियाजाय।

साक्षियों के बेवकूफ होनेपर या देश काल तथा कार्य्य संबंधी विचार से कुछभी सहायता न मिलने पर तीनों प्रकार के दंडों का प्रयोग कियाजाय यह औशनस लोगों का मत है। मानवसंप्रदाय के विद्वान् कहते हैं कि–जाली या बेईमानी साक्षियों के कारण जितने धनका नुक्सान हुआ हो उससे दसगुना उनसे वसूल कियाजाय। बार्हस्पत्य लोगों का विचार है कि जो बेवकूफी के कारण आपस में एकमत न हों उनको तकलीफ देकर मरवाया जाय। कौटिल्य उपरिलिखित विद्वानोंके पक्ष में नहीं है। उसका ख्याल है कि साक्षियों से यह आशा की जाती है कि वह बिनासुने कोई बातनहीं कहेंगे। जो इससे विपरीत करें उनपर २४ पण और जो कुछ कुछ गड़बड़ करें उनपर १२ पण जुरमाना कियाजाय।

अभियोक्ता देश या काल के अनुसार जो साक्षीसमीपमें हों उनको स्वयं बुलालावे और जो कि दूरमें रहते हों और सुगमता से न आसकते हों उनको न्यायाधीश की आज्ञा के द्वारा बुलवा मंगावे।

६४ प्रकरण।
औपनिधिक।

(क)
उपनिधि.

ऋण के सदृश ही उपनिधि (धरोहर) विषयक नियम हैं। शत्रु के षड्यंत्र या जांगलिकों के आक्रमण से राष्ट्र के नाश होने पर, डाकुओं के द्वारा ग्राम, व्यापारी संघ तथा पशु समूह के नष्ट होने पर, अन्तरीय कोप से राष्ट्र के अच्छे न होने पर, गांव के आग से जलने या पानी से बहने पर, स्थिर संपत्ति के विनाश पर, अग्नि की ज्वाला या पानी का बाढ़ इतना अधिक हो कि अस्थिर संपत्ति भी न बच सके ऐसी हालत पर, नाव के डूबने पर या उसपर डाका पड़ जाने पर उपनिधि प्राप्त करने के लिये किसी पर भी अभियोग नहीं चलाया जासकता है॥

जो उपनिधि को अपने काम में लावे उससे उसका बदला [भोग वेतन] लिया जावे तथा उसपर १२ पण जुरमाना किया जावे। यदि उपभोग करने से उपनिधि नष्ट होगया हो तो उसपर अभियोग चलाया जावे तथा उसपर २४ पण जुरमाना किया जावे। अन्य प्रकार से नष्ट हुए हुए उपनिधि के विषय में भी इसी नियम को काम में लाया जावे। यदि कोई मनुष्य मरगया हो या तकलीफ़ में पड़गया हो उसके सम्बन्ध में यह नियम नहीं लगते। उसपर अभियोग भी नहीं चलाया जासकता। यदि कोई उपनिधि को गिरों रक्खे [आधान] बेचे या उसका अपव्यय करे तो उसपर उपनिधि का चारपांच गुना जुरमाना किया जाय। दूसरे माल के साथ बदलने या यों ही नष्ट करदेने पर उपनिधि का दाम उससे वसूल किया जाय॥

(ख)
आधि।

उपनिधि के सदृश ही आधि (गिरों रखी चीज़) के नाश, उपभोग विक्रय तथा आधान (गिरों रखना) के नियम हैं।

उत्पादक आधि नष्ट नहीं होता। इसपर व्याज भी नहीं लिया जासकता। अनुत्पादक आधि नष्ट होजाता है और उसपर व्याज भी चढ़ता रहता है। आधि लौटाने के लिये आएहुए मनुष्य को जो आधि न लौटावे उसपर १२ पण जुरमाना किया जाय। यदि आधि रखने वाला कहीं बाहर हो तो गांव के चौधरियों (ग्रामवृद्ध) के पास ऋण का धन जमाकर गिरों रखी चीज़ कोई छुड़ा सकता है। यदि कोई उस चीज़ को जहां के तहां ही पड़े रहने दे तो ऋण का धन लौटाने के बाद उसपर व्याज नहीं चढ़ाया जासकता। धर्म्मस्थ (न्यायाधीश) से आज्ञा लेकर कोई भी मनुष्य कीमत चढ़ने पर गिरों रखी चीज़ को नुकसान के भय से बेच सकता है और यही बात तब करसकता है जबकि उसको उस चीज़ के नष्ट या विनष्ट होने का ख़तरा मालूम पड़े। यदि धर्म्मस्थ न हो तो आधिपाल की आज्ञा से भी यही काम किया जासकता है। जो स्थिर संपत्ति मेहनत करने से या विना मेहनत करने से ही फल देती हो उसका उपभोग इस ढंग पर किया जाय जिससे उसका मूल्य न घटे। उसकी उत्पादकशक्ति स्थिर रखने के लिये व्याज तथा लाभ निकालने के बाद जो बाकी धन बचे उसीपर खर्च कर दिया जाय। विना आज्ञा के ही जो व्यक्ति गिरों रखी चीज़ का उपभोग करे उससे (उत्पत्ति व्यय निकालने के बाद) शुद्ध आय ग्रहण की जाय और साथ ही उसपर जुरमाना (बंध) भी किया जाय। इसमें शेष नियम उपनिधि के ही सदृश है।

(ग)

आदेश तथा अन्वाधि।

आदेश (आज्ञा) तथा अन्वाधि (किसी दूसरे के हाथ गिरों रखी चीज़ लौटाने को भेजना) के सम्बन्ध में भी पूर्ववत् ही नियम हैं।

व्यापारी लोग यदि किसी को आधि देकर भेजें और वह चोरों से लूटकर इस स्थान तक न पहुंच सका हो उसपर अभियोग नहीं चलाया जासकता। यदि वह मार्ग में ही मरगया हो तो उसके

दायादों पर आधि (गिरों रखी चीज़) विषयक अभियोग नहीं चलाया जा सकता। शेष बातों में उपनिधि के सदृश ही इसमें नियम हैं।

[घ]

ऋण या उधार में लिया धन।

ऋण या उधार में जिस हालत में चीज़ लीजाय वैसी ही लौटाई जाय। समय तथा स्थान के प्रलंब होने के कारण और पदार्थ में दोष या दैवी विपत्ति के कारण कोई पदार्थ नष्ट होजाय तो अभियोग नहीं चलाया जासकता। शेष बातों में उपनिधि के सदृश ही इसमें नियम हैं।

[ङ]

वैय्यावृत्त्य विक्रय

वैय्यावृत्त्य विक्रय या फुट्कर विक्रय में यह नियम है कि जिस समय जिस स्थान पर जो माल बेचा गया हो उसका असली दाम तथा असली लाभ दियाजाय। शेष बातों में उपनिधि संबंधी नियम काम में लाये जांय। यदि समय तथा स्थान के कारण नुक्सान हो गया हो तो खरीदने वाले माल प्राप्त करने पर नुकसान तथा खर्चा दें। यदि पहिले से ही दाम तय किया जा चुका हो तो उनको इसबात के लिये बाधित न किया जाय। दाम के कम होने पर कमी पूरी करके भी (सट्टेका) भुगतान किया जासकता है ‡ जो लोग कम्पनी के नौकर हों या विश्वासपात्र हों या जिनको कभी भी राज्यसे दण्ड न मिला हो वह लोग खराब होने से या दैवी-विपत्ति से यदि पदार्थ नष्ट होजाय या खोजाय तो उसका कुछ भी दाम न दें। चिरकाल रखने के बाद या किसी स्थान विशेष में भेजने के बाद जो माल बिकना हो उसका खर्च निकालकर मूल्य तथा लाभ दिया जाय। यदि विक्रेय पदार्थ बहुत प्रकार का हो तो

---

‡ इसका भाषान्तर यह भी होसकता है कि " राज्य नियत कीमत पर जो माल बेचते हो वह बाजार में उसी मालकी कीमत चढ़ने पर भी पुरानी कीमत पर ही बेचें। या बढ़ी हुई कीमत पर बेचते हुए नियत कीमत के अनुसार ही राजा को धन लौटावें। यदि मालका दाम घट गया हो तो घाटे के अनुसार ही राजा को कम धन लौटावें "।

उसका कुछ अंश नुकसान में निकाल दिया जाय इसमें भी उपनिधि के सदृश ही अन्य बातों में नियम हैं।

[च]

निक्षेप।

निक्षेप (पेटी में बंद रखा धन) तथा उपनिधि (खुली हालत में दिया गया धन) के नियम एक सदृश हैं।

जो व्यक्ति किसी के रखे धन को किसी दूसरे को सुपुर्द करे उसको दंड दिया जाय। यदि वह मुकर जाय तो उसको पूर्वकालीन स्थिति तथा निक्षेप्ता (धरोहर रखने वाला) की बात प्रामाणिक मानी जाय। कारीगर लोग प्रायः बेईमान होते हैं। निक्षेप में उनके धन रखने को कोई कारण भी नहीं है। अकारण रखे निक्षेप का यदि कोई अपव्यय करे तो निक्षेप्ता मकान में छिपकर खुफिया का काम करने वाले साक्षियों के द्वारा अपनी सचाई को सिद्ध करे। नाव के बिच में या बीच जंगल में बुड्ढा या बीमार व्यापारी गुप्त रूप से चिन्हित कर कुछ एक पदार्थ उसके पास निक्षेप में रखे और इसके बाद उसकी आज्ञा लेकर उसका लड़का तथा भाई निक्षेप को मांगे। यदि वह देदे तब तो उसको ईमान्दार समझा जाय और यदि वह मुकर जाय तो उससे निक्षेप ले लिया जाय और उसको चोरी संबंधी दंड दिये जांय। इसी प्रकार सन्यासी के रूप में श्रद्धेय साक्षी गुप्त रूप से चिन्हित कर कुछ माल उसके पास रखे। कुछ समय के बाद पुनः आकर मांगे। यदि वह देदे तब तो वह ईमान्दार और यदि वह न दे तो उससे निक्षेप तथा चोरी का जुरमाना ग्रहण किया जाय। अथवा एक बेवकूफ गंवार के भेस में कोई मनुष्य गुरुचिन्हों से मुक्त पदार्थ को लेकर रात में गली में निकले और "पुलिस छीन लेगा" यह बहाना बताकर उस के हाथ में उस पदार्थ को रख जाय। जेल में कैदी बनकर वह अपने पदार्थ को उससे मांगे। यदि तो वह देदे तब तो ईमान्दार माना जाय अन्यथा उससे निक्षेप का धन लिया जाय और उसको चोरी का दंड दिया जाय। यदि कोई संबंधी अपने पूर्वजों के निक्षेप को किसी के यहां देखे तो वह उससे मांग सकता है। यदि वह न दे तो उसके साथ पूर्ववत् व्यवहार किया जाय।

द्रव्य संबंधी विवाद में "द्रव्य कहां से प्राप्त हुआ" यह सबसे पहिले पूछा जाय। इसके बाद उस द्रव्य के चिन्ह तथा व्यवहार के संबंध में और अभियोक्ता की आर्थिक दशा के विषय में जांच पड़ताल की जाय।

दो आदमियों में किसी प्रकार का भी आर्थिक व्यवहार हो उसमें इन्ही नियमों को काम में लाया जावे।

अपने या पराये के साथ जो भी शर्त नामें या व्यवहार विषयक बातें तय करनी हों वह साक्षियों के सन्मुख विना किसी प्रकार के छिपाव के तय होनी चाहिये और उसमें देश तथा काल का विस्तृत रूप से वर्णन कर देना चाहिये।

६९ प्रकरण।

दास-कल्प।

(क)

(दासों के नियम)

उदर दास को छोड़ कर, आर्य जाति के नाबालिग शूद्र को बेचने वाले संबंधी को १२ पण, वैश्य क्षत्रिय तथा ब्राह्मण को बेचने वाले स्व-कुटुंबी को क्रमशः २४, ३६, ४८, पण दंड दिया जाय। यदि यही काम करने वाला कोई दूरका रिश्तेदार या दुश्मन हो तो उसको क्रेता तथा श्रोता को पूर्व मध्यम तथा उत्तम साहस दंड के साथ साथ मृत्यु दंड तक दिया जा सकता है। म्लेच्छ लोग प्रजा बेंच सकते हैं तथा गिरों रख सकते हैं। आर्य लोग दास नहीं बनाये जा साकते हैं। पारिवारिक, राज्य दंड तथा उत्पत्ति के साधन विषयक विपत्ति के आपड़ने पर किसी भी आर्य जाति के व्यक्ति को गिरों रखा जा सकता है। निष्क्रय का धन मिलते ही सहायता देने में समर्थ बालक को शीघ्र ही छुड़ा लिया जाय। एक वार जिसने अपने आपको गिरों रखा है या जिसको संबंधियों ने दो बार गिरों रखा है। राज्यापराध करने पर या शत्रु के देश में भागने पर वह आजीवन दास बनाये जा सकते हैं। धन को

चुराने वाले तथा किसी आर्य्य को दास बनाने वाले व्यक्तियों को आधा दंड दिया जाय। राज्यापराधी, मृत प्राय तथा बीमार को भूल से गिरों में रखने वाला अपना धन लौटा ले सकता है। जो कोई गिरों में रखे व्यक्ति से मुर्दा या पाखाना पेशाब उठवाये, या उसको जूठ खिलावे, या कपड़ा पहिनने को न देकर नंगा रखे, या पीटे, या तकलीफ दे या स्त्री का सतीत्व हरण करे उसका (गिरों रखने के बदले दिया गया) धन जब्त कर लिया जाय। दायी, दासी, अर्धसीरी, तथा नौकरानी सदा के लिये स्वतंत्र करदी जाय और उच्च कुल के मनुष्य को उसके घर से भाग जाने दिया जाय।

गिरों रखी दायी पर अपने घर में जबर्दस्ती करने वाले को साहस दंड और दूसरे के घर में यही काम करने पर मध्यम दंड मिले। जो स्वयं या किसी दूसरे के द्वारा गिरों रखी कन्या का धर्म्म बिगाड़ उसका (गिरों में दिया) धन जब्त कर लिया जाय। राज्य कन्या को हरजाना (शुल्क) देने पर उसको बाधित करे और स्वयं हट जाने का दुगुना धन दंड स्वरूप में ग्रहण करे।

यदि कोई आर्य्य अपने आप को बेचे तो वह आर्य्य ही समझा जाय। स्वामी की अनुमति से वह अपनी कमाई रख सकता है और अपने पिता की संपत्ति को प्राप्त कर सकता है। रुपया लौटा कर वह पुनः दासता से मुक्त हो सकता है। उदर दास (आजीवन दास) तथा आहितकदास (गिरों में रखा दास) के विषय में भी यही नियम हैं। गिरों या बिक्री के धन के अनुसार ही निष्क्रय (दासता से मुक्त होना) का धन है। यदि कोई राज्य दंड देने में अशक्त होने से दास बनाया गया हो तो वह काम करके अपने मेहनताने से उस धन को चुकता कर देवे और स्वतंत्रता प्राप्त करले। युद्ध में पकड़े जाने के कारण जो आर्य्य दास बनाया गया हो वह अपने पकड़े जाने का हरजाना या अपने निष्क्रय का आधा धन देकर मुक्त हो सकता है।

जो कोई घरमें उत्पन्न या खरीदे हुए आठ वर्ष से कम उमर वाले अनाथ बच्चे से नीच कामले, उसको विदेश में बैचे या गिरों रखे तथा प्रसव काल का प्रबंध किये बिना ही गर्भ युक्त दासी को

बेचे या गिरों रखे उसको तथा क्रेताओं और साक्षियों को पूर्व साहस दंड दिया जाय। जो अनुरूप निष्क्रय मिलने पर भी दास को दासता से मुक्त न करे उसपर १२ पण जुरमाना किया जाय। जो दास को बेकारण कैद में डाले उसको भी यही दंड दिया जाय।

संबंधी लोग ही दास की संपत्ति के हकदार (दायाद) हैं। यदि कोई भी संबंधी नहो तो मालिक को मिले। मालिक द्वारा दासी के बच्चा पैदा होनेपर दोनों (दासी तथा बच्चा) ही स्वतंत्र हो जांय। यदि किसी कारण से वह मालिक के घर में ही रहना चाहे तो परिवार का ख्याल करने वाली मा भाई बहिन आदि दासता से मुक्त हो जांय। निष्क्रय का धन देकर दास तथा दासीको दासता से मुक्तकर उनको, उनकी मर्जी के विना जो बेचे उसपर १२ पण जुरमाना कियाजाय।

[ख]

नौकरोंपर मालिक का अधिकार।

अड़ोस पड़ोस के लोगों के सामने ही मालिक नौकर रखे। जो मेहनताना तय हो वही मिले। यदि मेहनताना पहिले से तय न हो तो काम तथा समय के अनुसार दियाजाय। खेतिहरों में हरवाहे गउओं का काम करने वालों में ग्वाले और अपने आप माल खरीदने वाले बनियों में दूकान पर बैठने वाले मेहनताना तय न होने पर आमदनी का दसवां भाग ग्रहण करें। जहां मेहनताना तय होगया हो वहां यह नियम नहीं है। वहां तो नियत मेहनताना ही मिलना चाहिये। जो मेहनताना अन्य स्थानों में प्रचलित हो वही मेहनताना, कारीगर, शिल्पी, गवइये चिकित्सक, भांड, रसोइयेआदि मेहनतियों को दियाजाय। यदि कुछ गड़बड़ हो तो जो चतुर लोग नियत करें वही उनको मिले। यदि कुछझगड़ा पड़गयाहो तो उसको साक्षियों के द्वारा निपटाया जाय। यदि वह नहों तो जैसकाम हो वैसाही निर्णय कियाजाय। वेतन न देनेपर मालिक को वेतन की रकमसे दसगुना या ६ पण दंड दियाजाय। जो मेहनतियों की भृति का दुरुपयोग करे उसपर भृति का ५ गुना या १२ पण जुरमाना कियाजाय।

नदी में बहने या आगमें जलने या चोर शेर हाथीसे पीड़ाकिये जाने पर जान के खातिर यदि कोई, बचाने वाले को स्त्री, पुत्र,

तथा अपने आपको देने के साथ साथ सर्वस्व देने का वचन दे तो कुशल लोग जो निर्णय करें वही उसको मेहनताना दियाजाय। प्रत्येक प्रकार के कष्ट से बचाने का मेहनताना इसी ढंग पर नियत करना चाहिये।

वेश्या(पुंश्चली) मेहनताना तय कर लेने के बाद पुरुष को संतुष्ट करे। यदि कोई बात नियम विरुद्ध तय हुई हो या नुक्सान पहुंचाने के उद्देश्य से मंजूर कराई गई हो तो उसको नाजायज़ समझना चाहिये।

६६ प्रकरण।

श्रम तथा पूंजी का विनियोग।

[क]

श्रमियों का प्रबंध।

तनखाह या मेहनताना लेने के बाद अगर मेहनती काम न करे उस पर १२ पण जुरमाना किया जाय और यदि इसपर भी काम करने के लिये तय्यार न हो तो उसको कोठरी में कैद कर दियाजाय। यदि वह किसी खराब काम के करने में बीमारी या अन्य प्रकारकी विपत्ति में पड़ने के कारण असमर्थ हो तो उसको छुट्टी मिले और वह अपना काम दूसरे से करवादे। यदि विलंब के कारण स्वामी को कुछ नुक्सान पहुंच गया हो तो उसको अधिक काम करके पूरा करदे। स्वामी किसी दूसरे व्यक्ति से काम ले सकता है बशर्ते कि वह दूसरे व्यक्ति को नियुक्त करने में या नियुक्त पुरुष को अन्यत्र काम करने में पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त हो। यदि स्वामी मेहनती से काम न ले या मेहनती स्वयं ही काम न करे तो उसपर १२ पण जुरमाना किया जाय। दूसरे से मेहनताना लेने पर भी मेहनती जब तक पहिले काम को खतम न करले तबतक दूसरे काम पर नहीं जा सकता है। पुराने आचार्य्य समझते हैं कि यदि काम शुद्ध करने के बाद कोई उस काम को पूरा न करवाये तो मेहनतियों के विचार से उसको खतम ही समझना चाहिये। कौटिल्य

इस विचार से सहमत नहीं है। उसका विचार है कि मेहनताना काम के लिये दिया जाता है न कि खाली बैठने के लिये। यदि कोई थोड़ा सा भी काम करवाके आगे काम न करवाये तो उस काम को "किया हुआ" ही समझना चाहिये। यदि देश तथा काल के कारण विलंब होगया हो या मेहनतियों ने काम बिगाड़ दिया हो तो उसको "किया हुआ" नहीं माना जा सकता। शर्त से अधिक काम करने पर अधिक काम का उसको बदला दिया जाय। कंपनियों के द्वारा जिनको मेहनताना मिलता हो उनके लिये भी यही नियम है। काम पूरा करने के लिये उनको सात रात का समय और दिया जाय। यदि इसपर भी काम न पूरा हो तो किसी दूसरे से काम करवा लिया जाय। स्वामी की आज्ञा के बिना श्रमी लोग न कोई चीज़ उठावें या गायब करें। जो इस नियम का पालन न करें उनपर २४ पण जुरमाना किया जाय। यदि श्रमी संघने समूह-रूप से यह अपराध किया हो उसपर आधा जुरमाना किया जाय।

[ख]

कंपनी विषयक नियम।

संघ से मेहनताना लेने वाले या साथ मिलकर कंपनी खड़ा करने वाले तय किये हुए वेतन को बराबर आपस में बांट लें। खेतिहर तथा बनिये फसल या व्यौपारी दिन (जिसपर सब लोग अपना हिसाब तय करते है) के समीप आने पर अपने किये हुए काम के अनुसार हिस्सा बांट लें। जिसने स्वयं काम न कर किसी दूसरे मनुष्य को अपने स्थान पर काम करने के लिये दे दिया हो उसको पूरा हिस्सा मिले। हाथ में लिये हुए काम के खतम होने पर ही हिस्सा बांटा जाय। जो काम शुरू कर दिया जाय और आधा खतम होगया हो उसको पूरा ही समझना चाहिये। काम के शुरू होने पर जो बीमार न होते हुए भी भाग जाय उसपर १२ पण जुरमाना किया जाय। यदि काम शुरू न हुआ हो तो भाग जाने पर दंड नहीं दिया जासकता। यदि किसी ने कुछ माल चुरा लिया हो तो "अभय" देकर उसका हिस्सा दे दिया जाय। यदि

पुनः चुरावे तो उसको वहां से निकाल दिया जाय या अन्यत्र भेज दिया जाय। बहुत भयंकर अपराध करने पर राज्यापराधी के सदृश उसके साथ व्यवहार किया जाय।

[ग]

याजक लोगों में धन का विभाग।

याजक लोग अपने अपने काम के लिये जो द्रव्य उपयोगी हो उसको छोड़ कर शेष संपूर्ण मेहनताना समान रूप से आपस में बांट लें। अग्निष्टोमादि यज्ञों में दीक्षा होने के बाद याजक लोग पांचवां हिस्सा ग्रहण करलें। सोम विक्रय के बाद चौथा हिस्सा, मध्यमोपसद तथा प्रवर्ग्योद्वाशन के बाद दूसरा हिस्सा और मयके बाद पहिला हिस्सा क्रमशः प्राप्त करते जांय। मध्यंदिन सवन होजाने पर समग्र भाग उनको मिल जाय। काम खतम होने पर दक्षिणा दी जाती है। बृहस्पति सवन को छोड़कर सभी सवनों में दक्षिणा दी जाती है। अहगर्ण आदि में जो दक्षिणा दी जाती है उसका नियम भी इसी प्रकार है। सत्राम तथा आदशाहोरात्र में थोड़ा थोड़ा लेकर काम करें अथवा अपनी ओर से अपने खाने पीने का खर्च करें। यदि काम के खतम होने से पहिले यजमान मरजाय तो ऋत्विज काम समाप्त करवाने के बाद दक्षिणा लेवे। काम खतम होने से पहिले ही जो यजमान या याजक को छोड़कर चला जाय उसको साहस दंड दिया जाय।

जो कोई सौ गउओं के होते हुये भी अग्नि-आधान नहीं करता या हजार गउओं का मालिक होते हुए यज्ञ नहीं करता, या शराब पीता है, या वैश्या के साथ विवाह कर बैठा है, या ब्राह्मण को मार चुका है। या गुरु की धर्म्मपत्नी को खराब करचुका है। या बुरे काम में फंसा है, या चोर है, या कुत्सित काम करने वाले को यज्ञ करवाता है-ऐसे व्यक्ति को काम के बिगड़ने के भय से यज्ञके बीच में ही छोड़ देना कुछभी दोष नहीं है।

६७ प्रकरण।

विक्रय क्रय तथा जाकड़ का प्रबंध।

दोष, उपनिपात तथा अविसह्य (अनुपयोगिता) से अतिरिक्त अन्य किसी बात के कारण यदि कोई व्यक्ति माल बेचकर खरीदार

को माल न दे तो उसपर १२ पण जुरमाना कियाजाय। दोष का तात्पर्य मालकी खराबी से, उपनिपात का तात्पर्य राजा चोर अग्नि तथा पानी विषयक बाधासे और अविसह्य का तात्पर्य अनुपयोगी तथा बीमारी पैदा करने वाली वस्तु से है। दूकानदार एक रात तक, किसान तीनरात तक, गो रक्षक पांचरात तक, वर्णशंकर तथा उत्तम वर्ण के लोग बहुमूल्य पदार्थ को सातरात तक विक्रेय मालको जाकड़ पर दें। हानिकर-घातके (आतिपातिक) पदार्थ दूसरों को इस शर्तपर जाकड़ दियेजांय कि वह किसी दूसरे के हाथ न बेचेगा जो इसनियम का पालन न करे उसपर २४ पण या सामान का दसवां भाग जुरमाना कियाजाय।

दोष, उपनिपात तथा अविसह्य से अतिरिक्त अन्य किसीबात के कारण यदि कोई खरीद कर माल न ग्रहण करे उसको १२ पण दंड दियाजाय। खरीदार के सदृश ही बेचने वाले के विषय में नियम समझना चाहिये।

ऊपर के तीनों वर्णों में विवाह का तात्पर्य पाणि ग्रहण से और शूद्रों में पारस्परिक संबंध से लिया जाता है। पाणि ग्रहण के बाद यदि कोई गुप्त भारी दोष मालूम पड़े तो विवाह रद्द हो सकता है। उच्च कुलके लोगों में ही केवल यह नियम काम नहीं करता। जो गुप्तदोषों को छिपाकर कन्या का किसी के साथ विवाह करदे उसपर ९६ पण जुरमाना कियाजाय और उसको दहेज, स्त्री धन तथा शुल्कादि के लौटा देने पर बाधित कियाजाय। यदि यही बात लड़के के मामले में हो तो वरपक्ष पर दुगुना जुरमाना कियाजाय और उसने शुल्क, स्त्री धन तथा दहेज में जो धन दिया हो वह उनको न मिले।

कोढ़ी बीमार गन्दे जानवरों को शक्ति युक्त, स्वस्थ संपन्न तथा स्वच्छ कहकर जो बेचे उसपर १२ पण जुरमाना कियाजाय। तीन पक्ष तक चौपाये जाकड़ रखे जा सकते हैं। मनुष्यों के विषय में जाकड़ की हद एकसाल है। इतने समय में अच्छाई बुराई मजे से जानीजासकती है।

सभासद लोग दाने तथा क्रय में इस ढंग के नियम काम में

लावें जिस से लेने या देने वाले में से किसी को भी हानि न पंहुचे।

६८--७० प्रकरण।

दिये हुए धन का ग्रहण, अस्वामिक धन का विक्रय तथा पदार्थों पर स्वत्व।

[क]

दिए हुए धन का ग्रहण.

ऋण-ग्रहण विषयक नियम ही दिए हुए धन के ग्रहण के विषय में लगने चाहियें। व्यवहार के अयोग्य-दान को सुरक्षित स्थान में रखाजाय। सपूर्ण संपत्ति, स्त्री कलत्र, तथा अपने आपको दूसरे को देकर अनुशयी (राज्याधिकारी) के समीप पुनः विचार के लिये जाय। बुरे काम में धर्मदान, हानि कर काम में धन दान, अनुपकारी तथा अपकारी व्यक्ति को उपभोग करने की पूर्ण स्वतन्त्रता का दान देने तथा लेने वाले को विशेष नुक्सान न पहुंचे इसढंग का कुशल लोग निर्णय करें। दंड, बदनामी, तथा रुपये पैसे के भय से जबरन डरकर दान ग्रहण करने तथा कराने वाले को चोरी विषयक दंड दियाजाय। मिलकर दूसरे को मारने पीटने या राजा को डरावा दिखाने वाले को उत्तम दंड मिले। मृत पुरुष की संपत्ति का अधिकारी लड़का या रिशतेदार अपनी इच्छा के विरुद्ध प्रतिभाव्य दंड [कर्जा सम्बन्धी जुर्माना] दहेज का बचा भाग, जुए की हार, शराब के नशे में किए गए प्रण तथा स्त्री के वश में होकर कहे गए धन के देने में बाधित नहीं किया जासकता है।

(ख)

अस्वामिक धन का विक्रय.

स्वामी अपनी खोई हुई वस्तु को ‡ प्राप्त कर धर्म्मस्थ को देदे।

‡ इसका यह अर्थ भी ठीक जंचता है:— स्वामी खोई हुई वस्तु को प्राप्त कर (उठाने वाले को) धर्म्मस्थ के द्वारा पकड़वा दे। यदि देश तथा काल इस बात का बाधक हो तो स्वयं उसको पकड़कर धर्म्मस्थ के सुपुर्द करदे। धर्म्मस्थ अपराधी से पूछे कि "तुमको कहां से यह माल मिला?"

यदि देश तथा काल बाधक हो तो स्वयं ग्रहण करले । धर्मस्थ स्वामी से पूछे कि तुमको कहां से यह माल मिला? यदि वह वस्तु के प्राप्त होने के किस्से को क्रमशः विचार से प्रगट करे और बेचने वाले का पता न देसके तो उसको छोड़ दिया जाय और उस संपत्ति या वस्तु को राज्य स्वयं ग्रहण करे। यदि बेचने वाला सामने किया जासके तो उससे वस्तु का दाम वसूल कियाजाय और उसको चोरी विषयक दंड दियाजाय। वस्तु के क्षय होने तक यदि वह छिपारहे और उसके बाद प्रगट हुआ हो तो उससे वस्तु की कीमत लेली जाय और उसको चोरी का दंड भी मिले।

खोये हुए माल पर अपना स्वत्व सिद्ध करने के बाद ही उसको लिया जाय यदि कोई ऐसा सिद्ध न करसके तो उसपर नष्ट पदार्थ के मूल्य का पांच गुना जुरमाना किया जाय और पदार्थ राजकीय संपत्ति होजाय। यदि कोई राज्य को विना सूचित किये ही नष्ट पदार्थ पर अपना स्वत्व स्थापित करले तो उसको साहस दंड दिया जाय। खोये हुए तथा चोरी हुए माल को तीन पक्ष तक शुल्क स्थान (चुंगीघर) में रखाजाय। यदि इसपर भी उसका कोई दूसरा हकदार न मिले तो राजा या स्वामी स्वयं ग्रहण करे।

दो पैर वाले जानवर पर स्वत्व-प्राप्ति (खोजाने के बाद) का बदला ५ पण, एक खुरवाले जानवर पर ४ पण गौ भैंस पर २ पण और क्षुद्र पशुओं पर $\frac{1}{4}$ पण लियाजाय। रत्न बहुमूल्य द्रव्य, तुच्छ द्रव्य तथा जांगलिक पदार्थ पर ५ शतक ग्रहण कियाजाय। शत्रु के हाथसे या जंगल से खोईहुई वस्तु को प्राप्त कर राजा उसके मालिक को देदे। चुराया हुआ माल यदि न मिले तो अपने घर से दे। यदि ऐसा माल हो कि वह फिर न मिलसके तो उसके बदले स्वयं ग्राह लोगों से दूसरा पदार्थ मांगकर उसको देदेवे। शत्रुके देश से अक्रमण कर प्राप्त कीहुई वस्तु का राजा की आज्ञा लेकर उपभोग किया जासकता है वशर्ते कि वह आर्यों, ब्राह्मणों तपस्वियों तथा देवताओंसे संबंध न रखती हो।

(ग)

पदार्थों पर स्वत्त्व ।

यदि किसी मनुष्य की किसी देश में संपत्ति है तो देश के परि

त्याग करने पर भी उसीका उसपर हक है। परंतु यदि कोई—बालक, वृद्ध, बीमार, राज्य दंडित, विदेश में रहने वाला, देश त्यागी तथा राज्य क्रान्ति में भागा हुआ आदि न होकर भी अपनी संपत्ति का उपभोग दस साल तक निरंतर दूसरोंको करने देता है तो उसका उस संपत्ति पर कुछ भी हक नहीं रह सकता। मकान के मामले में बीस साल का नियम है। यदि कोई बीस साल तक लगातार मकान में रहे और मालिक मकान कभी भी रोक टोक न करे तो अन्तमें उसी का उस मकान पर हक हो जाता है। संबंधी, श्रोत्रिय तथा पाखंडी राजा से दूर किसी दूसरे के मकान में रहते हुए कभी भी उस मकान पर रहने के कारण हक नहीं प्राप्त कर सकते। उपनिधि (प्रत्यक्ष धरोहर), आधि (सिक्यूरिटी), खजाना, गिरों रखा धन, स्त्री, सीमा, राजा तथा श्रोत्रिय के द्रव्यों के संबंध में भी यही नियम समझना चाहिये। वानप्रस्थी तथा पाखंडी एक दूसरे को किसी ढंग की भी तकलीफ न देते हुए खुले हुए मैदान में बसें। पुराने वसे हुए लोग अपना थोड़ा सा स्थान छोड़ कर नये आये हुए अतिथि को रहने का स्थान दें। जो यह न करे उसको निकाल वाहर किया जाय। यदि किसी ब्रह्मचारी, संन्यासी या वानप्रस्थी की मृत्यु हो जाय तो उसकी संपत्ति उसके आचार्य्य, शिष्य, धर्म्म भाई, तथा साथी को मिले। आपस में झगड़े करने के कारण इन पर जितने पण जुरमाना किया जाय उतने ही रातों तक यह लोग राजा के खातिर—तपण अभिषेक यज्ञ तथा महाकच्छ वर्धन आदि काम करें। जिन पाखंडी साधुओं के पास सोना या संपत्ति न हो वह जुरमाने की रकम को उपवास तथा व्रतों के द्वारा पूरी करें बशर्ते कि उन्होंने मारपीट गाली गलोच, चोरी डाका तथा व्यभिचार आदि काम न किये हों। इन अपराधों में तो यथोक्त दंड ही उनको दिये जांय।

राजा सन्यासियों तथा वैरागियों को दंड के जोरपर पाप कर्म से रोके। क्यों कि अधर्म धर्म्म का नाशकर अन्तमें राजा का नाश करता है।

७१ प्रकरण ।

साहस ।

जबरन प्रत्यक्ष रूप से धन छीनना डाका[साहस] और छिपकर चुराने या तंग करने पर चोरी [स्तेय] समझी जाती है । मानवसंप्रदाय के विद्वानों का मत है कि "रत्न; बहु मूल्य पदार्थ, साधारण पदार्थ तथा जांगलिक द्रव्य" आदिकों के ऊपर डाकामारने पर मूल्य के समान दंड दिया जाय । औशनस संप्रदाय के लोग दुगुने जुरमाने को उचित समझते हैं । कौटिल्य का मत है कि अपराध के अनुसार दंड मिलना चाहिये ।

फूल, फल, शाक, मूल, कंद, पकान्न, चमड़ा, बांस तथा मट्टी के बर्तन आदिक = क्षुद्र द्रव्यों की चोरी डाके में १२ पणसे २४ पण तक—लोहा,लकड़ी रस्सी,पदार्थ,क्षुद्र पशु आदि स्थूल द्रव्यों की चोरी डाके में २४ पणसे ४८ पण तक—तांबा, पीतल, कांसा, शीसा हाथी दांत की चीज़ आदि स्थूल द्रव्यों की चोरी डाके में४८ पणसे ९६ पण तक और महा पशु. मनुष्य, खेत, मकान, संपत्ति, सुवर्ण तथा महीन कपड़े आदि स्थूल द्रव्यों की चोरी डाके में २०० पण से ५०० पण तक मध्यम साहस दंड दिया जाय ।

पुराने आचार्यों का मत है कि जो लोग स्त्री पुरुष को कैद में डालें या कैदमें पड़ेहुए को मुक्त करने का साहस करें उनको उत्तम दंड दियाजाय । जो अपनी सलाह से दूसरे से साहस के काम करवाये उसपर दुगुना और जो सुवर्ण आदि को यथेष्ट राशि में देने की प्रतिज्ञा कर किसीसे बुराकामले उसपर चारगुना जुरमाना कियाजाय । बार्हस्पत्य लोगों का यह मत है कि "जो जितना सुवर्ण देने का वचन दे कर बुराकाम करवाये" उसपर उतने ही सुवर्ण का दंड दियाजाय । कौटिल्य का मत है कि यदि कोई ऐसे अपराध में किसी के कोप, मद या अभिमान को कारण प्रगट करे तो उसपर उपरि लिखित प्रकार ही जुरमाना कियाजाय ।

संपूर्ण जुरमानों में सैंकड़ा पीछे ८ पण रूप, और सौ पण से ऊपरके जुरमाने पर ५ पण सैंकड़ा व्याजी ग्रहण कियाजाय ।

प्रजा में दोषों के अधिक होनेसे और राजामें भी गल्तों करजाने की संभावना होने से पापीसे धर्म्म काम के लिये रूप तथा ब्याजी लेना न्याय युक्त प्रगट कियागया है।

७२ प्रकरण।

वाक् पारुष्य ।

चुगली, गाली, झिड़कना आदि वाक् पारुष्य नामक अपराध के अंतर्गत हैं। १ शरीर,२ प्रकृति, ३ श्रुत४ वृत्ति तथा५जानपद के भेद से यह पांच प्रकार का है।

१ शरीर—काना लंगड़ा लूला आदि शल्यों से किसी अंग विकल को पुकारने पर ३ पण और अच्छे आदमी को गाली देने पर ६ पण दंड दिया जाय। कोढ़, उन्माद तथा नपुंसकता आदि के विषय में दूसरे से कहने पर तथा चुगली करने पर और काने तथा लूले लंगड़े की "आहा! आपकी आंखे तथा दांत कैसे सुन्दर हैं" इसढंग पर हंसी उड़ाने पर १२ पण दंड दिया जाय। समान हैसियत के लोगों पर सच्ची झूठी स्तुति या निन्दा के करने पर १२ पण से लेकर अधिक धन तक जुरमाना किया जाय। यदि यही अपराध किसी ऊंची हैसियत के व्यक्ति के साथ किया गया हो तो जुरमाना दुगुना और नीची हैसियत के साथ करने पर जुरमाना आधा होना चाहिये। परस्त्री के विषय में भी दंड दुगुना ही होना चाहिये। यदि ऐसे अपराध में प्रमाद शराब, मोहादिक कारण हों तो दंड आधा दिया जाय। कुष्ट तथा उन्माद के विषय में चिकित्सक तथा पड़ोसी प्रामाणिक समझे जांय। नपुंसक होने पर स्त्री को प्रमाण माना जाय। नपुंसक के पेशाब में फेना उठने लगता है और उसका पाखाना पानी में डूब जाता है।

२ प्रकृति—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा अंत्यज इनमें से पिछला पहिले के स्वभाव आदत आदि के विषय में यदि बुरा कहे तो क्रमशः ३ पण से अधिक दंड दिया जाय। यदि पहिला पिछले के विषय में कहे तो जुरमाना २ पण से कम हो। कुब्राह्मण महा ब्राह्मण आदि कहने पर भी ऐसा ही दंड दिया जाय।

३ श्रुत—पढ़ाई विद्वत्ता आदि के विषय में बुरी बात कहने पर भी दंड इसी प्रकार हो।

४ वृत्ति—विदूषक, कारीगर तथा कुशीलव (गवैइये) आदियों की आजीविका (वृत्ति) के विषय में बुरी बात कहने पर भी पूर्ववत् ही दंड दिया जाय।

५ जानपद—प्राणूज्जक गांधार आदि राष्ट्रों की बुराई करने पर भी पूर्ववत् ही दंड का विधान किया जाय।

"तुमको मारूंगा या पीटूंगा" इसढंग पर जो कहे और करे इस अपराध में उसको जितना दंड दिया जाय उसका आधा उस समय दिया जाय जिस समय वह कहे तो सही परन्तु करे नहीं। यदि सामर्थ्य रहित हुआ हुआ कोई किसी पर गुस्सा पागलपना तथा अभिमान दिखावे तो उसपर १२ पण जुरमाना किया जाय। अपकार करने में समर्थ हो करके यदि कोई दुश्मन, किसी को डरावे तो उसपर यह जिम्मेवारी डाली जाय कि वह आजीवन उसकी रक्षा करे।

१ स्वदेश ग्रामादिक के विषय में २ जाति संघ के संबंध में तथा मन्दिर तथा देवताओं के मामले में यदि कोई बुरी बात कहे तो उसको क्रमशः प्रथम साहस, मध्यम साहस तथा उत्तम साहस का दंड दिया जाय।

७३ प्रकरण।

दंड—पारुष्य।

छूना, पीटना, मारना आदि दंड पारुष्य [बे इज्जती तथा मान हानि] नामक अपराध के अन्तर्गत हैं। नाभि से निचले भागपर हांथ, कीचड़, राख तथा मिट्टी डालने से ३ पण,—पैर मारने थूंक फेंकने तथा कीचड़ आदि अपवित्र वस्तु ऊपर फेंकने से ६ पण,—पाखाना पेशाब तथा कै के फेंकने से १२ पण जुरमाना किया जाय। नाभि के ऊपरले भाग पर इसी अपराध में दुगुना और समान हैसियत वाले आदमी के शिरो भाग में एसी बात करने में चौगुना

दंड दिया जाय। बड़ी हैसियत के लोगों के साथ ऐसी बात होने पर दंड दुगुना, छोटी हैसियत वालों के साथ आधा, और पराई स्त्री के साथ दुगुना होना चाहिये। प्रमाद मद तथा मोहादियों से यदि ऐसा अपराध हो तो दंड आधा दिया जाय।

पैर, कपड़ा, हाथ, बाल आदि पकड़ने पर ६ पण, पीटने मरोड़ने तोड़ने खींचने तथा चढ़ बैठने पर साहस दंड और गिरा कर भागने में आधा दंड दिया जाय।

शूद्र जिस अंग से ब्राह्मण को मारे उसका वही अंग काट दिया जावे। गाली देने पर वह मान हानिका धन दे और छूने पर आधा जुरमाना दे। यही नियम चांडाल तथा अछूत लोगों के साथ काम में लाया जावे।

हाथ से पीटने में ३ पण से ६ पणतक, पैर से मारने में दुगुना, सूजन पैदा करने वाली चोट में साहस दंड और घातक चोट में मध्यम दंड दिया जाय।

लकड़ी, लोहा, पत्थर, कोड़ा आदि मारने में खून के न निकलने पर २४ पण और खून निकलने पर दुगुना दंड दिया जाय बशर्ते कि चोट भयंकर न हो।

विना खून निकले ही मार मार कर बेदम करना, हाथ मरोड़ना या तोड़ना, दांत तोड़ना, कान नाक काटना घातक चोट पहुंचाना आदि अपराध में साहस दंड दिया जाय बशर्ते कि भयानक खून न निकलने लगा हो।

हड्डी तथा गर्दन को तोड़ना, आंखें फोड़ना और मुंह परऐसी चोट पहुंचाना कि बोलना तथा खाना कठिन हो जाय—आदि अपराध में मध्यम साहस दंड दिया जाय। अपराधी दवाई आदिका खर्चा भी उसको दे। यदि देश काल अपराधी के पकड़ने में बाधक हो तो कंटकशोधन न्यायालय में उसके अपराध का निर्णय किया जाय।

बहुत से लोगों ने मिलकर यदि किसी एक व्यक्ति को मारा हो तो उनमें से प्रत्येक को दंड दिया जाय। पुराने आचार्यों का मतहै कि पुरानी चोरियों तथा झगड़ों पर अभियोग न चलाया जाय। कौटिल्य की संमत्ति है कि अपराधी को कभी भी न छोड़ना चाहिये

पुराने आचार्य्य कहते हैं कि जो पहिले मुकदमा चलावे वही जिताया जाय क्यों कि उसीने सबसे पहिले तकलीफ का अनुभव कर राज्य नियमों का सहारा लिया। कौटिल्य इसको ठीक नहीं समझता। क्यों कि अपराध का निर्णय पहिले या पीछे आने के स्थान पर साक्षियों की संमत्ति पर ही होना चाहिये। यदि साक्षी न हों तो घात तथा कलह के कारण तथा परिस्थिति के अनुसार निर्णय किया जाय।

पारस्पारिक कलह में द्रव्य के छीन लेनेपर या साधारण तुच्छ पदार्थ के नष्ट करनेपर १० पण और बहुमुल्य पदार्थ के नुक्सान करने पर दुगना दंड तथा वस्त्र, गहना, सोना, संपत्ति तथा पदार्थ के नुक्सान होनेपर साहस दंड दियाजाय।

जो दूसरे के मकान की दीवार को हिलावे उसपर ३ पण और जो उसको तोड़ फाड़ उसपर ६ पण जुरमाना कियाजाय और नुक्सान का प्रतिकार करवाया जाय।

जो किसी के मकान में चोट पंहुचाने वाला पदार्थ फेंके उसको १२ पण और जो ऐसा पदार्थ फेंके जिससे मौत का डरहो उसको साहस दंड दियाजाय। छोटे पशुओंको मारनेपर १ पण या २ पण और खून निकालने वाली चोट पहुंचानेपर दुगना दंड हो। महापशु के विषय में इसीढ़ंग के अपराध करने पर दुगना जुरमाना कियाजाय। और उनका उत्पत्ति व्यय भी ग्रहण कियाजाय।

नगर के पेड़ों तथा फूल फलसे तथा छाया वाले दरख्तों की पत्तियां तोड़ने पर ६ पण, छोटी छोटी टहनियां काटने पर १२ पण, चोरी शाखा काट डालनेपर २४ पण और तना काटने पर प्रथम साहस दंड दियाजाय। पेड़के सर्वथा काट डालने पर मध्यम साहस दंड होना चाहिये। फूल, फल, छायावाले पेड़, झाड़ियां तथा बेलों के नष्ट करने पर आधा दंड दियाजाय पुण्यस्थान, श्मशान तथा तपोबन के पेड़ों के विषय में भी यही नियम समझने चाहियें।

मंदिर, सीमवृक्ष, राजवन, तथा संरक्षित स्थान के पेड़ों के नष्ट करने पर दुगुना दंड दियाजाय।

७४-७५ प्रकरण।

द्यूत समाह्वय तथा प्रकीर्णक।

(क)

द्यूत समाह्वय.

द्यूताध्यक्ष नियतस्थान पर जुआ खेलने का प्रबंध करे। जो नियत स्थान से अन्यत्र जुआ खेलें उनपर १२ पण जुरमाना किया जाय। यह नियम इसीलिये बनाया गया ताकि गुढ़ाजीवी (जो लोग ठगी आदि गुप्त कर्मों से आजीविका करते हों) लोगों का पता मिल सके। प्राचीन आचार्य्यों का मत हैं कि द्यूत-विषयक मुकदमे में विजेता को साहसदंड और "बेवकूफ होते हुए भी दूसरे की जीत को यह सहन नहीं करसकता है" इस अपराध में पराजित को मध्यम दंड दिया जाय। कौटिल्य इस विचार में सहमत न होकर कहते हैं कि इससे तो राजा के पास निर्णय के लिये ही कौन आने लगा? प्रायः कितव लोग (ठग चोर आदि) ही जाली पांसों से जुआ खेलते हैं। द्यूताध्यक्ष शुद्ध कौड़ी तथा पांसों से जुआ खिलाने का प्रबंध करें। जो उनको अपनी कौड़ी तथा पांसे से बदले उसपर १२ पण जुरमाना किया जाय। हाथ की सफाई (कूटकर्म) करने वालों को साहसदंड के साथ साथ बेईमानी तथा चोरी विषयक दंड दियाजाय और उनका जीता हुआ धन जब्त कर लिया जाय। द्यूताध्यक्ष जीते हुए द्रव्य का पांचशतक, कौड़ी पासे का दाम, भूमि तथा जल का किराया और जुआ खेलने की आज्ञा देने का राजस्व ग्रहण करे। प्राप्त द्रव्यों को बेचे या उधार पर दे। यदि वह हाथ भूमि तथा पांसे संबंधी दोष को हटावे तो उसपर दुगुना जुरमाना किया जाय। विद्या तथा शिल्प विषयक खेलों तथा दंगलों को छोड़कर अन्यों में इसी नियम के अनुसार काम होना चाहिये।

(ख)

प्रकीर्णक.

जब कोई मनुष्य, उधार पर मांगे या किराये पर लिये थाती के रूप में दिये या धरोहर (निक्षेप) में रखे द्रव्यों को देशकाल के अनुसार न लौटावे, सवा घंटा से अधिक आराम लेवे या दूसरे स्थान पर चला जावे तथा झूठमूठ ब्राह्मण बनकर छावनी संबंधी या नौका संबंधी किराया तथा राज्यस्व न दे और दूसरों को पड़ोसियों से लड़ावे उसपर १२ पण जुरमाना किया जाय जो प्रतिज्ञात अर्थ को न दे भौजाई को हाथों से पीटे, दूसरे की रखी रंडी के पास जावे, दूसरे के हाथ वेचे माल को खरीदे, बन्द दरवाजे घर को फोड़ कर घुसे चौबीस सामन्तोंके कुल विषयक नियमोंको तोड़े उसपर२४ पण, जो कुल के लोगों से चन्दा वसूल कर इस स्थान में न खर्च करे, स्वतंत्र रहने वाली विधवा के साथ जबरन गमन करे, चाण्डाल होते हुए आर्य स्त्री का संस्पर्श करे, आपत्ति में पड़े समीप वर्त्ती के बचाने के लिये न दौड़े, निष्कारण दूसरे को दौड़ावे, वैश्य वैरागियों, शाक्यों तथा आजीवकों को देवविषयक तथा पितृविषयक कार्य्यों में बुलावे तथा भोजन दे उसपर १०० पण जो राजाज्ञा बिना ही शपथ लेकर लोगों के अपराधों का निर्णय करे, अयोग्य आदमी को राजकीय काम में नियुक्त करे, क्षुद्र पशुओं तथा बैलों का पुंस्त्व अपहरण करे, दासी का गर्भ औषध से गिरावे, उसके साहस दंड दिया जाय । पिता-पुत्र, पति-पत्नी, भाई-बहिन, मामा-भांजा, आचार्य्य-शिष्य इनमें से जो कोई (जात विरादरी में संमिलित होते हुए) अपने स्वार्थ को सिद्ध करने के लिये साथ में लाकर किसी एक दूसरे को गांव के बीच में छोड़ दे उसको साहस दंड और जो जंगल के बीच में छोड़ दे उसको मध्यम दंड दिया जाय। जो इसी उद्देश्य से डरावे और धमकावे उसपर उत्तम दंड का और साथ जाने वालों तथा अन्य समीप वर्तियों पर अर्ध दंड का विधान किया जाय । जो निरपराध पुरुष को कैद में डाले, कैदी के बंधन को तोड़े और नाबालिग बच्चे को बांधे या बंधवावे उसपर १०० पण जुरमाना

किया जाय। अपराधी के अपराध के अनुसार ही दंड का विधान करना चाहिये।

तीर्थ यात्री, तपस्वी, बीमार, भूख प्यास से मांदे, दूर गांव के रहने वाले, राजकीय दंड से तकलीफ उठाने वाले तथा निर्धन लोगों पर अनुग्रह किया जाय। धर्मस्थ नामक राज सेवक देवताओं, ब्राह्मणों, तपस्वियों, बालकों, वृद्धों, बीमारों तथा अनाथों के संपूर्ण कामों को उनके कहने के बिना भी करें। समय स्थान तथा कार्याधिक्य का बहाना इस बात में कभी भी न करे। विद्या,बुद्धि पौरुष, कुल तथा उत्तम कर्म से ही पुरुष पूजनीय समझे जाते हैं।

धर्मस्थ लोग जनता में प्रिय तथा विश्वास पात्र होकर सब के साथ समान रूप से बर्त्ताव करें और छल आदि से रहित होकर राजकीय कार्य्यों का प्रबंध करें।

४ अधिकरण।

कंटक शोधन।

७६ प्रकरण।

कारीगरोंकी रक्षा।

तीन प्रदेष्टा [कमिश्नर] तथा तीन ही अमात्य [मन्त्री] अपराधियों के अपराध का निर्णय करें तथा उनके पकड़ने का प्रबंधकरें। जो लोग आर्थिक कष्टको दूरकरसकें, कारीगरों का शासन करसकें, गिरों रखे धन सुरक्षित रखसकें, नये नये कामों को सोचसकें तथा जिनपर कंपनी का विश्वास हो ऐसे लोग दूसरों के धनको गिरोंरखे। तकलीफ पड़नेपर कंपनी गिरों रखे धन का प्रबंध करे।

कारीगर समय स्थान तथा कार्य को तयकर काम करें। जो लोग न तय करने का बहाना करें तथा काममें देरी लगावें उनका चौथाई वेतन काटलियाजाय तथा उनको दुगुना जुरमाना कियाजाय बशर्तेकि उनपर कोई दैवीविपत्ति न आपड़ी हो। यदि

उनसे कोई चीज़ नष्ट या खोजाये तो वह उसको पूरा करें और यदि वह काम बिगाड़दें तो उनको तनखाह कट जाय और उनपर दुगुना जुरमाना कियाजाय।

(जुलाहे)

जुलाहे १० तथा ११ के अनुपात में दियेहुए सूत को बढ़ावें। यदि वृद्धि कम हो तो उनपर कमी का दुगुना जुरमाना कियाजाय या उनसे सूत का दाम वसूल कियाजाय या उनकी तनखाह कट जाय। सनिया तथा रेशमी कपड़ों में १ $\frac{1}{2}$ गुना, रेशेदार कपड़े कंबल तथा दुशालों में दुगुना, माल के कम होने पर कमी संबंधी जुरमाना वसूल कियाजाय या वेतन का दुगना दंडदियाजाय। तोलमें कमी होनेपर कमीका चारगुना और सूतके बदलनेपर कीमत का दुगना दंड देना चाहिये। थानों के विषयमें भी यहीनियम है।

[धोबी]

ऊनी कपड़ों का भार तथा रोयां धुलाने पर ५ पल कम हो जाता है। धोबी लकड़ी के फट्टे पर या चिकने पत्थरों पर ही कपड़े फटकें तथा सफाकरें। अन्यत्र धोने पर यदि कपड़ा फट जाय तो उन पर छ पण जुरमाना किया जाय। यदि कोई धोबी मुद्गर के चिन्ह से रहित अन्य किसी प्रकार के कपड़े को पहिने तो उसपर ३ पण जुरमाना किया जाय। जो धोबी दूसरे के कपड़े को बेचे, किराये पर दे या गिरों रखे उसको १२ पण दंड दिया जाय। यदि वह कपड़ा बदलदे तो कपड़े के दामका दुगना धन तथा कपड़ा उससे वसूल कियाजाय। शिलापर सफेदहोने वाले, स्त्री के योग्य कपड़े को एकरात तक, हलके रंगवाले कपड़े को पांचरात तक, नील कपड़े को ६ राततक, फूललाख तथा मंजीठ के रंगसे रंगे तथा महनत से साफ होनेवाले चमेली के सूतके बने कपड़े को सात राततक धोकर देदे। यदि वह इससे अधिक देरीकरे तो उसका महनताना काट लियाजाय।

श्रद्धेय [प्रमाणिक लोग] तथा कुशल लोग झगड़ा होनेपर वेतन का निश्चय करें। बहुत बढ़िया कपड़ों का वेतन १ पण, मध्यम कपड़ों का $\frac{1}{2}$ पण निकृष्ट कपड़ों का $\frac{1}{4}$ पण और मोटे कपड़ों का

१ माससे २ मास है । रंगीन कपड़ों का इससे दुगना वेतन हैं । पहिली धुलाईमें कपड़े का $\frac{1}{4}$ भाग, दूसरी धुलाई में $\frac{1}{5}$ भाग और इसीसे अगली धुलाई में कुछ कुछ भाग घिसजाता हैं । धोबियों के सदृश ही जुलाहों का मेहनताना है ।

(सुनार)

अशुचि हस्त (कारीगर लोग) लोगों के हाथ से यदि सुनार सरकार को सूचना दिये बिना ही सोने का बना गहना खरीदें तो उन पर १२ पण, बिगड़ा टूटाफूटा गहना खरीदें तो २४ पण, चोर के हाथ से खरीदें तो ४८ पण, जुरमाना किया जाय । यदि वह ऊपर से अच्छा और अंदर से खराब सोने का गहना कम दाम पर खरीदें तो उनको चोरी विषयक दंडदिया जाय।मालके बदलनेपर भी इसी प्रकार का दंड होना चाहिये । सोने में से एक मासा चुराने पर २०० पण, और चांदी के धरण में से १मासा चुराने पर १२ पण, दंड दिया जाय । जादा दाम की चोरी में इसी प्रकार दंड की मात्रा बढ़ा देना चाहिये । सोने चुराने तथा नकली रंग देने का जो उपाय करे या जो सचमुच उस में दूसरी धातु मिलादे तथा रंगत नष्टकरदे उस पर ५०० पण, जुरमाना किया जाय । चांदी के एक धरण की बनवाई १ माषक और सोने की बनवाई $\frac{1}{8}$ भाग है । जिस काम में जादा कारीगरी हो उस में मेहनताना दुगुना होना चाहिये । इसी प्रकार अन्य बातों में नियम है ।

ताम्बा कांसा कच्चा हीरा तथा पीतल की बनवाई ५ सैंकड़ा है । बनाते समय तांवा का दसवां भाग नष्ट हो जाता है । यदि एक पल कमी पड़ती हो तो उसका दुगुना उसपर जुरमाना कियाजाय । इसी प्रकार अन्य धातुओं के बनवाने के नियम है । जस्ता तथा रांगा का बीसवां भाग नष्ट होता है । इसके एक पल का मेहनताना एक काकिणी है । इसी प्रकार अन्य नियम हैं ।

यदि रूप दर्शक (सिक्कों का निरीक्षक) असली सिक्कों को नकली कह कर भ्रमण से रोके या नकली तथा जाली सिक्कों को असली कहकर प्रचलित करे तो उस पर १२ पण जुरमाना किया जाय । इसी प्रकार अन्य नियम समझने चाहिये । जो लोग जाली

सिक्के बनवावें, ग्रहण करें तथा लेन देन में चलावें उनपर १००० पण जुरमाना किया जाय। जो ऐसे सिक्कों को खजाने में पहुंचावें उनको फांसी का दंड दिया जाय। धोने तथा कूड़ा सफा करने वालों को यदि कोई बहुमूल्य पदार्थ मिले तो उनको उसका $\frac{1}{3}$ भाग मिले। शेष $\frac{2}{3}$ भाग तथा रत्न राजा ग्रहण करे। जो नौकर रत्न को चुरावे उसको उत्तम दंड दिया जाय।

जो लोग राजाको रत्नकी खान तथा गड़े खजाने का पता दें उन को उसका छठा भाग मिले। यदि वह सरकारी नौकर है तो उस को बारहवां भाग दिया जाय। एक हजार से ऊपर संपत्ति का गड़ा खजाना राजा की मलकीयत है। या उसमें धन इससे कम हो तो छठा भाग पता देने वाले को राजा दे।

यदि कोई स्वदेश का विश्वस्त आदमी किसी गड़े खजाने को अपने पूर्वजों की मलकीयत सिद्ध करदे तो वह उसी की संपत्ति हो जाय। यदि वह ऐसा सिद्ध किये विना ही अपने काम में ले आवे तो उस पर ५०० पण और छिपाकर ऐसा काम करने पर १००० पण जुरमाना किया जाय।

(वैद्य)

सरकार को सूचना दिये विना ही वैद्य लोग यदि ऐसे बीमार का इलाज करने लगें जिस की मृत्यु की संभावना हो और वह इलाज करते हुए मर भी जाय तो उन को प्रथम साहस दंड दिया जाय। यदि मृत्यु का कारण इलाज करने में भूल हो तो मध्यम दंड दिया जाय। प्रमाद से यदि रोग बढ़ गया हो तो उनको दंड पारुष्य विषयक अपराध में अपराधी समझा जाय।

(गवैइये बजैइये)

गवैइये बरसात के दिनों में एक ही स्थान पर रहें। वह किसी को भी अत्यंत अधिक भोगविलास में लीन न करें तथा किसी के भी काम का नुकसान न करें। जो इस नियम का उल्लंघन करें उन पर १२ पण जुरमाना किया जाय। देश, जाति, गोत्र, पेशा तथा मैथुन के अनुसार यह लोग स्वतंत्रता पूर्वक अपना काम करें। बजैइये नाचने वाले तथा भिखमंगे लोगों के संबंध में

भी यही नियम है। अपराध करने पर इन लोगों पर जितने पणों का जुरमाना हो उतने ही लोहे डंडे इन पर पड़ें। इसी ढंगके कामों को करने वाले कारीगरों की तनखाहें तथा मेहनताने भी नियत किये जांय।

चोर होते हुए भी शाह बनने वाले बनिये कारीगर गवैइये भिखमंगे बहुरुपिये आदि लोगों को राष्ट्र को पीडित करने से रोका जाय।

७७ प्रकरण

व्यापारियों की रक्षा।

व्यापाराध्यक्ष [संस्थाध्यक्ष] निश्चित स्वाम्य या स्वाम्यविशुद्ध [जिसका कोईभी मालिक न हो] पुरानी चीजों का दूकान में [पण्य संस्था] बेचने या गिरों रखने का प्रबंध करे। डंडीदारों की बेईमानी से प्रजाको बचाने के लिये तराजू तथा बट्टेका निरीक्षण करे। परिभाणी या द्रोणभर पदार्थ के तोलने में यदि आधापल कम होजाय तो कुछभी दोष नहीं है। यदि इससे अधिक कमी हो तो १२ पण जुरमाना कियाजाय। जितने पल तोलमें कमहो उसीके अनुसार दंड बढ़ादिया जाय। तराजू में एक कर्ष भर की कमी दोष नहीं है। दो कर्ष से अधिक कमी होने पर ६ पण दंड हो। कर्ष की कमी के अनुसार क्रमशः दंड बढ़ाया जाय। अढ़इये में आधे कर्ष की कमी दोषनहीं है। इससे अधिक कमी होनेपर ३ पण और क्रमशः ज्यों ज्यों कमी अधिक हो त्यों त्यों दंड बढ़ाया जाय। अन्य प्रकार की तराजू तथा बट्टों के विषय में भी यही नियम समझना चाहिये। तथा बट्टे से अधिक खरीद कर कम बेचने वाले पर दुगना जुरमाना करना चाहिये। गिनकर बेचने वाले पदार्थों का आठवां भाग कम देने पर ९६ पण दंड दियाजाय। एकस्थान के पैदाहुए काठ, लोहा, मणि रस्सी, चाम, भट्टी, सूत, रेशा तथा ऊनके पदार्थों को दूसरे स्थानके नामपर बेचने वाले मूल्य का ८ गुना जुरमाना कियाजाय। सार पदार्थों को असार

पदार्थ, एक स्थान के पदार्थ को दूसरे स्थानका, मिलावटी मालको अच्छा, खराब को ठीक और बदले में लिये पदार्थ को अपना कहकर कमदाम पर बेचने वालेको ५४ पण दंड दियाजाय। पण के मूल्य पर दुगना और दो पण के मूल्य पर २०० पण दंड हो। ज्यों ज्यों माल कीमती हो त्यों त्यों दंड बढ़ाया जाय। जो लोग कारीगरों तथा शिल्पियों की मिश्रितपूंजी कंपनी के काम, आमदनी, विक्रय तथा क्रय को नुक्सान पहुंचावे उनपर १०० पण जुरमाना कियाजाय। यदि व्यापारी आपस में मिलकर पदार्थों का बिकना रोकें या उनको अधिक दामपर बेंचें तो उनपर १००० पण दंड का विधान कियाजाय। घटक [डंडादार] या मापक [मापने वाला] हाथ की चालाकी से तराजू बट्टे कीमत तथा मालमें पण मूल्य का आठवांभाग कम करें तो उनपर २०० पण दंड और इसी प्रकार पण की कमी के बढ़नेके अनुसार दंड बढ़ायाजाय। धान स्नेह खार नमक गंध तथा औषधियों के समान रंगरूप की चीज़ से बदल देनेपर १२ पण दंड दियाजाय। जो लोग दैनिक वेतन लेकर कामकरें उनके दिनका काम देखकर बनिया उनको वेतनदे। क्रेता तथा विक्रेता से भिन्न लाभ दलाली कहाता है। दलाली लेकर राजकीय आज्ञाके अनुसार धान्य तथा पण्य [बजारीमाल] का विक्रय बनिये लोग करें। जो लोग विना आज्ञाके क्रय विक्रय करें उनकी अनाज की ढेरी को जब्तकर लिया जाय। प्रजा का ख्याल रखकर अनाज तथा आवश्यकीय पदार्थों का विक्रय किया जाय।

नियत दाम के ऊपर जो सरकारी आज्ञा से स्वदेशी माल बेचे उसपर ५ सैकड़ा इंकमटैक्स [आजीव] और जो विदेशी माल बेचे उसपर १० सैकड़ा इंकम टैक्स लगाया जाय। इसके अनन्तर जो कीमत को बढ़ावे उसपर १०० पण के माल के खरीद फरोख्त पर ५ पण और इसी प्रकार अधिक दाम के माल पर २०० पणतक जुरमाना कियाजाय। कीमत के बढ़ने के अनुसार ही दंड के बढ़ने का नियम है। एक दामपर यदि इकट्ठा माल न बिके तो दूसरा दाम नियत कियाजाय। यदि माल का नुक्सान होजाय तो राजा बनियों पर अपना अनुग्रह रखे। पण्य के प्रचुर होनेपर पण्याध्यक्ष संपूर्ण पण्य को एक दामपर बेचे। जब तक सरकारी माल न बिकजाय

तबतक दूसरे लोग अपना माल न बेचने पावें। प्रजाकी प्रसन्नता के अनुसार राजा दैनिक वेतन देकर बनियों के द्वारा अपना माल बिकवावे। देर के रखे तथा दूरदेश से आयेहुए मालके विषय में।-

व्यापाराध्यक्ष—प्रक्षेप [पूंजी], पदार्थ की राशि, चुंगी, व्याज, फुट्टकरकीमत, तथा अन्य प्रकारके खर्चों का अनुमान कर उनकी कीमत नियत करे।

७८ प्रकरण।

दैवी विपत्तियों का उपाय।

१ आग २ पानी ३ बीमारी ४ दुर्भिक्ष ५ चूहा ६ शेर ७ सांप तथा राक्षस यह आठ प्रकार के दैवी भयंकर खतेर हैं। इनसे जनपद की रक्षा की जाय।

१ आग। गरमी के दिनों में ग्रामीण लोग घर से बाहर सोवें। दश मूली [घड़ा सीढ़ी रस्सी आदि १० चीजें] का संग्रह घरमें रखें। नागरिकों का कर्तव्य, अन्तः पुर का प्रबंध तथा राज परिग्रह नामक प्रकरण में आग से बचने के उपाय प्रगट किये जा चुके हैं। प्रति पर्व में बलि, होम, स्वस्तिवाचन के द्वारा अग्नि की पूजा की जाय।

२. पानी। नदी के किनारे के गांव वर्षा की रातों में किनारे से दूर रह कर सोवें। लकड़ी तथा बांस की नावें सादा अपने पास रखें। तूंबा, मषक, नाव, तमेड़, तथा बेड़े के द्वारा डूबते हुए लोगों को बचावें जो लोग डूबते हुए मनुष्य को बचाने के लिये न दौड़ें उनपर १२ पण जुरमाना किया जाय बशर्ते कि उनके पास नाव आदि तैरने का साधन न हो। पर्वों में नदी की पूजा की जाय। माया वेद तथा योग विद्या को जानने वाले वृष्ठि के बिरुद्ध उपाय करें। वृष्टि के रुकने पर इन्द्र, गंगा पर्वत तथा महा कच्छ की पूजा की जाय।

३. व्याधि। चौदहवें अधिकरण [औपनिषदिक] में विधान किये गये तरीकों के द्वारा बीमारी के भय को कम किया जाय। यही बात वैद्य लोग दवाइयों से और सिद्ध तथा तपस्वी लोग शान्ति मय

साधन तथा प्रायश्चित्तों के द्वारा करें फैलने वाली बीमारी [मरक] के संबंध में भी यही तरीके काम में लाये जांय । तीर्थों में नहाना, महा कच्छ का बढ़ाना, गउओं का श्मशान में दुहना, मुर्दे का धड़ जलाना तथा देवताओं के उपलक्ष में रात भर जागना आदि काम किये जांय । पशुओं की बीमारी के फैलने पर परिवार के देवताओं की पूजा तथा पशुओं के ऊपर से धूप बत्ती उतारी जाय ।

४. दुर्भिक्ष दुर्भिक्ष के समय में राजा अनाज तथा बीज कम कीमत पर बांटे । लोगों को इधर उधर देशमें भेजदे । नये नये कठिन कामों को शुरू करे और लोगों को भोजनाछादन दे । मित्र राष्ट्रों का सहारा ले । अमीरों पर टैक्स बढ़ावें तथा उनका इकट्ठा किया हुआ धन निकाल ले । जिस देश में फसल अच्छी हो उसमें अपनी प्रजा को लेकर चला जावे । नदी के किनारे धान शाक मूल तथा फलों की खेती करवावे । मृग पशु पक्षि शिकारी जन्तु तथा मच्छियों का शिकार शुरू करे ।

५. चूहा । चूहों के उत्पात होने पर बिल्ली तथा न्युअलों को छोड़े । जो लोग पकड़ कर चूहों को मारें उनपर १२ पण जुरमाना किया जाय । जो लोग जंगली जानवरों के न होते हुए भी बिना कारण ही कुत्तों को छोड़ रखें उनपर भी पूर्व वत् दंड का विधान किया जाय । थोड़ के दूध में धान को सान कर खेतमें छोड़ । एन्द्रिजालिक तरीकों को काम में लावे तथा चूहे के संबंध में राज्य कर लगावे । सिद्ध तथा तपस्वी लोग शान्ति मय उपायों को करें । पर्वों में मूषिक पूजा की जाय । टिड्डीदल, पक्षी, कीड़े आदिके उत्पातों का उपाय भी इसी प्रकार किया जाय ।

६. हिंसकजंतु । हिंसक जन्तुओं का खतरा होनेपर मैनफल के रसमें डुबाकर मरेहुए पशुओं को या उनके पेटमें मैनफल तथा कोदों का धान भरकर उनको जंगल में फेंकदियाजाय । लुब्धक [शिकारी तथा व्याध] तथा शिकारी लोग [श्वगणी] स्थान स्थानपर गढ़्ठों को बनाकर जाल लेकर घूमते फिरें । सिपाही लोग हथियार तथा कवच धारणकर शेरों को मारें । यदि कोई शेरके आक्रमण होने पर किसीको बचाने का उद्योग न करे तो उसपर

१० पण जुरमाना किया जाय। शेर को मारने वाले को यही रकम इनाम में मिलनी चाहिये। पर्वों में पर्वत की पूजा कीजाय। मृग तथा पक्षियों का संघ तथा मगर मच्छ का भी इसी प्रकार उपाय करना चाहिये।

७. सांप। जड़ी बूटी जानने वाले मन्त्र तथा दवाईसे सांपों का प्रतीकार करें। सबलोग आपस में मिलकर सांपों को मारें। अथर्व वेद जानने वाले सांपों के नाश का मन्त्रादि पढ़ें। पर्वों में सांप की पूजा कीजाय। जलजंतु के खतरों का उपाय भी इसी प्रकार है।

८. राक्षस। राक्षसों का भय होने पर मायावी, योगी तथा अथर्व वेदज्ञ राक्षसों के नाश का उपाय करें। पर्वों में चैत्यों पर छाता, हाथ का चित्र, झंडी तथा भेड़ का मांस चढ़ाकर पूजा की जाय। "हम आप को यह देते हैं" (वश्रराम) यह कह कर रात तथा दिन में रक्षिसों को शांत करने का यत्न किया जाय। राजा का कर्त्तव्य है कि जो लोग तकलीफ में हों-उनपर अनुग्रह पिताके तुल्य करे।

राजा को चाहिये कि अपने देश में दैवी विपत्ति को दूर करने में समर्थ मायावी, योगी, सिद्ध तथा तपस्वी लोगों को विशेष आदर सत्कार कर बसावे।

७९ प्रकरण।

गूढ़ा जीवियों की रक्षा

"जन पद की रक्षा कैसे की जाय" इस विषय में समाहर्त प्रणिधि प्रकरण में प्रकाश डाला जा चुका है। उसमें से राज्यापराधी दुष्ट लोगों का संशोधन कैसे किया जाय "इसपर अब प्रकाश डालाजाय।

समाहर्ता गांवों में—सिद्ध, तपस्वी, वैरागी, चक्रसर [षड्यंत्र रचने वाले] चारण, भांड गुप्त जीवन व्यतीत करने वाले, ज्योतिषी मुहूर्त देखने वाले, चिकित्सक, उन्मत्त, गूंगे, बहरे, जड़, अंधे, व्यापारी, कारीगर, गवैइये, कलवार, हलवाई आदि के भेस में खु·

फिया लोगों को नियुक्त करे। वे ग्राम तथा उनके अध्यक्षों की ईमानदारी तथा बेईमानी की परीक्षा करें । जिस मनुष्य के चरित्र पर उनका संदेह हो उसके पीछे उसीढंग का मनुष्य लगादें। खुफिया जज या प्रदेष्टा [कमिश्नर] से कहे कि "हामारा यह बन्धु अमुक राज्यापराध में फंसा है। वह धनकी अमुक राशि देने के लिये तयार है"। यदि वह धन ग्रहण करें तो उनको "घूसखोर" [उपदाग्राहक] कर देश निकाला देदिया जाय। प्रदेष्टा के विषय में भी इसी तरीके को काम में लाना चाहिये ।

खुफिया ग्रामकूट या ग्राम के अध्यक्ष को कहे कि "अमुक क्रूर अमीर पुरुष के पास बहुत धन है। आज कल वह ऐसी तकलीफ में है। चलो उसको लूट लें"। यदि वह सच मुच ऐसा करें तो उसको "लूटेरा" [उत्कोचक] कहकर देश निकाला देदिया जाय। इसी प्रकार एक दूसरा खुफिया नकली तौर पर मुकदमे में अपने आपको फंसाकर बहुत सा रुपया देने की बात कहकर झूठ साक्षी इकट्ठा करना शुरू करे। यदि वह गवाही देने के लिये तय्यार हो जाय तो उनको "झूठा गवाह" कह कर देश निकाला दे दियाजाय। झूठ शर्तनामे करने वालों को भी इसी प्रकार दंड दिया जाय।

मन्त्र, योग, तथा अन्य कर्म करने वाले, जिन तान्त्रिकों या अघोरियों (श्मशानिक) को 'जालीमंत्र' करने वाला समझे तो उनके पास जाकर खुफिया कहे कि "अमुक की स्त्री बहु या लड़की को हम चाहते हैं। वह भी हम को चाहने लगे । यह रुपया लीजिये" यदि वह वैसा ही करे तो उसको 'तान्त्रिक' (संवनन कारक) कहकर देश से बाहर निकाल दिया जाय । जो लोग दूसरे को नुकसान पहुंचाने वाले तांत्रिक काम करें उनको भी यही दंड मिले।

जो लोग जहर खरीदें, या दूसरों को जहरों का पता दें उनको दवाई या जहर बेचने वाला समझकर खुफिया कहे कि 'अमुक आदमी मेरा दुश्मन है। आप यह रुपया लीजिये और उसको मार डालिये"। यदि वह सचमुच ऐसा काम करे तो उसको "ज़हर देने वाला" कहकर देश से बाहर निकाल दिया जाय। मदन नामक

जड़ी बूटी से दवाई तैय्यार करने वाले लोगों के साथ भी इसीढंग का बर्त्ताव किया जाय।

जिसको नाना प्रकार के लोहे के खार, कोयला, भस्त्रा (जिस से हवा दी जाय), संदंसी, मूषिका, अधिकरणी, विटंक मूषा आदि खरीदते हुए देखे, मूसी तथा राख से जिसके हाथ पर तथा कपड़े लत्ते मैले मालूम पड़ें तथा जिसके पास कारीगरी के संपूर्ण उपकरण मौजूद हों उसको जाली सिक्का बनाने वाला मानकर सत्री हर रोज उसके साथ मिलना जुलना शुरू करे और धीरे धीरे उसका शिष्य बनकर राजा को सूचित करे। राजा 'जाली सिक्का बनाने वाला' पकड़ा गया यह कहकर उसको देश निकाला देदे।

सोने में मिलावट करने वालों तथा जाली सोना बनाने वालों के साथ भी इसी ढंग का व्यवहार करना चाहिये।

पाप कर्म से आजीविका करने वाले तथा देश की शान्ति को भंग करने वाले अपराधी तेरह प्रकार के होते हैं। उनको या तो देश निकाला देदिया जाय या उन से उचित निष्क्रय ग्रहण किया जाय।

८० प्रकरण।

सिद्धके भेसमे बदमाशों का पकड़ना।

सत्रि लोगों से सहायता प्राप्तकर खुफिया लोग माणव विद्याओं (डाके चोरी के लिये उत्यंत उपयोगी विद्याओं) से बदमाशों को प्रलोभन दें और प्रस्थापन [शीघ्र दौड़ना] अन्तर्धान [अन्तर्धानहोना] तथा द्वारापोह [दरवाजों को अपने आप खुलवादेना] आदि मन्त्र से डाकुओं और [तान्त्रिक मन्त्रों] से व्यभिचारियों को काबू में करे उनको भयंकर काम के करनेके लिये उभाड़े तथा एकबड़े समूह के साथ किसी एक गांव को लक्ष्यकर रात्रीमें प्रस्थान करें और बीचमें पड़े किसी एक ऐसे गांव में ठहरें जहां पूर्वसे ही स्त्री पुरुष के भेस में खुफिया लोग रहते हों। ऐसे गांव में पहुंचने के बाद उनको कहें कि "हमारे मंत्र तथा विद्याका प्रभाव यहां परही

देखलो । दूसरे गांव तक जाना अभी कठिन है।' इसके बाद द्वारापोह मंत्र [वहमंत्र जिसके जोरपर बंद दरवाजे खुलजांय] से दरवाजे खुलवादें और उनको मकान में घुसनेके लिये कहें। इसी प्रकार अंतर्धान मंत्र से जागते हुए पहरेदारों के बीचमें से बदमाशों को निकाल दें और प्रस्वापन मंत्र से उनको सुलाकर उनकी खट्यापरसे बदमाशों को गुजरवावें तथा संवनन मंत्रसे दूसरे की औरत के भेसमें खुफिया औरतों के पास लेजावें । अपनी विद्याओं तथा मंत्रों का प्रभाव दिखाकर उनको स्वयं यही काम करने के लिये आगे बढ़ावें। पहिले से ही नियत कियेहुए मकान या पदार्थ के विषयमें उनको कुछकाम सुपुर्द करें और जब वह मकान में घुसजावेंतो उनको पकड़वादें या उसपदार्थ को खरीदें बेचें या गिरों रखें तो उनको शराब पिलाकर पकड़वादें और पकड़ने के बाद उनके पूर्वकार्यों तथा सहायकों का पता लें।

(खुफिया लोग) पुराने चोरके भेसमें चोरों के साथ मिलकर काम करें और मौका पड़ने पर उनको पकड़वादें। जब समाहर्ता के सामने वह पकड़कर लाये जांयतो वह पौर तथा ग्रामीणों को यह दिखावे कि राजा को चोर पकड़ने की विद्याका बहुत अच्छा ज्ञान है। पुनः तुम पकड़े जाओगे यदि एसाकाम करोगे तुम अपने साथियों को रोकदो कि वह आगेसे एसाकाम न करें । खुफिया लोग जिनको खुरफा कोड़ा रस्सी आदि कृषि विषयक उपकरणों का चुरानेवाला प्रगटकरें उनको सूचित कियाजाय कि "तुम ने यह चोरीकी है। यह राजा का ही प्रभावहै जिससे हमको तुह्मारी चोरी का पता लगगया।"

पुराने चोर ग्वालेव्याध तथा शिकारी [श्वगणी] जंगली चोरों तथा जांगलिकों से मिलजांय तथा उनको ऐसे ग्रामपर छापा मारने के लिये कहें जहां पर ऐसे व्यापारियों का संघ रहता हो-जिसके पास जाली सोना तथा जांगलिक द्रव्य बहुत ही अधिक हों। यदि वह छापा मारें तो उनको गांवमें पहिले से ही छिपाई हुई सेना या मैनफल के रसमें पके भोजन के द्वारा मरवादे या उनको

पकड़वादे जयकिवह और सहित दूरसे आनेके कारण थककर या योग सुरा पीकर नावमें सोगये हों।

समाहर्ता नगर निवासियों के बीचमें से इनको घुमावें तथा राजा की सर्वज्ञता पूर्ववत् प्रगट करे।

८१ प्रकरण।

शंका—रूप तथा कर्म के अनुसार पकड़ना।

खुफिया पुलिस के प्रयोग के बाद उन लोगों को पकड़ा जाय जो कि शंकास्पद हों या खोई हुई चीज को चुराने या उठाने वाले हों या ऐसा ही काम करने वाले हों।

(क)

शंकास्पद पुरुषों का पकड़ना।

वह सब के सब पुरुष शंकास्पद हैं जिनकी पुरानी जायदाद क्रमशः क्षीण होरही हो या होगई हो, जो कि देश नाम जाति गोत्र तथा काम का ठीक ठीक पता न देते हों, जो कि सब काम छिपे रूप से करते हों, मांस शराब माला, इतर कपड़ा गहना आदि में विशेष शौक रखते हों, फजूल खर्च हों, कुट्टनी, जुआरी तथा कलवार से विशेष संबंध रखते हों, बारंबार बाहर जाते हों, जिनके स्थान गमन तथा पराय का किसी को भी पता न हो, जो कि जंगल तथा पहाड़ में अकेले घूमते हों, रहने के स्थान के पास या दूर गुप्त सभायें करते हों, ताजे घावों का गुप्त रूप से इलाज करते हों, घर से बाहर न निकलते हों, या जंगल में ही रहते हों, दूसरों की स्त्री संपत्ति तथा मकान के विषय में बारंबार पूंछते हों, कुत्सित काम शास्त्र, तथा साधनों को पास रखते हों रात में दीवारों के तले अंधेरे अंधेरे में घूमते हों, भिन्न भिन्न प्रकार के पदार्थों को संदिग्ध स्थान तथा समय में बेचते हों, जो कि बदला लेने वाले तथा खराब काम करने वाले हों, भेस तथा शकल बदलते रहते हों, नये रीति रिवाज को काम में लाते हों, जिनका आचार तथा रहन सहन सबसे भिन्न हो, जो कि पहिले भी पकड़े जा चुके हों,

जो कि सरकारी काम करते हुए महामात्र के सामने आने से हिचकते हों, भागने की कोशिश करते हों या जिनका श्वास पर श्वास चलने लगता हो, मुंह सूख गया हो तथा आवाज बदल गई हो, जो सदा हथियारबंद आदमियों के साथ निकलता हो, और जिसको देखकर दूसरे लोग डरते हों। ऐसे आदमियों को घातक या चोर या धन गबन करने वाला या बदमाश समझ कर पकड़ लेना चाहिये।

(ख)

खोई हुई चीज़ का ग्रहण करना।

खोई हुई या चुराई हुई या नष्ट हुई चीज़ के विषय में [उसी चीज़ के] व्यापारियों को सूचना दी जाय। यदि व्यापारी उस चीज़ को प्राप्त कर छिपा लें तो 'गबन' करने के अपराध में पकड़े जांय। यदि उन्होंने अनजान में यह किया हो तो उनको छोड़ दिया जाय। कोई भी मनुष्य पुराने माल को संस्थाध्यक्ष को सूचना दिये बिना न बेचे और न गिरों रखे। यदि कोई व्यापारी खोये हुए माल को पाजाय तो वह लाने वाले से पूछे कि यह चीज़ तुमने कहां पाई। यदि वह कहे कि अमुक चीज़ हमको बाप दादा से या अमुक व्यक्ति से मिली या मैंने खरीदी, या बनवाई या मैं इसके विषय में बताना नहीं चाहता हूं [क्योंकि इसको गुप्त रखने के लिये दूसरे ने कहा है], इसकी प्राप्ति अमुक स्थान तथा अमुक समय है, इसका असली दाम तथा बाजारी दाम यह है तो उसको छोड़ दिया जाय।

यदि कोई नष्ट हुई हुई चीज मिल जाय तो वह उसीकी संपत्ति हो जिसने उसका देरतक उपभोग किया हो या जो कि बहुत ही पवित्र आचरण का हो।

चौपाये भी प्रायः एक समान देखे गये हैं। एक ही कारीगर तथा यंत्र से बनाये हुए माल के विषय में तो कहना ही क्या है? यही कारण है कि यदि वह [नष्ट माल प्राप्त क०] यह कहे कि "अमुक व्यक्ति से यह चीज़ मांगी, खरीदी, गिरों रखी, थाती रखी या फुट्टकर में मोल लीगई है। और साथ ही उसकी प्राप्ति किन किन हालतों में हुई इसका ठीक ठीक वर्णन करे तो उसको छोड़

दिया जाय बशर्ते कि वह यह सिद्ध करदे कि उसका इस मामले में कोई हाथ न था।

पुराने माल की चोरी [रूपाभिग्रह] में जो पकड़ा जाय वह यदि यह कहे कि अमुक ने मुझको इस कारण यह पदार्थ दान में दिया, और मैंने इस कारण ग्रहण किया तो वह देने तथा दिलाने वाले के साथ साथ निबंधक [मामला तय करने वाले] अतिग्राहक (दिलाने वाला), उपदेष्टा(सलाह देने वाला) तथा उपश्रोता (गवाह) को पेश करे। यदि किसी को फेंका हुआ, खोया हुआ तथा गिरा हुआ पदार्थ मिले तो वह यदि उसके मिलने का समय स्थान तथा अन्य चिन्ह ठीक ठीक बता दे तो वह छोड़ दिया जाय। यदि वह झूठा साबित हो तो उसको उतना ही दंड मिले या उसको चोरी का दंड दिया जाय।

[ग]

पाप कर्म करते हुए पकड़ना।

जो मनुष्य एस मकान में, जिसमें कि चोरी होगयी है अनुचित स्थान से घुसे या बाहर निकले, ओजार [संधि या बीज] से दरवाजा तोड़, खब सूरत मकान की खिड़की या जाली नष्ट कर, उतरने या चढ़ने के लिये छत फाड़, गड़े धनको चुल्पे से निकाल ले जाने का उपाय करे, या एसी बात करे जिसका संबंध घरके लोगों के साथ हो तो इसमें घर के अन्दर के किसी न किसी आदमी का हाथ समझना चाहिये। इससे उल्टी हालत में बाहरी आदमी का और बीचक मामले में दोनों ओर का संबंध अनुमान करना चाहिये। अंदुरूनी मामले में उन लोगों से पूछ ताछ की जाय जो कि सदा घर में रहते हों तथा कष्ट में हों, जिनके सहायक क्रूर लोगहों तथा जिनके पास चोरी के उपकरण हों, जो कि घरका काम करते हों यदि वह स्त्री हो तो दूसरे में फंसी हो या गरीब घरकी हो, जिनको स्वप्न बहुत आते हो जो कि घबड़ाये हुए हों, जिनको नींद आती हो, जिनका गला सूख गया हो आवाज बदल गई हो रंग फक हो गया हो, ऊंचे चढ़ने से शरीर टूट रहा

हो, कपड़ा लत्ता फटा हो, हाथ पैर खुरचगया हो, बाल नख आदि मट्टी से लथ पथ हो या टूट गया हो तथा शरीर तेल से चुपड़ाहो, जो कि बहुत ही अधिक प्रलाप करते तथा अभी नहाये हों, जिन्हों ने अभी हाथ पैर धोया हो, जिनके मट्टी तथा कीचड़ पर पैरों के निशान पड़े हों और धरमें घुसने तथा वहां से बाहर निकलते समय जिन की माला फुटेरी कपड़ा आदि छूटगया हो। दूसरे की औरत में फंसे [पारदारिक] नागरिक का भी इन्हीं चिन्हों से पता लगाया जाय।

प्रदेष्टा गोप तथा स्थानिकों के सहारे बाहरी चोरों को और नागरक दुर्ग के अन्दर चोरी करने वालों को उपरिलिखित चिन्हों से ढूंडे।

८२ प्रकरण।

आशु मृतक परीक्षा।

तैल में डुबाये हुए मुर्दे (आशु मृतक) की परीक्षा कीजाय। जिसका पाखाना पेशाब निकल गया हो, पेट में हवा भरी हो, हाथ पैर ठंडे पड़ गये हों, आंखें खुली हों तथा गले में निशान हो उस को उच्छ्वासहत, (गला घोट कर मारा गया), जिसका हाथ पैर सुकड़ा हो उसको उद्बन्धहत (बांध कर मारा गया) जिसका हाथ पैर तथा पेट फूल गया हो आंखें पथरा गई हों, तथा नाभी आगे निकल पड़ीहो उसको अवरोपित, [फांसी देकर] जिसका नेत्र तथा गुदा सखत पड़गया हो, जीभ करी हो और पेट फूल गया हो उसको उदकहत [डूबकरमरा] जिसका शरीर खून से लथपथ हो, स्थान स्थान पर फट गया हो उसको काष्टहत या रश्मिहत (लकड़ी या कोड़े से मारा गया), जिसका शरीर जगह २ से फूट गया हो उसको विक्षिप्त (पागल), जिसका पैर हाथ दांत

नख नीला पड़ गया हो, मांस रोयां चर्म ढीला पड़ गया हो तथा मुंह से फेन निकल रहा हो उसको विषहत, यदि उसके किसी स्थान पर खून निकल रहा हो तो उसको सर्पकीटहत (सांप या जहरीले कीड़े से काटा), जिसका शरीर तथा कपड़ा इधर उधर बिखराहो, बहुत अधिक कै पड़ी हो उसको मदनयोगहत (मैन फल से बनाये हुए रासायणिक से मारा) और जिसका कोई भी चिन्ह न मिलता हो उसको राजयदंड के भय से फांसी लगा कर आत्महत्या करने वाला समझा जाय।

जो विष से मरा हो उसके पेट या हृदय से अनाज निकाल कर चिड़ियों के द्वारा उसकी परीक्षा की जाय। यदि उसको आग में डाला जाय तो इन्द्र धनुष के रंग का धुंआं तथा चिड़ चिड़ की आवाज उत्पन्न होजाय।

मुर्दे के जलाने के बाद जब उसका हृदय जलने से बचगया हो तो उसके नौकरों से पूछा जाय कि अमुक मरे हुए मनुष्य ने तुम्हारे साथ कोई बुराई का व्यवहार तो नहीं किया। दुखित, अन्य पुरुष में आसक्त तथा दायाधिकार से शून्य स्त्री से प्रीति रखने वाले मनुष्य से जांच पड़ताल की जाय। उद्बन्धहत के विषय में भी इसी ढंग का नियम काम में लाना चाहिये। जिसने आत्महत्या की हो उसके विषय में यह जाना जाय कि उसको किसने नुकसान पहुंचाया या कष्ट दिया। आत्महत्या का मुख्य कारण क्रोध है जो कि प्रायः स्त्री, दाय भाग, काम की स्पर्धा, विरोधी से द्वेष, कंपनी विषयक झगड़ा आदि से उत्पन्न होजाता है।

स्वयं बुलाकर चोरों ने रुपयों के लिये या दुश्मनों ने भूल से अपना दुश्मन समझ कर बदला निकालने के लिये जिसको मारा हो उसके विषय में पड़ोसियों से पूछा जाय कि "उसको किसने बुलाया था? वह किसके साथ था? किसके साथ गया? कौन उसको यहां पर लाया" जो अपराधी मालूम पड़े उसको दंड दिया जाय। जो लोग उसकी मृत्यु के समय में समीप में थे उनसे क्रमशः एक एक कर पूछा जाय कि "उसको कौन यहां पर लाया था। कौन हथियार छिपाये हुए गुस्से में भरा हुआ था।" वह जिस जिस का नाम लें उस उस पर मुकदमा चलाया जाय।

मृत पुरुष के यात्रा संबंधी सामान, कपड़ेलत्ते, गहने, तथा धन को देखकर उसके साथ रहने वाले तथा कामकाज करने वाले लोगोंसे पूछाजायकि तुह्मारा उससे कैसे मेलहुआ,वह वहांक्यों रहताथा?वह कौनसा काम तथा कारोबार करताथा? यदिकिसी स्त्री या पुरुषने कामक्रोध या पापके वशमेंहोकर रस्सी हथियार या जहर से किसी को मारा हो तो चंडाल उसको रस्सी से बांधकर घसीटता हुआ राजमार्ग से ले जावे। उसके मुर्दे को कोई भी श्मशान में न जलावे और न उसको पिंड दान दे। जो संबंधी इस नियमको उल्लंघन कर उसकी श्मशान विषयक क्रिया करें उनको भी वही दंड मिले या उनको जात से बाहर निकाल दिया जाय। पतित को हवन कराने पढ़ाने या उसके साथ अन्य प्रकार के वैवाहिक संबंध करने वाले एक साल तक ऐसा ही काम करें तो उनको भी पतित समझा जाय।

८३ प्रकरण।

वाक्य कर्मानुयोग।

चोरी विषयक अभियोग में बाहरी तथा अन्दुरुनी साक्षियों से अपराध के देश, जाति, गोत्र, नाम, काम, धन तथा निवास स्थान के विषय में पूंछा जाय। जो उत्तर मिले उसको अभियुक्त की बात से मिलाया जाय। अभियुक्त से पता लिया जाय कि पकड़े जाने से पहिले रात में कहां थे तथा दिन में क्या काम करते थे? यदि उसको उत्तर अन्य प्रमाणों से सत्य जंचे तो उसको निरपराध मानकर छोड़ दिया जाय अन्यथा उसको दंड दिया जाय। जब तक काफी सबूत न मिल जाय तब तक चोरी के संदेह में किसी से कुछ भी पूछा नहीं जा सकता। यही कारण है कि तीन रात के बाद संदेह में कोई भी पकड़ा नहीं जा सकता। जो भले आदमी को चोर कह कर पकड़वावे या चोर को अपने घर में छिपावे उस को चोर के समान दंड दिया जाय। यदि कोई किसी को चोरी के अपराध में पकड़वावे और अभियुक्त पकड़वाने वाले की दुश्मनी

तथा शरारत सिद्ध कर दे तो उसको शुद्ध (निरपराध) माना जाय। जो निपरराध को कैद करे उसको प्रथम साहस दंड दिया जाय। अपराधी के अपराध को सिद्ध करने के लिये—औजार, सलाह कार, सहायक तथा दलालों का पेश करना आवश्यक है। इनकी बात को चोरी के धन का बांटना तथा चोरी करने का समय आदि से मिलाया जाय। यदि यह बातें न मिलें तथा अभियुक्त फूट फूट कर रोवे तो उसको अचोर समझ कर छोड दिया जाय। प्रायः यह देखने में आया है कि भले आदमी भी अकसर चोरों के सदृश कपड़ा हथियार तथा सामान धारण करते हुए चोरों के गुट्ट के साथ ही पकड़े जाते हैं। दृष्टान्त स्वरूप मांडव्य चोरी के माल के पास पकड़ा गया और पिटनेके डर से चोर न होते हुए भी उसने अपने आपको चोर मान लिया। इस लिये पक्के सबूत का पेश करना अत्यन्त आवश्यक है।

अबोध, बालक, वृद्ध, रोगी, मत्त, उन्मत्त, भूखे, प्यासे, थके, मांदे, अधिक भोजन से परेशान, दुःखी तथा दुर्बल लोगों को कोड़े आदि के भयंकर दंड न दे। कुट्टिनी (पुंश्चली), पानी तथा भोजन देने वालों तथा किस्से सुनाने वालों के भेस में खुफिया ऐसे लोगों का उसी प्रकार देखरेख रखें जैसा निक्षेप के चुराने के संबंध में लिखा जा चुका है। जिनका अपराध सिद्ध हो जाय उनको चित्र दंड दिया जाय। गर्भिणी, सूतिका में पड़ी तथा एक महीने से कम दिन प्रसूता स्त्री को चित्र दंड से मुक्त किया जाय। साधारण स्त्रियों को आधा दंड दिया जाय। औरों की तरह उनसे भी जिरह की जाय। वेदों तथा शास्त्रों में पंडित ब्राह्मण तथा तपस्वियों के पीछे खुफिया लोग लगाये जांय। जो लोग इन उपरिलिखित नियमों का भंग करें या दूसरों से ऐसा करवायें, या अधिक दंड कर किसी अपराधीको मरवादें उनको प्रथम साहस दंड दियाजाय। व्यावहारिक दंड (रोजाना काम में आने वाले)—१ छः प्रकार की छड़ियां, २ सात प्रकार के कोड़े, ३ दो प्रकार के ऊपर नीचे के दंड तथा ४ पानी की नली आदि के भेद से चार प्रकार के हैं।

भयंकर पापकर्म करनेवाले को अठारह प्रकार के दंड दियेजांय। दृष्टान्त स्वरूप ६ बेंतें, जंघापर, १२ बेंतें कमर पर, नक्तमाल की २० बेंतें, हाथपर ३२, वृश्चिकबन्ध [बिच्छूके आकार में बांधना] २, हाथों में सुए गाड़कर चलाना, यवागू [जौ कि बनीचीज] पिलाकर उंगुली दिनभर तपाना, सर्दी की रातमें मूंजपर नंगा सुलाना तथा उसके उपकरण, सामान, हथियार, कपड़े लत्ते आदि गदहे पर लादकर मंगाना। इनमें से एक दिनमें एकही दंड दियाजाय। जो लोग पहिले से कहकर चीज़ को चुरावें या छीनें, चुराईहुई चीज़ को टुकड़े टुकड़े करके काम लावें, खजाना लूटने की कोशिश करें, उनको राजाकी आज्ञा के अनुसार एक अनेक या संपूर्ण दंड दियेजांय। ब्राह्मण को किसीभी प्रकार के अपराध में कष्ट न दियाजाय। वह किसीके भी साथ व्यवहार न करसके इसलिये उसके माथे पर चोरीमें कुत्तेकी, खूनकरने में कबन्ध [सिररहित मुर्दा = धड़] की, गुरुकी स्त्रीके साथ बुराई करने में भग (स्त्री-योनि की तथा शराब पीनेमें कलवार के झंडे की छाप डालदी जाय।

छाप डालने तथा जनता में उसके अपराध की उद्घोषणा करने के बाद राजा पाप कर्म करने वाले ब्राह्मण को देशसे बाहर निकाल दे या उसको खानों में रहने के लिये भेजदे।

८४ प्रकरण।

राजकीय विभागों का संरक्षण।

प्रदेष्टा समहर्ता द्वारा नियुक्त होकर सबसे पहिले अध्यक्षों तथा उनके नीचे काम करने वाले कर्मचारियों के कामों की देख रेख करें। जो लोग खानों तथा बहुमूल्य पदार्थ के कारखानों से बहुमूल्य पदार्थ या हीरा जवाहरात चुरावें उनको मृत्यु दंड दियाजाय। साधारण पदार्थ तथा लकड़ी के कारखानों से जो साधारण पदार्थ या जीवनोपयोगी आवश्यक पदार्थों को चुरावें उनको प्रथम साहस दंड दियाजाय।

मंडियों तथा दुकानों से सरकारी माल के चुराने में—१ मास

से $\frac{1}{4}$ पण तक १२ पण, $\frac{2}{4}$ पणतक २४पण, $\frac{3}{4}$ पण तक ३६ पण,१ पण तक ४८ पण, २ पणतक प्रथम साहस, ४ पण तक मध्यम साहस, ८ पणतक उत्तम साहस संबंधी दंड और इससे अधिक धनकी चोरी में मृत्युदंड दियाजाय । जो कोठा, दूकान, खलपान तथा शस्त्रागार से अनाज, जरूरत का सामान तथा और प्रकार का माल चुरावे उसको उपरिलिखित दंडका आधा दंड दियाजाय। कोश, भांडागार तथा अक्षशाला से जो चौथाई दामकी भी चीज़ चुरावे उसको दुगुना दंड मिले । जो भागजाने के लिये चोरों को इशारा दे उसको कैसा चित्रदंड दियाजाय इसपर राज परिग्रह प्रकरण में प्रकाश डाला जाचुका है।

सरकारी नौकरों से भिन्न मनुष्य यदि खेत खलपान मकान तथा दूकान से १ मास से $\frac{1}{4}$ पणतक की चीज़ चुरावे उस पर ३ पण जुरमाना किया जाय या उसके शरीर में गोबर लेपा जाय कमर में ठिकड़ों की करधनी पहिनाई जाय और सब स्थानों में डुगडुगी पीट कर उसको घुमाया जाय। १ पण मूल्य की चोरी में १२ पण जुरमाना किया जाय या चोर का सिर मूंड कर देशसे बाहर निकाल दिया जाय। दो पण से तीन पण तक की चोरी में ६ पण दंड दिया जाय या गोबर या राख से शरीर को लेपकर तथा ठिकड़ों की करधनी पहिना कर शहर में डुग्डुगी के साथ घुमाया जाय। एक पण की चोरी में १२ पण या सिर मूंडकर देश निकाले का दंड दिया जाय। २ पण में २४ पण या ईंट के ठिकड़ों से सिर घोटना तथा देश निकाला संबंधी दंड मिले । ४ पण में ३६ पण, ५ पण में ४८ पण, १० पण में प्रथम साहस, २० पण में २०० पण, ३० पणमें ५०० पण तथा ४० पणमें १००० पण दंड और ५० पण में मृत्युदंड का विधान किया जाय। रात, दिन या संध्या समय में जो जबरन धन छीने तो उसको उपरिलिखित चोरी की आधी चोरी में ही दुगुना दंड और यदि वह हथियारबंद हो तो उसको चौगुना दंड दिया जाय । कुटुंब, अध्यक्ष, मुखिया तथा स्वामि लोगों को शासन संबंधी नकली मोहर बनाने के अपराध में के अपराध अनुसार प्रथम साहस से शुरू करके मृत्यु दंड तक दिया

जा सकता है। यदि न्यायाधीश आपस में विवाद करते हुए पुरुषों को डांटे डपटे धक्का दे या बोलने न दे तो सबसे पहिले उसी को साहस दंड दिया जाय और यदि गाली दे तो उसको दुगुना दडं मिले। यदि वह पूंछने के योग्य बात को न पूंछे, न पूंछने लायक बात को पूंछे, पूछ कर बीच में ही छोड़दे, सिखाये याद दिलाये या पहिले कही बात का उद्धरण दे तो उसको मध्यम साहस दंड और यदि वह उचित परिस्थिति के विषय में न पूंछे, अनुचित परिस्थिति के विषय में पूंछे, बे मौके काम टाले, छल करे, देरी करके दोनों पक्षों को थकावे, जिस बात पर मुकदमे का फैसला होना हो उसको बीचमें ही छोड़ जाय, गवाहों को सहायता दे या निर्णय की हुई बात को पुनः पेश करे तो उसको उत्तम साहस दंड दिया जाय। यदि यही अपराध वह फिरसे दुहरावे तो उसको पदच्युत किया जाय। यदि लेखक कही गई बात को न लिखे, जो बात नहीं कही गई उसको अपने मनसे लिखे, दुहराई गई बुरी बात को लिखे, लोकोक्ति लिखे, अर्थात् लिखकर व्याख्या करे तो उसको अपराध के अनुसार प्रथम साहस दंड दिया जाय।

जो न्यायाधीश निरपराध को रुपयों में दंड दे, उसको उसका दुगुना दंड दिया जाय। यदि अपराधी को वह कम या अधिक दंड दे तो उसका आठ गुना जुरमाना उस पर किया जाय। यदि शारीरिक दंड दे तो वही दंड उसको मिले या उसका दुगुना निष्क्रय उससे लिया जाय। जो असली रकम को झूठी और झूठी रकम को असली प्रगट करे उसको आठगुना दंड मिले।

जो मनुष्य धर्म्म स्थीय के प्रबंध या कैद खाने से ऋणी को छुड़ावे या कैद में उसको खाने, बैठने तथा उठने से रोके या किसी दूसरे से यही काम करवाये तो उसको ३ पण से लेकर आगे तक दंड दिया जाय। जो चारक (धर्म्मस्थीय का कैद खाना) से अभियुक्त को छुड़ावे या भगावे उसको मध्यम साहस दंड दिया जाय तथा उससे ऋणकी रकम वसूल की जाय। जो कैदखाने से छुड़ावे या भगावे उसकी संपत्ति जब्त करली जाय तथा उसको मृत्यु दंड दिया जाय। कैदी की शरारत के बिना ही यदि जेलर कैदी को

काल कोठरी दे तो उस पर २४ पण, यदि शारीरिक दंड (कर्मदंड) दे तो दुगुना, यदि दूसरे स्थान पर ले जावे या खाना पानी न दे तो ९६ पण, यदि तकलीफ दे या घूंस ले तो मध्यम साहस दंड और यदि जान से मार डाले तो १०० पण—उसपर जुरमाना किया जाय। इसी प्रकार यदि वह-गिरों रखी या कैद की गई दासी के साथी बुराई करे, तो प्रथम साहस दंड, चोर या मृत पुरुष (डामरिका (संक्रामक रोग में जिसका पति मरा हो) की स्त्री के साथ खराबी करने पर मध्यम साहस दंड और कैद में पड़ी भले घरकी औरत के साथ जबर्दस्ती करने पर उत्तम दंड उसको दिया जाय। यदि इस ढंग का अपराध करने वाला कोई कैदी हो तो उसको मृत्यु दंड मिले। असमय में घूमने के अपराध में कैद कीगई भले घर की औरत के साथ बुराई करने पर भी मृत्यु दंड ही दिया जाय। दासी के संबंध में प्रथम साहस दंड हो। जो चारक (धर्म्मस्थीय का कैदखाना) को तोड़ बिना ही कैदी को भगावे उसको मध्यम साहस दंड। जो तोड़ कर भगावे उसको मृत्यु दंड मिले। जो कैदखाने से कैदी को भगावे उसकी संपूर्ण संपत्ति जब्त की जाय तथा उसको कतल किया जाय।

राजा अपराध करने वाले सरकारी नौकरों को इसी प्रकार ठीक मार्ग पर लावे और वह भी इसी प्रकार नागरिकों तथा ग्रामीणों को दंड के द्वारा पाप कर्म से रोकें।

८५ प्रकरण।

एक अंग काटने का निस्क्रय।

फंदा डालने तथा गांठ कतरने के अपराध में सरकारी नौकरों [अर्थचर] को पहिली वार तर्जनी काटने का दंड या ५४ पण जुरमाना कियाजाय। दूसरी वार यही अपराध करने पर अंगूठा काटना या १०० पण, तीसरी वार दाहिना हांथ काटना या ४०० पण और चौथीवार मृत्यु का दंड दियाजाय और सबको स्वतंत्रता हो कि जो चाहे उसको मारडाले [यथा कामी वध]। २५ पण से

कम दाम की कुक्कुर न्युअला बिल्ली तथा सुअर की चोरी में या उनके मारने में ५४ पण या नाक के अग्रभाग के काटने का दंड दियाजाय। चंडालों तथा जंगलियों को आधा दंड मिले। जाल, फंदे तथा धोखे के गड्ढे बनाकर जो सरकारी जानवरों चिड़ियों शिकारी जंतुओं तथा मच्छियों को पकड़े उसपर उनके मूल्य जितना जुरमाना कियाजाय। मृगवत तथा द्रव्यवत [लकड़ी का जंगल] से मृग तथा माल चुराने पर १०० पण और चिड़िया घर [विंब विहार] से हिरण तथा चिड़ियां चुराने या मारने पर दुगुना दंड दिया जाय। कारीगर शिल्पी गवैइये तथा तपस्वी लोगों को क्षुद्र द्रव्य के चुराने पर १०० पण तथा स्थूल या कृषि उपयोगी द्रव्य के चुराने पर २०० पण दंड मिले। विना आज्ञा के किले में घुसने वाले का तथा सेंध लगा कर माल चुराकर भागने वाले का कंधा काट दिया जाय या उस पर २०० पण जुरमाना किया जाय। जो चक्र से चलने वाली नाव या क्षुद्र पशु को चुरावे उसका एक पैर काट दिया जाय या ३०० पण उस पर जुरमाना किया जाय। नकली कौड़ी, पासे, जुआ खेलने के अन्य सामान तथा हाथ के संबंध में बेईमानी करने पर एक हाथ तथा एक पैर का काटने का या ४०० पण का दंड मिले। औरत को भगाने तथा व्यभिचार करने में स्त्री को कान नाक काटने का या ५०० पण का दंड और पुरुष को इसका दुगुना दंड दिया जाय। जो बड़े जानवर, दास या दासी को चुरावे या मृत् पुरुष के कपड़े लत्ते तथा बर्त्तन बेचे उसके दोनों पैर काट जांय या ६०० पण दंड के रूपमें उससे लिया जाय। जो उत्तम वर्ण के लोगों या गुरुओं के हाथ पैर तोड़े या राजा के घोड़े गाड़ीपर चढ़े उसका एक हाथ तथा एक पैर काट दियाजाय या ७०० पण उसपर जुरमाना किया जाय। अपने आपको ब्राह्मण कहने वाले शूद्रको मंदिर के धनको चुरानेवाले; राजा के विरुद्ध षडयंत्र रचनेवाले तथा दोनों आंख फोड़ने वाले योगीजन से अंधा कियेजांय या ८०० पण जुरमानादें।

जो चोर या व्यभिचारी को छोड़दें, राजाज्ञा को बढ़ाकर लिखें, गहने तथा रुपये पैसे से युक्त दासी या लड़की को भगावें, जाली

चीजें बनावें, सड़ामांस बेचें, उनका बायां हाथ पैर काटा जाय या उनपर ६०० पण जुरमाना कियाजाय। जो मनुष्य का मांस बेचे उसको मृत्यु दंड मिले। जो देवपशु [देवता के लिये छोड़ जानकर] मूर्त्ति, मनुष्य, खेत, मकान, हिरण्य सुवर्ण रत्न या अनाज को चुरावे उसको उत्तम दंड या शुद्धमृत्यु दंड दियाजाय।

प्रदेष्टा उत्तम मध्यम तथा प्रथम साहस दंड देते समय इसबात को अपनी आंखों के सामने रखे कि अपराधीकी क्या हैसियत है? उसने किस ढंगका अपराध किया है, किसपरिस्थिति तथा कारण के वश में होकर उसको ऐसा करना पड़ा? वह कारण कितने गुरु या लघु हैं? अपराध किस समय तथा किस स्थान में किया गया? अपराधी राजकीय कर्मचारी है या साधारण व्यक्ति है और राजा का उसके साथ क्या सम्बन्ध है?

८६ प्रकरण
शुद्ध तथा चित्र दंड।

जो लड़ाई झगड़े में किसी पुरुष को जान से मारदे उसको कष्ट सहित मृत्यु दंड मिले। जो ऐसी चोट पहुंचावे जिस से वह सात दिन, पक्ष या मास के बाद मरे तो उसको क्रमशः मृत्यु दंड, उत्तम-दंड तथा समुत्थान व्यय (पालन पोषण का व्यय) के साथ २ ५०० पण का दंड मिले। शस्त्र या शराब से चोट पहुंचाने में उत्तम दंड या हाथ काटने का दंड और मारडालने में मृत्यु दंड दिया जाय। प्रहार, दवाई या कष्ट देकर जो गर्भ गिरावे उसको क्रमशः उत्तम मध्यम तथा प्रथम साहस दंड मिले। उन सब लोगों को फांसी पर लटका दिया जाय जो कि स्त्री तथा पुरुष को जान से मारडालें, बारम्बार रंडियों के पास जाय, लोगों को मुफ्त में ही तकलीफ दें, झूठी झूठी खबरें उड़ावें, रास्ते चलते लोगों को लूटें पीटें तथा मारें, दूसरे के मकान को तोड़ें, राजा के हाथी घोड़े को मारें तथा रथों को तोड़ें, या चोरी करें। जो इन के मुर्दों को उठाले जावें या जलावें उसको उत्तम दंड मिले। जो चोरों तथा खूनियों

को खाना, कपड़ालत्ता, हथियार, आग, सलाह देने या उनसे लेन देन करे उसको उत्तम दंड दिया जाय । यदि अज्ञानता से ऐसा हो गया हो तो अपराधी को डांट कर तथा नीचा दिखा कर छोड़ दिया जाय । चोरों खूनियों की स्त्रियों तथा लड़कों को भी पकड़ लिया जाय यदि वह उनके कामों में भाग लेते हों अन्यथा छोड़ दिया जाय । शिर तथा हाथ में आग लगा कर उन लोगों को मारा जाय जो कि राज्य के इच्छुक हों, अन्तःपुर में बदमाशी के खातिर घुसे हों, दुश्मन को उभाड़ते हों या किले राष्ट्र तथा सेना में गदर सम्बन्धी विचार फैलाते हों । यदि किसी ब्राह्मण ने यही काम किये हों तो उसको पानी में डुबाकर मरवा दिया जाय । जो लोग मां बाप लड़का भाई आचार्य या तपस्वी को मारें, तो शिर तथा चमड़े में आग लगाकर उनको साड़ा जाय. यदि गाली दें तो उनकी जीभ काट ली जाय और यदि किसी अंग को तोड़ें तो उनका वही अंग तोड़ दिया जाय । जो निष्कारण खून करे या पशुओं का झुंड का झुंड चुराले उसको शुद्ध मृत्यु दंड दिया जाय । पशुओं के झुंड से तात्पर्य दस से कम संख्या वाले पशुओं से है । जो किसी पानीसे भरे तालाब या नहर के बांध को तोड़ उसको उसी पानी में डुबा दिया जाय । साधारण बांध के तोड़ने तथा टूटे फूटे बांध के तोड़ने में क्रमशः उत्तम तथा मध्यम साहस दंड दिया जाय । जहर देकर मारने वाले पुरुष को तथा पुरुष को जहर देकर मारने वाली स्त्री को पानी में डुबा दिया जाय । यदि कोई स्त्री चाहे वह गर्भिणी या अगर्भिणी हो या और चाहे उसके बच्चा हुए एक महीना समय भी न गुजरा हो—अपने मालिक गुरु या बच्चे को जान से मार डाले किसी को जहर देदे, कहीं आग लगादे या किसी के शरीर के जोड़ तोड़ दे तो उसको गउओं बैलों से संधवा कर मरवाया जाय । जो चरागाह खेत खलयान, मकान, द्रव्यवन तथा हस्तिवन में आग लगादे उसको आग में जीते जी जला दिया जाय ।

अनिष्ट करने की इच्छा से जो राजा को गाली दे, मंत्र [गुप्त विचार] को खोले या ब्राह्मण का चौका बिगाड़े उसकी जीभ बाहर निकाल ली जाय । सैनिक से भिन्न कोई पुरुष यदि हथियार तथा कवच चुरावे उसको बाणों से मरवा दिया जाय और यदि

कोई सैनिक यही काम करे तो उसको उत्तम साहस दंड दिया जाय ।

जो किसी की गुप्तेन्द्रियको नुकसान पहुंचावे उसकी वही इन्द्रिय काटदी जाय। जो जीभ या नाक काटे उसकी उंगुलियां काटदी जांय।

पुराने महात्मा लोगों ने शास्त्रों में इस ढंग के क्लेशदंडों [तकलीफ देकर मारना या दंड देना] का विधाम किया है। साधारण अपराधों में शुद्ध दंड ही धर्म्मयुक्त है ।

८७ प्रकरण ।

कन्या प्रकर्म ।

कम उमर वाली सजात की कन्या के साथ जो जबरदस्ती करे उसके हाथपैर काट दियेजांय या उसपर १०० पण जुरमाना किया जाय । यदि वह मरजाय तो अपराधी को मृत्युदंड मिले । यदि कन्या युवती हो तो उसकी बीच की अंगुली काट दीजाय या उसपर २०० पण जुरमाना कियाजाय और उससे लड़की के पिता को हरजाना [अपहीन] दिलवाया जाय । अनुच्छुक स्त्रीकेसाथ कोईभी पुरुष गमन न करे । यदि कोई इच्छुकपर-स्त्री के साथ गमन करे तो उसपर ५४ पण और स्त्रीपर इसका आधा जुरमाना कियाजाय । यदि कोई ऐसी लड़की के साथ जिसकी सगाई होचुकी हो गमन करे तो उसका हाथ काटदिया जाय या उससे ४०० पण दंड तथा शुल्क का धन ग्रहण कियाजाय ।

सात मासिकधर्म्म होजाने के बाद यदि कोई लड़की के साथ गमन करे तो उसके पिता को अपहीन [हरजाना] न दे । क्योंकि ऋतु के फलसे च्युतकरने के कारण पिता का लड़कीपर स्वामित्व नहीं रहता । यदि कोई लड़की तीनसालसे लगातार मासिक धर्म्म होरही होतो उसके सजातीयव्यक्ति के साथ गमन करने में कोईभी दोषनहीं है । इसके बाद दुसरे जा तका व्यक्तिभी उसके साथ गमन कर सकता है यदि उसकेपास कोई गहना न हो । यदि वह पिता का धन बिना आज्ञाके ग्रहण करे तो उसको चोरी का दंड मिले ।

दूसरे के लिये कहकर जो स्वयं किसी स्त्री का उपभोग करे उसपर २०० पण जुरमाना कियाजाय । इच्छाविना किसी भी स्त्री के साथ कोईभी पुरुष गमन न करे।

यदि कोई पुरुष किसी एक लड़की को दिखाकर उसीजातकी दूसरी लड़की को उसके स्थानपर विवाह में देतो उसपर १०० पण जुरमाना कियाजाय और यदि लड़की नीचजातकी हो तो जुरमाना दुगुना करदियाजाय।

विवाहित स्त्री के साथ जबर्दस्ती करनेपर २४ पण जुरमाना कियाजाय। शुल्क तथा अन्यखर्च भी अपराधी दे।

जो कोई लड़की विवाह में देनेकी प्रतिज्ञा करके प्रतिज्ञा पूरी न करे उसको दुगुना दंड मिले। यदि वह दूसरी जातकी लड़की दे या झूठी प्रशंसा करे उसपर २०० पण जुरमाना कियाजाय और साथही वह शुल्क का धन लौटावे और संपूर्ण खर्चेको पूराकरे।

अनिच्छुक स्त्रीके साथ कोईपुरुष गमन न करे।

यदि कोई स्त्री कामवश किसी सजातीय पुरुष के साथ गमन करे तो उसपर १२ पण और मध्यस्थ स्त्रीपर दुगुना जुरमाना किया जाय। इसीप्रकार अनिच्छुक स्त्रीके साथ जबरदस्ती करने वाले पुरुष पर १०० पण दंडका विधान कियाजाय, उसको स्त्रीके प्रसन्न करने के लिये वाधित कियाजाय तथा उससे शुल्क का धन वसूल कियाजाय।

जो स्त्री स्वयं ही किसी पुरुष का गमन करे उसको राजदासी बनाया जाय। जो कोई गांव के बाहर किसी स्त्री के साथ गमन करे या किसी स्त्री के बारे में इस विषय पर झूठी खबरें उड़ावे उसको दुगुना दंड दिया जाय। जो जबर्दस्ती लड़की को भगा लेजावे उस पर २०० पण और यदि वह सजातीय है तो उस पर उत्तम दंड का विधान किया जाय। लड़कियों को भगाने वाले यदि बहुत से पुरुष हैं तो उनमें से प्रत्येक को पूर्वोक्त दंड दिया जाय।

रंडी की लड़की के साथ जो जबर्दस्ती करे उस पर ५४ पण जुरमाना किया जाय और उसको बाधित किया जाय कि वह उस की मां की आमदनी का १६ गुना उसको धन दे । जो कोई दास

या दासी की लड़की को खराब करे वह २४ पण जुरमाना, शुल्क तथा गहने दे। जो स्त्री धन न देसकने के कारण दासी बनाई गई हो उसके साथ जबर्दस्ती करने पर १२ पण जुरमाना, शुल्क तथा गहना देने के लिये अपराधी को बाधित किया जाय। बीचमें पड़ने वाले दलालों पर भी अपराधियों के समान ही जुरमाना कियाजाय।

यदि कोई ऐसी स्त्री किसी के साथ फंस जाय जिसका कि पति बाहर हो तो उसके पति के बन्धु तथा मित्र उसको पकड़ें और उसको पति के आने के समय तक प्रतीक्षा करने के लिये बाधित करें। यदि पति दोनों को क्षमा करदे तो उनको छोड़ दिया जाय। यदि वह क्षमा न करे तो स्त्री का कान नाक काट दिया जाय और जार पुरुष को मृत्यु दंड दिया जाय। जो कोई जार को चोर कहे उस पर ५०० पण जुरमाना किया जाय। या सोना या धन लेकर उसको छोड़दे उस पर गृहीत धन का ८ गुना जुरमाना किया जाय।

बाल खींचना, शरीर पर बदमाशी के चिन्हों का होना, सजातीय लोगों या स्त्रियों का अपवाद करना आदि बातों से स्त्रियों के पाप कर्म का ज्ञान होता है।

जो मनुष्य शत्रु के जाल, जंगल, बाढ़ में फंसी, अकाल के कारण भूखी या मरी हुई समझ कर फेंकी हुई स्त्री को बचावे वह परस्पर अनुमति होने पर उसका उपभोग कर सकता है। यदि वह भिन्न जाति की हो, अनिच्छुक हो या बाल बच्चे वाली हो तो कुछ धन लेकर उसको उसके घरमें भेजदे।

चोर, नदी वेग, दुर्भिक्ष, तथा राज्य ज्योति से जंगल में भटकती, घरके लोगों से त्यक्त मृत समझ कर फेंकी स्त्री का पुरुष उपभोग कर सकता है बशर्ते कि दोनों मंजूर करलें। जिसको राजा के डर से संबंधियों ने छोड़ दिया हो, जो कि नीच जात की हो या अनिच्छुक हो या बाल बच्चे वाली हो उसको उचित पुरस्कार लेकर उसके घर भेजदे†।

† डाक्टर शाम शास्त्री ने इसवाक्य का अर्थ सर्वथा उलटा करदिया है जो कि पिछले वाक्य से विरोधी पड़ता है। उनको "ईदृशीं च न रूपेण" के स्थान पर "ईदृशीं चानुरूपेण" पाठ समझ कर उपरि लिखित अर्थ करना चाहिये था।

८८ प्रकरण।
अतिचार—दंड।

जो किसी ब्राह्मण को अपेय या अभक्ष्य वस्तु खिलावे उसको उत्तम दंड दिया जाय। यदि यही बात किसी ने क्षत्रिय के साथ की हो तो उसको मध्यम और वैश्य के साथ ऐसी बात करने वाले को प्रथम साहस दंड दिया जाय। शूद्र के संबंध में ५४ पण जुरमाना किया जाय। जो स्वयं ही अपेय या अभक्ष्य खावे उसको देश निकाला दिया जाय।

जो दूसरेके घरमें दिनमें घुसेउसको प्रथम साहस दंड,जो रातमें घुसे उसको मध्यम और जो हथियार के साथ दिन या रात में घुसे उसको उत्तम साहस दंड दिया जाय। यदि मत्त और उन्मत्त भिक्षुक या व्यापारी और पड़ोसी विपत्ति में पड़कर जबरन् घरमें घुसें तो उनको कुछ भी दंड न दिया जाय। बशर्ते कि उनको रोका न गया हो।

जो आधी रात के बाद अपने मकान के ऊपर चढ़े उसको प्रथम साहस दंड दिया जाय। दूसरे के मकान के संबंध में दंड मध्यम होना चाहिये। गांव तथा बाग की दीवारों को तोड़ने वालों को भी मध्यम दंड ही मिले।

व्यापारी अपनी संपत्ति तथा धन के विषय में ग्रामाध्यक्ष को सूचित कर ग्रामके किसी भाग में वह जांय। यदि उनका रात में बाहर भेजा धन चुराया जाय तो ग्राम स्वामी उसको भरे। यदि चोरी ग्राम के बीच में हुई हो तो विवीताध्यक्ष (चरागाह का अध्यक्ष) दे। यदि अड़ोस पड़ोस में चरागाह या गोचर भूमि न हो तो चोर रज्जुक (चोर पकड़ने वाला) जिम्मेवार है। यदि चोर रज्जुक भी न हो सीमा रक्षक नुकसान हुआ धन दे। यदि वह भी न हों तो पांच गांवों या दस गांवोंकी गुह हानिका पूर्तिकरे।

कमजोर मकान, टूटी फूटी बैल गाड़ी, छत की कड़ी, ऊपर लटकता हथियार, खुला स्थान, गड्ढा, कुआं आदि के द्वारा यदि कोई किसी को मारे तो उसको दंड पारुष्य में विधान किया दंड

दिया जाय। वृक्ष काटना, मरकट्ट या खूनी जानवरों के बन्धन काटना, गाड़ी या हाथीपर लकड़ी लोहा पत्थर दंडा बाण आदि फेंकना तथा थप्पड़ मारना, आदि में भी उपरिलिखित नियम काम में लाया जाय। हटो यह कहने पर भी यदि गाड़ियां लड़ जांय तो दंड न दिया जाय। जो कोई गुस्सैल हाथी से चोट खाय वह द्रोण से कुछ ही कम शराब का घड़ा, माला, सुगन्धित द्रव्य, दंत मंजन तथा कपड़ा दे। क्योंकि अश्वमेध यज्ञ के स्नान के सदृश ही गुस्सैल हाथ से चोट खाना पवित्र है। इसलिये इस दान को "पाद प्रक्षालन" (पैर धोना) नाम से पुकारा जाता है। यदि कोई फीलवान् की बेपरवाही से हाथी के नीचे कुचल कर मर जाय तो फीलवान को उत्तम दंड दिया जाय। जो स्वामी सींग वाले या दांतवाले जानवर से किसी को मरता देखकर भी न छुड़ावे उसको साहस दंड और जिसने गुस्से में यही बात की हो उसको दुगुना दंड दिया जाय। जो कोई देव पशु, सांड गऊ या बछड़ी से काम ले उसपर ५०० पण जुरमाना किया जाय। और जो कोई उनको बाहर निकाल दे उनको उत्तम दंड दिया जाय।

ऊन, दूध, भार तथा गमन काम के लिये उपयोगी क्षुद्र पशुओं को पकड़ने वाले को तथा देव कार्य्य या पितृ कार्य्य से अतिरिक्त अन्य समय में भगाने वाले को उनके मूल्य के बराबर दंड दिया जाय। जब कोई ऐसा पशु जिसकी नथ तथा जुआ टूटगया हो जो कि पूरीतरह से सीधा न किया गयाहो, भागरहा हो या किसी के ऊपर दौड़ता हुआ आपड़ा हो या भीड़से घबड़ाकर गाड़ीलेभागा हो उससे यदिकोई मनुष्य मरजाय तो स्वामी को दंड दियाजाय। परन्तु यदि किसीने कहकर किसी मनुष्य को या पशु को इस प्रकार मरवाया हो तो उसको क्रमशः दंड दियाजाय तथा पशु का मूल्य देनेके लिये बाधित कियाजाय।

रास्ते में चलते बालक के कुचलने पर गाड़ी में सवार स्वामी को, यदि स्वामी न हो तो जो कोई [बालिग] गाड़ीमें सवार हो उसको दंड दियाजाय। जिसगाड़ी में बच्चा हो और उसके सिवाय कोईभी युवापुरुष न हो उसको राजा जब्त करले।

जो मनुष्य नकली तरीकों तथा घातक तान्त्रिक प्रयोगों से दूसरे को वशमें करे उसको वही दंड दियाजाय। जो कोई [तांत्रिक योगों से] अनिच्छुक स्त्री को वशमें करने का यत्नकरे, जो स्त्री तलाश करताहुआ किसी लड़कीको फंसाना चाहे, या जो स्त्री पति को अपने वशमें करना चाहे उसको उपरिलिखित दंड दियाजाय। परन्तु यदि इस से किसी दूसरे का नुकसान पहुंचगया हो तो अपराधी को मध्यम साहस दंड दियाजाय।

जो मासी, बुआ, मामा की स्त्री, गुरुआनी, बहू, बेटी तथा बहिन के साथ व्यभिचार करे उसका लिंग काट डालाजाय और उसको मृत्यु दंड दिया जाय। यदि कामिनी स्त्री ने यह काम किया हो तो उसको और पास नौकर तथा बंधुए लोगों के साथ बदमाशी करने वाली स्त्री को [यही दंड मिले] । यदि कोई क्षत्रिय अरक्षित ब्राह्मणी का धर्म भंग करे तो उसको उत्तम दंड दिया जाय और वैश्य का इसी अपराध में सर्वस्व हरण किया जाय। शूद्र को भूसे की आग में जीतेजी जला दिया जाय । राज भार्या के साथ गमन करने पर कुंभीपात [वर्तन में बंद कर जलाना या मारना] नामक दंड दिया जाय। जो कोई चाण्डाली का गमन करे उसके माथे पर छाप डाली जाय, उसको देश से बाहर निकाल दिया जाय और उसको भी चांडाल बना दिया जाय । यदि कोई शूद्र या चांडाल यही अपराध करे तो उसको मृत्यु दंड दिया जाय और स्त्री का कान नाक काट लिया जाय । जो कोई वैरागिन का गमन करे उस पर २४ पण जुरमाना किया जाय । यदि वैरागिन स्वयं यही चाहती हो तो उसको भी यही दंड दिया जाय। जो रंडी को जबरन उपभोग करे उस पर १२ पण जुरमाना किया जाय। यदि बहुत से एक स्त्री का गमन करें तो उनको पृथक् पृथक् २४ पण दंड दिया जाय। पुरुष के साथ बदमाशी करने वाले तथा स्त्री के अनुचित स्थान में मैथुन करने वाले को प्रथम साहस दंड दिया जाय । पशुओं के साथ मैथुन करने वालों पर १२ पण का जुरमाना किया जाय । जो कोई देवता तथा भूमियों के साथ गमन करे उसको दुगुना दंड मिले।

जब कभी राजा निरपराधी पुरुष पर जुरमाना करे तो उसका तीस गुणा धन वरुण देवता के उपलक्ष्य में पानी में डाल दे और बाकी ब्राह्मणों में बांट दिया जाय।

इस से राजा का दंड सम्बन्धी पाप दूर हो जाता है। क्योंकि राजा वरुण मिथ्या आचरण वाले लोगों का शासक है।

५ अधिकरण।

योग वृत्त।

८१ प्रकरण

दंड विधान।

दुर्ग तथा राष्ट्र में अपराधियों को कैसे पकड़ा जाय (कंटक शोधन) इस पर प्रकाश डाला जाचुका। राजा तथा राज्य के सम्बन्ध में अब प्रकाश डाला जायगा।

राजा से तनखाह भत्ता आदि पाकर भी जो राजा से विद्वेष करते हों और शत्रु के सदृश हों उनके पीछे ऐसे गुप्तचर (गूढ़ पुरुष) का प्रयोग किया जाय जो कि कृत्य पक्ष (शत्रु के वश में आने वाले-शत्रु के पक्षपाती) को पकड़ सके या आपस में फाड़ देने वाले तथा सिद्ध के भेस में घूमने वाले खुफिया को लगाया जाय जोकि उन्हीं तरीकों को काम में लावें जोकि "शत्रु के ग्राम के विजय" के सम्बन्ध में बताये गये हैं।

राजा धर्म्म की रक्षा करने के लिये ऐसे राज दर्बारियों या संघ के मुखियों को चुप्पे से ही मरवा दे या दंड दे जो कि बागी हों और जिनको खुल्लम खुल्लम अपराधी न सिद्ध किया जासके। सत्री (गुप्तचर का एक भेद) महामात्र के दुष्ट तथा राज्य द्रोही भाई को राजा से मुलाकात करवाने के लिये ले जाय। राजा भी उसको उसके भाई की संपत्ति दे देने की आज्ञा दे। यदि वह इस पर

अपने भाई को शस्त्र या विष से मार डालने की कोशिश करे तो उसको "भ्रातृघातक" के अपराध में वहां पर कतल करवादे। यही व्यवहार पारशव (ब्राह्मण से शूद्रा में उत्पन्न) तथा परिचारिका पुत्र (दासी का लड़का) के साथ किया जाय। यदि महामात्र ही राज्य द्रोही हो तो सत्रि से प्रोत्साहित किया जाकर उसका भाई दाय प्राप्त करने के लिये राजा से प्रार्थना करे। राज्य द्रोही महामात्र के घर पर या किसी और स्थान पर सोये हुए उसको तीक्ष्ण मार डाले तथा शोर मचादे कि "दाय मांगने के कारण इसको मरवाया गया है"। इसके बाद राजा उसका पक्ष लेकर महामात्र तथा उसके पक्ष पोषकों को पकड़ ले। या राज्य द्रोही महामात्र के पास रहने वाले सत्री भाई के दाय को मांगते ही मारडालने की धमकी दें और इसके बाद रात में पूर्व वत् काम किया जाय। यदि दो महामात्र बागी हों तो इनमें से जिस किसी का लड़का या बाप बहू को खराब करता हो या भाई अपनी भौजाई को बिगाड़ता हो उन को कापटिक (गुप्तचर विशेष) के द्वारा आपस में लड़ाकर पूर्ववत् मरवाया तथा पकड़ा जाय। बागी महामात्र के लड़के का दोस्त बन कर सत्री उसको कहे कि—तू राजा का लड़का है। शत्रु के भय से तुझको यहां पर रख छोड़ा है। यदि उसको इस पर विश्वास आ-जाय तो राजा अकेले में उसका आदर सत्कार करे और कहे कि—तेरे युवराज्य बनने का समय आपहुंचा है। महामात्र के डर से ही मैं तुझ को युवराज नहीं बना रहा हूं। इत्यादि। इसके बाद सत्री उसको महामात्र के मारडालने के लिये प्रोत्साहित करे। यदि वह महामात्र को मारने के लिये तैय्यार हो तो "पितृघातक" कहकर उसको वहांपर ही कतलकर दियाजाय। भिक्षुकी (गुप्तचरका एकभेद) बागी महामात्र की स्त्री को संवनन कारक (पति जिससे वश में हो जाए) औषधियां जहर के साथ मिलाकर दे और महामात्र को खिलाने के लिये कहे। यदि इस से काम न निकले तो राजा बागी महामात्र को—जंगल या ग्राम को वश में करने के लिये या—ऐसे देश में, राष्ट्रपाल या अन्तपाल को नियत करने के लिये जहां तक पहुंचने के लिये जंगल पार करना पड़ता हो या—बागी शहर को शान्त करने

के लिये या—बाहरी व्यापारियों को राष्ट्रके अंतमें पहुंचाने के लिये या उनको गृहीत धन तथा माल के साथ सुरक्षित देशमें ले आने के लिये थोड़े से दुर्बल सैनिकों तथा तीक्ष्ण लोगों के साथ भेजे। रात या दिन में जब युद्ध हो तो डाकुओं के भेस में तीक्ष्ण लोग उसको मारडालें। राजा राजधानी में डुग्डुगी पिटवादेकि अमुक महामात्र "लड़ाई में मारागया।" यात्रा [चढ़ाई] या विहार काल में राजा देखने के लिये बागी महामात्रों को बुलावे। हथियारों को छिपेरूप से पास रखकर, तीक्ष्ण लोग उसके साथ में होजांय। मध्यम कक्ष्य में पहुंचते ही जब उनकी तलाशी लीजाय तो वह कहें कि बागी महामात्रों ने ही हमको हथियार लेकर साथ आने के लिये कहा है। इसके बाद शहर में यह फैलाकर कि "महामात्रों ने राजा को मरवाना चाहा" उनको मरवा दियाजाय। तीक्ष्ण लोगों के स्थानपर दूसरों को फांसीपर चढ़ा दियाजाय। या विहार भूमीमें उनको बुलाकर राजा उनका आदर सत्कार करे। रानीके भेसमें बदमाश औरत रात में उनके कमरे में पहुंच तथा उनको पकड़वादे। शेष बात पूर्ववत् की जाय। सूद [पाचक] या भक्तकार बागी महामात्र को "आपसे बढ़कर कौन है" यह कहकर भोजन देने के लिये कहे जब वह भोजनदे तो बाहर आकर उसमें पानी तथा जहर मिलादे और राजा के पास लेजाय। राजा "रसद" [जहर देनेवाला] कहकर दोनों को ही कतल करवादे। यदि बागी महामात्र अंध विश्वासीहो तो सिद्ध के भेसमें गुप्तचर उसको कहेकि गोह कछुआ केंकड़ा आदियों में किसी को भी पानीसे बाहर निकालते ही तेरे संपूर्ण मनोरथ सिद्ध हो जांयगे। जब वह ऐसा करने के लिये तयार हो तो उसको लोहके मूसल से या जहर से मारडाले और खबर उड़ादे कि "ऐन्द्रजालिक काम करते हुए वह मरगया।" चिकित्सक के भेसमें गुप्तचर बागी महामात्र की बीमारी को भयंकर तथा असाध्य प्रकट करे और दवाई तथा भोजन में जहर देकर उसको खतम करदें। सूद तथा आरालिक [हलवाई] पकी चीज़ों में जहर मिलाकर उसका काम तमामकरें। गुप्तरूप से बागी राज्य कर्म चारियोंसे राजा इसी प्रकार अपना पीछा छुड़ावे।

दो बागियों से अपने आपको बचाने का सबसे अच्छा तरीका यह है कि—राजा एक बागी को शान्त करने के लिये, हलकी सेना देकर दूसरे बागी को भेजे और तीक्ष्ण लोगों को साथ में करदे। उसको आज्ञादे कि—अमुक दुर्ग या राष्ट्र से सेना या रुपया प्राप्त करो। या—अमुक दरबारी से सोना मांगो या—उसकी लड़की को जबरन पकड़ लाओ। या—किला पक्कामकान व्यपारीयमार्ग उपनिवेश खान जंगल या हाथी जंगल संबंधी अमुक काम करवाओ। या—राष्ट्र पाल या अन्तपाल के काम नियत करो—जो तुह्मारी घात में अड़े या विघ्न डाले उसको कुछ भी सहायता न हो—या अमुक व्यक्तिको कैदकर लेआओ। इत्यादि। इसी प्रकार दूसरे बागियों को सूचित करे कि अमुक बहुत ही उद्दंड है। तुम उसकी उद्दंडता को दूरकरो। जब यह लोग लड़ें या एक दूसरे का काम बिगाड़ें तो तीक्ष्ण शस्त्र फेंककर छिपे तौरपर मारडालें। इस अपराधम उन बागियों को पकड़कर दंड दिया जाय।

तीक्ष्ण लोग बागी शहरों गांवों तथा कुलों के—सीमा, क्षेत्रफल [उपज], गृह सीमा [घर की हद] विषयक या—द्रव्य, उपकरण [औजार तथा साधन], अनाज, बैल आदियों की हानि विषयक या—तमाशा तथा उत्सव विषयक झगड़े में या अपने द्वारा बढ़ाई हुई लड़ाई में शस्त्र फेंक कर कहें कि—जो लोग झगड़ें या लड़ेंगे उनको इसी प्रकार मारा जायगा। इसके बाद "मारने के अपराध में" वह लोग पकड़ लिये जांय। जिन बागीयों के पुराने झगड़े हों उनके खेतों में आग लगाकर तथा उनके बन्धुओं संबंधियों तथा पशुओं को मारकर तीक्ष्ण लोग शोर मचादें कि "हम को अमुक व्यक्ति ने ऐसा करने के लिये कहा था"। इस अपराध में और लोग पकड़ लिये जांय। सत्रि [गुप्तचर का एक भेद] दुर्ग तथा राष्ट्र के बागियों का आपस में सहभोज करवायें और रसद लोग उनको एक साथ जहर देदें। पीछे से इसी अपराध में राजा अन्य बागियों को पकड़ ले। भिक्षुकी [राष्ट्र के] किसी बागी मुखिया को कहे कि राष्ट्र के अमुक बागी मुखिया की स्त्री वहू लड़की तुम को चाहती है। यदि उसको इस पर विश्वास आजाय तो उसकी 'अंगुठी'

आदि लेकर राजा को देदे । राजा भी "अमुक मुखिया जवानी के जोश में आकर अमुक मुखिया की स्त्री बहू या लड़की को चाहता है" ऐसी बात कहे । जब दोनों रात में आपस में लड़ें तो उनको पूर्ववत् मरवा दिया जाय । युवराज या सेनापति सैन्य द्वारा दबाये गये बागीयों के साथ पहिले तो कुछ रियायत करे और पीछे उनसे रुष्ट होकर अलग बैठ जाय । इसके बाद ऐसे ही बागियों की थोड़ी सी सेना को उनको दंड देने के लिये भेजे और तीक्ष्ण लोगों को उनके साथ में करदे । इसके बाद संपूर्ण बातें पूर्ववत् की जांय । उनके लड़कों में जो बदले के भाव से रहित शान्त चित्त हो उसी को पिता की संपत्ति मिले । इन्ही तरीकों से देश राजा के पुत्रों तथा पौत्रों के भक्त बने रहते हैं और भिन्न भिन्न बागी तथा स्वार्थी पुरुषों के कारण कष्ट में नहीं पड़ते हैं ।

यदि राजा भूत तथा भविष्य में किसी भी प्रकार की भी गड़बड़ न देखे और पूर्ण रूप से संदेह रहित हो तो अपराधियों के अपराध को क्षमा करते हुए अपने तथा पराये देश के लोगों पर तूष्णी दंड [चुप्पे चुप्पे मरवाना या दंड देना] का प्रयोग करे ।

९० प्रकरण ।

कोश-संग्रह ।

[क]

कर्षकों से राज्य कर का ग्रहण ।

कोश हीन तथा अर्थ संकट में पड़ा राजा कोश का संग्रह करे । उस जनपदसे जोकि बहुत बड़ाहो या जिसमें वृष्टिका पानीलगताहो तथा छोटे होते हुए भी जिसमें धान्य बहुत ही अधिक होता हो— धान्य का तृतीय या चतुर्थ भाग राज्य कर में मांगे । यदि वह मध्यम तथा अल्प होते हुए असार हो या किला पक्का मकान, व्यापारीय मार्ग, उपनिवेश, खान, जंगल तथा हाथी जंगल के लिये अत्यंत उपयोगी हो तथा छोटा होते हुए राष्ट्र के अन्त में हो तो

उससे उपरिलिखित राज्य कर न मांगे। बीज तथा भत्ते के लिये धान्य अलग निकाल कर अनाज का चौथाई भाग नगद धन देकर खरीद ले। जंगली तथा श्रोत्रियों द्वारा उत्पन्न अनाज को राज्य कर में न ग्रहण करे। यदि वह बेचने के लिये आया हो तो उसको अच्छे दाम पर बेंच दे। यदि इन उपायों से भी कोश को विशेष लाभ न हो तो समाहर्ता के सिपाही ग्रीष्म में खेती करने के लिये किसानों को बाधित करें। जो प्रमाद करे उससे दुगुना जुरमाना लिया जाय और बीज डालने के समय में सिपाही खेत में बीज डालदें। फसल तय्यार होने पर तरकारी या पक्का अनाज ग्रहण करें बशर्ते कि खेतमें शाक या अकोशिष अन्न न बचा हो। देवों तथा पितरों को पूजा के लिये और गउओं भिखमंगों तथा मजदूरों को खिलाने के लिये खेत में बिखरा हुआ अनाज इकट्ठा करवाया जाय।

जो राज्य कर से बचने के लिये धान्य छिपावे उस पर धान्य में आठ गुना जुरमाना किया जाय। जो दूसरे का धान्य चुरावे उस पर ५० गुना जुरमाना और जो अपने वर्ग से बाहरी व्यक्ति का धान्य चुरावे उसको कतल किया जाय।

धान्य का चौथाई भाग, जांगलिक द्रव्यों तथा रुई लाख सनिया कपास, रेशा, रेशम, उना, औषधि, गंध, फूल, फल, तरकारी, व्यापारीय द्रव्य लकड़ी, बांस, मांस, तथा सूखे मांस आदिकों का छठाभाग और दांत तथा चमड़े का आधाभाग राज्यकर में ग्रहण कियाजाय। जो राजा की आज्ञा के विना ही बेंचे उसको प्रथम साहस दंड दियाजाय। कर्षकों से राज्यकर ग्रहण करने के यही नियम हैं।

(ख)

व्यापारियों से राज्यकर का ग्रहण।

सोना, चांदी, हीरा, मणि, मोती, मूंगा, घोड़ा, हाथी आदि व्यापारीय द्रव्यों से ५० वां भाग—सूत, कपड़ा, तांबा, पीतल, कांसा, इतर, गंध, भैषज्य तथा शराब आदियों से ४०वांभाग—धान्य, द्रवपदार्थ, लोहा तथा बैलगाड़ी के व्यापारियों से ३०वांभाग—शीशा तथा

कारीगरी के कामके व्यापारियों से २०वां भाग-छोटे छोटे कारीगरों तथा तरखानों से‡१०वां भाग और लकड़ी वांस,पत्थर मट्टीके वर्त्तन पकान्न, तरकारीआदियों से ५ वां भाग—मुल्य का राज्य करमें ग्रहण कियाजाय। कुशीलव तथा रूपाजीवा [रंडीविशेष] वेतन का आधा दें। सुनारों को अपनी ही संपत्ति समझे और उनसे स्वयं काम करवाये। उनके छोटे से अपराध को भी माफ न करे। क्यों कि यह लोग विश्वास पात्र तथा ईमान्दार वने हुए कूट-व्यापार करते हैं। व्यापारियों से राज्यकर ग्रहण करने के यही नियम हैं।

[ग]

* योनि पोषकों से राज्यकर का ग्रहण।

मुर्गे तथा सुअर का आधा भाग-छोटे जानवरों का छठा भाग गौ भैंस खच्चर गदहों तथा ऊंटों का दसवां भाग ग्रहण करे। बंधकिपोषक † राजा द्वारा भेजी हुई रूप तथा जवानी से भरी रंडियों से कोश को बढ़ाने की कोशिश करें।

राज्यकर एकवार ही लेना चाहिये। दो वार उसको कभी भी प्रयोग न करना चाहिये। यदि इस नियम का पालन करना कठिन हो तो समाहर्ता किसी कार्य्य के वहाने पौर तथा जानपद लोगों

---

‡ वर्धकि पोषक का अर्थ डाक्टर शामशास्त्री ने रंडी रखने वाला अर्थ किया है जब कि भृत्य भरणीय (९१) प्रकरण में उन्होंने इसका अर्थ दूसरा किया है। **बंधकि पोषक** का अर्थ रंडी रखने वाला है। वंधकि पोषक तथा वर्धकि पोषक यह दो भिन्न शब्द मालूम पडते हैं।

* योनि पोषक का अर्थ पशु पालक है।

† बंधकि पोषक, वर्धक पोषक तथा वर्धकियोनिपोषक यह तीन शब्द प्रकरण ९० तथा ९१ में आये हैं। डाक्टर शामशास्त्री तीनों स्थानों पर इनके तीन भिन्न २ अर्थ किये हैं। यदि वर्धकि का अर्थ वढई माना जाय तो प्रकरण९० में आये **वर्धकि पोषक** का अर्थ रंडी रखने वाला कैसे हो सकता है ? यदि रंडी रखने वाला ही अर्थ माना जाय तो प्रकरण ९१ में इसका अर्थ बढ़ई कैसे किया गया। यदि वंधकि तथा वर्धकि में कुछ भी भेद न माना जाय तो तीनों हो स्थानों पर रंडी रखने वाला अर्थ होना चाहिये। वर्धकि का अर्थ बढई ठीक मालूम पडता है और वंधकि पोषक का रंडी रखने वाला अर्थ ठीक जंचता है।

से धन मांगे । राजा के साथ मिले हुए (योग पुरुष) लोग सबसे पहिले अधिक से अधिक धन दें । इसी बहाने राजा प्रजा से धन इकट्ठा करे । जो कम दें उनको कापटिक लोग (खुफिया पुलिस के लोग) बुरा भला कहें । धनाढ्यों से अधिक से अधिक सहायता देने के लिये कहा जाय । जो लोग राजा का भला करने के लिये अपनी इच्छा से धन दें उनका—आसन स्थान छत्र पगड़ी गहना आदि बदले में देकर आदर सत्कार किया जाय । जादूगर तथा ऐन्द्रजालिक के भेस में फिरने वाले गुप्तचर पाखंडियों कंपनियों तथा अश्रोत्रियभोग्य (जिनकी आमदनी किसी श्रोत्रिय ब्राह्मण के पास न जाती हो) मंदिरों की आमदनी को और मृत पुरुष तथा ऐसे पुरुष की, संपत्ति को जिसका मकान जलगया हो बचाने के बहाने से अपने हाथ में करके भाग जांय ।

देवाध्यक्ष दुर्ग तथा राष्ट्र के देवताओं की आमदनी को एक स्थान में रखें और राजा को देदिया करे या-किसी एक रातमें मंदिर खड़ा करे या-सिद्धों के रहने का मकान बनवादे या-घाट तैय्यार कर दे और कहे कि कोई न कोई विपत्ति सिरपर आपड़ने वाली है अतः उसको दूर करने के लिये उत्सव तथा पूजा पाठ होना चाहिये (इस बहाने से धन इकट्ठा करे) या—चैत्य तथा उपवन के किसी पेड़ में असामयिक फूल तथा फल के आने को प्रगट कर देवताओं के आने को सूचित करे या—किसी पेड़ में मनुष्य को छिपाकर शोर मचवाये और इस प्रकार राक्षस तथा भूतप्रेत का भय प्रगट कर सिद्ध के भेस में फिरने वाला गुप्तचर प्रजा से धन इकट्ठा करे, या-प्रजा का धन खींचने के लिये (कुंये में छिपी सुरंग लगाकर) अनेक सिरों वाले नागको दिखावे, या—जो लोग बहुत ही श्रद्धालु हों उनको सांपकी मूर्त्ति, मंदिर के कोने या वल्मीक में छेदकर उसके अन्दर दवाई से बेहोश किये हुए काले नागको दिखावे या जो अश्रद्धालु हों उनके पेय और परोक्ष पदार्थोंमें रस मिलाकर यह कहे कि देवताका अभिशाप पड़ गयाहै। या—किसीजात बहिष्कृत व्यक्तिको सांपसे कटवाकर अशगुनदूर करनेके वास्ते प्रजा से धन लिया जाय या—वैदेहक (व्यापारी) के भेस मे

गुप्तचर किसी बड़े व्यापारी के पास रह कर व्यापार करने लगे। माल के विकने व्याज के आने तथा लाभ मिलने के कारण जिस दिन उसके पास बहुत सा धन इकट्ठा होगया हो उसी दिन रात में चोरी करके भाग जाय या—रूपदर्शक तथा सुवर्णकार के भेस में भी इसी प्रकार चोरी की जाय या--वैदेहक (व्यापारी) के भेस में गुप्तचर बड़े भारी व्यापारी के तौर पर प्रख्याति प्राप्त करे और एक दिन विदेशी व्यापार के बहाने बहुत सा सोना चांदी जवाहरात गिरों रक्खे तथा उधार पर ले ले या--किसी कंपनी का बहुत सा माल दिखाकर (बदले में) बहुत ही अधिक मात्रा में (सोना चांदी) ऋण के तौर पर ग्रहण करे और अपने माल का दाम भी ले ले। यह करने के बाद रात में अपनी चोरी करवादे या—साध्वी (भले मानुस के घर की) के भेस में फिरने वाली खुफिया औरत बदमाशों को उन्मत्त करे और अपने ही मकान में किसी बहाने से उनको पकड़वाकर उनकी संपत्ति कुड़क करवादे—या बदमाशों तथा कुलीनों के झगड़े में रसद (जहर देने वाले) चुपे से एक पक्ष के लोगों को जहर दे दे और इस प्रकार उनकी संपत्ति कुड़क करवादे या—जब कभी जात से पतित हुआ कोई व्यक्ति भलेमानुस के रूप में रहने वाले किसी दूसरे राज्यविद्रोही व्यक्ति से ऋण गिरों रक्खा सुवर्ण व्यापार में लगा धन या पाप भाग उसके घर पर जाकर मांगे। उसको दास और उसकी स्त्री लड़की तथा बहू को दासी "अथवा स्त्री" कहकर गाली दे रात को उसी के दरवाजे पर धरना मार के सोजाय। या किसी दूसरे स्थान में रह जाय तो मौका पाकर तीक्ष्ण उसको जान से मार डाले और प्रजा में शोर मचादे कि क्योंकि वह धन चाहता था अतः उसको मरवाया गया है। इस अपराध में राज्य विद्रोही तथा उसके पक्षपातियों की संपत्ति कुड़क करली जाय या—सिद्ध के भेस में गुप्तचर बागी आदमी को जादूगरी के कामों को दिखा कर प्रलोभन दे कि "मैं अक्षय हिरण्य प्राप्त करना राजगृह में घुसना, स्त्री को फंसाना, शत्रु को बीमार करना, उमर बढ़ाना तथा लड़का पैदा करवाना आदि विद्याओं को जानता हूं" इत्यादि। यदि

वह विश्वास में आजाय तो रात में मंदिर पर शराब मांस गंध द्रव्य आदि चढ़ावे, जहां मुर्दा का कोई अंग या बच्चा गड़ा हो वहां पर पूर्व से ही एक सदृश रंग का गड़ा सोना खोदकर दिखावे बहुत कम वाले। इसके बाद कहे कि अधिक सोना प्राप्त करने के लिये अधिक चढ़ावा चढ़ना चाहिये। जाओ यह सोना लो और इस से जादा दाम का चढ़ावा खरीद कर रात में आओ। जब वह बाजार में चढ़ावा खरीदने जाय तो उसको पकड़ लिया जाय। या--माता के भेस में खुफिया औरत कहे कि अमुक राज्यद्रोही ने मेरे लड़के को बलि चढ़ाने के लिये मार डाला है। जब कभी वह रात में जंगल के अन्दर शिकार या यज्ञ करने के लिये जाय तो तीक्ष्ण लोग उसको मार डालें तथा जात बहिष्कृत की तरह उस के साथ व्यवहार करें या—उसके नौकरों के भेस में खुफिया तनख्वाह में मिले सिक्कों में जाली सिक्का मिलाकर या उस के घर में काम करने वाल कारीगर के भेस में खुफिया जाली सिक्के बनाने के संपूर्ण उपकरण रखकर उसको पकड़वादें या–चिकित्सक के भेस में खुफिया बीमारी न होते हुए भी उसको बीमार कहे या सत्री [खुफिया का एक भेद] उस के घर में राज्याभिषेक के सामान रखदें और कापटिक [खुफिया का दूसरा भेद] के मुंह से दुश्मन की आज्ञा सुनावे और कारण प्रगट करे। अधार्मिक बागियों के साथ इसी ढंग पर बर्ताव किया जाय परन्तु सब लोगों के साथ यह बात न की जाय।

राज्य कर पके हुए फल की तरह समय पर ग्रहण किया जाय कच्चे फल की तरह असंतोष बढ़ाने वाले राज्यकरको प्राप्त करने की कोशिश न की जाय।

९१ प्रकरण।

भृत्य भरणीय।

दुर्ग तथा जनपद की शक्ति के अनुसार भृत्य रखे जांय। उनकी भृति में राजकीय-आय का चौथाई खर्चा किया जाय। भृति इतनी होनी चाहिये कि भृत्य कार्य्य करने में समर्थ हो सके तथा उनके

शरीर को हानि न पहुंचे। धर्म्म तथा अर्थ की अवहेलना किसी भी काम में न करे।

ऋत्विग्, आचार्य्य, मन्त्रि, पुरोहित, सेनापति, युवराज, राज माता तथा राजमहिषी को ४८०० पण वार्षिक भृति मिले। इतनी भृति पाकर वह कभी भी प्रलोभन में न पड़ेंगे तथा असंतुष्ट भी न होंगे।

दौवारिक, आन्तर्वंशिक, प्रशास्ता, समाहर्ता, तथा सन्निधाता को २४०० पण मिले। इतनी तनखाह पाकर यह सदा ही कर्मण्य रहेंगे।

कुमार, कुमार-माता, नायक, पौर, व्यावहारिक, कार्मान्तिक, मन्त्रिपरिषद् तथा राष्ट्रान्तपाल, को १२०० पण मिले। इतनी भृति पाकर यह सदा ही स्वामिभक्त बने रहेंगे तथा सेना द्वारा सहायता देने के लिये तत्पर रहेंगे।

श्रेणी-मुख्य, हस्ति-मुख्य, अश्व-मुख्य, रथ मुख्य, तथा प्रदेष्टा को ८००० पण वार्षिक भृति मिले। इससे यह अपने वर्ग के लोगों को अपने से कभी भी पृथक् न होने देंगे।

पत्त्यध्यक्ष, अश्वाध्यक्ष, रथाध्यक्ष, हस्त्पद्ध्यक्ष द्रव्यपाल, हस्ति पाल तथा वनपाल को ४००० पण मिले।

रथिक, अनीक-चिकित्सक, अश्वदमक, वर्धकि तथा योनि-पोषक को २००० पण मिले।

कार्तान्तिक, नैमित्तिक, मौहूर्त्तिक, पौराणिक, सूत, मागध, पुरोहित के संपूर्ण पुरुष तथा अध्यक्ष को १००० पण मिले।

शिल्पी, पदाति, संख्यायक, तथा लेखक आदि वर्ग के नौकरों को ५०० पण वार्षिक मिले।

कुशीलवों को ३५० पण, तूर्यकरों [बाजा बजाने वाले] को दुगुना और कारीगरों तथा शिल्पियों को १२० पण मिले।

चतुष्पद-परिचारक, द्विपद-परिचारक, पारिकार्मिक [श्रमी], उपस्थायिक [साथ रहने वाला], पालक [गोपाल, गोप]† तथा

† पाल का तात्पर्य्य गोपाल या गोप है। संपूर्ण स्मृतियों में पाल का यही अर्थ दिया है। डाक्टर शामशास्त्री ने शरीर रक्षक (Body Guard) अर्थ किया है। शब्दार्थ को सामने रखते हुए उनका अर्थ त्रुटि पूर्ण नहीं कहा जा सकता।

विस्टि बंधक (श्रमी प्राप्त करने वाला) को ६० पण मिले।

आर्ययुक्त (राजकुमार को खिलाने वाला) आरोहक (घोड़े पर चढ़ाने वाला), माणवक (जादूगर), शैलखनक (खान खुदाने वाला), संपूर्ण सेवक, आचार्य्य, विद्वान् आदिकों को पुरस्कार (पूजा वेतन) ५०० से १००० तक योग्यतानुसार दिया जाय।

योजन तक जाने वाले दूत को १० पण और सौ योजन तक जाने वाले दूत को २० पण मिले।

राजसूयादि यज्ञ में जो काम करें तो उनको साधारण वेतन से तिगुना वेतन मिले। राजा के सारथि को १००० पण मिले।

कापटिक, उदास्थित, गृहपतिक, वैदेहक तथा तापस के भेस में काम करने वाले गुप्तचर या खुफिया को १०० पण मिले।

ग्रामभृतक, सत्रि, तीक्ष्ण, रसद तथा भिक्षुकी को ५०० पण मिले। चारसंचारी [चार को इधर उधर भेजनेवाले] को ३०० पण या मेहनत के अनुसार अधिक वेतन मिले।

सौ वर्ग से हजार वर्ग तक के अध्यक्ष भत्ता तनखाह नियुक्ति तथा बदली [विक्षेप] का प्रबंध करें। राजपरिग्रह [शाहीमहल], दुर्ग तथा राष्ट्र की रक्षा में नियुक्त, सेवकों की बदली न कीजाय। मुख्य [अफसर] लोग स्थिर हों तथा संख्या में बहुत हों।

जो लोग राजकीय काम करतेहुए मरजांय उनके बालकों तथा स्त्रियों को भत्ता मिले। बालक वृद्ध तथा बीमार लोगों पर अनुग्रह कियाजाय। मृत्युसंस्कार रोग तथा सूतिका संबंधी कामों में इन का धन तथा मान से उपकार कियाजाय।

राजा के पास यदि नकद धन बहुत न हो [अल्पकोश] तो इनको जांगलिक द्रव्य [कुप्य] खेत और कुछ नगदी देवे। यदि वह उजड़ेहुए स्थान को बसाना चाहे तो नगदी ही देवे। ग्रामके सदृश व्यवहार प्रचलित करने के लिये ग्राम किसी को भी न सुपुर्द करे। जो लोग इनमें से विद्वान् तथा कर्मण्य हों उनको भत्ता तथा वेतन कुछ अधिक दियाजाय। साठपण वेतन पानेवालों को तनखाह के अनुसार अढ़इयों में भत्ता मिले।

पदातियों घोड़ों रथों तथा हाथियों को संधिदिन छोड़कर सूर्य्योदय के बाद कवायद कराई जाय। राजा उनमें सदा मौजूद

रहे और कभी कभी परेट देखे । शस्त्र तथा आवरण [कवच] आदि राजा की मुहर डालने के बाद ही आयुधागार में प्रविष्ट किये जांय। सरकारी लाइसैन्स [मुद्रा] के बिना कोईभी हथियार लेकर इधर उधर न फिरे। जो हथियार नष्ट हो जाय या खोजाय उसका दुगुना धन उससे वसूल कियाजाय। टूटेहुए हथियारों की गणना की जाय। अन्तपाल व्यापारियोंके हथियारों को अपने पास रखले बशर्ते कि उनके पास हथियार लेकर चलने का लाइसैन्स न हो। चढ़ाई के लिये तैयार होते ही सेना को हथियार दे दे। व्यापारियों के भेस में यात्राकाल [चढ़ाई करने का समय] में फौजों को दुगुने दाम पर रसद दें। इसप्रकार राजकीयपदार्थों का विक्रय होजायगा और तनखाह में दियाहुआ धन पुनः कोश में लौट आवेगा। जो राजा इसढ़ंग पर आय तथा व्ययका प्रबंध करते हैं उनको कोश तथा सेना विषयक विपत्ति नहीं सहनी पड़ती। भत्ता वेतन का प्रबंध इसीप्रकार कियाजाय।

सत्रि (गुप्तचर), वेश्या, कारीगर, कुशीलव तथा बुड्ढे सिपाही आलस्य को दूर फेंककर फौजों की राजभक्ति तथा दिलकी सफाई का ज्ञान प्राप्तकरें।

९२ प्रकरण।

राज्यसेवकों का कर्तव्य।

जो सांसारिक व्यवहार में चतुर हों वह सामर्थ्य [आत्म द्रव्य] तथा प्रभुत्व शक्ति [प्रकृति] युक्त राजा का इष्ट मित्रों के द्वारा सहारा लें। बशर्तेकि वह यह समझें कि 'मैं सहारा चाहता हूं और यह राजा योग्य आदमियों की तलाश में है तथा इस में सब के सब स्वाभाविक गुण [आभिगामिक गुण] मौजूद हैं। द्रव्य तथा प्रभुत्व शक्ति से हीन राजा का आश्रय लिया जासकता है। जो राजा दुष्ट स्वभाव का तथा आत्म संपत् से रहित हो उसका आश्रय कभी भी न लेना चाहिये। क्योंकि ऐसे राजा नीति शास्त्र की

बातों की कुछ भी पर्वाह नहीं करते और बारंबार तकलीफ में पड़ते हैं यदि इनको बहुत संपत्ति मिल भी जाय तो यह उसको संभाल नहीं सकते। जो आत्म संपन्न हो उसको मौका मिलने पर शास्त्र के अनुसार सलाह दे। यदि राजा सलाह मान ले तो उसका स्थान स्थिर होजाता है। बुद्धि विषयक बातों के सम्बन्ध में जब राजा पूछे तो दर्बारियों की कुछ भी पर्वाह न करते हुए वर्तमान तथा भावी के लिये जो धर्म्म तथा अर्थ युक्त मालूम पड़े उसको कुशल व्यक्ति की तरह स्पष्ट स्पष्ट कहे। जब जब राजा उस से पूछे धर्म्म तथा अर्थ के विषय में वह उत्तर दे तथा कहे कि—जो राजा शक्तिशाली मित्रों से युक्त हों और देखने में चाहे साधारण ही मालूम पड़ते हों या जिन को बलवान् राजा की सहायता मिल सकती हो उनके प्रति युद्ध न उद्घोषित करो। हमारे पक्ष वृत्ति [आजीविका] तथा गुह्य [गुप्त बात] बात की आप रक्षा करें। मैं आप को काम क्रोध से दंड का प्रयोग करते समय रोक दूंगा। राजा उसको जिस पद पर नियुक्त करे उसी पर काम करे। राजा के पास बैठे और यदि दूर बैठना हो तो दूसरे के आसन पर जा बैठे असभ्य लोगों के सामने झगड़ कर न कहे, झूठ न बोले, कहकहा मार के न हंसे तथा जोर से न खखारे। दूसरे के साथ बात करते हुए बीच में बोल उठना, कान में बात कहना, आपस में बातें करना, सादी पोशाक पाहनकर या सजधजकर जाना, रत्न या तनखाह बढ़ाने के मामले को सामने कहना, एक आंख या ओठ दबाकर या भौंहें चढ़ाकर बातें करना, शक्तिशाली व्यक्ति से दुश्मनी करना, स्त्रियों से मिलना जुलना, सामन्तदूत दुश्मनों के साथी कैदी तथा हानिकारक लोगों से मिलना एक साथ रहना तथा गुट्ट बनाना छोड़ दे।

इष्ट मित्रों के साथ जाकर राजा को हित की बात बिना देर किये ही कहे। मौका तथा समय पाकर उसको दूसरों के साथ संबंध रखती हुई धर्म्म तथा अर्थ विषयक बातों की सूचना दें।

पूछने पर प्रिय तथा हित बात कहे। जो बात प्रिय तो हो परंतु हानिकर हो वह न कहे। यदि राजा सुनने तथा मानने के

लिये तैयार हो तो अप्रिय होते हुए भी हितकर बात कह दे।

चुप रहना अच्छा है परन्तु बुरी बात राजा को सुनाना अच्छा नहीं है। इस नियम का ख्याल न करते हुए चालाक से चालाक आदमी भी राजा की आंखों से नीचे उतर जाते हैं और बुरे से बुरे आदमी भी इस नियम का पालन कर राजा की आंखों में चढ़ जाते हैं। यही कारण है कि राजा की हंसी में तो हंसे परन्तु कह कहा मारकर हंसने से सदा ही दूर रहे। राजा भी घोर हंसी न करे तथा दूसरों के विषय में घोर बात भी न सुने। जिसने उसका अपराध भूल से किया हो उसको क्षमा कर दे। पृथ्वी के सदृश राजा को स्थिर तथा अचल होना चाहिये। राज्य सेवकों को चाहिये कि वह आत्मरक्षा में सदा ही तत्पर रहें। उनका राजा के काम को करना एक प्रकार से आग के साथ खिलवाड़ करना है। आग तो मृत शरीर को या जीवित शरीर के एक भाग को जलाता है। राजा तो स्त्री पुत्र सहित सारे के सारे कुटुंब को कटवा मरवा सकता है।

९३ प्रकरण।

समय का ख्याल रखना।

अमात्य के पद पर नियुक्त होकर खर्चा आदि निकाल कर शुद्ध आमदनी (net income) को देखे। कौन सा कार्य्य—अन्दरुनी, बाहरी, गुप्त, प्रकाशित, आवश्यक या उपेक्षा के योग्य है इस बात पर विचार करे और प्रत्येक काम की विशेषता प्रगट करे। यदि राजा शिकार जुआ या औरत के फेर में पड़गया हो तो उस के पीछे पीछे चलता जाय। खुशामद तथा प्रशंसा कर कर के उस के पास पहुंचे और किसी तरह से उसको व्यसनों के फंदों से बचाने की कोशिश करे। शत्रुओं के षड्यंत्र धोखे तथा जाल के कामों में फंसने से उसको बचावे। उसके हाव भाव को ध्यान से देखता रहे। काम, द्वेष, हर्ष, दैन्य, भय, परस्पर प्रतिद्वन्द्वी विचार, आदिकों का हाव भाव से ज्ञान होजाता है। यदि राजा खुश हो तो

वह—दूसरे की बुद्धिमत्ता सुनकर खुश होजाता है। जो बात कही जाय उसको ग्रहण करता है। आते ही आसन देता है । आंख खोलकर देखता है। शंका के स्थान में भी किसी प्रकार की शंका नहीं करता। खुशी खुशी बात करता है । नई बात सुनने की प्रतीक्षा करता है। भली सलाह मान लेता है। हंस कर आज्ञा देता है। हाथ से पुचकार देता है। पूज्य लोगों की हंसी नहीं उड़ाता है। पीछे से प्रशंसा करता है। भोजन करते समय याद करता है । साथ सैर करने को जाता है । कष्ट में सलाह लेता है । उसके साथियों की इज्जत करता है। गुप्त बात बताता है । विशेष रूपसे इज्जत करता है। धन देता है। अनर्थ को दूर करता है । इससे विपरीत नाराजगी में होता है । दृष्टान्त स्वरूप—देखते ही गुस्सा करने लगता है। बात नहीं सुनता तथा बात कहने से रोक देता है। आंख उठाकर नहीं देखता तथा आसन नहीं देता। दूसरी आवाज में है। एक आंख से देखता है या भउओं को चढ़ा लेता है। अस्थान में स्वेद, श्वास, मुस्कराहट प्रगटकरता है। अन्दर अन्दर बुड़ बुड़ाने लगता है। एकदमसे उठकर चलदेता है। शरीर या जमीन को खुरचने लगता है। दूसरों को तंग करता है। विद्या वर्ण तथा देश की निन्दा करता है। समान दोषवाले साथी की बुराई, भिन्न दोष वाले व्यक्ति का उपहास, बुराई की प्रशंसा, अच्छे काम की ओर न ध्यान देना, बुरे कामको याद दिलाना, आयेहुए पर ध्यान न देना, बेपरवाही, झूठ बोलना, दर्शकों की बात न सुनना आदि बातों को करता है। आमात्य को चाहिये कि वह पशुओं के हावभाव को भी ध्यान से देखतेरहे। कात्यायन "यह तो बड़े ऊंचे से सींचरहा है" कणिकभरद्वाज 'क्रोंच बाईं ओर उड़गया" चारायण "तिनका लंबा है" घोटमुख "साढ़ी या धोती ठंडीपड़गयी" किंजल्क "हाथी उपर पानीडाल रहा है" पिशुन "रथ तथा घोड़ा अच्छा है" और पिशुनपुत्र "पर्दे में कुत्ते हैं" इत्यादि वाक्यों के द्वारा राजा को उचित कामपर प्रेरित करने के लिये सलाह देते हैं। यदि राजा अर्थ तथा मान से इज्जत न करे तो उसका परित्याग करदियाजाय। राजाके स्वभाव तथा अपने दोष को देखकर वह अपने दोष को दूर करे और किसी मित्र राजा का सहारा ले।

वहां पर रहता हुआ अपने पुराने स्वामी के दोषों को मित्रों के द्वारा दूरकरने का यत्नकरे। इसके बाद स्वामी के जीते हुए ही या मरजाने पर स्वदेश में पुनः लौट आवे।

९४ तथा ९५ प्रकरण।

राज्य का प्रबंध तथा ऐकैश्वर्य्य।

अमात्य राजा पर आई हुई विपत्तियों को दूर करे। राजा की मृत्यु होजाने की संभावना होते ही मित्र तथा हितैषी लोगों की सलाह से वह दर्शक लोगों को महीना दो महीना बाद राजा के दर्शन करवाये। आज कल राजा 'देश पीड़ा को दूर करने वाले, आयु बढ़ाने वाले, पुत्र देने वाले कामों को करता है' यह बहाना बनाकर आवश्यक समयों में प्रजा को राजा का भेस बनाये हुए किसी दूसरे व्यक्ति का दर्शन करवादे। मित्र, शत्रु तथा दूतों के साथ भी इसी चाल को चला जाय। अमात्य ही उनके साथ यथोचित बात चीत करे। अमात्य के द्वारा ही वह राजा को सूचना पहुंचा सके। दौवारिकों तथा अन्तर्वंशिकों (अन्तपुर का रक्षक) के द्वारा राजा की आज्ञाओं की सूचना दे। हानिकारक लोगों के प्रति प्रसन्नता या नाराजगी अप्रत्यक्षरूप से प्रगट की जाय। कई लोगों का मत है कि अपकार करने वालों के प्रति प्रसन्नता ही दिखाई जाय। कोश तथा सेना का प्रबंध बहुत ही अधिक विश्वास योग्य व्यक्तियों के हाथ में दिया जाय और उनको दुर्ग या सीमा प्रदेश पर सुरक्षित रूप से रक्खा जाय। उन ही के समान राजकुमारों तथा मुखियों के साथ भी बहाना बनाया जाय। दुर्ग तथा जंगल का मुखिया और बहुत से पक्ष वाले लोगों का नेता जो कोई सर्दार हो उसको आक्रमण मित्रकुल या बाहरी बाधाओं को दूर करने के लिये भेज दिया जाय। जिस किसी सामन्त से खतरा हो उसको उत्सव, विवाह, हाथी पकड़ना, घोड़ा जमीन तथा माल देना आदिक कामों में फंसादे। उसकी संधि अपने किसी विश्वासनीय मित्र के साथ करादे या उसको जंगली राजाओं या दुश्मनों से

से लड़ादे। उसी के समान शक्तिशाली तथा बंधुए के रूप में रखे कुलीनों को जमींदारी देकर छोड़ दे। कुलीनों साधारण राजपुत्रों तथा मुखियों को साथ लेकर राजकुमार के युवराज्याभिषेक संस्कार का प्रबंध करे। न्यायाधीशों तथा दांडिकों के सहारे राजा के दुश्मनों को पकड़ कर राज्य में शान्ति स्थापित करे। यदि सामन्तादिकों में से कोई भी मुखिया राजा के विरुद्ध उठ खड़ा हो तो "आइये हम आपको ही राजा बना देते हैं" यह कहकर उस को बुलावे तथा प..ड़ कर मरवादे। या उसको राष्ट्री। आपत्तियों के दूर करने पर नियुक्त करे। क्रमशः युवराज पर राज्य का भार डालकर राजा की बीमारी का हाल उस पर प्रगट करे। यह तो हुई घरेलू नीति। विदेशी नीति तो यह होनी चाहिये राजा विषयक विपत्ति के पड़ते ही दिखावे में दुश्मन बने हुए किसी घने दोस्त की सन्धि शत्रु के साथ करवादी जाय। शत्रु के दुर्ग में उस के सामन्तों को किसी तरीके से बसादे। राजकुमार का अभिषेक संस्कार करे तथा उसके बाद उसके साथ झगड़े। यदि शत्रु राष्ट्र पर आक्रमण करदे तो उसका यथोचित उपाय करे। कौटिल्य का मत है कि अमात्य उपरिलिखित प्रकार राजाकी प्रभुत्व शक्ति का प्रयोग करे परन्तु भारद्वाज इस युक्ति के पक्ष में नहीं है उनका मत है कि राजा के बीमार पड़ते ही या मरने का भय होते ही कुलीनों राजकुमारों तथा मुखियों को आपस में लड़ादे और फिर उनको क्रमशः प्रजा में गदर करवाकर मरवा दे। या कुलीनों कुमारों तथा मुखियों को चुप्पे से मरवा कर राज्य को स्वयम् संभाल बैठे। राज्य ही एक ऐसी चीज है कि जिसकी खातिर पिता पुत्र का और पुत्र पिता का दुश्मन हो जाता है राजा की संपूर्ण प्रभुत्व शक्ति को काम में लाने वाले अमात्य का तो कहना ही क्या है? मुंह में आये गिरास को कौन छोड़ता है? जो आई हुई लक्ष्मी को छोड़ दे तो लक्ष्मी उस से नाराज होजाती है यह एक लोक प्रवाद है।

मौके की ताक में बैठे हुए मनुष्य को एक बार ही मौका मिलता है। यदि वह फिर मौका ढूंढे तो मौका उसके हाथ में नहीं आता।

परंतु कौटिल्य को भारद्वाज की बात नहीं पसंद है। उसका विचार है कि लोगों में गदर करवाकर किसी को मरवाना पाप काम

है और यह कोई नियम भी तो नहीं है कि लोग अवश्य ही गदर कर देंगे। इससे तो अच्छा यह है कि अमात्य के गुण से युक्त राज्यकुमार को राज गद्दी पर बैठादें। यदि कोई भी राजकुमार राज्यकार्य्य के लिये समर्थ न हो तो किसी भोगविलासप्रिय राजकुमार, राजकन्या, या गर्भिणी रानी को आगे करके महामात्र लोगों के गुट्ट को कहे कि "यह तो मामला है। अपने घराने की ओर तथा पिता की ओर देखिये। यह तो एकमात्र बहाना है, असली में तो आप ही लोग मालिक हैं। आप ही बतावें कि इस मामले में क्या किया जाय?"। इस प्रश्न पर साथ के लोग उसी समय कहें कि "राजा तथा आप लोगों के सिवाय चारों वर्णों के लोगों की रक्षा करने में कौन समर्थ हो सकता है।" इस प्रकार अमात्य राजकुमार, राजकन्या तथा गर्भिणी रानी के हाथ में राज्य की बागडोर सुपुर्द करें। बन्धुओं, संबंधियों, मित्रों तथा शत्रुओं को भी यही दिखावें। अमात्यों तथा आयुधीयों [फौजी लोगों] का भत्ता बढ़ा दिया जाय। "राजकुमार बड़े होने पर आप लोगों का भत्ता और भी अधिक बढ़ा देगा" इस प्रकार उनको सांत्वना दीजाय। दुर्ग तथा राष्ट्र के मुखियों को भी इसी प्रकार की बात कही जाय। मित्र तथा अमित्र पक्ष के लोगों को भी इसी ढंग से समझाया जाय। राजकुमार की शिक्षा में विशेष रूप से यत्न किया जाय। यदि वह लड़की हो तो सजातीय व्यक्ति से बच्चा पैदा करवा कर उसको राज्य पर बैठाया जाय। माता के चित्त में क्षोभ न हो इसके लिये समान गुणवाले, खूबसूरत, लड़के को उसके प्रतिनिधि के रूपमें उसके पास रखदे। मासिकधर्म्म के दिनों में राजकन्या की विशेष रूप से रक्षा की जाय। अमात्य अपने लिये किसी प्रकार का भी भोगविलास का सामान न करे और न वह सजधज के साथ ही रहे। राजा के लिये गाड़ी घोड़ा गहना स्त्री महल आदि सामग्रियों का प्रबंध करे।

जब राज कुमार जवान होजाय तो अमात्य उसको प्रसन्न देख कर उसकी सेवा करते रहें और यदि उसको अप्रसन्न देखे तो उसको छोड़दे और रानी को खुफिया पुलिस के लोगों तथा राज

कुमार की रक्षा के तरीकों से सूचित कर जंगल में चला जाय या किसी एक बड़े यज्ञ को प्रारंभ करवाये । या मुखियों के वश में आये हुए राजकुमार को इतिहास तथा पुराण के दृष्टान्तों के द्वारा उसके प्रिय लोगों के साथ जाकर अर्थशास्त्र की शिक्षा दे । या सिद्ध के भेस में योगी का रूप धारण कर राजकुमार को अपने काबू में करे तथा बदमाश लोगों को पकड़वा कर दंड दिलवाये ।

६ अधिकरण ।

मंडलयोनि ।

९६ प्रकरण

प्रकृति के गुण ।

१ स्वामी, २ अमात्य' ३ जनपद, ४ दुर्ग, ५ कोश, ६ दंड तथा ७ मित्र यह प्रकृति [प्रभुत्व शक्ति] नाम से पुकारे जाते हैं ।

१. स्वामि के गुण । महाकुलीन [ऊंचे खांदान का], दैवबुद्धि (बहुत ही अधिक बुद्धिवाला), प्रभावशाली, दूरदर्शी, धार्मिक, सत्यवादी, एक बात कहने वाला, कृतज्ञ, उच्च उद्देश्यवाला (स्थूललक्ष), बड़ा उत्साही, शीघ्र काम करने वाला (अदीर्घ सूत्र), सामंतो को वश में रखने वाला, दृढ़ निश्चय, योग्य योग्य मन्त्रियों से भरा दर्बार करनेवाला तथा शिक्षा का इच्छुक आदि स्वाभाविक गुण हैं। शुश्रूषा (जानने की इच्छा) श्रवण, ग्रहण धारण (याद करना) विज्ञान (पूर्णरूपसे समझ लेना), तर्क वितर्क, परिणाम पर पंहुंचना आदि बुद्धि के गुण हैं। शौर्य (शूरवीरत्व), अमर्ष (दृढ़ निश्चय होना), शीघ्रता, चतुरता आदि उत्साह के गुण माने जाते हैं । प्रज्ञा (बुद्धि), प्रगल्भ, स्मृति, मति (समझ), बल, संपूर्ण विद्याओं में चातुर्य, प्रभाव संयमी, कृतशिल्प, तकलीफ में

मार्ग निकालना, अदृष्ट का प्रतीकार करना, बदलेमें दंड तथा अनुग्रह करने में समर्थ, दीर्घदर्शी, देश काल से लाभ उठाना, पुरुषार्थ, कार्य्यप्रधान. संधि विग्रह तथा त्याग में समर्थ, संयमी, दूसरे के दोषों से लाभ उठाना, गुप्त बात को गुप्त रखतेहुए भी दूसरे की हंसी उड़ाना तथा अपनी तेजस्विताको न खोना, भौंएं न चढ़ाना, काम क्रोध लोभ स्तम्भ चपलता उपताप [पश्चात्ताप] चुगली आदि से हीन, समर्थ, मुस्करा के बोलना, स्पष्ट बोलना, बड़े लोगों के द्वारा रीतिरिवाज को जानना आदि आत्मशक्ति के गुण समझे जाते हैं।

२. अमात्य के गुणों पर पहिले बीच में तथा आगे प्रकाश डाला जा चुका है।

३. जनपद विस्तृत स्थानवान, स्वावलंबी, विपत्ति में दूसरों को सहायता देने में समर्थ, सुरक्षित, उत्पादक [आजीन], शत्रुद्वेषी, शक्यसामन्त (जिसका सामंत या जमींदार शक्तिशाली हो), कीचड़ पत्थर ऊसर ऊंची नीची जमीन कांटे शेर मृग तथा जंगल से रहित, खूबसूरत, खेती खान लकड़ी तथा हाथी के जंगलोंसे युक्त, गोप्रधान, पुरुषप्रधान, जिसकी गोचरभूमि सुरक्षित हो, पशुयुक्त, नहर तालाव या कुंये के पानीसे सींचाजाने वाला, जलीय तथा स्थलीय मार्ग से युक्त, सार, चित्र तथा नानाविध पण्यों से युक्त, दंड तथा करदेनेमें समर्थ, जिसमें मेहनती किसान हो तथा स्वामी मूर्ख न हो, नीच जातके लोग जादा हों तथा मनुष्य धार्मिष्ट तथा राजभक्त हों—यह सब जनपद के गुण हैं।

४. दुर्ग। दुर्ग के गुणों पर पूर्वमें प्रकाश डाला जा चुका है।

५. कोश। कोश या खजाना वही उत्तम है जिसमें पूर्वजों का या अपना धर्म्म से कमाया सोना हो तथा बड़े बड़े नानाप्रकार के हीरे हों और जो कि बड़ी बड़ी विपत्ति को सुगमता से सहसके।

६. दंड। उत्तम सैनिक वही हैं जो कि पितृ पितामह के समय से चले आये हों, स्थिर रूप से नौकर हों, स्वामि की आज्ञा के

अनुसार चलते हों, जिनके लड़के तथा स्त्री संतुष्ट हों, बाहर रहते हुए भी एक देश रहते हों, जहां कहें वहां जाने के लिये तैय्यार हों, दुःख सहने के लिये तैय्यार हों, बहुत से युद्ध लड़ चुके हैं, लड़ाई के सबके सब हथियार चला सकते हों, राजा की समृद्धि तथा ह्रास में भाग लेने वाले हों, उसकी गलतियों में गलती न करने वाले हों तथा जिनमें क्षत्रियों की संख्या अधिक हो।

७. मित्र। दोस्त भी वही अच्छे हैं जो कि पितृ पितामह के समय से दोस्त हों, स्थिर स्वभाव के हों, वश में रहते हों, तथा आसानी से ही लड़ाई के लिये भारी तैय्यारी कर सकते हों। दुश्मन वही अच्छे हैं जिनके अपने राज्य में अराजकता हो, दर्बार भी बहुत बड़ा न हो, लोग असंतुष्ट हों, अन्याय करते हों, व्यसनों में फंसे हों, निरुत्साही तथा भाग्य पर भरोसा रखते हों, वे समझे बूझे काम करते हों, और जो कि निस्सहाय नपुंसक तथा हानिकर हों। ऐसे दुश्मन क्षण में ही आसानी के साथ नष्ट किये जा सकते हैं।

शत्रु को छोड़कर गुण युक्त उपरिलिखित सातों प्रकृतियां राजा के अंग के तुल्य हैं। जो राजा इन्द्रियों को वश में रखने के कारण बुद्धिमान् तथा आत्मवान् (समर्थ) होता है वह दरिद्र से दरिद्र तथा असंपन्न (असमर्थ या असमृद्ध) प्रकृति को समृद्ध तथा संपन्न बना देता है। इससे विपरीत अनात्मवान् तथा असंयमी राजा समृद्ध तथा अनुरक्त प्रकृति को भी नष्ट कर देता है। चारों दिशाओं का स्वामी होकर भी दुष्प्रकृति तथा अनात्मवान् राजा शत्रुओं के पंजे में फंस जाता है या प्रकृतियां स्वयं ही उसका नाश कर देती हैं। छोटी से छोटी भूमि का भी आत्मवान् तथा नीतिनिपुण राजा प्रकृति रूपी संपत्ति से युक्त हो संपूर्ण पृथ्वी का स्वामी होजाता है और कभी भी ह्रास को नहीं प्राप्त करता।

९३ प्रकरण।

शान्ति तथा उद्योग।

प्रजा की समृद्धि शान्ति तथा उद्योग पर निर्भर है। शुरु किये हुए कामों से फल प्राप्त करने के यत्न का नाम ही उद्योग [व्यायाम) है। उत्पन्न फल के उपभोग में विघ्नों के न होने का नाम ही शान्ति [शम] है। राजा की छः प्रकार की नीति से शान्ति तथा उद्योग बढ़ता है। क्षय स्थान तथा वृद्धि यह तीन ही क्रम हैं। इन के मनुष्य सम्बन्धी १ नय २ तथा अपनय और दैव संबन्धी ३ अय ४ तथा अनय यह चार कारण हैं। दैवी तथा मानुष काम सांसारिक व्यवहार के हेतु हैं। दैवी से तात्पर्य्य अदृष्ट फल और मानुष से तात्पर्य्य दृष्ट फल से है। यदि वह अदृष्ट फल है तो उस को अय कहते हैं। इसी प्रकार समृद्धि को बढाने वाले मानुष काम को नय नाम दिया जाता है। इस से विपरीत को अनय तथा अपनय समझना चाहिये। मानुष काम सोचे जासकते हैं परन्तु दैवी कामों में यह बात नहीं है।

विजिगीषु [जीतने की इच्छा वाला। जीतने में समर्थ] राजा वही है जो कि गुणी शक्तिसम्पन्न तथा प्रभुत्वशक्ति से युक्त हो। उसके चारों ओर कुछ २ दूरी पर जो राजा हों उनको अरिप्रकृति [दुश्मन] समझना चाहिये। इसी प्रकार पड़ोस में रहने वाले राजा मित्र प्रकृति [दोस्त] भी होते हैं। शत्रु के गुणों से युक्त यदि कोई सामंत है तो उसको शत्रु ही मानना चाहिये। यदि यह व्यसनों में लीन हो तो उस पर चढाई कर देनी चाहिये। यदि वह दुर्बल तथा सहायता से रहित हो तो उसको नष्ट करदेना चाहिये। इससे विपरीत दशा में उसको तकलीफ देना चाहिये तथा उस से धन निचोड़ना चाहिये। यह तो हुए शत्रुओं के भेद। अब मित्रों के विषय में प्रकाश डाला जायगा।

विजिगीषु के सामने मित्र, अरि-मित्र (दुश्मन का दोस्त), मित्र-मित्र (विजिगीषु के मित्र का मित्र) तथा अरिमित्र-मित्र

(दुश्मन के मित्र का मित्र) प्रायः होते हैं। विजिगीषु के पीछे पार्ष्णिग्राह (पीठ पर का दुश्मन) आक्रन्द (पीठ पर का दोस्त) पार्ष्णिग्राहासार (पार्ष्णिग्राह का मित्र) तथा आक्रन्दासार (आक्रंद का दोस्त) होते हैं। विजिगीषु की सीमा के साथ सटे, समान कुल वाले, तथा स्वभाव से ही दुश्मन राजा को सहज और जो दूसरों को उसके विरुद्ध भड़काता हो तथा विरुद्ध हो उसको कृत्रिम कहते हैं। इसी प्रकार उसकी सीमा से जुड़े, रिश्तेदार तथा स्वभाव से ही मित्र राजा को सहज तथा जो धन जीवन के हेतु से मित्र बनगया हो उसको कृत्रिम समझना चाहिये। शान्ति तथा युद्ध के समय में निग्रह (रोकना) तथा अनुग्रह में समर्थ, अरि तथा विजिगीषु के मध्य में स्थित राजा को मध्यम और जो शक्तिशाली, निग्रह तथा अनुग्रह से समर्थ, तथा दूर के राष्ट्र का राजा हो उसको उदासीन कहते हैं। विजिगीषु, मित्र, मित्र-मित्र यह तीनों प्रकृतियां (शक्तियां) अमात्य, जनपद, दुर्ग, कोश, दंड तथा प्रकृति (प्रजा) के साथ मिलकर १८ प्रकृतियों का एक संघ बनाती है जिसको मंडल नाम से पुकारते हैं। अरि, मध्यम तथा उदासीनों के मंडलों का क्रम भी इसी प्रकार है । संक्षेप से मंडल चार, राजा की प्रकृतियां बारह और द्रव्य प्रकृतियां (प्रभुत्व शक्ति) साठ और इनका कुलयोग बहत्तर होता है। इनके शक्ति तथा सिद्धि दो भेद हैं। शक्ति से तात्पर्य्य सुख का और सिद्धि से तात्पर्य्य सुख का है। शक्ति—मंत्रशक्ति, प्रभुशक्ति तथा उत्साह शक्ति के भेद से तीन प्रकार की है। ज्ञान बल का नाम मंत्र शक्ति, कोश तथा सेना के बल का नाम प्रभु शक्ति, और चढ़ाई तथा युद्ध करने की शक्ति का नाम उत्साह शक्ति है । इसी प्रकार सिद्धि—मंत्र सिद्धि, प्रभु सिद्धि तथा उत्साहसिद्धि के भेद से तीन प्रकार की है। मन्त्र शक्ति से सिद्ध होने वाले, मंत्रसिद्धि, प्रभुशक्ति से

सिद्ध होने वाली प्रभु सिद्धि तथा उत्साह शक्ति से सिद्ध होने वाली उत्साह सिद्धि है। इन शक्तियों से युक्त राजा शक्तिशाली होता है। जिसके पास यह शक्तियां न हों वह कमजोर होता है। जिसके पास कुछ शक्तियां हों और कुछ न हों उसको समानशक्ति [सम] समझा जाता है। इसलिये राजा को चाहिये कि वह शक्ति तथा सिद्धि प्राप्त करने का पूर्णरूप से उद्योग करे। यदि किसी कारण से उसकी प्रभुत्वशक्ति (द्रव्यप्रकृति) साधारण है तो वह अपने गुणों से या अपने दुश्मनों के दुश्मनों तथा विरोधियों से दोस्ती करले। यदि वह यह समझे कि—मेरा दुश्मन शक्तियुक्त होते हुए भी समयान्तर में कठोर बात, पारुष्य दंड, अर्थदूषण (रुपया आदि प्रजा से जबरन लेना) आदिकों से अपनी शक्ति खो बैठेगा, सिद्धियुक्त होता हुआ भी शिकार जुआ शराव तथा स्त्री के फेर में पड़कर प्रमाद करने लगेगा, प्रभुत्वशक्ति से हीन या प्रमत्त होने के बाद उसका जीतना सुगम हो जायगा, उसके मित्र के दुर्ग यदि उसके पास न रहें तो संपूर्ण सेना के होते हुए भी वह जीता जा सकेगा, 'अमुक बलवान् राजा दूसरे शत्रु के साथ लड़रहा है' यदि उसको सहायता दी जाय तो जीतने के बाद वह मेरी भी सहायता करेगा, आगे चलकर मुझ को मध्यम राजा होने का मौका मिलेगा—तो वह शत्रु की शक्ति तथा सिद्धि को बढ़ने दे।

अपने मित्र के राष्ट्र के चारों ओर मित्र राष्ट्रों की संख्या बढ़ावे और उनका अपने आपको नेता या केन्द्र बतावे। नेता या मित्र के बीच में पड़ा शत्रु नष्ट कर देना चाहिये या उसको शक्तिरहित कर देना चाहिये नहीं तो समयान्तर में वह शक्तिशाली हो सकता है।

७ अधिकरण।

षाड्गुण्य।

९८ तथा ९९ प्रकरण।

षाड्गुण्य का उद्देश तथा क्षय, स्थान तथा वृद्धि।

प्रकृति मंडल [राष्ट्र-संघ] पर ही षाड्गुण्य निर्भर है। पुराने आचार्य्य १ संधि २ विग्रह ३ आसन ४ यान ५ संश्रय तथा ६ द्वैधी भाव को ही षाड्गुण्य [६. प्रकार की राजनीति] मानते हैं। वातव्याधि सन्धि तथा विग्रह को ही मुख्य समझते हैं और शेष बातों को इन्हीं के अन्तर्गत करते हैं। कौटिल्य अवस्थाभेद से षाड्गुण्य ही मानता है। इनमें—शर्तों के साथ शान्ति संधि, हानिकारक उपायों को प्रत्यक्ष रूप से करना विग्रह, उपेक्षा करना आसन, चढ़ाई करना यान, दूसरे का सहारा लेना संश्रय तथा एक से लड़ना और दूसरे के साथ संधि करना द्वैधीभाव कहाता है। यदि शत्रु से कमजोर हो तो संधि करे, लड़ाई के लिये तैय्यार हो तो विग्रह करे, एक दूसरे को हानि पहुंचाने में असमर्थ हो तो उदासीन रहे [आसन धारण करे], यदि समर्थ अधिक हो तो चढ़ाई [यान] करे, यदि कमजोर हो तो सहारा [संश्रय] ले और यदि सहायता से साध्य हो तो द्वैधीभाव [दुतरफी चाल] को धारण करे। इसी को छः प्रकार की नीति कहते हैं।

I. इन नीतियों में से बुद्धिमान् राजा उसी का सहारा लेता है जिससे वह—दुर्ग, सेतुकर्म वणिक्पथ [व्यापारीय मार्ग] शून्य निवेशन [उपनिवेश बसाना], खान, जंगल, हस्तिवन (हाथी का जंगल) तथा अन्य वस्तुएं प्राप्त करने की तथा नये काम शुरू करने की आशा रखता हो या शत्रु के इन्हीं कामों तथा चीज़ों को नष्ट करना चाहता हो। इस प्रकार अपनी बढ़ती को सामने

रखकर अवलंबन की गई नीति को वृद्धि कहा जाता है। जो समझे कि मेरी वृद्धि शीघ्र होने वाली या होरही है और शत्रु का मामला इससे विपरीत है वह शत्रु की वृद्धि की उपेक्षा करे। यदि अपनी तथा शत्रु की वृद्धि समकालीन तथा एक सदृश समझे तो संधि करले।

II. जिस नीति के अवलंबन करने से राजा को स्वयं नुकसान पहुंचे और शत्रु के साथ यह बात न हो, उस नीति को राजा छोड़ दे। इसी को क्षय कहते हैं। जो यह समझे कि समय के गुजरने के साथ उसका नुकसान घटता जायगा और शत्रु का बढ़ता जायगा वह क्षय की उपेक्षा करे। यदि अपनी तथा शत्रु की हानि समकालीन तथा एक सदृश समझे तो संधि करले।

III. यदि किसी नीति के अवलंबन करने में राजा वृद्धि या क्षय न देखे तो उसी पर स्थिर रहे। इसी को **स्थान** कहते हैं। जो यह समझे कि समय के गुजरने के साथ साथ मेरी वृद्धि होती जायगी और शत्रु की हानि, वह स्थान या स्थिर रहने की नीति की उपेक्षा करे। यदि वह अपनी तथा शत्रु की स्थिति [स्थान] एक सदृश समझे तो सन्धि करले। कौटिल्य कहता है कि इस के सिवाय और दूसरा उपाय ही क्या है?

यदि वह यह देखे कि—मैं अत्यंत अधिक उत्पादक कामों को करके शत्रु के कामों को नष्ट करदूंगा—अपने या पराये उत्पादक कामों का फल पाऊंगा—घातक प्रयोगों को करने वाले गुप्तचरों से शत्रु के कामों को बिगाड़ दूंगा—अनुग्रह तथा परिहार (राज्य कर से मुक्ति) सम्बन्धी सुख देकर या अधिक लाभ युक्त कामों को प्रारम्भ कर शत्रु के देश के मेहनती मजदूरों तथा आदमियों को अपनी ओर खींच लूंगा—मेरा शत्रु अतिशयवली राजा के साथ मिल कर अपने काम को नुकसान पहुंचा लेगा—जिसके साथ लड़कर यह मुझ से सन्धि कर रहा है उस के साथ इसकी लड़ाई बहुत ही अधिक बढ़वादूंगा—मेरे साथ इसकी सन्धि होते ही मेरे दुश्मन इस के जनपद को उजाड़ देंगे—शत्रु से तंग कर इस के

जनपद के लोग मेरे यहां आजायंगे—मेरे कामों की वृद्धि होगी—तकलीफ में पड़ने तथा काम बिगड़ने पर शत्रु मेरे रास्ते में कांटे न बोयेगा—दूसरे से मिलकर काम शुरु करने के बाद मेरे काम उन्नत होजायंगे—शत्रुओं से सन्धि कर शत्रु से घिरे मंडल को छिन्न भिन्न करदूंगा तथा एक एक कर उनको जीत लूंगा—सेना से शत्रु को सहायता देकर मंडल प्राप्त करने के लिये उसको उत्साहित करूंगा और इसप्रकार उसको मंडल से लड़ादूंगा तथा पल में मारडालूंगा—तो सन्धि से अपनी वृद्धि देखकर संधि करके बैठ जाय।

यदि वह देखे कि—मेरे जनपद में श्रेणी में संगठित लोगों की बहुसंख्या है या फौजी लोग ही विशेष रूप से रहते हैं--पर्वत वन नदी सम्बन्धी दुर्गों से मेरे जनपद के संपूर्ण मार्ग सुरक्षित हैं—मैं अकेला ही शत्रु के आक्रमण को संभाल सकता हूं—राष्ट्र की सीमा पर बने हुए अविजेय दुर्ग में रहकर मैं दूसरे के कामों को नष्ट कर सकता हूं—व्यसन तथा पीड़ा से उत्साह रहित होकर शत्रु का काम शीघ्र ही बिगड़ जायगा या--दूसरे के साथ लड़ाई में फंसते ही शत्रु के जनपद निवासियों को भगा लूंगा—तो युद्ध उद्घोषित करके अपनी वृद्धि को करे।

यदि यह समझे कि—शत्रु मेरे काम को बिगाड़ने में असमर्थ है। न मैं ही उसके काम को बिगाड़ सकता हूं—कुत्ते सुअर की लड़ाई की तरह इसकी विपत्ति है—अपना काम करते रहने से शान्ति अधिक बढ़ जायगी—तो आसन (उदासीनता) के द्वारा अपनी वृद्धि करे।

यदि यह समझे कि--शत्रु का काम चढ़ाई करने पर ही बिगड़ सकता है। मैंने अपने कामों की रक्षा पूर्ण रूप से कर ली है--तो यान (चढ़ाई करना) के द्वारा अपनी वृद्धि करे।

यदि यह समझे कि—मैं शत्रु के काम को नहीं बिगाड़ सकता हूं या अपने काम को नहीं बचा सकता हूं-तो बलवान् राजा का आश्रय लेकर अपने काम को क्षय [ह्रास] से स्थिर और स्थिर हो जाने के बाद बढ़ावे।

यदि वह देखे कि—एक ओर संधि करके अपने कामों को करूंगा और दूसरी ओर युद्ध करके दूसरे के कामों को नष्ट करूंगा—तो द्वैधीभाव [दोहरी चाल] के द्वारा अपनी वृद्धि करे।

इस प्रकार प्रकृतियों के मंडल में स्थित होकर राजा षाड्गुण्य [छः प्रकार की राजनीति] से अपने कामों को नष्ट होने से बचाकर स्थिर होजाने के बाद बढ़ावे।

१०० प्रकरण।

संश्रयवृत्ति। ❊

यदि विजिगीषु सन्धि तथा विग्रह से एक सदृश लाभ देखे तो संधि को ही करे। विग्रह में क्षय व्यय प्रवास तथा विघ्न आदि उपस्थित हो जाते हैं। आसन तथा यान में आसन ही उत्तम है। द्वैधीभाव तथा संश्रय में द्वैधीभाव का अवलंबन करे। द्वैधीभाव में इच्छानुसार काम हो सकने से अपना ही लाभ रहता है। संश्रय में अपने स्थान में दूसरे का ही उपकार होता है। पड़ोसी जितनी ताकत का हो उससे अधिक ताकत वाले उसके शत्रु का सहारा ले यदि ऐसा शत्रु पड़ोस में नहो तो शत्रु के पड़ोस में रहने वाले तथा उसके समान शक्ति वाले किसी दूसरे राजा का कोश दंड [सैन्य] भूमि आदियों में से किसी एक चीज से उपकार कर चुप्पे चुप्पे आश्रय ग्रहण करे। (दुर्बल राजाओं के लिये) विशिष्ट बल वाले राजा के साथ मैत्री करने से बढ़कर और कोई भयंकर बात नहीं है बशर्ते कि वह किसी शत्रु के हाथमें न पड़ने वाले हों। शक्तिहीन राजा प्रबल राजा के साथ विजयी के सदृश व्यवहार रखे। जब वह उसको किसी ऐसी विपत्ति में पड़ा हुआ समझे जिसमें उसके जान जाने का खतरा हो या उसको बीमारी ने आघेरा हो या गदर की संभावना हो या शत्रु प्रबल होगया हो या मित्र पर विपत्ति पड़ी हो और इससे अपना लाभ देखना हो तो बीमारी धर्म्म काम आदिका

❊ संश्रय-वृत्ति का तात्पर्य आश्रय ग्रहण विषयक नीति में वृत्ति से है।

बहाना बना कर उसके दरबार को छोड़ दे और यदि अपने देश में हो तो इधर उधर न जाय। उसके पास रहते हुए उसकी कमजोरियों से लाभ उठावे। दो बलवान् राजाओं के बीच में पड़कर उसी का आश्रय ले जो कि उस को बचाने में समर्थ हो या जिस पर वह विश्वास कर सकता हो या दोनों से समानरूप में मेल जोल रक्खे। दोनों को यह कहकर भड़कावे कि अमुक का धन फजूल ही खर्च किया है। मौका पड़ने पर दोनों को आपस में फाड़दे और इसके बाद चुप्पे से मरवादे। दो बलवान् राजाओं के पास होनेपर उनहीं के सहारे पड़ोसी दुश्मन से अपने आप को बचावे। यदि पास किला हो तो द्वैधीभाव की नीति से काम ले। संधि विग्रह [आक्रमण] विषयक उपायों से क्रमशः यत्न करे। बागियों दुश्मनों तथा जांगलिकों में किसी ऐसे से दोस्ती कर ले। धीरे धीरे दोनोंमें से एक का विशेषरूप से दोस्त बने और विपत्ति पड़ते ही दूसरे को खतम करदे। या दोनों के साथ दोस्ती बनाये हुए मंडल, मध्यम या उदासिन का आश्रय ग्रहण करे। उन में भी एक से मिल कर दूसरे को या दोनों को ही नष्ट कर दे। यदि दोनों ही मिल कर उस पर आक्रमण करें तो किसी ऐसे राजा का आश्रय ले जो कि मध्यम या उदासीन हो या इनके पक्ष वालों में जो न्यायबुद्धि हो। यदि इनमें से दो राजा एक सदृश मालूम पड़ें तो उसका आश्रय ग्रहण करे जिसकी प्रकृति इस को सुख देने के लिये तैय्यार हो या जहां पर रहता हुआ अपना उद्धार करना सुगम समझे या जिन के साथ बापदादों का घनिष्ट सम्बन्ध हो या जहां पर बहुत से शक्तिशाली मित्रों के मिलने की संभावना हो।

आश्रयसम्बन्धी नीति में मुख्य बात यही है कि दो राजाओं में जो अपना हितैषी हो और अपने को प्रिय मालूम पड़ता हो उसी का आश्रय ग्रहण करे।

१०१-१०२-प्रकरण।

सम हीन तथा ज्याय के गुण और हीनकी संधि।

विजिगीषु शक्ति के अनुसार षाड्गुण्य का प्रयोग करे। सम तथा ज्याय [अपने से प्रबल] से संधिकरे। हीन से विग्रह (युद्ध) करे। ज्याय से विग्रह पैरों खड़े होकर हाथीपर चढ़ेहुए व्यक्ति के साथ युद्ध करने के तुल्य है। सम (समान शक्ति वाला) का सम से विग्रह कच्चे बर्त्तन के कच्चे बर्त्तन से टकराने की तरह दोनों को ही नष्ट करता है। घड़ेपर पत्थर मारनेकी तरह विजिगीषु हीन से लड़कर सफलता प्राप्त करता है । यदि आप संधि न चाहे तो उससे युद्ध के लिये तैय्यार हो या शक्तिहीन के लिये जो बात उपयोगी हो उसको काम में लावे। यदि सम संधि न चाहे तो वह जितना अपकार करे उतना ही उसका अपकार करे। तेजही संधि का कारण है। लोहा तपे विना लोहे से नहीं जुड़ता। यदि हीन नम्रहो तो उससे संधि करे। क्यों कि अकारण कष्ट देने से यदि वह भड़क उठा तो जांगलिक आग की तरह बुझाये न बुझेगा। मंडलभी उसीपर अनुग्रह करेगा । यदि यह देखे कि दूसरेकी प्रकृति लोभी क्षीण तथा असदाचारी हैं और बुलालेने के भयसे मेरी ओर नहीं आती तो हीन होकर भी संधिका ख्याल न करे और युद्ध उद्घोषित करदे। यदि यह देखे कि शत्रुकी प्रकृति लोभी क्षीण तथा असदाचारी होतेहुए भी युद्ध से उद्विग्न हुई हुई मेरी ओर नहीं आरही हैं तो युद्ध करता हुआ भी ज्यायान युद्धको बन्द करदे और उनकी उद्विग्नता को शांत करे।

एक सदृश विपत्ति पड़नेपर यदि विजिगीषु यह समझे कि मेरी विपत्ति भारी और शत्रुकी विपत्ति हल्की है और शत्रु अपनी विपत्ति को दूरकर मेरे साथ युद्ध करने में समर्थ होजावेगा तो ज्याय होकर भी संधि करले। यदि संधि या विग्रह दोनों से ही शत्रुका ह्रास और अपनी वृद्धि न देखे तो ज्याय होकर भी उदासीन बनजाय। मध्य के व्यसन को यदि भयंकर समझे तो हीन होकर भी

युद्ध करे । यदि विपत्ति अप्रतिकार्य्य हो तो ज्याय भी दूसरे का सहारा लेले । यदि एक ओर संधि से और दूसरीओर विग्रह से कार्य्यसिद्धि देखे तो आप द्वैधीभाव [दुतरफी चाल] की नीतिका अवलंबन करे । इसी प्रकार सम षाड्गुण्य का प्रयोग करे । उसमें विशेषता यह है:—

यदि हीनपर शक्तिशाली राजाओं का गुट्ट एक साथ आक्रमण करे तो हीन (अवल) कोश दंड [सैन्य] तथा निजदेश आदि देकर शीघ्रही संधि करे । यदि संधि में गिनीहुई सेना या चुने चुने हुए वीर पुरुष के साथ हीन राजा के उपस्थित होनेकी शर्त हो तो उसको आत्मामिषसंधि—यदि सेनापति तथा राजकुमार के साथ उपस्थित होने की बात हो तो उसको पुरुषांतरसंधि—यदि मुख्य २ सेना पतियों से अपनी रक्षा करतेहुए सेना के साथ किसी दूसरे व्यक्ति या दीन राजा के किसी स्थान पर उपस्थित होने का मामला हो तो उसको अदृष्ट पुरुषसंधि—कहते हैं । उपरिलिखित दोनों संधियों में किसी एक मुखिया तथा स्त्री को बंधुआ करके भेजे और उनके द्वारा गुप्तरूप से अपना काम सिद्ध करवाये । जिसमें कोश के देने से प्रकृति का मोक्ष हो उसको परिक्रयसंधि जिसमें कंधे पर लदवाकर धन भेजाजाय और जो कि अनेक विध हो उसको स्कन्धोपनेय संधि—जिसमें देश काल के विरुद्ध जुरमाना मांगाजाय या स्त्री को बंधुआ रखने से भविष्य में दिये जाने वाले धन से छुटकारा मिल जाय उसको उपग्रहसंधि—जिसमें पारिस्परिक विश्वास तथा एकता मुख्य हो उसको सुवर्ण संधि—जिसमें यह नहो उसको कपाल संधि—कहते हैं । इनमें से पहिले दोमें जांगालिक द्रव्य, हाथी तथा लगाम के साथ घोड़ा—तीसरे में काम न होने का बहाना और चौथे में चुप कर बैठ जाना ही ठीक है । कोशदान संबधी संन्धियों में इन्हीं उपायों को काम में लाना चाहिये । जो गुप्तचरों चोरों तथा घातकों से देश की रक्षा करना चाहे वह भूमि का एक प्रदेश देकर

आदिष्टसंधि—जो शत्रु को कष्ट में फंसना चाहता हो वह राजधानी को छोड़ कर उपयोगी भूमि के नाश करने की शर्तपर उच्छिन्न-संधि—जो भूमि की उपज देकर बचना चाहे वह अपक्रयसंधि—जो भूमि की उपज से अधिक देकर अपनी मुक्ति देखे वह परिभूषण संधि का अवलंबन करे। देश दानविषयक संधियों म से पहिली ही ठीक है। फल तथा उपज देने के साथ से वह संबद्ध संधियां हारी हालत में ही करे। कार्य्य देश तथा काल को देख कर हीन राजा बलवान् राजा के साथ उपरिलिखित संधियां करे।

१०३—७ प्रकरण।

आसन तथा प्रयान।

[क]

आसन

संधि तथा विग्रह के सम्बन्ध में आसन तथा यान की नीति पर प्रकाश डाला जाचुका है। स्थान, आसन तथा उपेक्षण यह आसन (शान्त रहना) के ही भिन्न भिन्न पर्य्याय हैं। इन में विशेषता यह है कि—एक विशेष प्रकार की नीति के कारण शान्त रहना स्थान, अपनी उन्नति तथा शक्ति बढ़ाने के लिये चुप्प बैठना आसन, तथा लड़ाई से हट जाना या लड़ते हुए भी कुछ न करना उपेक्षण कहाता है। एक दूसेर को नुकसान पहुंचाने में अशक्त तथा संधि के इच्छुक विजिगीषुओं का लड़ाई करके या संधि करके चुप्प बैठने को भी आसन कहते हैं।

यदि वह यह देखे कि—अपनी तथा जांगलिक मित्र की सेना के तैय्यार हो जाने के बाद सम (समान शक्ति वाला राजा) तथा ज्याय (अपने से अधिक शक्ति वाला राजा) को पराजित कर सकूंगा तो अन्दर तथा बाहर से तैय्यारी करके वह युद्ध उद्घोषित करे और इसके बाद चुप्प बैठ जाय।

यदि वह यह देखे कि—(कुछ ही समय के बाद) मेरी प्रकृतियां उत्साहयुक्त तथा संगठित हो जांयगी और इष्ट कामों को बेरोक टोक कर सकेंगी या शत्रु के कामों को विगाड़ सकेंगी तो युद्ध उद्घोषित करके चुप्प बैठ जाय।

यदि वह यह देखे कि—क्षीण, लुब्ध, पारस्परिक कलह, चोर जांगलिकों से पीड़ित और अत्याचार से दुःखित शत्रु की प्रकृतियां मेरे उपजाप (षड्यंत्र आदि रचना) से या अपने आप ही मेरी और आजायंगी या—मेरी कृषि तथा वार्ता (कृषि पशु पालन तथा वाणिज्य) समृद्ध हो जायगी तथा शत्रु की नष्ट हो जायंगी या—दुर्भिक्ष से तंग आकर शत्रु की प्रकृतियां मेरे पक्ष में आजायंगी या—मेरी वार्ता क्षीण होजायगी तथा शत्रु की समृद्ध होजायगी। या मेरी प्रकृतियां शत्रु के पास चली जायंगी—या युद्ध करके शत्रु के धान्य पशु हिरण्य आदिकों को ग्रहण कर सकूंगा। या—अपने पण्यों (बाजारी माल) को नुकसान पहुंचाने वाले शत्रु के पण्यों को बाजार में न आने दूंगा। या—शत्रु के व्यापारीय मार्ग से सार द्रव्य मेरे पास आने वाले हैं। या—युद्ध उद्घोषित करने से शत्रु अपने द्रोहियों दुश्मनों तथा जांगलिकों को वश में न करसकेगा या उनके साथ युद्ध करने के लिये बाधित हो जायगा। या—मेरा मित्र कुछ ही समय में विना किसी प्रकार के नुकसान के इतना धन एकत्रित कर लेगा कि उसकी दुर्बलता तथा दरिद्रता दूर हो जायगी और वह पूरी तय्यारी के साथ उपजाऊ भूमि प्राप्त करने के लिये, युद्ध उद्घोषित करने से ही मेरा साथ देगा—तो शत्रु की वृद्धि को रोकने तथा अपनी शक्ति को बढ़ाने के उद्देश्य से युद्ध उद्घोषित कर शान्ति के साथ बैठ जाय। पुराने आचार्यों का विचार है कि इस ढंग की युद्ध उद्घोषणा से अपना ही नुकसान होता है। परन्तु कौटिल्य का विचार है कि उपरिलिखित नीति का मुख्य उद्देश्य कष्ट में न पड़े हुए शत्रु को क्षीण करना है। अपनी शक्ति के बढ़ते ही शत्रु शीघ्र ही नष्ट किया जासकता है।

[ख]

प्रयात ।

युद्ध उद्घोषित करने बाद चुप्प बैठने पर प्रायः यातव्य (जिस पर चढ़ाई करना हो) अपने नाश के भय से उसको सहायता पहुंचाने लगते हैं। इसलिये पूरी तैय्यारी करने के बाद ही इस नीति का अवलंबन करे। यदि इस नीति से उल्टा फल निकलता दिखाई पड़े तो संधि करके चुप्प बैठ जाय। पुरानी सोची हुई शक्ति के प्राप्त होते ही या युद्ध उद्घोषित करने के बाद चुप्प बैठने से शक्ति प्राप्त करते ही असंनद्ध (जो कि तैय्यार न हो) शत्रु पर चढ़ाई करदे। या—

यदि वह यह देखे कि--शत्रु कष्ट में पड़ा है। उसकी प्रकृतियों के कष्ट अनिवार्य्य हैं। या—उसकी प्रकृतियां घरेलू झगड़ों से तंग हैं तथा उससे विरक्त हैं। या—उनमें उत्साह तथा आपस में एकता नहीं हैं। वह शक्ति तथा समृद्धि से रहित हैं। उनको लालच दिया जासकता है। या—शत्रु आग, पानी, बीमारी, संक्रामक रोग तथा दुर्भिक्ष से तंग है, उसके योग्य २ पुरुष घट रहे हैं और उसकी संरक्षण संबंधी शक्ति दिन पर दिन क्षीण होरही है तो युद्ध उद्घोषित करके चढ़ाई करदे। या--

यदि वह यह देखे कि—मेरा मित्र तथा आक्रंद (साथी) शूरवीर तथा अनुरक्तप्रकृति (जिसकी प्रकृति उससे प्रेम रखती हो) है और शत्रु की दशा इससे उल्टी है—पार्ष्णिग्राह (पीठ पीछे का दुश्मन) शक्तिहीन है और मैं आक्रन्द तथा मित्र के सहारे शक्तिहीन पार्ष्णिग्राह से युद्ध उद्घोषित करके चढ़ाई करदे। या--

यदि वह यह देखे कि विजय कुछ ही समय में अकेले ही प्राप्त की जासकती है तो पार्ष्णिग्राह से युद्ध उद्घोषित करके सामने के शत्रु पर चढ़ाई करदे। इससे विपरीत दशा में पार्ष्णिग्राह के साथ संधि करके चढ़ाई करे। या---

यदि वह यह देखे कि यातव्य पर चढ़ाई करना जरूरी है परंतु वह अकेले ही चढ़ाई करने में असमर्थ है तो वह सम, हीन तथा

ज्यायके साथ गुट्ट बनाकर चढ़ाई करे। यदि उद्देश्य स्थिर तथा निश्चित हो तो हिस्सा पहिले से ही तय कर लिया जाय। परंतु जब यह बात न हो तो हिस्सा तय किये बिना ही चढ़ाई करदे। यदि गुट्ट का बनाना संभव न हो तो कुछ हिस्सा देने की प्रतिज्ञा कर सेना मांगे या आधा लाभ बांटने की शर्त करके किसी राजा की सहायता लेवे। [सारांश यह है कि] यदि विजय निश्चित हो तो हिस्सा शुरू से ही बांट लिया जाय और यदि विजय अनिश्चित हो तो हिस्सा शुरू से ही तय न किया जाय।

सेना के अनुसार जो हिस्सा दिया जाय उसको साधारण और जो परिश्रम के अनुसार दिया जाय उसको उत्तम समझा जाता है। लाभ या प्रक्षेप [पूंजी या खर्च] के अनुसार ही उसका विभाग होना चाहिये।

१०८–१० प्रकरण।

युद्धविषयक विचार।

यदि यातव्य तथा अमित्र एक सदृश सामन्त-व्यसन [सामंतों के कारण पैदाहुआ कष्ट] में लीन होंतो पहिले किसपर चढ़ाई की जाय? पहिले अमित्र और उसको वश में करने के बाद यातव्य से युद्ध उद्घोषित करे। अमित्र के मामले में यातव्य से साहाय्य मिलसकता है परन्तु यातव्यके मामले में अमित्र ऐसा कभीभी नहीं कर सकता। युद्ध के लिये गुरु व्यसन में पड़ा यातव्य ठीक है या लघुव्यसन में लीन अमित्र? पुराने आचार्योंका मत है कि **गुरु-व्यसन** [भयंकर विपत्ति में पड़ा] को जीतना सुगम है। कौटिल्य इस विचार से सहमत नहीं है। वह **लघुव्यसन** (साधारण विपत्ति में पड़ा दुश्मन) में लिप्त अमित्र पर ही चढ़ाई करना उचित समझता है। क्यों कि देखने में जो विपत्ति हलकी है, चढ़ाई होने पर वही भारी बनजाती है। निस्सन्देह भयंकर विपत्ति इसी प्रकार भयंकर बन सकती है। परन्तु यातव्य पर चढ़ाई करते ही लघु-व्यसन [साधारण विपत्ति] को दूरकर अमित्र यातव्य को सहायता देसकता है। या पार्ष्णि [पृष्ठवर्ती राष्ट्र] पर आक्रमण करसकता है। यातव्यों में भी गुरु-

व्यसन में लीन न्यायी राजा या लघुव्यसन में लीन अन्यायी राजा या विरक्तप्रकृति वाला राजा उपयुक्त है? विरक्त प्रकृतिवाले राजा पर ही पहिले चढ़ाई की जाय। प्रकृति भारी से भारी विपत्ति में भी पड़ेहुए न्यायी राजा को संभाल लेंगी और यदि वह अन्यायी है तो विपत्ति के काम होने पर भी उसका साथ न देंगी। प्रकृति के विरक्त होने से बलवान् से बलवान् राजा नष्ट होजाता है। इसलिये चढ़ाई के लिये ऐसाही राजा ठीक है। क्षीण तथा लुब्ध प्रकृति आक्रमण के लिये ठीक है या अपचरितप्रकृति [वह प्रकृति जोकि राजा के अत्याचार से तंग हो]? पुराने आचार्य प्रथम के ही पक्ष में हैं। क्यों कि वह सुगमता से ही षड्यंत्र में संमिलित की जासकती है तथा देश को पीडित करने के लिये उभाड़ी जासकती हैं। द्वितीय में यही बात नहीं है क्योंकि उनके मुख्य २ नेताओं को दंड देकर दबाया जासकता है। परन्तु कौटिल्य इसको उचित नहीं समझता। उसका बिचार है कि क्षीण [दुर्बल दरिद्र] तथा लुब्ध प्रकृति (लोभी लालची) स्वामी में अनुरक्त होकर स्वामी का साथ देसकती है। षड्यंत्र फोड़ सकती हैं। अनुराग में आकर वह सब कुछ करसकती हैं। इसलिये द्वितीय ही ठीक हैं। न्यायवृत्ति दुर्बल राजा तथा अन्यायवृति प्रबल राजा में पहिले किस पर आक्रमण कियाजाय? अन्यायवृत्ति वाले प्रबल राजा पर ही सबसे पहिले आक्रमण कियाजाय। क्यों कि उसका साथ प्रकृति न देंगीं, या उसको वह मारने का यत्न करेंगी या वह अमित्र का शरण लेंगीं परन्तु दुर्बल तथा न्याय वृत्ति वाले राजा का साथ, प्रकृति अन्ततक देंगी और उसके उठने गिरने के साथ ही उठेंगीं तथा गिरेंगीं।

सज्जनोंका वेइज्जत करना—असज्जनों का आदर सत्कार करना—अस्वाभाविक हिंसा तथा अधर्म्म का प्रचलित करना—धर्म्म युक्त तथा उचित रीतिरिवाज की अवहेलना करना— धर्म्म को रोक कर अधर्म्म और कार्य्य को नष्ट कर अकार्य्य करना—देयों को न देना तथा अदेयों को देना— अपराधियों को दंड न देना तथा निरपराधों को दंड देना—अग्राह्य का ग्रहण करना तथा ग्राह्य का परित्याग करना—आवश्यक कार्य्य को बिगाड़ना तथा अनर्थयुक्त काम

को करना--चोरों से रक्षा न करना तथा स्वयं प्रजा को लूटना---कार्यों में गुण दोष दिखा कर पुरुषार्थियों को नीचे गिराना, मुखियों को मारना तथा मान्य लोगों का अपमान करना—वृद्धों का विरोध करना--आदि बातों से तथा कुटिल चाल, झूठ, अकृतज्ञता, प्रारंभ किये हुए काम का न करना तथा योग क्षेम [कल्याण] संबंधी उपायों में आलस्य तथा प्रमाद करने से प्रकृति क्षीण लोभी तथा विरक्त हो-जाती हैं। क्षीण प्रकृति लोभ के वश में और लुब्ध प्रकृति विरागता [किसी के प्रति अनुराग न रहना] के पंजे में और विषय प्रकृति शत्रु की चाल में आजाती है या स्वयं स्वामी को मार डालती है। इस लिये प्रकृति के क्षय लोभ तथा विराग के कारणों को न उत्पन्न होने दें उत्पन्न होगये हों तो शीघ्रही उनका प्रतीकार करे। क्षीण, लुब्ध तथा विषम प्रकृति वाले राजाओं में सबसे पहिले किस पर आक्रमण किया जाय ? क्षीण प्रकृतियां तकलीफ तथा नष्ट होने के भयसे शीघ्रही युद्ध का अन्त चाहती हैं। लुब्ध प्रकृतियां लोभ के कारण सदा ही असंतुष्ट रहतीं हैं और इसी लिये शत्रु के षड्यंत्रों में संमिलित हो जाती हैं। विरक्त प्रकृतियां शत्रु के आक्रमण को पसन्द करती हैं। प्रकृतियों के धान्य तथा हिरण्य के क्रमशः घटते जाने से या नष्ट हो जाने से राष्ट्रको बहुत ही नुकसान पंहुंचाता है। इसका उपाय भी सुगम नहीं है यदि राष्ट्र में योग्य पुरुषों की कमी हो जाय तो वह हिरण्य तथा धान्य के सहारे दूर की जासकती है। लोभ किसी किसी मुखिया में ही होता है और शत्रु की संपत्ति को लूटने की आज्ञा देकर उसको शान्त किया जासकता है मुखियों को कुचल देने से विराग नष्ट हो जाता है। क्यों कि प्रकृतियां मुखियों के न रहने पर शान्ति से काम करने लगती है। और शत्रु उनको षड्यंत्र में संमिलित करने में अशक्त होजाते हैं। नेताओं के पकड़ने से तथा आपस में फाड़ देने से प्रायः वह सब प्रकार के कष्ट सहने के लिये तैय्यार होजाती हैं और दुश्मनों से सुरक्षित होजाती हैं।

संधि तथा विग्रह के कारणों पर गंभीर विचार करने के बाद शक्तियुक्त तथा विश्वासपात्र राजाओं के साथ गुट्ट बनावे और इसके बाद शत्रु पर आक्रमण करे। शक्तियुक्त राजा पार्ष्णि [पृष्ठ

वर्ती राजा] पर आक्रमण करते तथा चढ़ाई करने में सहायक होता है और विश्वासपात्र राजा आक्रमण के सफल न होने पर भी ज्यों का त्यों साथ बना रहता है। इनमें भी एक ज्याय, या दो सम राजाओं के साथ गुट्ट बनाकर आक्रमण करने में क्या ठीक है? दो सम राजाओं के साथ गुट्ट बनाना ही ठीक है। क्योंकि ज्याय (अधिक शक्तिवाला राजा) प्रत्येक बात में अपनी ही बात रखेगा। सम दो राजाओं के गुट्ट में ताकत तो उतनी ही रहेगी और कोई भी ज्यादा अड़ न सकेगा। उनको सुगमता से ही फाड़ा जासकेगा। उनमें से यदि कोई दुष्टता करे तो उसको शीघ्र ही सीधे रास्तेपर चलाया जासकता है और दूसरे के साथ मिलकर उसको दंड दिया जासकता है। समान शक्ति वाले एक और कम शक्ति वाले दो राजाओं में किसके साथ मिलकर गुट्ट बनाया जाय? कम शक्ति वाले दो राजाओं के साथ गुट्ट बनाना ही ठीक है। एकतो उनसे दो प्रकार के काम लिये जासकते हैं और दूसरा वह काबू में भी रहते हैं। कार्य के सिद्ध होने पर, हीन राजा शान्तिपूर्वक अपने देश को लौट जाता है॥

अपने यहां से रवाना करने से पूर्व ही उत्तम कामकरने वाले दुष्टप्रकृति राजा के कार्यों का गूढ़ रूप से निरीक्षण करे और (कठिन समय में) यक्ष जैसे आवश्यक स्थान से उठकर सहसा ही उसकी जांच पड़ताल करे या उसको स्त्री को अपने यहां जमानत के रूप में रखले। मित्रता तथा विश्वास होते हुए भी विजय प्राप्त करने वाले समानशक्ति राजा से भय रक्खे। क्योंकि विजय में सफल होकर सम भी ज्याय के साथ भी अपना व्यवहार बदल देते हैं। वृद्धि प्राप्त करने वाले मनुष्य पर विश्वास न करना चाहिये। क्योंकि चित्त को सब से अधिक विकृत करनेवाली चीज वृद्धि ही है। विजयी से न्यून अंश प्राप्त कर संतुष्ट हुआ हुआ अपने घर लौट आवे और यदि उसको कुछ भी अंश न मिले तौ भी चूं चां न करे। इसके बाद मौका पड़ने पर उसके सर पर चढ़ बैठे और अपने हिस्से का भी दुगुना ले लेवे। (उचित तो यह है कि) विजयी विजय प्राप्त करते ही मित्र राजाओं को संतुष्ट कर वर

श्वास्त करे और लाभ तथा हिस्से के मामले में उनही को विजयी रखे। इस ढंग पर जो व्यवहार करता है वह राष्ट्र मंडल का प्रिय हो जाता है।

१११-१२. प्रकरण।

साथ मिलकर चढ़ाई तथा संधियां।

विजिगीषु द्वितीय प्रकृति [पड़ोसी दुश्मन] को निम्नलिखित प्रकार नीचा दिखावे। एक साथ मिलकर चढ़ाई करने के बाद पड़ोसी सामंत को कहे कि "आप इस ओर चढ़ाई करिये और मैं उस ओर चढाई करता हूं। दोनों ओर एक सदृश लाभ है।" यदि सचमुच लाभ हो तब तो संधि अन्यथा विक्रम (मन मुटाव, लड़ाई) होता है। संधि के I परिपणित तथा II अपरिपणित यह दो भेद हैं।

I परिपणित संधि। (१) "आप इस देश पर चढ़ाई करिये और हम इस देश पर चढ़ाई करते हैं" इसढ़ंग की देश विषयक संधिको परिपणित देश संधि (२) "आप इतने समय तक लड़िये और मैं इतने तक लड़ंगा" इसप्रकार की समय संबंधी संधिको परिपणित काल संधि और (३) "आप इतना काम करें और मैं इतना काम करूंगा " ऐसी कार्य विषयक संधि को " परिपणितार्थ संधि के नाम से पुकारा जाता है। यदि वह समझे कि —चढ़ाई करते समय दूसरे को नदी पहाड़ जंगल किले तथा रेगिस्तान को पार करना पड़ेगा, रास्ते में खाना घास चारा लकड़ी पानी आदमी आदि कुछ भी न मिलेगा, इष्ट स्थान बहुत ही दूर है तथा अन्य स्थानों से सर्वथा भिन्न है तथा वहां छावनी बनाने का कोई भी स्थान नहीं परन्तु हमको चढ़ाई करते समय ऐसे

देशों तथा स्थानों में से न गुजरना पड़ेगा तो परिपणित देश संधि करले। यदि वह यह समझे कि—दूसरे को भयंकर गरमी, सरदी, बीमारी, आदि से युक्त देश में से गुजरना पड़ेगा जहां कि सैनिकों के लिये भोजनादि पर्य्याप्त राशि में न मिलेगा छावनी बनाने में रुकावटें पड़ेंगी कार्य्य सिद्ध करने में पर्य्याप्त समय लग जायगा, परन्तु हमको यह सब काल सम्बन्धी बाधायें न झेलनी पड़ेंगी—इस प्रकार काल को सन्मुख रखकर परिपणितकाल संधि करले। या वह यह समझे कि—चढ़ाई करते समय दूसरे को तुच्छ काम, प्रकृति कोप, दीर्घ समय, भयंकर हानि, भयंकर खर्च, विघ्न, निदनीय, अधर्म्म, उदासीनों के विरुद्ध तथा मित्र नाशक काम आदिकों का सामना करना पड़ेगा तथा मैं इन झमेलों से बचा रहूंगा तो परिपणितार्थ संधि करले। इस प्रकार (४) देश काल (५) काल कार्य्य (६) देश कार्य्य तथा (७) देश काल कार्य्य, को सामने रखकर परिपणित संधि सात प्रकार की हो जाती है। अपने युद्धों के प्रारम्भ करने तथा समाप्त करने के बाद ही दूसरे के युद्धों के लिये तैय्यार हो।

II. अपरिपणित संधि व्यसन, त्वरा [जल्द बाजी], अभिमान तथा आलस्य से युक्त किसी बेवकूफ राजा को यदि नीचा दिखाना हो तो देश काल कार्य्य विषयक कुछ भी बात न कर "हम तुम एक हैं" यह कहकर और उसको संधि के विश्वास में रखकर उसकी कमजोरियों का पता लगाले तथा मौका पड़ते ही उस पर आक्रमण करदे, इस ढंग की संधि को अपरिपणित संधि कहते हैं। उसका नियम यह है कि "राजनीति में पंडित तथा चतुर राजा एक सामंत से दूसरे सामंत को लड़ाके और इस प्रकार जो जीते उसकी भूमि को स्वयं छीन ले तथा चारों ओर से अपने पक्ष को प्रबल बनाये रखे"। संधि के—१ अकृत चिकीर्षा २ कृतश्लेषण ३ कृतबिदूषण तथा ४ अवशीर्ण क्रिया यह चार और विक्रम (युद्ध) के १ प्रकाशयुद्ध २ कूटयुद्ध तथा ३ तूष्णीयुद्ध यह तीन भेद हैं।

१. **अकृत चिकीर्षा** सामादि उपायों से नई संधि करना तथा उस में छोटे बड़े तथा समान राजाओं के अधिकारों का उचित रूप से ख्याल रखना **अकृतचिकीर्षा** अर्थात् नई संधि करना कहाता है।

२. **कृतश्लेषण।** मित्र लोगों को बीच में डालकर जो संधि की जाय, जिसका प्रतिपालन आवश्यक हो, जिसकी लिखी शर्तें तथा बातें सुरक्षित रखी जांय और जिस के कारण पुनः लड़ाई मन मुटाव की संभावना हो उसको **कृतश्लेषण** अर्थात् आपस में दृढ़रूप से जोड़ने वाली कहा जाता है।

३. **कृतविदूषण।** (बागियों तथा गुप्तचरों के द्वारा) शत्रु का संधि भंग करना सिद्ध करके संधि-तोड़ना **कृतविदूषण** अर्थात् 'किये हुए को भंग करना' कहाता है।

४. **अवशीर्णक्रिया** भृत्य, मित्र या राज्यापराध के कारण बहिष्कृत व्यक्ति के साथ पुनः संधि करना **अवशीर्णक्रिया** अर्थात् "टूटे को मिलाना" कहा जाता है।

इनमें 'पृथक् होकर पुनः मिलके जाने' [गतागत] के चार कारण हैं। (१) कारण से पृथक् होकर पुनः मिलना। (२) विपरीत। (३) कारण से पृथक् होकर अकारण ही पुनः मिलना। (४) विपरीत।

१. **कारण से पृथक् होकर पुनः मिलना।** स्वामी के दोष से पृथक् होकर उसके गुण के कारण मिलना या शत्रु के गुण से पृथक् होकर उसके दोष के कारण मिलना इसी का उदाहरण है।

२. **विपरीत।** शत्रु तथा मित्र के गुण का ख्याल न कर अपने दोष से या अकारण ही पृथक् होकर मिलने वाला व्यक्ति चल बुद्धि होने के कारण संधि के योग्य नहीं हैं।

३. **कारण से पृथक् होकर अकारण ही पुनः मिलना।** वही मनुष्य इस में सम्मिलित हैं जो कि स्वामी के दोष से पृथक् होकर अपने ही दोष से आकर मिलें।

४. **विपरीत।** अमुक व्यक्ति शत्रु के द्वारा भेजा जाकर या दुष्टता से अपकार करने की इच्छा रखकर या शत्रु को नष्ट करने

वाले को मेरा अमित्र समझ कर और इस लिये डरकर या मेरे नाश के लिये उद्यत शत्रु को उपकार की इच्छा से छोड़ कर" मेरे पास आया है" ।इत्यादि बातों पर विचार करने के बाद जिसको भला समझे उस का आदर सत्कार करे और विपरीत बुद्धि वाले को दूर रक्खे।

जो लोग अपने दोष से जावें तथा शत्रु के दोष से आवें वह अकारण से गये और कारण से आये समझे जाय। "यह मेरी कमी पूरा करेगा या इसका यहां पर ही रहना उचित है या इसके साथी दूसरे स्थानपर संतुष्ट नहीं हैं या यह शत्रु से लड़कर मेरे मित्रों के साथ मिलगया है या लोभी तथा क्रूर शत्रु संघ से या दूसरे से घबड़ाया हुआ है" इत्यादि बातों को जानकर जैसा उचित समझे करे। पुराने आचार्य्यों का मत है कि उनलोगों को साथ में न लेना चाहिये जो कि—काम में नुक्सान उठा चुके हैं, या, शक्ति से रहित हैं, या, विद्या को वेचते है, या, आशाहीन हैं, या, देश को प्राप्त करने के लोभी हैं, या, अविश्वासी हैं, या, बलवान् के साथ युद्धकररहे हैं। परन्तु कौटिल्य इस काम को भयंकर व्यवहार शून्य तथा सहनशीलता रहित समझता है। उसके मत में वही व्यक्ति त्याज्य है जो कि अपना नुक्सान करे और जो शत्रुको नुक्सान पहुंचावे उसके साथ संधि करना चाहिये। जो दोनों का ही अपकार करे उससे सावधान रहना चाहिये। यदि किसी असंधेय [जो कि संधिके योग्य नहीं] राजा के साथ वाधित होकर संधि करना पड़े तो उसकी शक्ति जिस ओर बहुत ही अधिक हो उसओर अपने आपको बचावे।

अवशीर्ण क्रिया (टूटी हुई संधिका पुनः स्थापित करना) में यह आवश्यक है कि जो व्यक्ति शत्रु के पक्ष में हो उसको इतनी दूर वसाया जाय जिससे वह आयुपर्य्यन्त उपकार करता रहे परंतु हानी न पंहुंचासके। या—उसको शत्रु से लड़ने के लिये भेजदिया जाय। या-उसको दंडचारी (सेनापति) बनाकर शत्रु के जंगलों में या राष्ट्रके अंत में फैंक दियाजाय। या—उसको शत्रु के देश में

पुरानी तथा नई चीजों के द्वारा छिपे छिपे व्यापार करने के लिये कहाजाय और शत्रुके साथ मिलजाने का दोष देकर बागी प्रकट कियाजाय । या—उसको भावी घटनाओं का ख्यालकर उपांशु दंड (छिपे रूपसे दंडदेना) से शांत कियाजाय और बाद को उसको मरवा दियाजाय । जो राजा शत्रुओं के बीच में बचपन से ही रहने के कारण शत्रु के दोषों से लिप्त हों और सांपों के बीच में रहने वालों की तरह सदा ही उद्विग्न रहते हों उनसे डरना चाहिये । अंजीर पर पले सँभलके कबूतर की तरह वह हरसमय परेशान करते हैं । दिनके समय में किसी स्थानपर जो लड़ाई लड़ी जाय उसको **प्रकाशयुद्ध** कहते हैं । यह बहुत ही भयंकर आक्रमण होता है । प्रमाद या विपत्ति में लीन राजा इसमें नष्ट होजाते हैं । जिसयुद्ध में एक ओर लड़ाई और दूसरी ओर घूंस दियाजाता हो उसको **कूटयुद्ध** कहते हैं । **तूष्णींयुद्ध** वह है जिसमें षड्यंत्र [उपजाप] के द्वारा शत्रु के मुख्य मुख्य व्यक्तियों को अपने पक्ष में कर लियाजाय ।

११३ प्रकरण ।

द्वैधीभाव से संबद्ध संधि तथा विक्रम ।

विजिगीषु [विजय का इच्छुक] द्वितीयप्रकृति के साथ इस प्रकार व्यवहार करे । किसी एक सामंत के साथ मिलकर दूसरे सामंत पर चढ़ाई करे । यदि वह समझे कि "वह मेरे **पार्ष्णि** (पीठ पीछे का राष्ट्र) पर आक्रमण न कर सकेगा तथा **यातव्य** (जिस पर चढ़ाई की जाय) का साथ न दे सकेगा, बहुतों के साथ मुझ को लड़ना पड़ेगा या मेरे साथी धन तथा सैन्य का प्रबंध कर देंगे तथा अन्दुरुनी दुश्मनों को नष्ट कर देंगे, जांगलिकों तथा उनके अनुयायियों को किलों में घेरकर दंड देंगे, यातव्य को भयंकर विपत्ति में डालकर संधि करने के लिये बाधित करेंगे, आवश्यक लाभ प्राप्त कर शत्रुओं तथा अन्यों का मुझ पर विश्वास करवा देंगे—तो वह एक के साथ युद्ध और दूसरे के साथ मैत्री उद्घोषित

कर किसी सामंत से सेना और किसी से धन मांगे। उसमें बड़ा छोटा तथा मध्यम यदि अपनी अपनी हैसियत के अनुसार सहायता दें तो इसको **सम संधि**, इससे विपरीत में **विषम संधि** और अधिक सहायता देने में **अतिसंधि** कहाती है।

यदि कोई शक्तिशाली **विजिगीषु** तकलीफ में पड़जाय या विपत्तियों से घिर जाय या नुकसान में आजाय तो दुर्बल या हीन मित्र उतना ही धन उससे मांगे जितना कि खर्च सैनिकों द्वारा सहायता पहुंचाने में हुआ हो। विजिगीषु यदि उसको हानि पहुंचाने में अपने आपको समर्थ समझे तो उससे युद्ध उद्घोषित करदे, अन्यथा उसके साथ संधि करले। यदि कोई दूसरा, अपनी शक्ति तथा प्रताप के क्षय को दूर करने के लिये विजिगीषु से मूल (आधार) तथा पार्ष्णि (पीठ पर के राष्ट्र) की रक्षा करने के बदले खर्च से अधिक लाभ मांगे तो वह यदि उसको हितैषी समझे तब तो संधि करले, अन्यथा उसके साथ लड़ाई करने के लिये तैय्यार होजाय। यदि कोई दुर्बल राजा किलों तथा दोस्तों के होने से शक्ति प्राप्त कर, किसी छोटे मार्ग से अपने दुश्मन पर चढ़ाई करना चाहे और इसके लिये विपत्ति तथा तकलीफ में पड़ प्रबल राजा को कम खर्च देकर अधिक सहायता मांगना चाहे तो यदि वह उसको नीचा दिखाने में समर्थ हो तो युद्ध उद्घोषित करदे अन्यथा संधि करले। परंतु यदि कोई शक्तिसंपन्न प्रबल राजा, भारी काम को पहिले से ही हाथ में लिये हुए किसी दूसरे राजा को पुनः भारी खर्च में फंसाना चाहे, दुष्टों को देश निकाला देना चाहे, या बाहर निकाले हुओं को पुनः बुलाना चाहे, पीडनीय तथा विनाशनीय समझ कर हीन राजा को उनसे लड़ाना चाहे—यदि हीन राजा संधि तथा शान्ति का इच्छुक हो तथा कल्याण चाहता हो तो कम लाभ लेकर ही संतुष्ट होजाय तथा उसके साथ लाभ में हिस्सा बंटाले अन्यथा युद्ध उद्घोषित करदे। इसी प्रकार समान राजा समान राजा के साथ संधि तथा विग्रह कर सकता है। दृष्टान्त-स्वरूप यदि कोई राजा—दुश्मन की सेना का मुकाबिला करने के लिये, मित्रों के जंगलों तथा शत्रु के हाथ में फंसी जमीनों को छुड़ाने के लिये, देशिक [अग्र भाग में स्थित], मूल [मध्य में स्थित] तथा

पार्ष्णि [पीठ पीछे स्थित] के बचाने के लिये-समान शक्ति वाले राजा से सहायता मांगे । तथा समान लाभ देने के लिये तैय्यार हो तो उसको यदि कल्याणबुद्धि [हितैषी तथा सज्जन] समझे तो संधि करे अन्यथा युद्ध उद्घोषित करे ।

प्रभुत्वशक्ति रहित [जात-व्यसन प्रकृति] कोई राजा यदि विपत्ति में पड़े तथा चारों ओर शत्रुओं से घिरे किसी समान राजा से कम धन देने के बदले अधिक सहायता मांगे तो वह यदि उसकी हानि कर सकता हो तो युद्ध उद्घोषित करदे, अन्यथा संधि करले । इसी प्रकार यदि कोई राजा कर्त्तव्यवश सामन्तों पर राज्य कार्य्य छोड़ कर समान राजा से अधिक सहायता मांगे तो वह यदि उसको कल्याण बुद्धि समझे तो संधि करले अन्यथा युद्ध उद्घोषित करदे यदि कोई प्रभुत्व शक्ति से हीन होकर भी—विपत्ति में फंसे किसी दूसरे राजा को नष्ट करना चाहे,शुरूमें ही या चढ़ाई करने पर प्रहार करना चाहे, यातव्य [जिसपर चढ़ाई करनी हो] से अधिक धन खींचना चाहे, और इसी लिये अधिक हीन, या सम सामर्थ्य वाले राजा से बारंबार सहायता मांगे तो यदि उनको अपनी सैना की रक्षा करनी हो, दूसरे के अविजेय किले या जंगल को दूसरे के सैन्य के सहारे फतह करना हो या दूसरे के सैन्य को दूर ले जाकर उसका खर्च तथा नुकसान बढ़ाना हो, या उस सैन्य के सहारे अपनी शक्ति बढ़ानी हो, या शत्रु की सेनाको नेस्तनाबूद करना हो तो उसको बारंबार सहायता देते जांय । यदि कोई राजा यातव्य (चढ़ाई करने के योग्य दुश्मन) के बहाने अधिक या हीनशक्ति वाले राजा को अपने हाथ में करना चाहे, शत्रु को नष्ट कर अन्त में उसी को नष्ट करने की इच्छा रखता हो, तथा दी हुई चीज़ को लौटा लेने का इच्छुक हो, तो खर्च से अधिक लाभ मांगे । यदि वह उसको नुकसान पहुंचा सकते हों तो युद्ध करे अन्यथा संधि करले या यातव्य (वह शत्रु जिसपर चढ़ाई करनी हो) के साथ मिल जांय या उसको बदमाशों दुश्मनों तथा जांगलिकों की सेना के द्वारा सहायता पहुंचावें । इसी ढंगपर शक्तिशाली राजा दुर्बल राजा से खर्च से कम धन देने के बदले सहायता मांगे । यदि वह लड़ने में समर्थ हो तो लड़ाई करे अन्यथा संधि करले ।

राजा को चाहिये कि अब उससे कोई दूसरा राजा सहायता मांगे तो सहायता मांगने के कारणों को गंभीर रूप से विचार कर युद्ध तथा विग्रह में से जिसको उचित समझे स्वीकार करे।

११४–११५. प्रकरण।

यातव्य तथा अनुग्राह्य मित्र का कर्तव्य।

जब कोई यातव्य (जिसपर शत्रु चढ़ाई करना चाहता हो) चढ़ाई के खतरे में हो, संधि की शर्तों को जानना चाहता हो, या दुश्मनों के गुट्ट को चूर चूर करना चाहता हो उनको दुगुना लाभ देने का वचन दे। यदि वह लोग पुनः अधिक लाभ मांगें तो— नुकसान, खर्च, प्रवास, विघ्न, परोपकार तथा बीमारी का बहाना बनाकर टालदे या उनको दूसरे से लड़वा कर फाड़ दे। यदि वह किसी ऐसे राजा को नुकसान तथा खर्च से पुनः लादना चाहता हो जोकि पहिले से ही एक भारी काम को अपने हाथ में ले बैठा हो, शुरू में या चढ़ाई करने पर उसको नष्ट करना चाहता हो, यातव्य के साथ मिलकर पुनः धन मांगने का इच्छुक हो, तकलीफ में पड़ा हो या संपत्ति से रहित हो, या दूसरे पर विश्वास न रखता हो तो जो लाभ मिले उसी को ग्रहण करले। यदि वह समझे कि भविष्य में उसको मित्रों से पर्य्याप्त अधिक सहायता मिल जायगी, दुश्मन भी घट जायंगे तथा संपत्ति भी प्राप्त हो जायगी तथा पूर्व में सहायता देने वाले पुनः सहायता देने के लिये बाधित किये जासकेंगे तो बहुत बड़े लाभ को छोड़कर भविष्य में होने वाले थोड़े लाभ को ही पसंद करे। यदि वह किसी राजा को, किसी दूसरे शक्तिशाली दुष्ट दुश्मन तथा फजूल खर्च राजा के साथ लड़ाई में पड़ने से बचाना चाहे या इसी ढंग का उपकार किसी दूसरे से करवाना चाहे और बदले में उसकी दोस्ती या संबंध के सिवाय और कुछ भी न चाहता हो तो भविष्य में भी उससे कुछ भी लाभ न ग्रहण करे। परन्तु यदि वह पुरानी संधि को तोड़ना चाहे, दूसरे की प्रभुत्वशक्ति तथा मित्रों या अमित्रों के साथ

की गई संधि को तोड़ना चाहे या दूसरे के आक्रमण से डरता हो तो अप्राप्त लाभ को अधिक करके मांगे। दूसरा भी वर्तमान तथा भविष्य को सामने रखकर उसके साथ व्यवहार करे। इसीसे और बातों का अनुमान कर लेना चाहिये। विजिगीषु तथा शत्रु आदि एक साथ ही अपने मित्रों पर अनुग्रह करना चाहें तो उनमें वही उत्तम है जो कि— शक्यारंभी [होसकने वाली बात को ही करने वाली], कल्यारंभी (प्रशंसा के खातिर काम करने वाला), स्थिर कर्मा (स्थिर काम करने वाला) तथा अनुरक्त प्रकृति (जिसमें प्रकृति मंडल अनुरक्त हो) हो। क्यों कि शक्यारंभी वही काम करता है जो कि होसके, कल्यारंभी काम में किसीढंग की खराबी नहीं करता, स्थिरकर्मा काम को खतम किये विना बीच में दम नहीं लेता, तथा अनुरक्तप्रकृति सहायता के होने से थोड़ा अनुग्रह होते ही काम पूरा करदेते हैं। इनकी कृतज्ञता से बहुत लाभ होता है। जिन मित्रों में यह गुण नहीं उनसे कुछ भी अर्थ सिद्ध नहीं होता। यदि वह दोनो एक एक पर हो अनुग्रह करना चाहें तो जो मित्र या अल्प मित्र पर अनुग्रह करता है वह लाभपर रहता है। मित्र के प्राप्त होने से उसकी शक्ति बढ़ जाती है। जो इससे भिन्न व्यक्ति का उपकार करता है वह वृथाही नुक्सान खर्च परदेश तथा परोकार के कष्टोंको सहता है। शत्रु अपना मतलब सिद्ध कर अन्त में उपकार करने वाले को ही नुक्सान पहुंचाता है। मध्यम राजाओं में जो मित्र-या अल्पमित्र पर अनुग्रह करता है वही अच्छा रहता है। मित्र प्राप्ति से शक्ति बढ़ती है। शत्रु पर उपकार करने से क्षय [नुक्सान] व्यय, प्रवास तथा परोपकार का भार निरर्थक ही सहना पड़ता है। जब मध्यम राजा उपरिलिखित गुणों से हीन हो तो शत्रु की शक्ति को बढ़ा देता है। क्योंकि वह अपनी शक्ति फजूल के कामों में नष्ट कर देता है और शत्रु की चढ़ाई होते ही किनारा कर बैठता है। उदासीन पर अनुग्रह करने के भी यही नियम हैं। मध्यम तथा उदासीन राजाओं को सेना तथा हिस्से से जो लाभ पहुंचाते हैं

उनमें वही उत्तम है जो कि शूरवीर, शस्त्र संचालन में प्रवीण, कष्ट सहने में समर्थ तथा अनुरक्त (प्रेम करने वाला) राजा को सहायता देता है। यदि उसमें यह गुण न हों तो सहायता देने में नुक्सान उठाना पड़ता है। जिस काम के लिये सेना भेजी जाती है वह उस काम को या उसके बदले अन्य कामों को सिद्ध कर देती है। इस लिये समय तथा स्थान के जानने के बाद ही मौलभृत (प्रवासी ताल्लुकेदार), श्रेणी (कंपनी), मित्र तथा जंगली मित्र आदिकों में किसी एक की सेना के द्वारा सहायता दीजाय। यदि वह सेना एक ऐसे जांगलिकों की है जो कि दोस्त न हों तो जब तथा जहां चाहे भेजे। यदि यह समझे कि—अमुक अमुक राजा हमारी सेना से अपना मतलब सिद्ध करेगा, उसको दुश्मन जंगल अनुचित स्थान तथा अनुचित ऋतु में रखकर नष्ट कर देगा तो सेना इकट्ठा करने का बहाना बनादे और जिस समय उसको जरूरत पड़े तभी सहायता दे तथा काम के समाप्त होने तक उसी के पास रखे तथा अपनी सेना की स्वयं ही देख रेख करता रहे। जब काम खतम होजाय तो किसी बहाने से सेना को बुलवाले। इसके बदले बदमाशों जंगलियों तथा दुश्मनों की सेना उसको देदे। या यातव्य [चढ़ाई जिस पर की जाय] के साथ संधि करके उसको नीचा दिखा देवे।

यदि लाभ समान हो तो संधि और यदि लाभ समान न हो तो युद्ध किया जाता है। यदि इन दोनों से भिन्न लाभ हो तो संधि तथा युद्ध में जो उचित समझे करे।

११६ प्रकरण।

मित्र संधि तथा हिरण्य संधि।

मित्र, हिरण्य [सोना] तथा भूमि की प्राप्ति की इच्छा से एक साथ मिलकर चढ़ाई करने पर किस चीज की प्राप्ति में विशेष लाभ है? भूमि की प्राप्ति से मित्र तथा हिरण्य दोनों ही प्राप्त हो जाते हैं। इन दोनों से शेष बची हुई चीजे प्राप्त होजाती हैं। आओ हम

तुम मित्र प्राप्ति के लिये यत्न करें इस ढंग की संधि का नाम **सम संधि** है। 'तुम आगे से हमारे मित्र रहोगे' इस प्रकार की संधि को **विषम संधि** और जब कोई किसी से अधिक प्राप्त करे तो उस को **अतिसंधि** कहते हैं।

सम-संधि में भी जो समृद्ध मित्र को या कष्ट में पड़े हुए मित्र को प्राप्त करता है वह अच्छा रहता है क्योंकि आपत्ति में साथ देने से मित्रता स्थिर होजाती है। तकलीफ में पड़े हुए मित्रों में से भी यदि एक मित्र नित्य [पक्का दोस्त] परन्तु अवश्य [जो कि वश में न रहे] और दूसरा मित्र अनित्य [कच्चा दोस्त] परन्तु वश्य (मन के मुताबिक चलने वाला) हो तो उन में से कौन उत्तम है? पुराने आचार्य्यों का मत है कि नित्य तथा अवश्य मित्र ही उत्तम हैं क्योंकि वह यदि उपकार नहीं करता तो नुक्सान भी तो नहीं पहुंचाता। इस से विपरीत कौटिल्य का मत है कि वश्य तथा अनित्य मित्र ही उत्तम है। क्योंकि वह जब तक लाभ पहुंचाता है तभी तक मित्र है। उपकार तथा लाभ पहुंचाना ही मित्र का लक्षण है। वश्य मित्रों में भी यदि एक अनित्य तथा समृद्ध और दूसरा नित्य तथा दरिद्र (अन्यभोग) हो तो इन में कौन उत्तम है? पुराने आचार्य्य अनित्य तथा समृद्ध को ही उत्तम प्रगट करते हैं क्योंकि वह थोड़े समय में ही बहुत सा लाभ पहुंचा सकता है और बहुत से खर्चों से बचा सकता है। परन्तु कौटिल्य नित्य तथा दरिद्र मित्र को ही उत्तम समझता है। क्योंकि उसका विचार है नित्य तथा समृद्ध मित्र उपकार करने से दूर भागते हैं और जब वह कुछ उपकार करते हैं तो साथ ही उसका बदला चाहते हैं। नित्य तथा दरिद्र मित्र धीरे धीरे थोड़ी राशि में सहायता पहुंचाते हुए समय के गुजरने के साथ साथ बहुत ही अधिक लाभ पहुंचा देते है। **गुरुसमुत्थ** (लड़ाई के लिये जो कठिनाई से तैय्यार हो) बड़े मित्र तथा **लघुसमुत्थ** (लड़ाई के लिये जो आसानी से तैय्यार हो) छोटे मित्र में कौन उत्तम है? आचार्य्यों का मत है कि पहिले ढंग का मित्र ही शक्ति बढ़ाता (प्रताप कर) है। जब वह लड़ाई के लिये तैय्यार होता है तो कार्य्य को समाप्त कर देता है।

परन्तु कौटिल्य दूसरे को ही ठीक समझता है। क्योंकि दूसरा समय पर काम तो आजाता है। छोटे होने के कारण मन माने ढंग पर चलाया जासकता है। पहिले में यही बात नहीं है। असंगठित सैन्य तथा अवश्यसैन्य (वश में करने के अयोग्य सेना) में कौन उत्तम है? आचार्य्य लोग असंगठितसैन्य को ही अच्छा समझते है उनका ख्याल है कि समय पर उसको संगठित किया जासकता है। इस से विपरीत कौटिल्य 'अवश्यसैन्य' के ही पक्ष में है। क्योंकि वह उस को सामादि उपायों से वश में करना सुगम समझता है। पुरुषभोग (जिस के पास सेना या आदमी बहुत हों) तथा हिरण्यभोग (जिस के पास सोना तथा संपत्ति अधिक हो) मित्र में कौन उत्तम है? आचार्य्य लड़ाई के लिये उपयोगी होने से प्रथम को ही उत्तम मानते हैं। क्योंकि वह जब उठ खड़ा होता है तो कार्य्य सिद्ध कर देता है। परन्तु कौटिल्य द्वितीय को ही उत्तम समझता है। क्योंकि सोने की जरूरत तो रोज पड़ती है जब कि सेना तथा आदमियों की जरूरत कभी कभी होता है। सोना एक ऐसी चीज है जिस से सेना तथा अन्य चीज़ें सुगमता से ही प्राप्त की जासकती है। हिरण्यभोग (जिस के पास सोना तथा संपत्ति अधिक हो) तथा भूमिभोग (जिस के पास जमीन अधिक हो) मित्र म कौन उत्तम है? आचार्य्य लोग हिरण्यभोग के पक्ष में है। क्योंकि उससे सब प्रकार के खर्चे से बच सकता है। परन्तु कौटिल्य भूमि पर ही मित्र तथा हिरण्य का आधार प्रगट करता है। इस पर पूर्व में भी प्रकाश डाला जाचुका है। अतः भूमिभोग मित्र ही ठीक है। जब विजेता तथा शत्रु के मित्रों के देश की आबादी एक सदृश हो तौ भी उन में पराक्रम, कष्ट सहन करने की शक्ति, अनुराग तथा युद्ध सामर्थ्य के मामले में भेद होसकता है। इसी प्रकार समृद्धि में समान होते हुए भी—मांगते ही धन इकट्ठा होजाना, शान, बिना परिश्रम के ही अधिक धन का मिलना तथा लगातार मिलते रहने आदि के मामले में भेद हो सकता है। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित बातें ध्यान देने के योग्य है:—

उत्तममित्र के—१ नित्य २ वश्य ३ लघूत्थान (शीघ्र ही तैय्यार होजाने वाला) ४ पितृ पैतामह (बापदादे के समय से मित्र) ५ महत् (शक्तिशाली) तथा ६ अद्वैध्य (स्थिर स्वभाव) यह छः भेद हैं। जो निस्वार्थ भाव से प्रीति तथा बढ़े हुए पुराने संबंधों की रक्षा करे वही नित्यमित्र है। जिसका बहुत प्रकार उपयोग किया जासके वह वश्यमित्र कहाता है। यह—एकतो भोगी (एक ही व्यक्ति जिससे लाभ उठावे), उभयतोभोगी [दो व्यक्ति जिससे लाभ उठावें] तथा सर्वतोभोगी (जिससे सभी लाभ उठावें) के तीन प्रकार का होता है। जो सहायता लेने या देने की इच्छा से शत्रुओं के साथ सख्ती का बर्ताव करता हो तथा जिसके पास किले, जांगलिकों की फौजें आदि हों वह भी नित्यमित्र कहाता है। जो एक ओर शत्रु के साथ युद्ध कर रहा हो तथा जिस पर कोई बड़ी विपत्ति न हो और जो कि उपकार करने के लिये संधि करे उसको अनिश्चित तथा वशमें न आने वाला मित्र समझना चाहिये। जो किसी स्वार्थ से संबंध रखता हो, उपकारी तथा स्थिरस्वभाव का (अविकारी) हो, तथा मित्र होने के योग्य हो वह विपत्ति पड़ने पर भी मित्रता नहीं छोड़ता (अद्वैध्य)। जो मित्रता रखे वह मित्र, जो शत्रु का पक्ष ले वह चलमित्र (अस्थिरमित्र) और जो किसी के भी प्रति उदासीनता न प्रगट करे वह उभयभाविमित्र (दोनों का मित्र) कहलाता है। जो विजिगीषु का अमित्र तथा शत्रु का दिली मित्र हो उसको अनुपकारी मित्र (हानिकरमित्र) समझना चाहिये चाहे वह उपकार ही क्यों न कर रहा हो और चाहे वह उपकार करनेमें कितना ही समर्थ क्यों न हो। जो शत्रु का हितैषी, प्रिय, पूज्य तथा संबंधी हो उसको शत्रु ही समझना चाहिये चाहे वह विजिगीषु का उपकार ही क्यों न करे। जिसके पास बहुत ही अधिक उपजाऊ जमीन हो, जो कि बलवान् संतुष्ट तथा आलसी हो और जो कि तकलीफ से दूर भागता हो उसको उदासीन समझना चाहिये। जो बुद्धि के कम होने से शत्रु तथा विजिगीषु की बात को माने तथा किसी से भी द्वेष न करे उसको उभयभावी [दोनों के पक्ष का]

माना जाय। जो कारण या अकारण से कष्टमें पड़े हुए या इसी प्रकार सहायता मांगने के लिये आये हुए मित्र को उपेक्षा की दृष्टि से देखता है वह मृत्यु को अपने आप बुलाता है।

शीघ्र ही मिलने वाले थोड़े लाभ तथा देरमें मिलने वाले ज्यादा लाभ में किस को पसन्द करना चाहिये ? पुराने आचार्य पहिले के ही पक्ष में हैं क्योंकि उससे हाथ में लिये काम को सहायता मिलती है। इससे विपरीत कौटिल्य द्वितीय के ही पक्ष में है। उस का ख्याल है कि दूसरा यदि बीज के फल के सदृश स्थिर तथा अनश्वर हो तो ठीक है, अन्यथा पहिला ही ठीक है।

राजा को चाहिये कि वह स्थिर लाभ या उसके कुछ भाग के महत्व [गुणोदय] को देखकर अपने स्वार्थ की सिद्धि को सामने रख कर तथा मित्र लोगों के साथ गुट्ट बनाकर शत्रु पर चढ़ाई करे।

११६. प्रकरण।

भूमि--संधि।

"आओ हम तुम भूमि को प्राप्त करें" इस प्रकार की संधि को भूमिसंधि कहते हैं। उनमें जो उपजाऊ भूमि को प्राप्त करता है वह अच्छा रहता है। यदि दोनों की ही भूमि उपजाऊ हो तो उनमें जो बलवान् शत्रु को परास्त कर भूमि प्राप्त करता है वह अच्छा रहता है क्यों कि इसस भूमि-लाभ के साथ साथ शत्रु का नाश होता है तथा शक्ति तथा प्रताप भी बढ़जाता है। दुर्बल से भूमि छीनने में भी अच्छा ही है। परन्तु इससे भूमि अच्छी नहीं मिलती। पड़ोसी राजा भी छिपे छिपे दुश्मन होजाते हैं। तुल्य शक्तिशाली शत्रुओं में से जो स्थित शत्रु को नष्ट कर देश प्राप्त करता है वह लाभ में रहता है। इससे किले हाथमें आजाते हैं। जो कि भूमिकी रक्षा तथा जंगली लोगों के आक्रमण से देश की रक्षा के लियेअत्यंत उपयोगी होते हैं। अस्थिर शत्रु के देश के प्राप्त होने पर दुर्बल तथा सबल राजाओं के पड़ोसमें होने से ही भेद पड़ता है। जिस देश के पास दुर्बल सामंत हो वह देश सुगमता से ही संभाला जा-सकता है। परन्तु जब पड़ोस में सबल सामंत हो तो प्राप्त देशकी

रक्षा में सोना तथा धन फूंककर नुकसान उठाना पड़ता है। प्रश्न उठता है कि पक्के दुश्मनों से भरे समृद्ध देशका या कच्चे दुश्मनों से भरे दरिद्र देशका प्राप्त होना उत्तम है? पुराने आचार्य प्रथम को ही उत्तम मानते हैं। क्यों कि उससे धन तथा सैन्य की वृद्धि करना सुगम होता है और जो कि अन्त में दुश्मनों को दबा देता है। परन्तु कौटिलय का ख्याल है ऐसी भूमि के मिलनेसे शत्रुओं की संख्या बढ़जाती है। पक्के दुश्मन "उपकार करो चाहे अपकार करो" दुश्मन ही बने रहते हैं। कच्चे दुश्मन उपकार या अनपकार (नुकसान न पहुंचाना) से ठंडे पड़जाते हैं। जिस देशमें बहुत से किले हों, सीमायें चोरों म्लेच्छों तथा जांगलिकों से भरी पड़ी हों उनको पक्के दुश्मनों का देश समझना चाहिये। इससे विपरीत देश को कच्चे दुश्मनों का देश मानना चाहिये। पास की थोड़ी और दूसरी बहुत बड़ी जमनि में कौन सी जमनि अच्छी है? पास की थोड़ी जमीन अच्छी होती है क्यों कि इसकी रक्षा सुगमता से हो सकती है। दूरकी जमीन में यही बात नहीं है। यदि पड़ोसकी भूमि की रक्षा के लिये सेना की जरूरत हो और दूर की भूमि अपने आप सुरक्षित हो तो इनमेंसे कौनसी उत्तम है? दूसरी भूमि ही ठीक है। क्यों कि उसीके धन तथा सैन्यसे उसकी रक्षा होती है। इससे विपरीत पहिली को संभालनेके लिये जगह २ छावनियां बनानी पड़ती हैं तथा भारी सेना रखनी पड़ती हैं। जड़ बुद्धि तथा बुद्धिमान् राजा के देशों में से किस के देश का मिलना अच्छा है? जड़बुद्धि का देश ही ठीक है। क्यों कि उसकी सुगमता से ही रक्षा की जासकती है और उसके पुनः लौटाने की आवश्यकता नहीं होती। इससे विपरीत बुद्धिमान् राजाके देश के लोग उसी में अनुरक्त होते हैं।

पीडनीय [जिसको दबाना हो] तथा उच्छेदनीय [जिसको नष्ट करनाहो में से किसी की भूमि का लेना ठीक है? उच्छेदनीय की भूमि का लेना ही ठीक है। क्यों कि उसका कोई भी साथ नहीं देता है, जिसका वह सहारा भी लेता है वह शक्ति शाली नहीं होते तथा खजाना तथा फौज लेकर वह भागता है और इसी लिये

प्रकृतियां उसको छोड़ देती हैं । पीडनीय में यही बात नहीं है । वह किलों तथा मित्रों से सहायता प्राप्तकर शक्तिशाली होजाता है। दुर्गों का सहारा लेने वालों में भी स्थल दुर्ग वालों से भूमिका मिलना अच्छा है। स्थल दुर्ग का घेरा डालना तथा शत्रु पर चढ़ाई करना सुगम है। शत्रु भाग कर कहीं जाभी नहीं सकता है। न ही दुर्ग वालों को जीतने में दुगुनी मेहनत खर्च होती है। पानी से रक्षा करना पड़ता है। शत्रु को नदी के सहारे रसद पहुंचती रहती है। नदी तथा पर्वत दुर्ग वालों में नदी वालों से भूमिका प्राप्त होनाही ठीक है। नदी दुर्ग पर हाथियों खंभों पर बनाये हुए पुलों तथा नौकाओं के सहारे चढ़ाई की जा सकती है। पानी की गहराई एक सदृश नहीं रहती और उसको दूसरी ओर बहाया भी जासकता है पहाड़ी दुर्गपर चढ़ाई करना बहुत कठिन है। वह प्रकृति की ओर से सुरक्षित हैं। उसपर चढ़ना सुगम काम नहीं है। एक के फिसलते ही सारीकी सारी सेना नष्ट हो जाती है। पत्थरों तथा पेड़ों के लुढ़काने से बहुत ही नुकसान पंहुचता है। नीची जमीन तथा साधारण जमीन परसे लड़ने वालों में पहिले सेही जमीन का मिलना ठीक है। क्यों कि वह कुछ ही समय तक लड़ सकते हैं जब कि दूसरे एक सदृश युद्ध कर सकते हैं। इसी प्रकार गड्ढे तथा उंची जमीन पर से लड़ने वालों में भी पहिले से ही जमीन का प्राप्त होना उत्तम है। क्यों कि खनक गड्ढे में खड़े होकर शस्त्र से लड़ाई करते हैं जब कि दूसरे एक मात्र शस्त्र फेंक कर काम चलाते हैं।

जो राजा अर्थ शास्त्र को पूर्ण रूप से समझ कर उपरि वर्णित लोगों से भूमि प्राप्त करता है, वह गुट्ट बनाकर लड़ने वाले शत्रुओं को नीचा दिखाता है तथा उनकी अपेक्षा या अधिक महत्व को प्राप्त करता है।

११६ प्रकरण।

औपनिवेशिक संधि।

"आओ हम तुम उपनिवेश बसावें" इस प्रकार की औपनिवेशिक संधि का नाम अनवासितसंधि है। उनमें से जो उपजाऊ

भूमि को बसाता है लाभ में रहता है। उसमें भी स्थल प्रधान तथा जल प्रधान यह दो भेद हैं। पानी रहित अधिक जमीन की अपेक्षया पानीवाली कम जमीन अच्छी होती है। उस से वर्षभर लगातार स्थिर रूप स फल मिलते रहते हैं। पानीरहित जमीन में भी जिसमें पहिले खेती की जा चुकी हो, कम वर्षा में अनाज पकता हो तथा कम मेहनत की ज़रूरत हो वह अच्छी है। इसी प्रकार जल प्रधान में धान पैदा होने वाली जमीन थोड़ी और दूसरा अनाज पैदा करने वाली जमीन जादा हो तो दूसरी जमीन ही ठीक है। अधिक जमीन में स्थलज तथा जलज अनेक पदार्थ तथा औषध उत्पन्न किये जा सकते हैं। किले आदि भी बहुत बड़ी संख्या में बनाये जा सकते हैं। भूमि का उपजाऊपन तो कृत्रिम है। खान प्रधान तथा नें प्रधान जमीन में खान प्रधान कोश के लिये हितकारी है। धान प्रधान जमीन से कोश तथा कोष्ठागार (अनाज का भण्डार) दोनों को ही लाभ पहुंचता है। दुर्गादिका बनवाना धान पर ही निर्भर है। खनिज पदार्थ से बहुत बड़ी जमीन खरीदी जासकती है अतः वह भी उत्तम है। द्रव्यवन [लकड़ी का जंगल तथा] हस्तिवन [हाथी का जंगल] में द्रव्यवन सब कामों का आधार होने से उत्तम है। हस्तिवन में यही बात नहीं है। पुराने आचार्यों के इस विचार के विरुद्ध कौटिल्य का मत है कि द्रव्यवन तो जहां कहीं लगाया जासकता है, हस्तिवन में यही बात नहीं है। शत्रु की सेना को नष्ट करना हाथियों पर ही निर्भर है। वारिपथ [जलीय मार्ग] तथा स्थलपथ [स्थलीय मार्ग] में वारिपथ अनित्य होने से ठीक नहीं है। स्थलपथ नित्य [सर्वदा बना रहने वाला] होने से अच्छा समझा जाता है। भिन्नमनुष्य [जिसमें मनुष्य तितर बितर बसे हों] तथा श्रेणीमनुष्य [जिस में मनुष्य भिन्न २ दलों तथा श्रेणियों में संगठित हों] वाली जमीनों में पहिला ही ठीक है। क्योंकि शत्रु उसको अपने पक्षमें फाड़ नहीं सकता। इससे विपरीत दूसरी तकलीफ बरदाश्त नहीं कर सकती और जब बिगड़ती है तो उसका संभालना कठिन होजाता है। चारों वर्णों के द्वारा बसे हुए

उपनिवेशों में जिस में नीच जात के लोग अधिक हों वही उत्तम है। क्योंकि वह स्थिर रहता है और उत्पत्ति भी उस में अधिक होती है। जुती तथा बेजुती जमीनों में बेजुती जमीन अनेक कामों में आती हैं। जब यह गउओं के पालने, पदार्थों के बनाने, लेन देन तथा व्यापार करने के काम में आती है तो यह बहुत ही अच्छी समझी जाती है। दुर्गप्रधान तथा पुरुषप्रधान (जिस में आदमी बहुत संख्या में रहते हों) जमीनों में पुरुषप्रधान ही ठीक है। पुरुषों पर ही राज्य किया जाता है। उजड़ी तथा वीरान जमीन वन्ध्या गौ की तरह किस काम की है।

जिस जमीन के बसाने में बहुत खर्च हो उसके बेचने का प्रबंध करे। दुर्बल, अराजकवादी, निरुत्साही, अपक्ष, अन्यायी, व्यसनी भाग्यवादी, तथा मनमाना करने वाले [स्वेच्छाचारी] व्यक्ति के हाथ में जमीन बेचने से कुछ भी नुकसान नहीं है। क्यों कि दुर्बल अराजकवादी ऐसी जमीन के बसाने में खर्च अधिक होने से वह अपने साथियों के साथ वहां पर ही नष्ट हो जायगा। यदि वह बलवान् है तो खर्चके डरसे उसके साथी उसको छोड़देंगे। निरुत्साही है तो सेना होते हुए भी उससे काम नहीं लेसकता। जो सेना से काम ले वह खर्च के भार से सेना को देर तक नहीं रख सकता। धन होते हुए भी अपक्ष (जिस के पक्ष में कोई भी न हो) सहारा न होने से कुछ भी नहीं कर सकता। अन्यायी बसे हुए जनपद को भी उजाड़ दे, उजड़े को तो क्या बसावेगा? व्यसनी की भी यही हालत है। भाग्यवादी प्रायः सामर्थ्यहीन होते हैं और कोई भी नया काम शुरू नहीं करते और जब शुरू भी करते हैं तो उसको बीच में ही छोड़कर बैठ जाते हैं। मनमाना करने वाले (स्वेच्छाचारी) कुछ भी काम तो नहीं करते। सबसे नीच यही तो हैं। "मनमाना करने वाले प्रायः अपने अपने मालिक के दोषों से लाभ उठाने लगते हैं" पुराने आचार्यों के इस विचार पर कौटिल्य का मत है कि वह ऐसा करते ही विनाश को भी प्राप्त हो जाते हैं। यदि खरीदने वाले इसढंग के लोग न मिलें तो पार्ष्णिग्राह नामक प्रकरण में वर्णित विधिके अनुसार ऐसी जमीनों

का प्रबंध कियाजाय। ऐसे प्रबंध के संबंध में जो संधि कीजाती है उसको अभिहित संधि कहते हैं। यदि कोई बलवान् राजा दुर्बल राजा को अपनी उपजाऊ जमीन बेचने के लिये बाधित करे तो इस संबंध में की गई संधि को अनिभृत संधि पुकारते हैं। यदि कोई समान शक्तिवाला राजा ऐसी जमीन को खरीदने का प्रयत्न करे तो यह सोच करके—या दूसरा राजा मेरे वश में होसकेगा? क्या भूमिके बेचने से जो मित्रता तथा संपत्ति मिलेगी उससे कोई काम निकल सकेगा या सामर्थ्य बढ़सकेगा? पुनः यह भूमि लौटाई जासकेगी १—जमीन को दे। दुर्बल राजा के विषय में भी यही नियम है।

जो राजा नीतिशास्त्र में चतुर होता है वह इसी ढंग पर मित्र, हिरण्य, आबाद तथा उजड़ी जमीन, गौ आदिको प्राप्तकर दुश्मनों के संघको परास्त करदेता है।

११६ प्रकरण।

कर्म संधि।

"आओ हम तुम मिलकर किला खड़ा करें" इसप्रकार की संधि को कर्म संधि कहते हैं। उनमें भी जो योग्य स्थान पर कम मेहनत तथा खर्च के साथ किला बनाता है वह दूसरे से अच्छा रहता है। किलों में भी स्थल, नदी तथा पर्वत पर बने किले एक दूसरे से अच्छे हैं। नहरों के बनवाने में वही नहर अच्छी है जिस में पानी बाहर से न लाना पड़े और इसमें भी अधिक पानी वाली उत्तम मानी जाती है। लकड़ी के जंगलों (द्रव्य-वन) में जो नदी से सिंचित तथा कीमती लकड़ी से भरे जंगल को कटवाता है। वही लाभ में रहता है। क्योंकि नदी से सींचा हुआ जंगल अपने आप बढ़ता रहता है तथा आपत्ति में पड़ने पर लोगों का सहारा होजाता है। हाथी तथा जानवरों से भरे जंगलों में वही जंगल अच्छा है जोकि राष्ट्र की सीमा पर हो, जिसमें शत्रु घुस न सके, जो शेर चीतों से भरा पड़ा हो, जिसके अन्दर हाथियों का व र

हो और जिसके कारण दुश्मन को नुकसान पहुंचता हो। यदि एक जनपद में भीरुओं की संख्या अधिक हो और दूसरे में थोड़े ही आदमी रहते हों परन्तु हों शूरवीर तो इनमें दूसरा ही जनपद उत्तम है। क्योंकि शूर लोगों के सहारे ही लड़ाई लड़ी जाती है। थोड़े से शूरवीर सैकड़ों डरपोकों को तितर बितर कर देते हैं और जोकि अन्त में अपने ही सैनिकों को नुकसान पहुंचा देते हैं। प्राचीन आचार्यों के इस मत के विरुद्ध कौटिल्य का मत है कि भीरुओं की अधिक संख्या से लड़ाई में अन्य काम लिये जासकते हैं। सैनिकों को खाना आदि यह लोग पहुंचा सकते हैं। शत्रु इन की अधिक संख्या को देखकर डरजाता है और यह उसको कई तरीके से डरा भी सकते हैं। सब से बड़ी बात तो यह है कि इनको सिखा पढ़ाकर शूरवीर बनाया जासकता है। भला थोड़े शूरवीरों की संख्या कैसे बढ़ाई जाय? खानों के खुदवाने में भी वही अच्छा रहता है जो कि कीमती चीज़ की खान को खुदवाता है, जिस तक पहुंचने का मार्ग सुगम हो और जो कि बहुत कम खर्च से ही खोदी जासके। खानों में भी कीमती खान कम और कम कीमती खान संख्या में अधिक होसकती है। पुराने आचार्य्य हीरा मणि मोती प्रवाल सोना चांदी आदि कीमती खानों को ही उत्तम समझते हैं क्योंकि इनके द्वारा कम कीमती चीज़ें खरीदी जासकती है। इस से विपरीत कौटिल्य दूसरी प्रकार की खान के ही पक्ष में हैं। उसका ख्याल है कि कीमती चीज़ों के खरीदार बड़ी मुश्किल से मिलते हैं जब कि कम कीमती चीज़ें हर समय बेची जासकती हैं। व्यापारीय मार्ग के विषय में भी यही नियम है। प्राचीन आचार्य्य वारिपथ [जलीयमार्ग] तथा स्थलपथ में खर्च के कम होने से तथा व्यापार के अधिक होने से, सदा एक सदृश न रहने, चोरी डाके के बारंबार पड़ने तथा उनका कुछ भी उपाय न कर सकने के कारण वारिपथ को उत्तम नहीं समझता। स्थल पथ में यही बात नहीं है। वारिपथ में भी समुद्र के किनारे तथा बीच में जाने के अन्दर किनारे जाना ही उत्तम है। क्योंकि जगह२ पर व्यापारीय नगर तथा बन्दर गाह मिलते हैं। इसी प्रकार समुद्रमार्ग तथा

नदीमार्ग में नदीमार्ग गमनागमन के अधिक होने तथा खतरे के कम होने से उत्तम है। स्थलपथ में भी पुराने आचार्यों के अनुसार हैमवत पथ [हिमालय को जानेवाला मार्ग] दक्षिण पथ [दक्खिन को जानेवाला मार्ग] से उत्तम है क्यों कि उसके द्वारा हाथी घोड़ा गंध द्रव्य, हाथीदांत, चमड़ा, चांदी, सोने आदि बहुमूल्य पदार्थों का व्यापार होता है। इससे विपरीत कौटिल्य दक्षिणा पथ को ही उत्तम समझता है। क्यों कि केवल, चमड़ा, घोड़ा तथा व्यापारीय द्रव्यों को छोड़ कर शंख, वज्र, मणि, मोती सोना आदि इसी मार्ग के द्वारा आता है। दक्षिणापथ में भी वही वणिक्पथ उत्तम है जो कि खानों में से गुजरता हो, जिसपर शीघ्रता से चलसकें तथा थकावट कमहो। साधारण पदार्थ तो सभी स्थानों में प्रायः पैदा होते हैं। पूर्व तथा पश्चिम को जानेवाले वणिक् पथ के संबंध में भी यही नियम हैं। गाड़ीकी सड़क तथा पगडंडी में बड़े बड़े कारोबार के होने से गाड़ी की सड़क ही उत्तम है। खरपथ [गदहे चलने का मार्ग] तथा उष्ट्रपथ [ऊंट चलने का मार्ग] में वही उत्तम है जिसपर चलने में देश तथा काल संबंधी रुकावट न हो बहंगी लेजाने वालों के मार्ग (अंसपथ) के विषय में भी यही नियम हैं।

विजिगीषु को शत्रु के कार्य्यों की उन्नति में अपनी अवनति (क्षय) और अवनति में अपनी उन्नति (वृद्धि) तथा समानता में स्थिति (स्थान) समझना चाहिये। कार्य्यों के अन्दर फल की अपेक्षा खर्च का अधिक होना अवनति इससे विपरीत दशा में उन्नति तथा आय-व्यय की समानताका नाम ही स्थिति है। इसलिये राजा को चाहिये कि दुर्ग आदि के मामलों में वही काम पसन्द करे जिसमें खर्च तो कम और लाभ अधिक हो। कर्म विषयक संधियों में इन्हीं बातों का ख्याल रखना चाहिये।—

११७ प्रकरण।
पार्ष्णिग्राह चिंता।

यदि विजिगीषु तथा शत्रु आपस में मिलकर ऐसे पार्ष्णि [पृष्ठ

वर्ती राष्ट्] पर आक्रमण करें जो कि अपने शत्रु के साथ पहिले से ही युद्ध उद्घोषित कर चुका है तो जो शक्तिसंपन्न शत्रु की पार्ष्णि पर विजय प्राप्त करता है वही लाभ में रहता है। क्योंकि शक्ति-संपन्न ही अमित्र का नाश करने के बाद पार्ष्णिग्राह का नाश कर सकता है, हीन शक्ति तथा लाभ रहित राजा से ऐसी बात की आशा करना वृथा है। यदि शक्ति समान हो तो जो पूर्ण रूप से तैय्यार [विपुलारम्भ] शत्रु की पार्ष्णि पर आक्रमण करता है वही लाभ में रहता है। क्योंकि तैय्यार शत्रु अपने शत्रु का नाश करने के बाद पार्ष्णिग्राह को भी पराजित कर सकता है। जो पूर्ण रूप से तैय्यार नहीं होता वह सदा ही राष्ट्रमंडल के कुचक्रों से परेशान रहता है। यदि तैय्यारी समान हो तो जो सब प्रकार से तैय्यार [सर्व संदोह] शत्रु की पार्ष्णि को अपने वशमें करता है वह लाभ में रहता है। क्योंकि जिसका मूल [मुख्य भाग] अस्वरक्षित है उस पर शीघ्र ही विजय प्राप्त किया जा सकता है। जिसने अपने पार्ष्णि की रक्षा का पूर्ण रूप से प्रबंध कर लिया है और सेना के एक भाग को लेकर लड़ाई के लिये प्रस्थान किया है उस पर विजय प्राप्त करना आसान काम नहीं रहता। यदि सेनाविषयक तैय्यारी समान हो तो जो चल [जिसका एक स्थान पर निवास न हो] शत्रु की पार्ष्णि को वश में करता है वह अधिक लाभ में रहता है। क्योंकि चल शत्रु पर शीघ्र ही विजय प्राप्त कर विजिगीषु सुगमता से ही पार्ष्णि पर विजय प्राप्त कर सकता है। स्थित [किले आदि में स्थित] शत्रु पर आक्रमण करने वाला ज्यों ही किले को हस्तगत करने में असमर्थ हुआ और पार्ष्णि पर प्रभुत्व न प्राप्त कर सका त्यों ही शत्रु के पंजे में फंस जाता है। अन्य मामलों में भी यही नियम है।

यदि शत्रु एक समान हों तो जो धार्मिक राजा पर आक्रमण करने वाले शत्रु की पार्ष्णि को अपने वश में कर लेता है वह लाभ में रहता है। क्योंकि जो धार्मिक राजा पर आक्रमण करता है उस की अपनी प्रजा भी उससे संतुष्ट नहीं रहती। इससे विपरीत अधार्मिक राजा पर आक्रमण करने वाला प्रजा में पूर्णरूप से

प्रिय रहता है । मूल-हर [बाप दादा की जायदाद को अन्याय से नष्ट करने वाला], तादात्विक [फजूल खर्च] तथा कदर्य [कंजूस] राजाओं पर आक्रमण करने वाले शत्रु की पार्ष्णि के विजय करने के भी यही नियम हैं। मित्र पर आक्रमण करने वाले शत्रु के संबंध में भी यही बातें हैं।

मित्र तथा अमित्र पर आक्रमण करने वाले शत्रुओं में जो पहिले की पार्ष्णि पर प्रभुत्व प्राप्त करना है वह लाभ में रहता है। क्योंकि पहिला शीघ्र ही संधि कर पार्ष्णिग्राह [पार्ष्णि पर आक्रमण करने वाला या जीतनेवाला] का नाश कर सकता है। मित्र के साथ संधि करना सुगम काम है जबकि अमित्र के साथ संधि करना बहुत ही कठिन है। मित्र तथा अमित्र का उद्धार करने वालों में जो मित्रोद्धारक की पार्ष्णि जीतता है वह लाभ में रहता है। क्योंकि अमित्रोद्धारी मित्र की संख्या बढ़ाकर पार्ष्णिग्राह का नाश कर सकता है, जिसने अपने पक्ष का ही नाश कर दिया वह पार्ष्णिग्राह का क्या बिगाड़ सकता है ?। इनमें भी यदि दोनों अलब्ध लाभ के लिये यत्न करें तो जिसका अमित्र बड़े भारी नुकसान में हो तथा जिसका आय तथा व्यय बहुत ही अधिक बढ़गया हो वह पार्ष्णि के ग्रहण करने में लाभ में रहता है। इसी प्रकार लब्ध लाभ के लिये यत्न करने वालों में जिसका अमित्र लाभ तथा शक्ति से रहित हो, ऐसा पार्ष्णिग्राह अधिक लाभ में रहता है। पार्ष्णिग्राहों में भी जिसका यातव्य (जिस पर चढ़ाई की जाय) शत्रु के साथ युद्ध करने में तथा शत्रु को नुकसान पहुंचाने में समर्थ हो, शीघ्र ही अधिक सेना एकत्रित कर सकता हो तथा स्थित शत्रु के पार्श्व में मौजूद हो वह लाभ में रहता है। क्योंकि पार्श्व में रहने वाला शत्रु शीघ्र ही यातव्य को नुकसान पहुंचा सकता है तथा उसके मूल (मध्य भाग, केन्द्र) में बाधा डाल सकता है। पीछे रहनेवाला [पश्चात्स्थायी] शत्रु केवल मूल को हानि पहुंचा सकता है।

शत्रु की पार्ष्णि पर विजय प्राप्त करने वाले तथा शत्रु की गति को रोकने वाले राजा तीन प्रकार के हैं (१) शत्रु के पीछे रहने वाले राजा (२) शत्रु के पार्श्वभाग पर रहने वाले राजा (३) अन्तर्धि।

इन में से विजिगीषु तथा शत्रु के बीच में रहने वाले दुर्बल राजा को ही अन्तर्धि कहते हैं। यह दुर्ग तथा जंगल से शक्ति प्राप्त कर प्रबल से प्रबल शत्रु की गति को रोकदेता है।

यदि विजिगीषु तथा शत्रु मध्यम पर विजय प्राप्त करना चाहें और इसी लिये उसकी पार्ष्णि पर आक्रमण करें तो इन में से जो विजय प्राप्त करने के बाद मध्यम को मित्र से फाड़ देता है या शत्रु होते हुए मित्र को प्राप्त कर लेता है विशेष लाभ में रहता है। मित्रता टूट जाने के बाद पुनः मित्रता करना उतना लाभ प्रद नहीं होता जितना कि शत्रु के साथ संधि करना अन्त में उपकार करता है। उदासीन पर विजय प्राप्त करने का भी यही नियम है। पार्ष्णि तथा अग्रभाग में होने वाले युद्धों में वही उत्तम है जिस में कूटयुद्ध (मंत्र युद्ध) की अधिक संभावना हो। प्राचीन आचार्यों का मत है कि प्रकाशयुद्ध में क्षय तथा व्यय से दोनों ही पक्षों को नुकसान पहुंचता है। इस से विपरीत कौटिल्य का मत है कि शत्रु का नाश पूर्ण रूप से कर डालना चाहिये चाहे कितना ही अधिक क्षय तथा व्यय क्यों न हो। यदि किसी के साथ लड़ने में क्षय तथा व्यय समान हो तो जो पहिले अपने सामने के शत्रु को नष्ट कर पीछे के शत्रु को नष्ट करे वह लाभ में रहता है। यदि दोनों ही इसी नियम के अनुसार लड़ें तो जो शक्तिशाली परम शत्रु का नाश करे वही लाभ में रहे। कि अमित्र तथा जांगलिक राजा की सेना के नाश के सम्बन्ध में भी यही नियम है।

यदि विजिगीषु पार्ष्णिग्राह या अभिभोक्ता (अग्र भाग का शत्रु) पर आक्रमण करना चाहे तो इस नीति का अवलम्बन करें।

यदि कोई शत्रु मित्र पर चढ़ाई करे और पार्ष्णिग्राह नेता बने तो सब से पहिले आक्रन्द (पार्ष्णिग्राह के पीछे का शत्रु) को पार्ष्णिग्राण के साथी से लड़ाया जाय और इस के बाद पार्ष्णिग्राह को शत्रु के साथ न मिलने दिया जाय। इसी प्रकार आक्रन्द के साथी को पार्ष्णिग्राह के साथी से और मित्र को शत्रु के मित्र से लड़ाया जाय तथा मित्र-मित्र को शत्रु के मित्र-मित्र से बचाया जाय।

विजिगीषु को चाहिये कि वह अपने अग्रभाग के शत्रु के मित्र को मित्र से लड़ाने और मित्र-मित्र के द्वारा आक्रन्द को पार्ष्णिग्राह के साथ मिलने से रोके। इस प्रकार विजिगीषु आगे पीछे से अपने मित्रों को इकट्ठा करे अपनी रक्षा के लिये एक मित्र मंडल बनावे, उन में अपने दूतों तथा गुप्तचरों को बसावे और मित्र बनकर शत्रुओं को गुप्त रूप से मरवाद। विजिगीषु को संपूर्ण कार्य्य गुप्त रूप से करना चाहिये। क्योंकि गुप्त बात के खुलने पर प्राप्त वस्तु वैसे ही नष्ट होजाती है जैसे कि बीच समुद्र में पड़ी टूटी हुई नाव डूब जाती है।

११८ प्रकरण।

हीन शक्ति-पूरण।

यदि विजिगीषु पर शत्रुओं का संघ आक्रमण करे तो वह उनके नेताको कहे कि"मैं तुमसे संधि करना चाहता हूं। यह सोना है। मैं तुम्हारा सदा मित्र बना रहूंगा। इससे तुम्हरा लाभ दुगुना होजायगा। अपना नुकसान करके मित्र बनेहुए शत्रुओं को बढ़ाने से क्या लाभ ?। शक्तिप्राप्त कर यह लोग तुम्हीं को अन्तमें नुकसान पहुंचावेंगे"। या उनको आपस में फाड़ने के लिये यह कहो कि "जैसे यह लोग मिलकर मेरा अपकार करना चाहते हैं वैसे ही यह लोग (तुम्हारे) तकलीफ में पड़ते ही तुम पर अक्रमण करेंगे। शक्तिप्राप्त करते ही चित्त विकृत्त होजाता है। अतः इनके जमघट्टको तोड़ने के लिये पूरी कोशिश करो"। ज्यों ही वह आपस में फट जांय तो उनमें जो शक्तिशाली हो उसको कमजोर के साथ या कमजोरों का गुट्टबनाकर शक्तिशाली के साथ उसको लड़ावे। या जिसढंग पर वह अपना हित समझे उसीढंगपर शक्तिशाली को दूसरों से लड़ावे। यदि वह लाभ अधिक देखे तो षड्यंत्र रचकर मौका निकाले और मौका हाथ में आते ही उनके मुखिया के साथ संधि करले। इसके बाद दोनों ओरसे तनखाह पाने वाले कर्मचारी कहें कि आप लोगों के मेल से बहुत ही लाभ है। आप लोग अब आपस में बहुत अच्छी तरह से जुड़गये हैं। या यदि

वह उनमें से किसी को दुष्ट समझे तो कहे कि 'यह संधि तो ठीक नहीं मालूम पड़ती'। और जब वह आपस में फटजावें तो कहे कि 'देखो वही हुआ जो कि हमने पहिले से प्रकट किया था'। विजिगीषु को चाहिये कि शत्रु के गुट्टके पूर्ण रूपसे टूटजाने पर जिस किसी को चाहे अपने वशमें करले।

यदि शत्रुओं के संग का कोईभी मुखिया न होतो उनमें से १ जो संग को उत्साह देता हो, २। स्थिर स्वभाव का हो, ३। जिस में प्रकृति अनुरक्त हो; ४। जो लोभ या भयसे संग में आमिला हो, ५। जो विजिगीषु से डरता हो, या ६। जो कि उनमें से विजिगीषु का रिश्तेदार हो; या ७। मित्र हो या ८। दुश्मन हो तो इधर उधर फिरता हो—तो इन में क्रमशः जिसको अपने साथ मिलासके मिला लेवे। इन में से १ पहिले को आत्म समर्पण के द्वारा, २ दूसरे को मनाने तथा अपने सिर झुकाने के द्वारा, ३ तीसरे को अपनी लड़की देकर या अपने लड़के को उसकी लड़की के साथ व्याह कर ४ चौथे को लाभ का आधा देकर, ५ पांचवे को रुपया सेना आदि देकर या समझा बुझाकर, ६ छट्टे को एकता तथा अधिक सम्बन्ध बढ़ाकर, ७ सातवें को प्रेम तथा हित की बातें कहकर या कुछ देकर और ८ आठवें को लाभ पहुंचाकर या उसकी हानि को न कर— अर्थात् जो जिस प्रकार काबू में आसके उसको उसी प्रकार काबू में लाकर अपना मतलब सिद्ध करे या आपत्ति पड़ने पर साम दान भेद दंड के द्वारा वैसा ही करे जैसाकि लिखा जाचुका है।

यदि विजिगीषु किसी भयंकर आपत्ति में पड़ने की आशंका करता हो तो शत्रुको रुपया पैसा सेना आदि देकर और देश काल कार्य्य विषयक शर्तों को पक्का कर संधि करे। यदि संधि की कोई शर्त उससे टूट जाय तो उसका उपाय करे यदि उसका पक्ष कमजोर हो तो बन्धु तथा मित्र के सहारे अपने पक्ष को प्रबल करे।, या अभेद्य तथा अविजेय दुर्ग बनावे। क्यों कि जिस राजा के पास किला होता है उसको शत्रु तथा मित्र दोनों ही आदरकी दृष्टि से देखते हैं।

जिसराजा के पास मंत्रशक्ति की कमी हो उसको चाहिये कि वह बुद्धिमान् पुरुषों को इकट्ठा करे तथा विद्वान् लोगों के साथ मेल जोल बढ़ावे। इस प्रकार वह शीघ्र ही अपने उद्देश्य में सफल हो जाता है। जिसका प्रभाव [प्रभव] कम हो उसको प्रकृति के योग क्षेम बढ़ाने के लिये यत्न करना चाहिये। क्यों कि सब कामों का आधार जन पद पर है और इसीसे राजा का प्रभाव बढ़ता है। आपत्ति पड़ने पर दुर्ग ही अपना तथा जनपद का अन्तिम सहारा होता है

खेतों का आधार सेतुबन्ध [नहर] पर है। सेतु [नहर] के द्वारा सींचने पर सदाही वृष्टि के लाभ मिलते रहते हैं।

शत्रु पर आक्रमण करने का आधार वणिक्पथ [व्यापारीय मार्ग] है। वणिक्पथ के द्वारा ही गुप्त चरों का आना तथा शस्त्र कवच घोड़ा गाड़ी आदि का खरीदना होता है। खानि [खान] संग्राम के हथियारों का, द्रव्य वन (लकड़ी का जंगल) किले के कामों का, तथा घोड़े गाड़ियों और रथों का, हस्ति वन (हाथीका जंगल) हाथियों का और व्रज (गोचर भूमि) गौ घोड़ा रथ ऊंट आदियों का प्राप्ति स्थान (योनि) है। यदि किसी के पास उपरि लिखित साधन न हों तो वह बन्धुओं तथा मित्रों से उनको प्राप्त करे। यदि उसके पास सेनाकी कमी हो तो श्रेणी के वीर वीर पुरुषों, चोरों जंगलियों म्लेच्छों, दूसरे को हानि पहुंचाने वाले गुप्त चरों आदिकों को इकट्ठा कर सेना बनावे। शत्रुओं के साथ उसी नीति का अवलंबन करे जो कि एक दुर्बल को सबल के साथ काम में लाना चाहिये।

पक्ष, मंत्र, द्रव्य तथा सैन्य से शक्ति प्राप्त कर विजिगीषु शत्रु से उन अपमानों का बदला ले जो कि उसके साथ किया हो।

११९-१२० प्रकरण।

प्रबल शत्रु के साथ व्यवहार तथा विजित शत्रु का चरित्र।

यदि बलवान् राजा किसी दुर्बल राजा पर आक्रमण करे तो दुर्बल राजा को उसके सदृश बलवाले ऐसे राजा का आश्रय ग्रहण करलेना चाहिये जिसको कि वह मंत्रशक्ति से न फाड़सके। यदि मंत्रशक्ति में कोई दो राजा समान हों तो उनमें से वही उत्तम है जो कि समृद्ध हो और जिसके यहां विद्वान् लोगों का निवास हो। यदि उसके समान बलवाला राजा ना मिले तो जिसकी सेना या सेनामें मनुष्यों की संख्या उसके समान हो उसके साथ मिल जाय। बशर्ते कि वह शत्रु की मंत्रशक्ति या प्रभाव से फटजाने वाला न हो। मन्त्र तथा प्रभाव में समान राजाओं के अन्दर भी वही अच्छे हैं जो कि बहुत ही अधिक तैय्यार हों। यदि समान बलवाले राजा भी न मिलें तो वह उत्साही विश्वासपात्र तथा शत्रुका सामना करने में समर्थ बहुत से कमजोर राजाओं से मित्रता करले बशर्ते कि वह शत्रु की मंत्रशक्तिप्रभाव तथा उत्साहशक्ति से पृथक् न होसकें। उत्साह तथा शक्ति में समान राजाओं में वही अच्छे हैं जिनके पास युद्धकरने की भूमि उत्तम हो। यदि दो राजा युद्धभूमि में समान हों तो उनमें वही लाभकर हैं जिनमें युद्ध करने का समय ठीक हो। इसमें भी जो समान हों उनमें रथ, शस्त्र तथा कवच के द्वारा विशेषता करलेनी चाहिये।

यदि कहीं से भी सहायता ना मिले तो ऐसेदुर्ग की शरण ले जिसमें शत्रु अन्न घास लकड़ी पानी आदि की रुकावटें न डालसकें चाहे उसके पास अधिक से अधिक सेना क्यों न हो। यदि वह रुकावट डालना ही चाहे तो उसको भयंकर क्षय तथा व्यय का सामना करना पड़े। यदि ऐसेदुर्ग बहुत से हों तो उनमें वही उत्तम है। जिसमें धान्य तथा अन्न का संग्रह सुगमता से कियाजासके।

कौटिल्य का मत है कि जिसके पास धान्य तथा अन्न का संग्रह हो वह मनुष्योंसे परिपूर्ण दुर्ग में रहे। उसको निम्न लिखित बातों को ध्यान में रखना चाहियेः——

जब वह यह देखे कि—मैं पार्ष्णिग्राह तथा उसके साथी को मध्यम बनाऊंगा, या—सामन्त जांगलिक या उसके किसी कैदी से उसका राज्य छिनवाऊंगा, या उसको मरवादूंगा, या—कृत्यपक्ष [शत्रु के साथ मिल जाने वाले लोग] को अपने साथ मिलाकर उसके दुर्ग, राष्ट्र तथा स्कंधावार (छावनी) में विद्रोह करवादूंगा, या—उसके साथ घनिष्ठता बढ़ाकर शस्त्र, रस, अग्नि या औपनिषदिक योग [गुप्त रूप से मारने के तरीके] से उसको सुगमता से मनमाने ढंग पर मरवा डालूंगा, या—योग प्रणिधान [शत्रु को नष्ट करने के साधन] का स्वयं प्रयोग कर उसका क्षय तथा व्यय करा दूंगा, या—क्षय व्यय तथा प्रवास से उसके व्याकुल होते ही उसके मित्रवर्ग तथा सेनामें फूट डलवा दूंगा, या—मनुष्य तथा अन्न सामग्री को रोककर उसकी छावनी [स्कंधावार] को घेरलूंगा, या—दंडोपनय (आत्म समर्पण) के द्वारा मैं उसकी कमजोरियों पर पूरी तैय्यारी के साथ प्रहार करूंगा—या उसका उत्साह भंग कर सुगमता से ही उसके साथ संधि कर लूंगा—या मेरे ऊपर जादा रोक टोक करते ही उसके पक्ष के लोग विद्रोह करदेंगे—या उसके निरासार मूल को अमित्र अटवी आदि की सेनाओंसे सत्यानाश कर दूंगा—या बड़े से बड़े देश के योग क्षेम (कल्याण) का प्रबंध यहां बैठे ही बैठ कर सकूंगा—या स्वयं ही या मित्र लोगों के द्वारा मेरी सेना बिगड़ गई है और मैं उसको अकेले ही न संभाल सकूंगा—या मेरी सेना निम्न [नदी] खात (गड्ढा) तथा रात्रि संबंधी युद्ध में निपुण है इसलिये भोजन आदि की बाधा होते हुए भी आगामी तथा आसन्न युद्ध में लड़ सकती है—या शत्रु के लिये यहां की देश काल आदि अवस्थायें अनुकूल नहीं है। यहां आने पर यह क्षय तथा व्यय से लड़ाई करने में अपने आप असमर्थ हो जायगा। या—इस देश में भयंकर क्षय तथा व्यय का सामना करना पड़ेगा क्योंकि इसमें किले जांगलिक सेना [अपसार]

आदि का उसको सामना करना पड़ेगा। या शत्रु की सेना के लिये यह देश रोग रूप है। वह इस देश पर चढ़ाई करके भी यहां के पदार्थों को नहीं प्राप्त कर सकता है। इस देश में प्रवेश करते ही उस पर विपत्ति का पहाड़ आ टूटेगा। यदि वह इस पर भी देशमें घुस आया तो यहां से बाहर न निकल सकेगा—तो दुर्ग का आश्रय ले। यदि वह यह देखे कि उपरिलिखित दशा से विपरीत दशा है और शत्रु की सेना बहुत ही अधिक प्रबल है तो दुर्ग को छोड़ कर भाग जावे। या अग्नि में जैसे पतंग गिरता है वैसे ही अमित्र के देश में घुसजावे।

प्राचीन आचार्यों का मत है कि अपना देश छोड़ने पर भी किसी न किसी प्रकार का लाभ होता ही है। इस के विपरीत कौटिल्य का मत है कि—अपनी तथा परायी हालत को देखकर संधि करे। यदि हालत ठीक न देखे तो आक्रमण तथा विक्रम के द्वारा संधि या अपसार (जांगलिक सेना) के लिये कोशिश करे। संश्रय लोगों के पास दूत भेजे। यदि वह लोग दूत भेजें तो उनका अर्थ तथामान से सत्कार करे और कहे कि "यह सब महाराज का ही है। महाराणी तथा राजकुमारों का ही यह पण्यागार है। उनही की ओर से मैं इस राज्य का प्रबंध कर रहा हूं। मन तो उन लोगों के लिये अपना, आत्म समर्पण किया हुआ है"। इस प्रकार दूसरे राजा का आश्रयग्रहण देश तथा राज्य के नियमों के अनुसार (समयाचार) स्वामी के साथ व्यवहार करे। दुर्ग कर्म (किला बनाना), आवाह (उपनिवेश बसाना), विवाह, पुत्राभिषेक, पण्य तथा हाथी का लेना, सत्र (भयंकर स्थान) यात्रा (चढ़ाई कर) विहार में जाना आदि काम स्वामी की आज्ञा के अनुसार करे। यदि अपने श के लोग रुष्ट हो जायं तो न्याय करने का अधिकार मांगे या कहे कि मुझ को किसी दूसरे देश का शासक नियुक्त कर दो। या राज्यद्रोहियों के सदृश ही दुष्टों के साथ भी उपांशु दंड का प्रयोग करे। मित्र यदि अच्छी से अच्छी भूमि भी दे तो न ग्रहण करे। स्वामी न हो तो मंत्रि पुरोहित युवराज सेनापति आदियों में किसी को स्वामी समझकर काम करे। स्वामी का यथाशक्ति उप-

कार करे। देवतासम्बन्धी स्वस्ति वाचन में उसके लिये कल्याण की प्रार्थना करे। और सदा ही स्वामी की आज्ञा के अनुसार काम करने के लिये तत्पर रहे।

दंडोपनत (पराजित या आश्रित) को चाहिये कि जो लोग बलवान् तथा संगठित हों उन से मेल जोल और शंकित लोगों से विरोध रखकर स्वामी की सेवा करे।

१२१ प्रकरण।

पराजित राजा का व्यवहार।

विजयी को खर्च तथा धन सम्बन्धी विपत्ति में डालने के उद्देश्य से पराजित राजा को चाहिये कि विजय की इच्छा से स्वामी की आज्ञा लेकर ऐसे शत्रु पर चढ़ाई कर दे जहां कि भूमि तथा ऋतु अपने सैनिकों के लिये अनुकूल हो और किला, पार्ष्णि आदि की बाधा न हो। यदि यह बातें पूर्ण रूप से न हों तो उपाय करके चढ़ाई करे। दुर्बल शत्रुओं को साम तथा दान से और प्रबल शत्रुओं को भेद तथा दंड से अपने वश में करे। पड़ोस तथा दूर के शत्रुओं को तीनों उपायों में एक या दो या तीनों के सहारे अपने वश में करे। साम उपाय के अनुसार ग्रामीणों जंगलियों पशुपालकों तथा व्यापारियों को वचन दिया जाय कि मैं तुम्हारी रक्षा करूंगा और प्रजा को कहा जायगा कि मैं बहिष्कृत, पतित तथा प्रवासित लोगों को पुनः बुला लूंगा। दान उपाय के अनुसार भूमि, द्रव्य, कन्या आदि के साथ साथ अभय दान दे। भेद उपाय के अनुसार सामंत, जांगलिक, कुलीन, कैदी आदियों में से किसी को कोश, सैन्य, भूमि तथा दाम आदि के मांगने के लिये भड़कावे। दंड उपाय के अनुसार प्रकाश युद्ध, कूट युद्ध, तुष्णीं युद्ध तथा दुर्ग जीतने के उपाय के द्वारा अमित्र को दंड दे। इसी प्रकार उत्साही सेनापतियों को नियुक्त करे जोकि प्रभाव युक्त हों; कोश का उपकार कर सकते हों, बुद्धिमान हों तथा भूमि के द्वारा समय पर सहायता पहुंचा सकते हों। इन में—जो मंडी, ग्राम, खान आदि से पैदा होने वाले

रत्न सार तथा कुप्य (जांगलिक द्रव्य) से और द्रव्यवन तथा हस्ति वन से प्राप्त गाड़ी घोड़े से बारंबार उपकार करे वह चित्र भोग —जो दंड [सैन्य] तथा कोश से सहायता पहुंचावे वह महा भोग—जो दंड, कोश तथा भूमि से सहायता दे वह सर्वभोग— जो एक ओर से अमित्र को रोके वह एकतोभोग—जो अमित्र तथा आसार [साथी] का भी साथ उपकार करे वह उभयतोभोगी— और जो अमित्र, आसार [साथी] पड़ोसी तथा जांगलिकों से रक्षा करे वह सर्वतोभोगी कहाता है।

यदि पार्ष्णिग्राह, आटविक, शत्रुमुख्य तथा शत्रुभूमि लेकर शान्त किये जासकें (भूमिदानसाध्य) तो उनको निर्गुणा (अनुत्पादक) भूमि देकर अपना काम निकाले। यदि उनमें से कोई दुर्गस्थ हो तो उसको अप्रतिसंबद्धा (पृथक् पृथक् विद्यमान) आटविक हो तो उसको निरूपजीव्या (जो कि किसी भी अर्थ की न हो), शत्रुसे कैद किया गया कुलीन हो तो उसको अशत्रु से घिरी हुई प्रत्यादेया [जिसको लौटा देना पड़े], श्रेणीबल हो तो उसका नित्यामित्रा (जहां के लोग सदा ही दुश्मनी करते हों या जिसमें शत्रु की प्रबलता हो), संहतबल (जिसकी सैना संगठित हो), होतो उसको बलवत्सामन्ता [वह भूमि जिसपर शक्तिशाली सामन्त शासन करता हो], प्रतिलोम (विरोधी) हो तो उसको द्वन्द्वयुद्ध, उत्साही हो तो उसको अलब्धव्यायामा (जिसमें सैन्य संग्रह न किया जासके), अरिपक्षीय (शत्रु के पक्षका] हो तो उसको शून्या, अपवाहित (दूसरे देशमें बसाया गया)हो तो उसको कर्शिता (पहिले से ही निचोड़ ली गई), गतप्रत्यागत (जाकर पुनः लौटा हुआ) हो तो महाक्षयव्ययनिवेशा [जिस पर उपनिवेश बसाने में बहुत ही क्षय तथा व्यय हो], प्रत्यपसृत [भागा हुआ] हो तो उसको अनुपाश्रया [जो कि आश्रय देने में समर्थ हो] और यदि वह अपना ही स्वामी (राजा या मालिक) हो तो उसको परानधिवास्या (शत्रु रहित) भूमि देकर प्रसन्न करे।

विजिगीषु उनलोगों के प्रति उपरीलिखित नीतिका ही अवलंबन करे जो कि बहुत ही लाभदायक तथा सदा साथ देने वाले हों

और जो कि इससे विपरीत हों तो उनको उपांशु दंड [चुप्पे से मरवादेना] से मरवादे। जो उपकार करने वाले हों उनको उपकारशक्ति से संतुष्ट रखे। जो कष्ट उठावें उनकी अर्थ तथा मान से पूजा करे। जो कष्ट में पड़जांय उनपर अनुग्रह करे। जो स्वयं आवे उनसे खुशी खुशी मिले और साथ ही स्वयं भी उनके यहां जावे। प्रतिविधान बेइज्जती, झिड़की, निन्दा तथा बकवाद आदि से दूर रहे। शरण में आयेहुओं को अभयदान दे तथा उनपर पिताकी तरह अनुग्रह करे। जो नुक्सान पहुंचावे उसके दोषको जनता में प्रकट कर उसको कतल करवादे। यदि इसमें दूसरे के उद्विग्न होजाने की आशंका देखे तो उसको चुप्पे से मरवादे। जो लोग मरवाये जांय उनकी भूमि, द्रव्य, पुत्र तथा स्त्री आदिकों को ग्रहण करने के लिये आंख न उठावे। उनके घर में जो लोग अच्छे तथा योग्य हों उनको उचित स्थान दे। यदि कोई राजकीय काम में मरजाय तो उसके पुत्र को उसके राज्य पर बैठाये। इस नीति का अवलंबन करने से पराजित राजा के पुत्र तथा पौत्र विजिगीषु का साथ नहीं छोड़ते। जो पराजित राजा को मारकर उनकी भूमि, द्रव्य, पुत्र तथा स्त्री आदिकों पर भी हाथ सफा करता है तो राज्य मंडल उससे उद्विग्न होजाता है और उसके विनाश के लिये यत्न करने लगता है। उसके जो अमात्य हैं वह भी उससे घबड़ा कर विरोधियों का ही साथ दे देते हैं या स्वयं उसके राज्य को छीन लेते हैं या उनकी जान ले लेते हैं।

साम उपायके द्वारा पराजित राजाओं को यदि अपनी भूमियों पर शासन करने दिया जाए तो वह तथा उनके पुत्र तथा पौत्र विजयी की आज्ञाका उल्लंघन नहींकरते तथा उसीके पीछे चलते हैं।

१२२-१२३ प्रकरण।

संधि का करना तथा तोड़ना।

शम, संधि तथा समाधि एक दूसरे के पर्य्याय हैं। राजाओं के विश्वास की स्थिरता इसी पर निर्भर है। प्राचीन आचार्य शपथ

या सत्य के आधार पर की गई संधि को चालसंधि (अस्थिर संधि) और प्रतिभू (साख) तथा प्रतिग्रह (किसी चीज़ को ग्रहण करना) के आधार पर की गई संधि को स्थावरसंधि (स्थिरसंधि) समझते हैं। इससे विपरीत कौटिल्य का मत है कि सत्य तथा शपथ पर आश्रित संधि दोनों लोकों के लिये स्थिर (स्थावर) होती है। प्रतिभू तथा प्रतिग्रह पर आश्रित संधि तो इसी लोक के लिये होती है और इसकी स्थिरता बल पर निर्भर है।

पुराने जमाने में सत्यप्रतिज्ञ राजा "हमारी संधि है" यह कह कर सत्य पर दृढ़ रहते थे। इस के बाद आग, पानी, खेत, मकान, धातु, हस्तिस्कंध [हाथी का कंधा] अश्वपृष्ठ, रथोपस्थ (रथ की गद्दी), शस्त्र, रत्न, धान्य (बीज), गंध, रस, सुवर्ण, हिरण्यादि को हाथ में लेकर या छूकर यह शपथ करने लगे कि जो शपथ का उल्लंघन करे उसको अमुक वस्तुएं नष्ट करदें तथा सदा के लिये छोड़दें। शपथ के उल्लंघन करने पर जिस संधि में बड़े बड़े तपस्वियों तथा मुखियों को बीच में रखा जाय [प्रातिभा व्यबंध] उसको प्रतिभूसंधि कहते हैं। इसमें भी जो शक्तिशाली व्यक्ति को प्रतिभू मध्यस्थ बनाता है वह लाभ में रहता है। जो यह नहीं करता वह नुकसान में रहता है। बंधुओं तथा मुखियों को जिसमें जमानत के तौरपर रखाजाय उसको प्रतिग्रहसंधि कहते हैं। इसमें भी जो राज्यद्रोही या उसके पुत्रको जमानत के तौरपर देता है वह लाभ में रहता है। इससे विपरीत काम करने वाला हानि में रहता है। जमानत लेकर प्रायः राजा निरपेक्ष होजाते हैं। मौका पाकर शत्रु उसकी दुर्बलताओं से लाभ उठाता है। अपत्यसंधि में यदि लड़के लड़की आदि के देने में स्वतंत्रता हो तो जो लड़की देता है वह लाभ में रहता है। क्यों कि कन्या को पिता की संपत्ति नहीं मिलती और साथ ही वह अनर्थ तथा क्लेश को पैदा करती है। लड़के में यही बात नहीं है। यदि संधि में पुत्र के देने की शर्त हो तो जो जात्य [समान जातिकी स्त्रीसे उत्पन्न], शूर, प्राज्ञ (बुद्धिमान्), कृतास्त्र (शस्त्रविद्या में निपुण) या एकपुत्र (इकलौता

लड़का) को देता है वही लाभ में रहता है और दूसरा नुकसान में रहता है। जात्य तथा अजात्य में अजात्य का देना ही ठीक है क्यों कि उसके कोई भी संतान नहीं होता और उसको जायदाद प्राप्त होने का अधिकार भी नहीं होता है। प्राज्ञ तथा अप्राज्ञ में मंत्रशक्ति में सहायक न होने से अप्राज्ञ, शूर अशूर में उत्साह शक्ति न होने से अशूर, कृतास्त्र अकृतास्त्र में प्रहार करने का शक्ति के न होने से अकृतास्त्र और एकपुत्र अनेकपुत्र में जो निरपेक्ष हो उसको देना चाहिये। जात्य और प्राज्ञ पुत्रों में जात्य यदि अप्राज्ञ भी हो तो प्रकृति तथा प्रभुता (ऐश्वर्य) उसी का साथ देती है। निस्सन्देह अजात्यप्राज्ञ में मंत्रशक्ति विशेष होती है। परन्तु अप्राज्ञजात्य बुद्धिमान लोगों की सहायता से उसको मंत्रशक्ति में भी पराजित करदेता है। प्राज्ञशूर में अशूरप्राज्ञ बुद्धि के बलसे कठिन से कठिन काम करलेता है। निस्सन्देह अप्राज्ञशूर बली होता है। परन्तु प्राज्ञ वैसे ही उसको अपने वशमें करलेता है जैसे कि शिकारी (लुब्धक) हाथी का अपने काबू करलेता है। शूरकृतास्त्र में अकृतास्त्र शूर चढ़ाई आदि विक्रम के कामों को उत्तम विधिपर करता है। इससे विपरीत अशूरकृतास्त्र निशाना ठीक लगाता है। निशाना ठीक लगाने वालों में भी शूरकृतास्त्र धैर्य, विवेक तथा असंमोह आदि गुणों से अच्छा रहता है। एकपुत्र तथा बहुपुत्र में बहुपुत्र एक को देकर कुछ समय तक थंभता है और फिर संधि तोड़देता है। एकपुत्र पुत्र को देकर ऐसाकभी भी नहीं करता। यदि साथ में पुत्र तथा सर्वस्व देनेकी शर्त हो तो पुत्र तथा फल की विशेषता का ख्याल रखना चाहिये। जिनके लड़के हों उनमें भी भावी संतान के अनुसार विशेषता करनी चाहिये। भावी संतान वालों में भी वही उत्तम है जिनके कि शीघ्र ही बालक होने वाला हो। शक्तिमान् एकपुत्र (जिसके बच्चा होने वाला हो) के होने पर वह अपने आपको जमानत में रखदे बशर्ते कि उसको अन्य लड़के के होने की संभावना न हो। परन्तु एकपुत्र को जमानत में कभी भी न रखे।

यदि शक्ति बढ़ने लगे संधि तोड़ डाले। जमानत में रखेगये राजकुमार के चारों ओर कारीगर शिल्पी आदि के भेष में सत्री

लोग काम कर और रात में सुरंग लगाकर राज कुमार को उड़ाले आवें या नट, नर्तक, गायक, वादक, भांड, कुशीलव [भाट] प्लवक [तैरने वाले] सौहिक आदि शत्रु के पास रहें और राजकुमार से मिलते रहें। वह आने जाने रहने आदि का समय निश्चित न रखें। मौका पाते ही राजकुमार उनके भेष में रात के अन्दर बाहर निकल आवे। स्त्री के भेष में रंडियां (रूपाजीवा) यही करसकती है। राजकुमार उनकी तुहीं बाजे आदि लेकर बाहर आजावे।

सूद, अरालिक (पाचक), स्नापक, संवाहक (शरीर मलने वाला) आस्तरक (बिस्तर बिछाने वाला), कल्पक, प्रसाधक (सजाने वाला), कहार, आदि कपड़े लत्ते वर्त्तन बाजे बिस्तर आसन आदि सामान में छिपाकर राजकुमार को बाहर ले आवें। या नौकर के भेस में कुविरिया के समय में वह स्वयं बाहर आजावे। या सुरंग के द्वारा या रात के समय तालाब में देरतक डुबकी लगाने के द्वारा भाग जावे। वैदेहक के भेसमें सभी लोग पहरेदारों को मिठाई फल आदि देने के बहाने इधर उधर करदें। या देवता के प्रसाद, उपहार श्राद्ध,प्रवहण (सैर क०) आदि के निमित्त अन्नपान आदि दें और उसमें मैनफल से बनी जहर मिलादें। शहरी, भाट, वैद्य, हलवाई आदि के भेष में सभी पहरे दारों को शाबासी दें और साथही रात में मालदार मकानों में या वैदेहक के भेष में गुप्तचर पहरे दारों के माल असबाब में आग लगादें। या राजकुमार सेंध, सुरंग, आदि को लगाकर अपने मकान में आग लगादे और चुपके से बाहर निकल जाय। या शीशे के बर्तन ढोने वाले लोगों के भेष में निकल आवे मुंडों तथा जटाधारियों के आश्रमों में उन्हीं के भेष में रात बितावे बीमार बद सूरत जंगली आदि के भष में या भूत प्रेत के भेष में फिरने वाले गुप्तचरों के साथ स्त्रीका भेष बनाकर भी राजकुमार बाहर निकलसकता है। यदि शत्रु के सैनिक उसका पीछा करें तो बनैले के भेष में फिरने वाले गुप्तचर उनको दूसरा राजा बतादें और उसको किसी दूसरी ओर से बाहर निकाल दें या वह गाड़ीवालों की गाड़ियों में छिपकर भाग जावें। यदि शत्रु बहुत ही अधिक पास हों तो सत्र (दल दल आदि से घिरा भयंकर स्थान) का सहारा ले।

यदि समीप में कोई सत्र न हो तो सोना या जहर मिला उत्तम उत्तम भोजन सड़क के दोनों ओर फेंकदें। और इसप्रकार अपने भागने का प्रबंध करे। इतना यत्न करने पर भी यदि वह पकड़ा जाय तो तो सामादि उपाय या जहरीला खाना या लम्बी डुपकी या आग आदि से अपना पीछा छुड़ाने का यत्न करे और शत्रु पर यह कहकर आक्रमण करे कि "तुमने मेरे लड़के को मार डाला है।"

—या गुप्तरूप से हथियारों को लेकर पहरेदारों पर आक्रमण करे और तेज भागने वाले गुप्तचरों के साथ भाग जावे।

१२४–१२६ प्रकरण।

मध्यम तथा उदासीन मंडल के कार्य्य।

[क]

मध्यम मंडल के कार्य्य।

मध्यम से तृतीय तथा पांचवी प्रकृति प्रकृति [मित्रराष्ट्र] और द्वितीय चतुर्थ तथा षष्ठ प्रकृति विकृति (शत्रुराष्ट्र) नाम से पुकारी जाती है। यदि मध्यम दोनों का अनुग्रह करे तो विजिगीषु मध्यम के अनुकूल और अनुग्रह न करे तो उसके प्रतिकूल होजाय।

यदि मध्यम विजिगीषु के मित्र या भावीमित्र पर प्रभुत्व प्राप्त करना चाहे तो वह मित्र के तथा अपने मित्रों को लड़ने के लिये तैय्यार करे और मध्यम के मित्रों को उससे फाड़कर अपने मित्र को बचावे। राष्ट्र मंडल को प्रोत्साहित करे और कहे कि "मध्यम बहुत ही शक्तिशाली होगया है। अब वह हम सब को नाश करने के लिये तैय्यार होगया है। आओ आपसमें मिलकर उसकी चढ़ाई को निष्फल करें"। यदि राष्ट्रमंडल मंजूर करले तो उनके साथ मिलकर मध्यम को नीचा दिखावे। यदि यह बात न हो तो अपने मित्र को धन तथा सैन्य [कोश दंड] से सहायता पहुंचावे और मध्यम से दुश्मनी रखने वाले राजाओं को इकट्ठा करे। यदि वह एक दूसरे का मुंह ताकते हों, एक उठ खड़ा हो तो और उठ खड़े

होने के लिये तैय्यार हों या आपस में एक दूसरे से डरते हों तो उनमें जो मुखिया हो उसको साम तथा दान से अपने वशमें करे। इसी प्रकार दुगुना तथा तिगुना देकर द्वितीय तथा तृतीय प्रकृति को भी अपने साथ मिलाले। जब अपनी शक्ति पर्य्याप्त अधिक देखे तो मध्यम को सदा के लिये दबाये।

यदि देश तथा काल उपरिलिखित यत्न के बाधक हों तो मध्यम के शत्रु के साथ संधि करले और देशद्रोहियों को उसके विरुद्ध संगठित करे। यदि मध्यम विजिगीषु के मित्रों को कम करना चाहे और इसी उद्देश्यसे उनके साथ संधि करना शुरू करे तो विजिगीषु अपने मित्र को कहे कि "मैं तुम को तबतक बचाता रहूंगा जबतक कि तुम दुर्बल हो" और साथ ही दुर्बलता की दशा में उसकी रक्षा भी करे। यदि मध्यम विजिगीषु के मित्र को सदा के लिये नष्ट करना चाहे तो विजिगीषु उसको बचावे और यदि वह मध्यम के डर से भाग खड़ा हो तो वह उसको अन्यत्र आश्रय लेने से रोक कर अपने यहां आश्रय दे तो उसको भूमि भी देवे। यदि मध्यम के उच्छेदनीय [जिसको वह नष्ट करना चाहता हो] तथा कर्शनीय [जिस की शक्ति को वह कम करना चाहता हो] शत्रु [विजिगीषु के मित्र] मध्यम के साथ मिल जांय तो विजिगीषु दूसरे राजा के साथ संधि करले। यदि मध्यम के ऐसे मित्रों के साथ विजिगीषु दोस्ती करले जिनको कि मध्यम दबाना या नष्ट करना चाहता है तो उसका स्वार्थ भी सिद्ध होजाय और मध्यम भी उसके साथ प्रीति का व्यवहार करने लगे।

यदि मध्यम विजिगीषु के भावी मित्र को अपने वशमें करना चाहे तो विजिगीषु किसी दूसरे राजा के साथ संधि करले। और मित्र को कहे कि "तुम मध्यमके साथ न मिलो। मैं तुम्हारी मित्रता को चाहता हूं"। या यदि देखे कि "राष्ट्रमंडल उससे कुपित हो जायगा यदि वह अपना पक्ष छोड़ेगा" तो चुप होकर बैठ जाय। यदि मध्यम विजिगीषु के दुश्मन पर प्रभुत्व प्राप्त करना चाहे तो वह चुपके चुपके अपने शत्रु को धन तथा सैन्य से सहायता पहुंचावे। यदि मध्यम उदासीन राजा को अपने वश में करना चाहे तो

विजिगीषु उसको उससे फाड़दे। राष्ट्र मंडलमध्यम तथा उदासीन में जिसके पक्ष में हो, विजिगीषु उसी का पक्ष ले। मध्यम के सदृश ही उदासीन के साथ व्यवहार किया जाय यदि वह विजय की इच्छा करे।

[ख]
उदासीन मंडल.

यदि उदासीन मध्यम पर प्रभुत्व प्राप्त करना चाहे तो विजिगीषु उसको किसी दूसरे शत्रु के साथ लड़ाने की कोशिश करे, या किसी दूसरे मित्र की सहायता के लिये प्रेरित करे या स्वयं किसी दूसरे उदासीन राजा की सहायता प्राप्त करे। इस प्रकार अपने आपको शक्तिशाली बनाकर विजिगीषु शत्रु प्रकृति को नीचा दिखावे, मित्रप्रकृति को सहायता देवे चाहे वह उसके प्रति अन्दरूनी दुश्मनी ही क्यों न रखते हों ?

विजिगीषु के भावी शत्रु वही हैं जो कि सदा ही उसका अपकार करें, तकलीफ में उसपर चढ़ाई करें या उसकी तकलीफों की प्रतीक्षा करें। शत्रुओं के साथ रहने वाला पार्ष्णिग्राह भी इसी में संमिलित है इसी प्रकार विजिगीषु के भावी मित्र वही हैं जोकि उसके साथ एक उद्देश्य से या भिन्न उद्देश्य से, मिलकर या पृथक् होकर, स्वार्थ से या शान्ति की इच्छा से, कोशदंड में किसी एक को खरीदकर या बेचकर, शत्रु पर आक्रमण करें या द्वैधीभाव (किसी एक के साथ लड़ना तथा दूसरे के साथ संधि करना) की नीति का अवलंबन करें। उसके भावी भृत्यों में वह लोग संमिलित हैं जोकि बलवान् राजा के पीछे (पार्ष्णिग्राह) मौजूद हों, और जोकि विजिगीषु के प्रताप से या सैन्य के भय से या स्वयं ही उसकी आधीनता में आगये हों। विजिगीषु के दुश्मनों के पीछे जो राजा हों उनके साथ भी यही नियम है।

शत्रु के साथ विरोध बढ़ने पर विजिगीषु उसी मित्र का सहारा ले या उसको सहायता पहुंचावे जिसका उद्देश्य उससे मिलता हो और इस प्रकार शत्रुको नीचा दिखावे। यदि शत्रुको जीतने के बाद मित्र की शक्ति बहुत ही अधिक बढजाय और वह किसी के

भी काबूका नरहे तो सामंत तथा उसके अड़ोस पड़ोस के राजाओं से उसका झगड़ा करवादे।

— या कुलीन या कैंप में पड़े राजकुमार के द्वारा उसकी भूमि को छिनवा ले और उसको इस हालत में पहुंचाये कि वह सदा ही उसके अनुग्रह की इच्छा रखता हुआ वशमें रहे।—या अमित्र का उपकार कभी भी न करे और अत्यंत कर्शित [चूसागया] राजा को अपना मित्र बना लेवे बशर्ते कि वह उससे कमजोर या शक्ति शाली न होवे। यदि कोई मित्र राजनैतिकदृष्टि [अर्थ युक्ति] से चलसंधि [अस्थिर संधि] करे तो ऐसा दल करे जिससे वह स्थिर मित्र बनजायं और उन कारणों को दूर करदे जिनके कारण वह अपने से डर रहता हो। यदि इसपर भी वह शत्रु ही बनारहे तो उस शठको साथियों से फाड़दे और इसके बाद उसको नष्ट करदे। यदि वह उदासीन बनारहे तो उसको सामन्तों के साथ विरोध करवादे और इसप्रकार जब वह झगड़ों के कारण तकलीफ में पड़जाय तो उसके साथ उपकार करे। जो दुर्बल होनेके कारण अमित्र तथा विजिगीषु दोनों का ही साथ दे। उसको सेना द्वारा सहायता दे और ऐसी कोशिश करे जिससे वह पराङ्मुख न होवे। या उसको वहां से हटाकर दूसरी भूमिका स्वामी बनादे और उस ख्यालपर, सैनिक सहायता देकर किसी दूसरे व्यक्ति को नियुक्त करदे। जो शक्ति प्राप्त करते ही नुकसान पंहुंचावे और आपत्ति पड़ने पर किसी भी ढंगकी सहायता देवे उसको विश्वास दिखाकर अपने साथ रखे और मौका पड़नेपर उसको मारडाले। मित्र पर तकलीफ पड़ते ही जो दुश्मन उच्छृंखल होकर आक्रमण करने के लिये तैय्यार हो जाय तो मित्रकी तकलीफों को दूरकर मित्रके द्वारा ही उसपर आक्रमण करवाये। जो मित्र शत्रु के कष्टमें पड़ते ही अपने से विरक्त होजाय उसको कष्ट से मुक्तहुए हुए शत्रु के द्वारा ही वश में करे। अर्थशास्त्रज्ञ का कर्तव्य है कि वह संपूर्ण उपायों को काम में लाकर—वृद्धि, क्षय, स्थान, कर्शतोच्छेदन आदि काम करे। जो उपरिलिखित प्रकार परस्पराश्रित षाड्गुण्य का प्रयोग करता है वह अपनी बुद्धिरूपी हथकड़ी से राजाओं को बांध कर मनमाने ढंगपर नचाता है।

८ अधिकरण ।

व्यसनाधिकारिक ।

१२७ प्रकरण ।

प्रकृति-व्यसन-वर्ग ।

यदि विपत्तियां एक साथ आपड़ी हों तो यही चिंता होती है कि "चढ़ाई की जाय या अपनी रक्षा का ही प्रबंध किया जाय"। प्रकृतियों के दैव या मनुष्य विपत्तियां अनय तथा अपनय से ही पैदा होती हैं। अनुकूल बात का न होना, दोष का पैदा होना तथा कष्ट या पीड़ा का बढ़ जाना ही विपत्तियों में संमिलित हैं। इसको व्यसन शब्द से भी पुकारा जाता है चूंकि यह मनुष्य को सुख तथा कल्याण से रहित कर देती हैं।

प्राचीन आचार्य्य स्वामी, अमात्य, जनपद, दुर्ग, कोश, दंड तथा मित्रविषयक व्यसनों [विपत्तियों] में जो एक दूसरे से पूर्व में है उनको क्रमशः अधिक अधिक भयंकर समझते हैं। इससे विपरीत भारद्वाज स्वामी तथा अमात्य विषयक व्यसन में अमात्य विषयक व्यसन को ही अधिक हानिकर प्रगट करते हैं। क्योंकि मंत्र फल की सिद्धि, कार्य्यों की समाप्ति, आय व्यय, अन्य काम, सैन्य निर्माण, अमित्रों तथा जांगलिकों से राष्ट्र तथा राज्य का संरक्षण आदि अमात्यों पर ही निर्भर है। यदि अमात्य न हों तो कुछ भी काम न हों, कटे पंख पक्षी की तरह राजा की चेष्टा नष्ट हो जाय और शत्रुओं के षड्यंत्र प्रबल होजांय। अमात्यों पर विपत्ति पड़ते ही राजा की जान खतरे में पड़ जाती है। क्योंकि अमात्य ही राजा की जान बचाता है। परंतु कौटिल्य इस बात के पक्ष में नहीं है। वह मंत्रि, पुरोहित, भृत्यवर्ग, अध्यक्ष आदिकों की नियुक्ति पुरुष, द्रव्य, प्रकृति संबंधी व्यसनों का उपाय, तथा समृद्धि वृद्धि

के साधन राजा के ही हाथ में समझता है। अमात्यों पर विपत्ति पड़ते ही वह अन्यों को विपत्ति से बचाता है। पूज्यों की पूजा तथा बागियों को पकड़ना तथा दंड देना आदि काम वही करता है। यदि वह समृद्ध है तो वह प्रकृति [प्रजा] को भी समृद्ध करदेता है। उसका जैसा स्वभाव होता है, प्रकृतियों का भी वही स्वभाव होजाता है। क्योंकि उनकी कर्मण्यता तथा प्रमाद उसी पर निर्भर है। राजा ही प्रजा का निचोड़ है।

विशालाक्ष अमात्य तथा जनपद संबंधी व्यसन में जनपद-व्यसन [जनपद पर पड़ा कष्ट] को ही अधिक भयंकर समझते हैं। क्योंकि कोश, सैन्य (दंड), कुप्य (जांगलिक द्रव्य), विष्टि (श्रमीवर्ग) बाहन (घोड़ा बैल आदि) तथा धान्य निचय (धान्य राशि) का आधार जनपद पर है। जनपद के नाश होने पर राजा तथा अमात्य को छोड़कर अन्य कोई भी बात न बचे। इससे विपरीत कौटिल्य अमात्य-व्यसन को ही अधिक भयंकर समझता है। उसका मत है कि संपूर्ण काम, अमात्य पर ही निर्भर हैं। जनपद के कामों का सिद्ध होना, बाह्य तथा अन्तरीय शत्रुओं से शरीर तथा संपत्ति की रक्षा, कल्याण की वृद्धि, व्यसनों का उपाय, उपनिवेशों का बसाना, उजाड़ जमीनों की उन्नति सैन्य राज्यस्व पारितोषिक तथा अनुग्रह आदि अमात्य के ही अधिक है।

पराशर के पक्षपाती जनपद तथा दुर्ग व्यसन में दुर्ग व्यसन को ही अधिक भयंकर समझते हैं। क्योंकि दुर्ग में ही कोश तथा सैन्य रखा जाता है, आपत्ति पड़ने पर जनपद को स्थान मिल जाता है, नागरिकों तथा ग्रामीणों की अपेक्षया दुर्ग से अधिक बल बढ़जाता है तथा आपत्ति पड़ने पर राजा को सदाही सहारा रहता है जानपदों (लोगों) पर अधिक भरोसा रखना ठीक नहीं है। उनको अमित्र के सदृश ही समझना चाहिये। इसके विपरीत कौटिल्य का मत है कि कोश, दंड (सैन्य), वार्ता, शौर्य, धैर्य, चातुर्य बाहुल्य (जन संख्या) आदि जनपद पर ही निर्भर हैं। पर्वत तथा द्वीप संबंधी दुर्गों का सहारा लेना ठीक नहीं क्योंकि उसके इधर उधर आबादी नहीं होती। कर्षक प्राय जनपद (जिस में

किसानों की संख्या अधिक हो) में दुर्ग व्यसन और आयुधीय प्रायजनपद (जिसमें सैनिकों की संख्या अधिक हो) में जनपद व्यसन बहुत ही भयंकर समझा जाता है ।

पिशुन का मत है कि दुर्ग तथा कोश के व्यसन में कोशव्यसन ही अधिक खतरनाक है । क्योंकि दुर्ग की रक्षा तथा संस्कार (मरम्मत) कोश के सहारे ही किया जाता है । शत्रु के षड्यंत्रों का मुख्य साधन भी यही है । जनपद, मित्र तथा अमित्र आदिकों पर प्रभुत्व, दूसरे देशमें गये हुए आदमियों का प्रोत्साहन और सेना का संग्रह आदि कोश पर ही निर्भर हैं । कोश हो तो कष्ट से बचसकता है । दुर्ग में यह बात कहां ? इससे विपरीत कौटिल्य का मत है कि—कोश, सेना, तूष्णीं युद्ध (छिपकर लड़ना), स्वपक्ष निग्रह (अपने पक्ष के लोगों को वश में रखना), सैन्य प्रयोग, मित्र बल का संग्रह शत्रु के षड्यंत्रों का प्रतिषेध, जांगलिकों से संरक्षण आदि दुर्ग पर ही निर्भर हैं । दुर्ग न हो तो कोश शत्रुओं के हाथ में चलाजाय । संसार में दुर्ग वालों का विनाश नहीं देखागया ।

कौणपदंत का मत है कि कोश तथा दंड (सैन्य) के व्यसन में दंड-व्यसन ही अधिक भयंकर है । क्योंकि—मित्र तथा अमित्र को वश में रखना, शत्रु की सेना को प्रोत्साहित करना, अपनी सेना का संग्रह करना आदि दंड (सैन्य) पर ही निर्भर है । यदि दंड न हो तो कोश निश्चित रूप से नष्ट होजाय । यदि कोश न हो तो कुप्य (जांगलिक पदार्थ), भूमि, शत्रु की भूमि आदि प्राप्त करने का लालच देकर सेना को संगठित किया जासकता है । दंड पर ही कोश निर्भर है । राजा के सदा पास रहने के कारण दंड अमात्य के तुल्य है । इससे विपरीत कौटिल्य का मत है कि दंड का आधार कोश ही है । यदि कोश न हो तो दंड शत्रु के पास चला जाता है या राजा का घात कर देता है । सब प्रकार की विपत्तियां खड़ी कर देता है । धर्म्म तथा काम कोश के ही कारण हैं । देशकाल कार्य्य के अनुसार कोश तथा दंड एक दूसरे के साधक होजाते हैं । दंड तो कोश में प्राप्त हुई वस्तु की ही रक्षा करता है । इससे विपरीत कोश दंड तथा कोश दोनों का ही साधक और संपूर्ण

द्रव्यों का उत्पादक है। इसलिये कोश का व्यसन ही संपूर्ण व्यसनों से भयंकर है।

वातव्याधि दंड तथा मित्र व्यसन में मित्रव्यसन को ही अधिक भयंकर समझते हैं। क्यों कि मित्र मौका पड़ने पर बिना किसी प्रकार का मेहनताना लिये ही काम करदेता है पार्ष्णिग्राह, आसार, अमित्र तथा आटविक का प्रतीकार करता है। तकलीफ पड़ने पर कोश; दंड तथा भूमि देकर सहायता पंहुंचाता है। कौटिल्य इस बातके पक्ष में नहीं। उसका विचार है कि—दंड संपन्न [सैन्ययुक्त] व्यक्ति के साथ ही मित्र मित्रका सा व्यवहार रखता है, अमित्र भी मित्र बनजाता है। यदि कोई काम दंड या मित्र के द्वारा समान रूपसे कियाजासकता हो तो युद्ध देश काल लाभ आवश्यकता आदिको संमुख रखकर जिससे विशेष लाभ देखे उसीसे काम ले। यदि किसीपर शीघ्रही चढ़ाई करना हो, या अमित्र तथा आटविक द्वारा सुलगाये हुए आभ्यंतर कोपको शान्त करना हो तो मित्र से काम नहीं निकलता। यदि एक ही समय में अनेक प्रकार के व्यसन उपस्थित होजांय तो और शत्रुकी शक्ति भी बहुत ही अधिक बढ़गई हो तो मित्र अपना स्वार्थ देख कर ही काम करता है। प्रकृति व्यसन में किसी नीतिका अवलंबन करना चाहिये इसका अनुमान इसीसे लगा लेना चाहिये।

यदि प्रकृति के कुछएक अंग विपत्ति में पड़गये हों तो बहुभाव (जनसंख्या की अधिकता), अनुराग या सार (शक्ति शाली सेना) के अनुसार उनकी विपत्ति को दूर करना चाहिये। यदि दो व्यसन एक सदृश हों तो पहिले उसीको दूर करना चाहिये जो क्षय करता हो। बशर्ते कि प्रकृति के शेषगुणों का नाश होता हो उस व्यसन को सबसे अधिक भयंकर समझना चाहिये चाहे वह राजा पर आकर पड़ा हो और चाहे किसी दूसरे व्यक्ति के साथ संबद्ध हो।

१२८ प्रकरण ।

राजा तथा राज्य विषयक व्यसनों की चिंता ।

प्रकृति शब्द का संक्षिप्त अर्थ 'राजा तथा राज्य' है । राजा का कोप बाह्य तथा आभ्यन्तर के भेद से दो प्रकार का है । घरके सांप की तरह आभ्यंतर कोप बाह्य कोप से बहुत ही अधिक भयंकर है । आभ्यंतर कोप में भी अमात्य का कोप और भी बुरा है । इसलिये राजा को चाहिये कि कोश दंड तथा शक्ति को अपने हाथ में रखे । द्वैराज्य [दो व्यक्तियों का राज्य] तथा वैराज्य [विदेशी राज्य] में द्वैराज्य पारस्परिक द्वेष तथा पक्षपात से नष्ट होजाता है । वैराज्य राजा के जीवितरहते हुए भी राष्ट्र को अपना न समझ कर चूस लेता है । या दूसरे के हाथ बेच डालता है । या राष्ट्र को अपने में विरक्त देखकर यों ही छोड़ चलदेता है ।

अंधे तथा चलित शास्त्र [शास्त्र विरोधी] राजा में कौन उत्तम है ? शास्त्र को न समझने वाला अंधा राजा मन माना काम करता है, दूसरे के हाथ में कठ पुतली बनजाता है और अन्याय से राज्य का नाश करदेता है । चलित शास्त्र राजा शास्त्र से विरुद्ध काम करते हुए भी समझाया बुझाया जासकता है । प्राचीन आचार्यों के इसविचार के विपरीत कौटिल्य का विचार है कि अंधा राजा सहायकों के द्वारा किसी एक नीतिके अवलंबन करने के लिये वाधित किया जासकता है । चलित शास्त्र राजा शास्त्र से विरुद्ध होने के कारण अन्याय से राज्य का और अपना नाश करता है ।

नवीन राजा तथा बीमार राजा में कौनसा राजा उत्तम है ? प्राचीन आचार्यों का मत है कि बीमार राजा अमात्य के षड्यंत्र से राज खो बैठता है या राज्य के कारण जान खो बैठता है । नवीन राजा अपने धर्म्म, अनुग्रह, परिहार [राज्यस्व न लेना] मान आदि कर्मों से प्रजा में प्रिय होकर राज्य करता है । इसके विपरीत कौटिल्य बीमार राजा के ही पक्ष में है । उसके विचार में

बीमार राजा प्रचलित राज्यनियमों तथा कार्यों के अनुसार काम करता है। नवीन राजा अपनी ताकत के अभिमान में आकर "यह राज्य मेरा ही है" यह समझकर स्वेच्छाचार पूर्ण शासन करने लगता है। दुश्मनों के पंजों में फंसकर वह राज्य का नाश चुपचाप बैठेहुए देखता रहता है। प्रकृतियों पर समुचित प्रभाव न प्राप्त कर वह सुगमता से ही नष्ट करदिया जाता है। बीमार राजा के पापरोगी [पापरूपी रोग से ग्रस्त] तथा अपरोगी (शरीरिकरोगसे ग्रस्त) और नवीन राजा के अभिजात (कुलीन) तथा अनभिजात (अकुलीन) यह दो भेद हैं।

कुलीन दुर्बलराजा तथा अकुलीन बलवान् राजा में कौन उत्तम है ? आचार्यों के विचार में कुलीन दुर्बल राजाके शासन को चाहते हुएभी प्रकृतियां उसके षड्यंत्र (उपजाप) का सहन नहीं करतीं। बलवान् अकुलीन राजा के षड्यंत्र को वह सुगमता से ही स्वीकार करलेती हैं। इससे विपरीत कौटिल्य का मत है कि प्रकृतियां दुर्बल कुलीन राजा की आज्ञा पर स्वयं ही चलती है, क्यों कि समृद्ध प्रजा कुलीन राजा को ही पसन्द करती हैं। बलवान् अकुलीन राजा के षड्यंत्रों को वह खोलदेती हैं। किसी ने ठीक कहा है कि समान गुण वालों की ही मित्रता होती है।

संपूर्ण खेतके नाश होजाने की अपेक्षा मुठीभर अनाज का नष्ट होजाना वैसे ही उत्तम है जैसे कि अति वृष्टि अवृष्टि की अपेक्षा उत्तम हैं। क्यों कि संपूर्ण खेतके नाश होने में मेहनत फजूल को ही नष्ट होजाती है।

भिन्न भिन्न दो व्यसनों (विपत्तियों) में प्रकृतियों के बलाबल पर क्रमशः प्रकाश डाला जाचुका। यान (चढ़ाई) तथा स्थान [संरक्षण] संबंधी नीति का इसी के अनुसार अवलंबन करना चाहिये।

१२६ प्रकरण।

पुरुष-व्यसन वर्ग।

अविद्या तथा अविनय पुरुष के कष्टों का हेतु है। अविनीत व्यक्ति (अशिक्षित व्यक्ति) व्यसनों के दोषों को नहीं देखता है।

कोप संबंधी व्यसन तीन प्रकार के और काम संबंधी चार प्रकार के हैं। व्यसनों में कोप सबसे भयंकर है। किंवदन्ती है कि प्रायः कोप के वश में होकर राजा लोग प्रजा के कोप से और काम के वश में होकर क्षय तथा व्यसन (कष्ट या विपत्ति) से मृत्यु को प्राप्त हुए। भारद्वाज इस विचार से सहमत नहीं हैं। उनका ख्याल है कि बड़े आदमियों का कोप करना धर्म्म (आचार) है। कोप के डर से वीर पुरुष प्राप्त होते हैं, अभिमानी लोग नष्ट होजाते हैं और मनुष्य डर के मारे थर थर कांपने लगते हैं। पाप रोकने के लिये प्रतिदिन कोप करना ही पड़ता है। (काम भी बुरा नहीं है) काम से ही संपूर्ण सिद्धियां होती हैं। मेल जोल बढ़ जाता है। उदारता तथा प्रीति के भाव उत्पन्न होते हैं। किये काम का फल भोगने के लिये काम से प्रतिदिन संबंध रहता है। परंतु कौटिल्य इस विचार से सहमत नहीं है। उसका विचार है कि कोप से द्वेष, शत्रु का आक्रमण तथा दुःख बढ़ता है। काम से बेइज्जती तथा संपत्ति की हानि होती है और डाकूचोर, जुआरी, शिकारी, गवैइये बजैइये आदि बुरे लोगों का प्रतिदिन साथ करना पड़ता है। बेइज्जती तथा द्वेष में द्वेष (द्वेष्यता) बहुत ही भयंकर है। बेइज्जत आदमी शत्रुओं से या अपने ही घराने के लोगों से मिलजाता है। द्वेष वाला तो नाश को प्राप्त होजाता है। संपत्ति की हानि (द्रव्य-नाश) तथा शत्रु के आक्रमण (शत्रु वेदन) में शत्रु का आक्रमण अधिक हानि कर है। क्योंकि पहिले से केवल कोश को ही नुकसान पहुंचता है और दूसरे से जान जाने का खतरा रहता है। बुरे लोगों के साथ से दुःख या आपत्ति का आकर पड़ना बहुत ही हानिकर है। क्योंकि बुरे लोगों का साथ क्षण में ही छोड़ा जा सकता है जबकि दुःख या आपत्ति का आकर पड़ना बहुत समय तक कष्ट पहुंचाता है। गाली (वाक् पारुष्य) फजूलखर्ची (अर्थ दूषण) तथा खूनखराबी (दंड पारुष्य) में कौन एक दूसरे से ज्यादा भयंकर है? गाली तथा फजूलखर्ची में—विशालाक्ष के अनुसार गाली ही ज्यादा भयंकर है। गाली सुनते ही तेजस्वी लोग गुस्से से आगबबूला होजाते हैं। गाली रूपी सुई जब हृदय

में चुभ जाती है तो शरीर गुस्से से थरथर कांपने लगता है और इन्द्रियें परेशान होजाती हैं। इससे विपरीत कौटिल्य का मत है कि रुपये पैसे के द्वारा सत्कार करने से गाली की चोट मिटजाती है। परंतु फजूलखर्ची से वृत्ति तथा आजीविका के साधन नष्ट होजाते हैं। फजूल धन देना, लेना, नुकसान मिलना, धन छोड़ना आदि फजूलखर्ची (अर्थ दूषण) में ही संमिलित हैं। फजूलखर्ची तथा खूनखराबी में पराशर प्रथम को ही ज्यादा बुरा समझते हैं। उनका विचार है कि धन पर ही धर्म्म तथा काम निर्भर है। लोग एक दूसरे के साथ धन से ही बंधे हुए हैं। धन का नुकसान कोई छोटी मोटी बात नहीं। परंतु कौटिल्य खूनखराबी को ही अधिक बुरा समझता है। क्योंकि कितना ही धन किसी को क्यों न दिया जाय वह अपने शरीर के विनाश को नहीं चाहता है। खूनखराबी में दूसरों के द्वारा यही बात पैदा होती है। कोप के तीनों प्रकारों की व्याख्या हो चुकी अब काम के शिकार (मृगया), जुआ (द्यूत) स्त्री तथा शराब आदि चारों प्रकारों की व्याख्या की जायगी।

शिकार तथा जुए में पिशुन के अनुसार शिकार बहुत ही बुरा है। क्योंकि बहुधा शिकारियों को चोर, दुश्मन, हाथी, वन की आग, भटकना, डर, दिग्मोह (दिशाओं का भूल जाना), भूख प्यास, जान जाना आदि खतरों का सामना करना पड़ता है। जुए में तो चतुर लोग जीत ही जाते हैं। जयसेन तथा दुर्योधन का दृष्टान्त इसके लिये पर्य्याप्त है। इससे विपरीत कौटिल्य का मत है कि जुए में भी किसी न किसी का पराजय होता है और उसको नल तथा युधिष्ठिर की तरह तकलीफें उठानी पड़ती हैं। जुए में जीता हुआ धन संपूर्ण झगड़ों का मूल है। जुए का सबसे बड़ा दोष यह है कि मेहनत से कमाये हुए धन का उपभोग करना नहीं मिलता, बेमेहनत का धन प्राप्त होता है, विना भोग के ही धन नष्ट होजाता है और पाखाना पेशाब रोकने तथा भूख प्यास मारने से बीमारी लगजाती है। शिकार में तो इससे विपरीत व्यायाम होजाती है। श्लेष्म, पित्त चर्बी तथा पसीना संबंधी दोष दूर होजाता है। चलते तथा खड़े हुए लक्ष्य पर निशाना लगाना

आता है। गुस्से में भरे हुए जानवरों की चित्तवृत्ति का ज्ञान प्राप्त होता है और कभी कभी यात्रा (यान) करने का अवसर मिल जाता है।

कौणपदंत जुए तथा स्त्री संबंधी व्यसन में जुए संबंधी व्यसन को ही ज्यादा भयंकर समझते हैं। क्यों कि जुआरी प्रायः रात रात तक दिये के सामने जुआ खेलते हैं और माके मरने पर भी जुए से नहीं हटते। हारती हुई हालत में उनसे कोई बात पूछो तो गुस्सा करते हैं। स्त्री संबंधी व्यसन में फंसे हुए व्यक्ति से स्नान कर्म भोजन आदि के समय में धर्म अर्थ विषयक आवश्यक बात पूछी जा सकती है। राजा के हित में स्त्री को उपांशु दंड [चुपे से मरवाना] के द्वारा मरवाया जा सकता है बीमारी के द्वारा भी उसको स्त्री व्यसन से हटाया तथा दूर किया जा सकता है परंतु कौटिल्य स्त्री व्यसन को अधिक भयंकर समझता है। उसका ख्याल है कि जुए से किसी व्यक्ति को हटाया जा सकता है परंतु स्त्री व्यसन में फंसे व्यक्तिको स्त्री से जुदाकरना सुगम काम नहीं है। प्रायः इसमें फंसे राजा कभी भी बाहर नहीं निकलते। आवश्यक कामों को टाल कर अधर्म तथा अनर्थ को बढ़ाते हैं। शराब में दिनरात मस्त रहते हैं और इस प्रकार राज्य को सवर्था दुर्बल कर देते हैं।

स्त्री तथा शराब में वातव्याधि स्त्री व्यसन को ही अधिक भयंकर समझते हैं। निशान्त प्रणिधि प्रकरण में स्त्रियों की बुराइयों पर प्रकाश डाला जा चुका है। शराब में तो इन्द्रियां अपने विषयों का उपभोग करती हैं। संबंधियों के साथ आदर सत्कार का वर्ताव प्रीति का व्यवहार तथा थकावट का नाश आदि शराब से होता है। इससे विपरीत कौटिल्य का मत है कि स्त्री व्यसन में फंसने से अपत्योत्पत्ति, आत्मरक्षा, स्त्री परिवर्तन आदि होता है और यह बात जब अगम्य बाहरी औरतों तक पहुंच जाती है तो सर्व नाश हो जाता है। शराब की मार लगने पर उपरिलिखित से पूर्ण दोष उत्पन्न हो जाते हैं। शराब का सबसे अधिक दोष यह है कि इससे मनुष्य अपने पराये को भूल जाता है अनुन्मत्त होता हुआ भी उन्मत्त हो जाता है, जीते हुए भी मरा मालुम पड़ता है, नंगा हो जाता है

घर ज्ञान बुद्धि जीवन धन दोस्त आदि सब कुछ खो बैठता है, सज्जन लोगों से जुदा हो जाता है, बदमाशों के साथ रहना शुरू करता है, और फजूलखर्ची बढ़ाने वाली गाने नाचने बजाने आदि में निपुण औरतों में दिनरात निमग्न रहता है।

बहुत से विचारकों का मत है कि शराब तथा जुए में जुआ ही सबसे अधिक भयंकर है। इसी में बाजी लगाकर जय तथा पराजय होता है। जब यह बाजी प्राणियों या जड़ वस्तुओं के संबंधमें लगाई जाती है तो देश के दो दल में विभक्त हो जाने से प्रकृतियां कुपित हो जाती हैं। सङ्घों तथा उन्ही के सदृश रहने वाले राज कुलों में जुए के कारण झगड़ा विशेष रूपसे देखा गया है। झगड़ा बढ़ने पर प्रायः उनका नाश हो जाता है इस लिये जुआ बहुत ही बुरी तथा सब खराबियों तथा व्यसनों से अधिक खराब व्यसन है। क्यों कि इसके कारण राज्य शिथिल हो जाता है।

सज्जनों में कोप और असज्जनों में काम विशेष रूप से प्रबलता को प्राप्त करता है जिस समय यह दोनों [काम तथा कोप] उग्ररूप धारण करते हैं उस समय बहुत ही अधिक नुकसान पहुंचाते हैं। यही कारण है कि उनको व्यसन माना गया है। वृद्धसेवी, जितेन्द्रिय तथा आत्मवान् राजा को चाहिये कि व्यसनों को सबसे पहिले पैदा करने वाले तथा राज्य को नष्ट करने वाले कोप तथा काम से दूर रहे।

१३०–१३२ प्रकरण।

पीडनवर्ग, स्तंभवर्ग तथा कोशसंगवर्ग।

[क]

पीडन वर्ग।

१ अग्नि, २ उदक, [जल], ३ व्याधि, ४ दुर्भिक्ष तथा ५ मरक [संक्रामक रोग] यह दैवी विपत्ति [दैव पीडन] हैं।

पुराने आचार्य्य अग्नि तथा उदक संबंधी विपत्ति में अग्नि संबंधी विपत्ति को अप्रतिकार्य्य (जिससे बचने का कोई उपाय

न हो) समझते हैं। इसको छोड़कर अन्य संपूर्ण विपत्तियों का उपाय है। उदक संबंधी विपत्ति तो नलों के द्वारा सुगमता से ही दूर की जासकती है। इससे विपरीत कौटिल्य उदक संबंधी विपत्ति को बहुत ही अधिक भयंकर समझता है। क्यों कि आग एक गांव या आधे गांवको जलाती है। पानी की बाढ़ (उदक वेग) तो सैकड़ों गांवों को बहा लेजाती है।

व्याधि तथा दुर्भिक्ष में, पुराने आचार्य व्याधिको ही अधिक भयंकर समझते हैं। क्यों कि उससे लोगों के मरजाने, बीमार पड़जाने, नौकरों के इधर उधर भागजाने तथा काम छोड़ देनेसे संपूर्ण काम नष्ट होजाते हैं। दुर्भिक्ष में काम नहीं रुकता है और इससे विपरीत हिरण्य, पशु तथा राज्यस्व दुर्भिक्ष पड़जाने पर अधिक मिलता है। कौटिल्य इस विचार से सहमत नहीं है। उसका मत है कि व्याधि से किसी एक देशको ही कष्ट पहुंचता है और उसका उपाय भी संभव है। इससे विपरीत दुर्भिक्ष से सारे देशको कष्ट मिलता है और प्राणियों का जीना भी कठिन होजाता है।

मरक या संक्रामक रोग में भी यही बात है।

क्षुद्रक (छोटे लोग) तथा मुख्य (बड़े लोगों) के क्षय में पुराने आचार्यों के अनुसार क्षुद्रकलोगों का क्षय ही विशेष हानिकर है क्यों कि उससे संपूर्ण काम रुक जाते हैं। परन्तु कौटिल्य मुख्य लोगों के क्षय को ही भयंकर समझता है। उसका विचार है कि संख्या में अधिक होने से क्षुद्रलोगों की कमी सुगमता से पूरी की जासकती है। मुख्य लोगों के मामले में यही बात नहीं है। साहस तथा बुद्धि (सत्व, प्रज्ञा) में विशेषता रखने वाला मुख्य हजारों में एक ही होता है। साथ ही क्षुद्रक लोगों का आश्रय तथा सहारा भी वही है।

स्वचक्र (स्वराष्ट्र के लोगों के कारण उत्पन्न हुआ कष्ट) तथा परचक्र [शत्रुका आक्रमण आदि कष्ट] में, पुराने आचार्य स्वचक्र को ही भयंकर समझते हैं। क्यों कि उससे बहुतही अधिक नुकसान पहुंचता है। परचक्र तो युद्ध, अपसार [दूसरे राजा का बीच में पड़कर आक्रमण को रोकदेना] तथा संधि से रोका जासकता

है। इससे विपरीत कौटिल्य परचक्र को ही भयंकर समझता है। उसका ख्याल है कि प्रकृति पुरुष तथा मुख्य लोगों के पकड़ने तथा कतल करवाने से स्वचक्र संबंधी कष्ट दूर किया जासकता है और इससे जब नुकसान पहुंचता है तो देश के एक भाग को ही नुकसान पहुंचता है। इससे विपरीत परचक्र से संपूर्ण देश को कष्ट पहुंचता है। विलोप [हानि या नुकसान], घात (कतलेआम), दाह (आग लगाना), विध्वंसन (नष्ट करना तथा देश को उजाड़ना) तथा उपवाहन (लूट मार) से सब ओर तबाही मचादेता है।

आचार्य्य लोग प्रकृति तथा राज विवाद (राजाओं का पारस्परिक झगड़ा) में प्रकृतिविवाद (घरेलू युद्ध भ्रातृयुद्ध) को भयंकर समझते हैं। क्योंकि उस से शत्रु को देश पर आक्रमण करने का मौका मिल जाता है। राजविवाद में तो प्रकृतियों को दुगुना वेतन तथा भत्ता मिलने लगता है। इससे विपरीत कौटिल्य राज विवाद को ही हानिकर समझता है। उस का ख्याल है कि प्रकृति तथा मुख्यों के पकड़ने तथा उन के पारस्परिक झगड़ों के निपटा देने से प्रकृतिविवाद शान्त किया जा सकता है। प्रकृतियों के परस्परसंघर्ष से राजा को तो लाभ ही पहुंचता है। राज विवाद के शान्त करने के लिये प्रकृतियों का दबाना तथा नष्ट करना आवश्यक है अतः इस में दुगुना कष्ट उठाना पड़ता है।

आचार्य्य लोग देशविहार (भोग विलास में मस्त देश) तथा राजविहार (भोग विलास में लीन राजा) में देश विहार को भयंकर समझते हैं क्योंकि इस से सदा के लिये उत्पाद काम नष्ट हो जाते हैं। इस से विपरीत राजविहार में कारीगर शिल्पी, गवैइये, भांड, व्यापारी आदिकों को लाभ पहुंचता है। परन्तु कौटिल्य राज विहार को अधिक हानिकर समझता है। उसका ख्याल है कि देश विहार में काम के कम होने से थोड़ा सा ही नुकसान पहुंचता है। लोग नुकसान का अनुभव करते ही तथा रुपया पैसा उड़ाते ही पुनः काम में जुट जाते हैं। राज विहार में तो राजा और

दर्बारी लूट मार खुशामद आदि के द्वारा धन बटोरते हैं और व्यवसायों को नुकसान पहुंचाते हैं।

आचार्य्य लोग (भोगविलासप्रिय) राजकुमार तथा (भोग विलास प्रिय राजरानी) सुभगा स्त्री में राजकुमार को ही अधिक हानिकर समझते हैं। क्योंकि वह दर्बारियों के सहारे लूट मार तथा खुशामद आदि के द्वारा धन बटोरता है और व्यवसायों को नुकसान पहुंचाता है। इस से विपरीत सुभगा स्त्री भोग विलास में ही लीन रहती है। परन्तु कौटिल्य सुभगा स्त्री को ही भयंकर समझता है। उस का ख्याल है कि मंत्री तथा पुरोहित लोग समझा बुझाकर राज कुमार को रास्ते पर लासकते हैं। सुभगा स्त्री को कौन समझावे? वह तो बेवकूफ तथा हठी होती है और बदमाश लोगों को ही पसन्द करती है।

आचार्य्य लोग श्रेणी (कंपनी या जात) तथा मुख्य लोगों में श्रेणी को ही भयंकर समझते हैं। क्योंकि श्रेणी में मनुष्यों के अधिक होने से उसका दबाना सुगम काम नहीं है। प्रायः श्रेणी चोरी तथा डाके के द्वारा भी तकलीफ देता है। मुख्य लोग जो कुछ कर सकते हैं। वह यही है कि काम में रुकावटें डालें तथा लोगों को मरवावें तथा उनकी संपत्ति को छीन लें। कौटिल्य इस विचार के पक्ष में नहीं है। वह समझता है कि श्रेणी राजा के साथ ही उठती बैठती है। उसको दबाना सुगम काम है। श्रेणी के मुखिया या मुख्य भाग को पकड़ा जासकता है। इस से विपरीत मुख्य लोग जत्था बनाकर तथा दूसरे की जानमाल लेकर तकलीफ पहुंचाते हैं।

प्राचीन आचार्य्य सन्निधाता तथा समाहर्ता में सन्निधाता को ही भयंकर समझते हैं। क्योंकि वह काम विगाड़ कर तथा (अनुचित तथा अन्याययुक्त) जुर्माने कर लोगों को कष्ट पहुंचाता है। समाहर्ता तो क्लार्कों से काम लेता है और नियत फल तथा वेतन पर ही काम करता है। परंतु कौटिल्य समाहर्ता को ही भयंकर मानता है। उसका विचार है कि सन्निधाता दूसरों के द्वारा भेजे गये पदार्थों को ही लेता है तथा कोश में रखता है। इससे

विपरीत समाहर्ता अपनी जेब पूरी तरह भरने के बाद राजा के लिये धन इकट्ठा करता है, या राजा की आमदनी बिगाड़ देता है या दूसरे की संपत्ति कुड़क करने में अपनी मर्जी मुताबिक काम करता है।

प्राचीन आचार्य्य अन्तपाल (सीमा रक्षक) तथा वैदेहक (व्यापारी) में अन्तपाल को ही भयंकर समझते हैं। क्योंकि वह चोरों से मिलकर या राजस्व से अधिक द्रव्य मांग कर व्यापारी मार्ग को बहुत ही अधिक नुकसान पहुंचाता है। (वैदेहक व्यापारी लोग) तो व्यापारीय पदार्थों के क्रयविक्रय के द्वारा देश को समृद्ध करते हैं। इससे भिन्न कौटिल्य का यह मत है कि अन्तपाल उत्तम उत्तम पदार्थों को विदेश से मंगाकर देश का उपकार करते हैं। वैदेहक लोग तो आपस में गुट्ट बनाकर पदार्थों की कीमतें चढ़ाते चलते हैं और सैंकड़े पीछे सैंकड़ा और कुंभ (१ टन के लगभग) पीछे कुंभ लाभ लेकर धन कमाते हैं।

प्राचीन आचार्य्य ताल्लुकेदार के हाथ में पड़ी (अभिजातो-परुद्धा) तथा गोचर में फंसी [पशुव्रजोपरुद्धा] भूमि में पहिली को उत्तम समझते हैं। क्योंकि लड़ाई के समय में सैनिक तथा अनाज उससे मिलता है। यही कारण है कि वह उसका राजा द्वारा ग्रहण करना उचित नहीं समझते। कौटिल्य का इससे विपरीत यह मत है कि समय पड़ने पर ताल्लुकेदार के हाथ में पड़ी भूमी को ही लेना चाहिये। क्योंकि उससे किसी भी प्रकार की विपत्ति का सामना नहीं करना पड़ता। गोचर भूमि राज्य को पशु तथा अन्य सामिग्री देती है। जबतक खेतों को ही नष्ट न करना पड़े तबतक उस को ग्रहण न करना चाहिये।

प्राचीन आचार्य्य डाकुओं तथा जंगलियों में डाकुओं को ही अधिक भयंकर समझते हैं। क्योंकि वह रात में औरतों को उड़ा ले जाते हैं लोगों पर आक्रमण करते हैं और हर रोज सैकड़ों हजारों रुपयों का डाका मारकर लेजाते हैं। जंगली लोग तो मुखिया के कहने के अनुसार दंगा मचाते हैं। अड़ोस पड़ोस के जंगलों में घूमते हैं, इधर उधर दिखाई पड़ते हैं और थोड़ा सा ही नुकसान

पहुंचाते हैं। इससे भिन्न कौटिल्य का मत है कि डाकू प्रमादी को ही नुक्सान पहुंचाते हैं। उनको सुगमता से ही पकड़ा तथा पहिचाना जा सकता है। जंगली लोग अपने अपने देशोंमें रहते हैं। उनकी संख्या भी अधिक होती हैं। बिगड़ते ही खुल्लमखुल्ला अपने सामने लड़ने के लिये तैय्यार होजाते हैं। देशों को छीन लेते हैं तथा उजाड़ देते हैं। उनको एक प्रकार का राजा ही समझना चाहिये।

साधारण पशुओं तथा हाथियों के जंगल में साधारण पशुओं का जंगल उत्तम है। उससे मांस तथा चाम बहुतायत से प्राप्त होता है। ग्रास भी यह लोग थोड़ा खाते हैं और उनका काबू करना भी सुगम काम है। इससे विपरीत हाथियों का पकड़ना सुगम काम नहीं है। प्रायः हाथी देश को भी उजाड़ डालते हैं।

विदेशी (परस्थानीय) तथा स्वदेशीय व्यवसाय (स्वस्थानीय) में स्वदेशीय व्यवसाय ही उत्तम हैं। क्योंकि उनसे धान्य, पशु, हिरण्य तथा कुप्य (जांगलिक द्रव्य) प्राप्त होता है। देश के लोग स्वावलंबी होजाते हैं। विदेशीय व्यवसाय इससे सर्वथा भिन्न है।

(ख)

स्तंभ वर्ग।

विघ्न तथा बाधा (बाहरी) तथा आभ्यंतर (अंदरूनी) के भेद से दो प्रकार की है। स्वदेशीय मुख्यों (मुखिया लोग) की बाधा आभ्यंतर और जांगलिकों की बाधा बाह्य स्तंभ के नाम से पुकारी जाती है।

(ग)

कोश संग।

उपरिलिखित दोनों प्रकार की बाधाओं (बाह्य स्तंभ+आभ्यंतर स्तंभ) तथा मुख्यों (मुखिया लोग) के कारण राज्य कर छोड़ना, राज्यस्व का तितरबितर होजाना, झूठमूठ बेकायदे राज्यस्व इकट्ठा किया जाना या सामन्तों तथा जांगलिकों के पेट में राज्यस्व का चला जाना—कोश संग अर्थात् कोश संबंधी विपत्ति कहाता है।

देश की समृद्धि के लिये राजा को चाहिये कि वह पीडन वर्ग को न उत्पन्न होने दे, यदि वह उत्पन्न होगये हैं तो उनको दूर करे और स्तंभ तथा संग (स्तंभवर्ग + कोशसंग) के नाश में पूरी कोशिश करे।

१३३—१३४ प्रकरण।

बलव्यसन वर्ग तथा मित्रव्यसन वर्ग।

१ अमानित तथा विमानित, २ अभृत तथा व्याधित, ३ नवागत तथा दूरयात, ४ परिश्रान्त तथा परिक्षीण, ५ प्रतिहत तथा हताग्रवेग, ६ अनृतु प्राप्त तथा अभूमिप्राप्त, ७ आशानिर्वेद तथा परिसृप्त, ८ कलत्रगर्हि तथा अन्तःशल्य, ९ कुपितमूल्य तथा भिन्नगर्भ, १० अपसृत तथा अतिक्षिप्त, ११ उपनिविष्ट तथा समाप्त, १२ उपरुद्ध तथा उपाक्षिप्त, १३ छिन्नधान्य तथा छिन्न पुरुषवीवध, १४ स्वविक्षिप्त तथा मित्रविक्षिप्त, १५ दूष्ययुक्त तथा दुष्ट पार्ष्णिग्राह, १६ शून्यमूल तथा अस्वामिसंहत, १७ भिन्न कूट तथा अंध—इत्यादि सेना की विपत्तियों के भेद हैं।

१. **अमानित तथा विमानित।** अमानित (जिसका आदर सत्कार किया गया न हो) तथा विमानित (जिसकी बेइज्जती तथा अनादर किया गया हो) में अमानित सैन्य आदर सत्कार पाकर युद्ध के लिये तय्यार होसकता है। विमानित सैन्य के साथ यह बात नहीं है क्योंकि वह अन्दर ही अन्दर जलता रहता है।

२. **अभृत तथा व्याधित।** अभृत [जिसको तनखाह तथा भत्ता न मिला हो] तथा व्याधित [बीमार] में वेतन तथा भत्ता पाकर अभृत सैन्य युद्ध के लिये तैय्यार होसकता है। व्याधित सैन्य के साथ यह बात नहीं है, क्योंकि वह काम करने के अयोग्य होता है।

३. **नवागत तथा दूरयात।** नवागत (रंगरूट) तथा दूरयात [दूर से आने के कारण थका] में नवागत सैन्य दूसरे देश से आकर पुरानों के साथ मिलकर युद्ध करसकता है। दूरयात सैन्य

के साथ यह बात नहीं है। क्यों कि वह थकावट के कारण लड़ाई के लिये अयोग्य होता है।

४. परिश्रान्त तथा परिक्षीण। परिश्रान्त (थका हुआ) तथा परिक्षीण [दुर्बल तथा निशक्त] में परिश्रान्त सैन्य स्नान भोजन तथा निद्रा से विश्राम पाकर युद्ध करसकता है। परिक्षीण सैन्य के साथ यह बात नहीं है, क्यों कि उसमें योग्य पुरुषों का अभाव होता है।

५. प्रतिहत तथा हताग्रवेग। प्रतिहत [पीछे हटाईगई] तथा हताग्र वेग (जिसका अग्रभाग नष्ट होगया हो) में प्रतिहत सैन्य छिन्न भिन्न हुए हुए अग्र भाग को वीर पुरुषों से जोड़कर तथा संगति कर युद्ध करसकता है। हताग्र वेग सैन्य के साथ यह बात नहीं है, क्यों कि वह अग्र भाग के नष्ट होजाने के कारण युद्ध के अयोग्य होजाता है।

६. अनृतुप्राप्त तथा अभूमिप्राप्त। अनृतु प्राप्त [जिसके ऋतु अनुकूल न हो] तथा अभूमिप्राप्त [जो अनुपयुक्त भूमि में मौजूद हो] में अनृतु प्राप्त सैन्य ऋतु के अनुकूल अस्त्रशस्त्र तथा कवच का प्रबंध कर युद्ध करसकता है। अभूमि प्राप्त सैन्य के साथ यह बात नहीं है, क्यों कि वह अनुपयुक्त भूमि में फंसकर इधर उधर गति करने में अयोग्य होजाता है।

७. आशानिर्वेदि तथा परिसृप्त। आशा निर्वेदि (आशा रहित) तथा परिसृप्त (भगोड़े) सैन्य में आशानिर्वेदि उत्तम है। क्योंकि वह अपना स्वार्थ देखकर युद्ध के लिये तैय्यार हो जाता है। परिसृप्त सैन्य भागकर यही नहीं करता।

८. कलत्रगर्हि तथा अन्तः शल्य। कलत्रगर्हि [परिवार के वश में] तथा अन्तःशल्य [शत्रु के वश में] सैन्य में कलत्रगर्हि कलत्र की चिन्ता छोड़ कर लड़ सकता है। अन्दर से दुश्मन होने के कारण अन्तः शल्य यही नहीं करता।

९. कुपितमूल तथा भिन्नगर्भ। कुपितमूल [भड़की हुई] तथा भिन्न गर्भ [तितर बितर हुई हुई] सैन्य में कुपितमूल सामादि उपायों से शान्त की जाकर युद्ध करने के लिये तैयार हो जाता है। तितर बितर होजाने के कारण भिन्न गर्भ यही नहीं कर सकता।

१०. अपसृत तथा अतिक्षिप्त। अपसृत [भगोड़े] तथा अतिक्षिप्त [नौकरी से बरखास्त किये गये। देश से निकाल दिये गये] सैन्य में अपसृत उत्तम है। क्योंकि वह राजा के द्वारा इकट्ठा किया जाकर मल तथा व्यायाम [संचालन के द्वारा सत्रियों तथा मित्रों की आधीनता में युद्ध करने के लिये तय्यार होसकता है। अतिक्षिप्त अनेक राज्यों से दोषों के कारण निकाला जाकर युद्ध के लिये उपयुक्त नहीं होता।

११. उपनिविष्ट तथा समाप्त। उपनिविष्ट [अनुभवी] तथा समाप्त [एक ही ढंग की लड़ाई जानने वाला] सैन्य में उपनिविष्ट सैन्य ही उत्तम है। क्योंकि उपनिविष्ट को भिन्न भिन्न स्थानों में लड़ना आता है और वह छावनी के अतिरिक्त भी लड़ाई कर सकता है। समाप्त में यही बात नहीं है। क्योंकि वह एक ही ढंग की लड़ाई तथा चढ़ाई में समर्थ होता है।

१२. उपरुद्ध तथा परिक्षिप्त। उपरुद्ध (रोका गया) तथा अनक्षिप्त [सब ओर से घिर गया] सैन्य में उपरुद्ध उत्तम है। क्योंकि वह किसी एक ओर से निकल कर युद्ध कर सकता है। परिक्षिप्त सब ओर से घिर जाने के कारण यही नहीं करसकता।

१३. छिन्नधान्य तथा छिन्नपुरुषवीवध। छिन्नधान्य [जिस के पास धान्य न पहुंचा सकता हो] तथा छिन्नपुरुषवीवध (जिस की मनुष्य तथा पदार्थ सम्बन्धी सहायता रुक गई हो) में छिन्न धान्य उत्तम है। क्योंकि वह दूसरे स्थान से धान्य लाकर या स्थावर तथा जंगम (तरकारी तथा मांस) आहार कर लड़ाई लड़ सकता है। सहायता न मिल सकने के कारण छिन्न पुरुष वीवध यही नहीं कर सकता है।

१४. स्वविक्षिप्त तथा मित्रविक्षिप्त । स्वविक्षिप्त (अपने ही देश में विद्यमान) तथा मित्रविक्षिप्त (मित्र के देश में विद्यमान) सैन्य में स्वविक्षिप्त आपत्ति पड़ने पर इकट्ठा हो सकने के कारण उत्तम है । देश के दूर में होने से मित्रविक्षिप्त सैन्य समय पर काम नहीं आसकता ।

१५. दूष्ययुक्त तथा दुष्टपार्ष्णिग्राह । दूष्ययुक्त (राज्य द्रोहियों से युक्त) तथा दुष्टपार्ष्णिग्राह (जिस के पीछे की सेना दुष्ट हो) सैन्य में दूष्य युक्त सैन्य उत्तम है । क्योंकि आप्त पुरुषों के आधिपत्य में संगठित हुए बिना भी वह लड़ पड़ता है । पीछे के आक्रमण से घबराया हुआ दुष्ट पार्ष्णिग्राहसैन्य यही नहीं करसकता है ।

१६. शून्यमूल तथा अस्वामिसंहत । शून्यमूल (जिस देश में जो सेना न हो) तथा अस्वामिसंहत (जिस का सेना पति या राजा न हो) सैन्य में शून्यमूल नागरिकों तथा ग्रामीणों के द्वारा देश की रक्षा हो सकने के कारण पूरी तैय्यारी के साथ युद्ध कर सकता है । राजा तथा सेना पति से हीन अस्वामिसंहत सैन्य यही नहीं कर सकता ।

१७. भिन्नकूट तथा अंध । भिन्नकूट (सेनापति हीन) तथा अंध (अशिक्षित तथा अंधा) सैन्य में किसी दूसरे पुरुष के नेतृत्व में भिन्न कूट लड़सकता है परन्तु अंध सैन्य यही नहीं करसकता ।

दोषशुद्धि (दोष दूर करना) बलावाप (सैन्य संग्रह) सत्रस्थान पर प्रभुत्व तथा उत्तर पक्ष के साथ संधि आदियों से सेना संबंधी कष्ट दूर हो जाते हैं । राजा को चाहिये कि कर्मण्य हुआ हुआ शत्रुओं के द्वारा किये गये कष्टों से अपने सैन्य को बचावे और शत्रु की दुर्बलताओं पर आक्रमण करे । प्रकृतियों पर जिन कारणों से विपत्ति आई हो उन कारणों को दूर करे ।

जिस मित्र ने किसी कारण वश शत्रु के साथ मिल कर चढ़ाई की हो, या—जो कि लोभ मुहब्बत या दुर्बलता के कारण साथ में न लिया गया हो । या जिस आक्रमण करनेवाले शत्रु के साथ द्वैधी भाव की नीति का अवलम्बन कर अपना पीछा छुड़ा लिया हो या

रुपया पैसा देकर युद्ध से पृथक् हो गया हो या—जिस ने कि अकेले या साथ मिलकर अपने मित्र पर चढ़ाई की हो। या—जिस ने कि भयँ, अपमान तथा चांचल्य के कारण मित्र को कष्ट से न छुड़ाया हो। या—जोकि अपनी ही भूमि में शत्रु से घिरा हो। या—जिस को कि पड़ोसी का खतरा हो। या—जोकि दूसरे के माल को जब्त करने या न देने के कारण बेइज्जत किया गया हो या—जिस ने अपनी भूल या शत्रु के कारण अपनी चीज को खो दिया हो। या--जोकि खर्च के भार से दबा हो। या--जोकि शत्रु को नष्ट कर चुप बैठ गया हो। या--जिसने कि अशक्ति के कारण उपेक्षा की हो या प्रार्थना करने के बाद भी विरोध किया हो--ऐसे मित्र को साथ में मिला लेना बहुत ही कठिन है। यदि वह साथ में मिल जाय तो शीघ्र ही विरक्त हो जाता है। यही कारण है कि ऐसे मित्र को कृच्छ्रसाध्यमित्र कहते हैं।

मोह या वृथा गर्व से कर्मण्य तथा माननीय जिस मित्र का मान न किया गया हो, या उसकी शक्ति के अनुसार उसको मान न दिया गया हो या उसको बेइज्जत किया गया हो। या—जोकि मित्र के नाश से घबड़ाया हुआ हो, या जो कि शत्रुओं के गुट्ट से शंकित रहता हो, या राज्य द्रोहियों के कारण मित्रों से जुदा कर दिया गया हो—उसको साध्यमित्र कहते हैं। जिसके साथ वह मित्रता करता है उसका अन्त तक साथ देता है।

इसलिये राजा को चाहिये कि मित्र से फटने वाले उपरिलिखित दोषों को न उत्पन्न होने दे, यदि वह उत्पन्न हो गये हों तो उनको नष्ट करने वाले गुणों के द्वारा शान्त करे।

९ अधिकरण ।

अभियास्यत्कर्म ।

१३५-१३६ प्रकरण ।

शक्ति देश काल तथा यात्रा काल ।

[क]

शक्ति ।

विजिगीषु अपनी तथा शत्रु की शक्ति, देश, काल, यात्रा काल, [आक्रमण करने का अवसर] बलसमुत्थानकाल [सेना में रंगरूटों को भर्ती करने का समय], पश्चात्कोप [चढ़ाई करने के बाद गदर होना] क्षय, व्यय, लाभ तथा आपत्ति आदिकों की प्रबलता तथा निर्बलता† [बलाबल] को जानकर यदि अपने आप को सबल [विशिष्ट बल] समझे तो आक्रमण करे अन्यथा आसन नीति [उदासीनता] का अवलंबन करे।

प्राचीन आचार्य्यों का मत है कि उत्साह तथा प्रभावमें उत्साह ही लाभकर है। शूर, बलवान्, अरोग, कृतास्त्र (हथियारों से युक्त) तथा सेना से संपन्न (दंडद्वितीय) राजा प्रभावयुक्त को अकेला ही जीत लेता है। उसको छोटी सी भी सेना तेज से कार्य्य को पूर्ण (कृत्य-कर) कर देती है। प्रभाव होते हुए भी उत्साह से रहित राजा पराक्रम करते ही नष्ट होजाता है। इससे विपरीत कौटिल्य का मत है कि प्रभाववाला राजा उत्साही राजा को अपने प्रभाव से ही नीचा दिखा देता है। वह घोड़ा हाथी रथ तथा हथियारों की बहुतायत होनेसे उत्साही राजा को बुलासकता है। उसके

† डाक्टर शामशास्त्री ने यहां पर भी **बलाबल** को **आपदां** के साथ न जोड़ कर पृथक् कर दिया है। जो कि ठीक नहीं है। वस्तुतः **बलाबल आपदां** के साथ द्ध है जैसा कि हमने उपरिलिखित अर्थ में किया है।

शूरवीर (वीर-पुरुष) सैनिकों तथा योद्धाओं को खरीद सकता है या उनको अन्य उपायों से अपने पक्ष में आने के लिये बाध्य कर सकता है। प्रभाव वाली स्त्रियें, बच्चे, लूले लंगड़े तथा अंधे राजाओं ने उत्साही राजाओं के साथ में संपूर्ण पृथ्वी का विजय किया।

प्राचीन आचार्य्यों का मत है कि प्रभाव तथा मंत्र में प्रभाव ही उत्तम है। मंत्रशक्ति से युक्त राजा वन्ध्य बुद्धि (जिस की बुद्धि विकसित न होसकी हो) होने से प्रभाव शून्य होजाते हैं। मंत्र शक्ति प्रभाव बिना उसी प्रकार फल नहीं देती जिस प्रकार कि फूटे हुए अंकुर वाला धान्य वृष्टि के बिना सूखकर नष्ट होजाता है। परंतु कौटिल्य मंत्रशक्ति को ही उत्तम समझता है। उसका विचार है कि जिस राजा के पास बुद्धि और शास्त्र रूपी नेत्र हैं थोड़े से प्रयत्न से भी मंत्र को कार्य्य रूप में परिणत कर सकता है। वह उत्साह, प्रभाव, सामादि उपाय तथा योगोपनिषद (शत्रु को गुप्त रूप से मारने के तरीके) से शत्रुओं को वशमें ला सकता है। उत्साह, प्रभाव, तथा मंत्र शक्ति में क्रमशः उत्तरोत्तर ही शक्ति-शाली है।

[ख]

देश।

देश से तात्पर्य्य संपूर्ण पृथ्वी से है। इसमें भी वही भाग उत्तम है जो कि समुद्र से हिमालय पर्य्यन्त उत्तर तक हजार योजन तक फैला हुआ है, जिसमें कि तिर्यक्क्षेत्र संमिलित नहीं है और जिसमें कि आरण्य (जांगलिक), ग्राम्य, पात (प्रपात), पार्वत (पार्वतीय), औदक (जलपूर्ण), भौम (भूमिमय), सम तथा विषम प्रदेश संमिलित हैं। इन प्रदेशों में वही काम किये जांय जिन से अपनी शक्ति बढ़े। जो प्रदेश अपने सैनिकों लिये युद्ध काल में उपयुक्त और शत्रु के सैनिकों के लिये अनुपयुक्त हों वही उत्तम हैं। इससे विपरीत अधम, साधारण तथा मध्यम समझने चाहियें।

[ग]

काल।

काल से तात्पर्य्य सर्दी गरमी तथा वर्षा ऋतु से है। रात्रि, दिन, पक्ष, मास, ऋतु, अयन (दक्षिणायन तथा उत्तरायण), संवत्सर

तथा युग आदि ही उसकी विशेषता है। इनमें वही काम करे जिस से अपनी शक्ति बढ़े। युद्ध काल में अपने सैनिकों के लिये जो ऋतु उत्तम और शत्रु के सैनिकों के लिये जो अनुत्तम हो उसी को उत्तम काल समझना चाहिये। इससे विपरीत अधम, साधारण तथा मध्यम हैं।

[घ]

शक्ति देश तथा काल।

प्राचीन आचार्यों का मत है कि शक्ति देश तथा काल में शक्ति ही उत्तम है। शक्तिमान् ऊंचे नीचे प्रदेश और सर्दी गरमी तथा वर्षा का उपाय कर सकता है। कुछ लोग कहते हैं कि तीनों में देश ही प्रबल है। जमीन पर कुत्ता नाके को और पानी में नाका कुत्ते को खींच लेता है। इसी प्रकार कुछ लोग काल को उत्तम मानते हैं। दिन में कौआ उल्लू को और रातमें उल्लू कौआ को मार भगाता है। परंतु कौटिल्य तीनों को ही प्रबल तथा एक दूसरे का साधक (परस्पर साधक) मानता है।

[ङ]

यात्रा काल।

राजा को चाहिये कि वह शक्ति देश तथा काल से शक्तिशाली होकर, अपने आपको पार्ष्णि (पृष्ठवर्ती शत्रुराष्ट्र) तथा सीमा प्रदेश के जंगलों से बचाने के लिये संपूर्ण सेनाके तीसरे या चौथे भाग को राष्ट्रमें ही रखकर और इसके बाद कार्य साधन के लिये जितनी सेना तथा संपत्ति की जरूरत हो उसको साथ में लेकर यदि वह यह समझे कि—शत्रु की भोजन तथा अन्न की सामिग्री पुरानी पड़गई है, उसने अभी नया अनाज नहीं इकट्ठा किया है, टूटे हुए किले को नहीं बनवाया है, उसका कोई भी मित्र नहीं है, उसका वार्षिक अन्न तथा हेमन्त संबंधी कर [मुष्टि] नष्ट करना आवश्यक है तो मार्गशीर्ष में [दिसंबर]—या शत्रु के हेमन्त संबंधी फसल तथा वसंन्त संबंधी कर (मुष्टि) को नुकसान पहुंचाना चाहिये तो चैत्रमें [मार्च]—या दुश्मन का घास भूसा पानी आदि

कम पड़गया है, किला टूट पड़ा है, वार्षिक कर तथा बसन्त की फसल नष्ट करना जरूरी है तो ज्येष्ठ में [मई-जून]—या शत्रु का देश बहुत ही ऊष्ण है, और उसका घास ईंधन तथा पानी का प्रबंध कच्चा है तो हेमन्त में शत्रु पर चढ़ाई करदे। इसीप्रकार उनदेशोंपर ग्रीष्म में धावाकरे जिनमें बहुत ही अधिक वर्षा होती हो; नदियां अगाध हों तथा जगह जगह पर घने जंगल मौजूद हों। मार्ग शीर्ष तथा तिष्य (दिसंबर तथा जनवरी) प्रलंबयात्रा के लिये, † चैत्र तथा बैशाख (मार्च तथा अप्रैल) मध्यम यात्रा के लिये तथा ज्येष्ठ तथा आषाढ़ (मई तथा जून) ह्रस्वयात्रा के लिये उपयुक्त हैं। कष्ट तथा विपत्ति पड़ने पर शान्त हो कर बैठजानाही उत्तम है। विपत्ति पड़ने पर यात्रा (चढ़ाई) किस प्रकार की जाय इसपर विगृह्ययान [युद्ध उद्घोषित करने के बाद चढ़ाई] प्रकरण में प्रकाश डाला जाचुका है।

प्राचीन आचार्यों का मत है कि शत्रु के कष्ट तथा विपत्ति में पड़ते ही यात्रा (चढ़ाई) करनी चाहिये। कौटिल्य का मत है कि कष्ट तथा विपत्ति कभी आती हैं और कभी जाती हैं अतः सामर्थ्य तथा शक्ति के बढ़ने पर या उस समय जब कि विजिगीषु यह समझे कि इस समय चढ़ाई करने पर वह शत्रु को नीचा दिखा सकता है या नष्ट करसकता है तो चढ़ाई करे।

हाथियों की सेना के साथ उतरती गरमी में चढ़ाई करना चाहिये क्यों कि हाथी गरमी में अन्दर ही अन्दर पसीने के सूख जाने के कारण कोढ़ी होजाते हैं। यदि उनको नहाना तथा पानी पीना न मिले तो अन्दुरूनी गरमी या गन्दगी के कारण पागल हो जाते हैं। इस लिये हाथियों की सेना से ऐसे ही देश पर चढ़ाई करे जिसमें पानी बहुतायत से हो और बर्साभी बहुत ही अधिक हो। इससे विपरीत कीचड़ तथा पानीसे रहित देश पर गदहों ऊँटों तथा घोड़ों की सेना को लेकर और वर्षा के दिनों में बालूमय देश [मरुप्राय] पर चतुरंगिनी सेना को लेकर चढ़ाई करे। मार्ग के—विषय,

† यात्रा शब्द चढ़ाई करने या धावा मारने के लिये ही प्रयुक्त कियागया है।

निम्न [जलसे परि पूर्ण], स्थल, ह्रस्व, तथा दीर्घ आदि के अनुसार यात्रा [चढ़ाई] का विभाग करे।

कार्य्य के लाघव तथा गौरव के अनुसार ही यात्रा ह्रस्व तथा दीर्घ काल तक होनी चाहिये। बरसात के दिनों में दूसरे देशमें ही निवास करना चाहिये।

१३७–१३९. प्रकरण।

सेना का इकट्ठा तथा तैयार करना और दूसरे सेना के काम

(१) मौल (२) भृतक (३) श्रेणी (४) मित्र (५) अमित्र (६) अटवी आदि की सेना के एकत्रित करने का समय।

(१) मौलबल [ताल्लुके दार की सेना]:-- यदि राजा यह समझे कि मौलबल मूलरक्षण (मुख्यस्थान की रक्षा) आवश्यकतासे अधिक है, या मौल लोग अधिक सेना के होनेसे शक्ति प्राप्त कर मूलस्थान पर बिगड़ जांयगे या सर्व प्रिय (बहुलानुरक्त) होने से मौलबल शक्ति शाली (सारबल) है और उसका प्रत्येक योद्धा कठिन से कठिन युद्ध के करने में समर्थ है या लंबे से लंबे मार्ग या समय में मौलबल श्रय तथा व्यय को सहन कर सकता है, या सर्व प्रिय होने पर भी अन्य सेनायें यातव्य के षड्यंत्र तथा कुचक्र (उपजाप) में फंससकती है, या भृत सेना (तनखाह लेकर लड़ने वाली) पर विश्वास नहीं किया जा सकता है, या संपूर्ण सेना की शक्ति के नाश होजाने की संभावना है तो जो उचित समझे करे। मौलबल के प्रयोगका समय इन्हीं बातों के आधार पर निर्णय किया जाय।

[२] भृतकबल (तनखाह लेकर लड़ने वाली सेना) :— यदि राजा यह समझे कि—मेराभृतकबल (स्वामी सेना) मौल बल से बहुत अधिक है, या शत्रु का मौलबल बहुत ही कम है तथा विरक्त (राज्य द्रोही) है, या भृत बल तुच्छ तथा शक्ति हीन है,

या देश तथा समय कम है और क्षय तथा व्यय भी अधिक नहीं है, या मेरी सेनाको आराम लेने का अभीतक मौका नहीं मिला है [अल्प स्वाप], उसमें शक्ति है (शान्ताजाप) या उसको मुझपर विश्वास नहीं है, या शत्रुके अल्पप्रसार (छोटी सी जांगलिक सेना या जांगलिक सहायता] को शीघ्र ही नष्ट करता है—तो जो उचित समझे करे। भृतक बल के प्रयोग का समय इन्हीं बातों के आधारपर निर्णय किया जाय।

[३] श्रेणीबल [संघोंकीसेना] :—यदि राजा यह समझे कि मेरा श्रेणीबल मूल स्थान या यात्रा [चढ़ाई] के लिये उपयुक्त है, शत्रु के देश में बहुत समय तक न रहना पड़ेगा [ह्रस्व प्रवास], शत्रु की सेना में श्रेणी बल ही मुख्य है, उसके प्रत्येक योद्धा मंत्रयुद्ध तथा प्रकाश युद्ध करने के लिये तैय्यार है, विशेष सेवा की जरूरत होगी तो जो उचित समझे करे। श्रेणीबल के प्रयोग का समय इन्हीं बातों के आधार पर निर्णय कियाजाय।

(४) मित्रबल (मित्रराजा की सेना) :—यदि राजा यह समझे कि—मेरा मित्रबल बहुत ही अधिक है, मूल की रक्षा या चढ़ाई करने में समर्थ है, शत्रु के देश में बहुत समय तक न रहना पड़ेगा, मंत्र युद्ध की अपेक्षा प्रकाश युद्ध अधिक है, या मित्र बल के द्वारा पहिले जंगल तथा नगरी पर लड़ाई कर और आसार (मित्र बल) को लड़ाकर अपनी सेना से बाद को लडूंगा या मित्र के सदृश ही मेरा काम है, मित्र ही पर मेरा कार्य्य निर्भर है, मित्र सदा ही मेरे पास है, या मित्र को प्रसन्न करना है या मित्र के लिये तैय्यारी करना है-तो मित्र बल के प्रयोग का समय इन्हीं बातों के आधार पर निर्णय करे।

(५) अमित्र बल (शत्रु की सेना):—यदि राजा यह समझे कि—मेरे शत्रु की सेना बहुत अधिक है, उसको शत्रु की सेना से लड़ाऊंगा या शहरी तथा जंगली लोगों के साथ भिड़ादूंगा और कुत्ते सुअर की लड़ाई में चंडाल की तरह अपना स्वार्थ सिद्ध

करूंगा, या आसार [मित्र की सेना] तथा जांगलिक [अटवी बल] सेना को चुटकी में ही नष्ट भ्रष्ट करदूंगा, या कोप (गदर) का भय है अतः बढ़ी हुई शत्रु की सेना को विदेशमें भेज दूंगा या शत्रु तथा अवर (हीन शक्ति वाला राजा) का युद्ध शीघ्र ही होने वाला है—तो अमित्र बल के प्रयोग का समय इन्हीं बातों के आधार पर निश्चय करे।

(६) अटवी बल (जांगलिकों की सेना):—अटवी बल के प्रयोग का समय भी उपरिलिखित प्रकार ही है। दृष्टान्तस्वरूप यदि वह यह समझे कि—पथदर्शक की जरूर पड़ेगी या जांगलिक सेना मार्ग में ही मिल सकती है, शत्रु की सेना के लिये युद्ध भूमि उपयुक्त नहीं है या शत्रु की सेना में जांगलिक अधिक हैं अतः जांगलिकों को जांगलिकों से लड़ादिया जाय या शत्रु की जांगलिक सेना (प्रसार) शीघ्र ही नाश की जासकती है तो वह अटवी बल को काम में लावे।

सैन्य भिन्न भिन्न जाति के हैं—या कहे बिना कहे ही दूसरों को लूटने लगते हैं—या बिना तनख्वाह तथा भत्ता के ही लड़ने के लिये तैय्यार होजाते हैं—या वृष्टि आदि का स्वयं ही उपाय कर सकते हैं,-या शत्रु उनको छिन्न भिन्न कर सकता है,-या एक ही देश जाति तथा देश के होने से वह पूर्ण रूपसे संगठित हैं—इत्यादि बातों को सामने रख कर राजा सैन्य का संगठन करे। इनमें से अमित्र तथा अटवी बल को जांगलिक द्रव्य [कुप्य] या लूटमार (विलोपभृत) की आज्ञा देकर नौकरी पर रखे। शत्रु ज्यों ही सेना संग्रह [बल काल] करने लगे उसके मार्ग में बाधा डाले। उसको अन्यत्र भेजदे। तितरबितर करदे। उसके यत्न को निष्फल करदे। समय खतम होने पर बरखास्त करदे। शत्रु के सेना संग्रह संबंधी यत्न को नष्ट कर और स्वयं यही काम करे। उपरिलिखित सेनाओं में पूर्व पूर्व की सेना ही उत्तम है। भृत बल से मौलबल उतम है क्योंकि वह शिक्षित होती है और युद्ध के लिये ही तैय्यार की जाती है। प्रतिदिन रहना, शीघ्र ही लड़ने के लिये तैय्यार होजाना,

आज्ञा के अनुसार काम करना आदि गुणों से भृतबल श्रेणी बलसे उत्तम है। संघर्ष, क्रोध, सिद्धि, लाभ, उद्देश आदि में सदृशता के के साथ साथ स्वदेशोत्पन्न होने से श्रेणीबल मित्रबल से तथा अपरिमित देश, समय तथा समान उद्देश्य से मित्रबल अमित्रबल से उत्तम है। अटवीबल से वह अमित्र बल उत्तम है जिसका सेनापति कोई आर्य्य हो। दोनों ही सेनायें लूटमार ज्यादा पसन्द करती हैं। यदि लूटमार का कोई मौका न हो तथा राजा भयंकर विपत्ति में पड़गया हो तो दोनों ही सेनायें घरके सांप की तरह खतरनाक होजाती हैं।

प्राचीन आचार्य्यों का मत है कि तेज की प्रधानता होने से चारों वर्णों की सेना में पूर्व पूर्व वर्ण की सेना ही उत्तम है। इससे विपरीत कौटिल्य का मत है कि शत्रु शिरझुका कर तथा प्रणाम कर ब्राह्मण सेना को शीघ्र ही अपने वशमें कर सकता है। लड़ाई के लिये तो शिक्षित क्षत्रियों की सेना ही उत्तम है। अधिक संख्यामें वैश्यों तथा शूद्रों की सेना भी ठीक है। शत्रुकी सेना इतनी है और उसके विरोधी सेना की शक्ति इतनी है इत्यादि बातों के अनुसार ही सेनाका संग्रह किया जाय। हाथियों की सेना की विरोधी समान शक्तिशाली सेना वही है जोकि हाथी, यंत्र, गाड़ी, गर्भकुल, खर्वट, बांस बाण आदि से पूर्ण रूप से सुसज्जित हो। घुड़ सवारों तथा रथियों की विरोधी सेना वही है जिसके पास पत्थर डंडे कवच अंकुश कचग्रहणी आदि हथियार हो। कवचधारी सेना से लड़ने के लिये घोड़ों तथा हाथियों की सेनाको और चतुरंगिनी सेना का मुकाबला करने के लिये प्यादों तथा रथियों को कवच पहिन कर लड़ना चाहिये।

राजा को चाहिये कि वह अपनी सेना के भिन्न भिन्न विभागों की शक्ति को देख कर सेना का संग्रह करे और शत्रु की सेना को नष्ट करे।

१४०–१४१ प्रकरण ।

पश्चात्कोप चिंता और बाह्याभ्यंतर प्रकृति कोप का प्रतिकार ।

यदि पश्चात्कोप (चढ़ाई करने के बाद थोड़ासा गदर होजाना) अल्प हो और पुरस्ताल्लाभ (चढ़ाई करने के बाद बहुत भारी लाभ मिलता हो) बहुत ही अधिक हो तो प्रथम को ही मुख्य समझना चाहिये । क्यों कि चढ़ाई करने के बाद राज्यद्रोही दुश्मन तथा जंगली सेना विद्रोह को बहुत ही अधिक सुलगादेंगे । प्रकृति के विद्रोही होनेपर बड़े से बड़ा भी पुरस्ताल्लाभ निरर्थक होजाता है । जब देश में यही बात होतो स्वयं भृत्य मित्र आदि की सेना का चय तथा व्यय करे और पुरस्ताल्लाभ की प्राप्ति के लिये सेनापति, राजकुमार तथा दंडचारी (सेनापति) को आगे भेजदे । यदि उसकी शक्ति बहुत ही अधिक हो और वह पश्चात्कोप कहीं परभी बैठेहुए शान्त करसकता होतो पुरस्ताल्लाभ की प्राप्ति के लिये चढ़ाई करदे । यदि आभ्यंतरकोप की शंका हो तो संशयास्पद [शंकित] लोगोंको चढ़ाई करते समय अपने साथ में लेले । यदि उसको बाह्यकोप [शत्रु का आक्रमण] की संभावना होतो संशयास्पद लोगों के परिवार अपने पास रखकर और भिन्न भिन्न सेनाओं के वर्गों का मुखिया भिन्न भिन्न व्यक्तियों को बनाकर तथा स्थान स्थान पर शून्यपाल को नियुक्त कर चढ़ाई करे या उचित न समझे तो चढ़ाई न करे । बाह्यकोप से आभ्यंतर कोप भयंकर है इसपर पूर्वमें ही प्रकाश डाला जाचुका है । आभ्यंतरकोप से तात्पर्य मंत्रि, पुरोहित, सेनापति तथा युवराज आदिकों के कोप या विद्रोह से है । इसको अपने दोषों को दूरकर या शत्रु के आक्रमण का उनको भय दिखाकर दूरकरे । यदि पुरोहित बहुत बड़ा राज्यापराध करे तो उसको कैद करले या देश निकाला देदे । यदि कोई दूसरा अच्छा लड़का मौजूद हो तो युवराज को कैद करदे

या मारडाले [निग्रह]। मंत्रि तथा सेनापति के साथ भी इसी ढंग का व्यवहार कियाजाय। यदि कोई लड़का, भाई या रिश्तेदार राज्य छीनने की कोशिश करे तो दिलासा देकर शान्त करे। यदि इसपर भी वह शान्त न हों और शत्रु का भय हो तो उनको वह चीजें लौटादे जो कि उसने उनसे ली हों या उनके साथ संधि करले या उन्हीं की हैसियत वाले अन्य लोगों के द्वारा उनको भूमि तथा जगीर आदि देने का विश्वास देवे या सेना देकर उनको राज्य संबंधी काम से शत्रु के पास भेजदेवे या उनके विरोधी सामन्तों तथा जांगलिकों को उनके विरुद्ध भड़कावे या उस नीति का अवलंबन करे जिसका उल्लेख अवरुद्धदान (राज कुमार को कैदकर रखना) तथा पारग्रामिक (शत्रु के गांवों को जीतना) प्रकरण में कियागया है। मंत्रि तथा सेनापति के साथ भी यही व्यवहार कियाजाय। मंत्रि आदि से भिन्न छोटे छोटे अमात्यों के विद्रोह को अन्तरमात्यकोप कहते हैं। उसको शान्त करने के लिये भी उचित उपायों का प्रयोग करे। राष्ट्रमुख्य [राष्ट्रों के मुखिया], अन्तपाल [सीमा रक्षक], आटविक (जंगल का प्रबंध कर्ता), तथा पराजित राजा [दंडोपनत] का विद्रोह वाह्यकोप कहाता है। उनको एक दूसरे के साथ लड़ाकर बाह्यकोप को शान्त कियाजाय। जिसके पास बहुत ही उत्तम दुर्ग हो उनको सामंत आटविक तथा कैदी कुलीन आदियों में से किसी के द्वारा पकड़वा दिया जाय। मित्र के द्वारा भी यही करवावे परन्तु ख्याल इसी बात का रखे कि वह दुश्मन न हो जाय। दृष्टान्त स्वरूप यदि वह शत्रु से मिलें तो सत्री यह कहकर उनको शत्रु से फाड़े कि—अमुक शत्रु ने तुझको अपना साधन (योग पुरुष) बना लिया है और तुझको अपने ही राजा के साथ लड़ाना चाहता है। अपना मतलब सिद्ध कर यह तुझको दंडचारी (सेनापति) बनावेगा और दुश्मनों तथा जांगलिकों से लड़ावेगा या भयंकर कष्ट तथा परदेश में झोंक देवेगा या परिवार से जुदाकर तुझको राष्ट्र के अन्त में रहने के लिये बाधित करेगा या निःशक्त देखकर तुझको राजा के हाथ में बेच देगा या तुझ से संधि कर राजा को प्रसन्न

करने की कोशिश करेगा। इस लिये तुझको चाहिये कि तू किसी मित्र का सहारा ले। यदि उसको यह बात समझ में आजावे तो उसका इष्ट बातों से आदर सत्कार करे। परन्तु यदि वह इतने पर भी न समझे तो सभी सफा सफा कहदे कि मुझको राजा ने तुम्हारे समझाने के लिये भेजा है। क्योंकि तुम नहीं समझते हो अतः "राजा की आज्ञा के अनुसार मैं तुमको मारता हूं" यह कहकर मार डाले। या गूढ़ पुरुषों (गुप्तचर का भेद) या साथ रहने वाले वीर अङ्गरक्षकों के द्वारा उसको कतल करवादे। इन लोगों के शान्त करने का यही तरीका है। राजा को चाहिये कि शत्रु के देश में विद्रोह करवाये और अपने देश में विद्रोह को शान्त करे। जो लोग देश में गदर करने या उसको शान्त करने में समर्थ हों उनके देश में षड्यंत्र (उपजाप) रचे। जो लोग अपनी बात की आन पर खड़े रहें, काम करने में समर्थ हों, नये काम तथा फल के प्राप्त होने पर अनुग्रह करें, और विपत्ति पड़ने पर बचावे उनके देशों में शत्रु के द्वारा किये गये षड्यंत्रों को दूर करे (प्रतिजाप)। साथ ही इनके विषय में निम्नलिखित बातों के द्वारा कल्पना करे कि "अमुक कल्याण बुद्धि है या शठ है?" जो लोग बाह्य शठ होते हैं वह देश के लोगों के साथ इस ढंग की बात करते हैं कि— यदि राजा को मानकर तुम मुझ को अपना राजा बनाओ तो मुझे भूमि भी मिले और मेरे शत्रु का नाश भी होजावे। इस प्रकार मुझ को दुगुना लाभ मिल जावे। या शत्रु उसको इस प्रकार नष्ट कर सकता है। यदि उस के बन्धुओं का नाश हो जाय तो सामान्य विपत्ति से घबड़ाकर वह कहीं मुझ से भी नाराज न हो जाय और देश के लोग मेरे पक्ष में न रहें। और दूसरे राजा पर भी संदेह न करने लगें। राज्य मिलने पर उसके अमुक मुखिया को राजाज्ञा देकर मरवादूंगा। और जो लोग आभ्यंतरशठ होते हैं वह बाहरी लोगों से यह कहकर षड्यंत्र रचते हैं कि इसका कोश छीनलूंगा। या इसकी सेना को नष्ट करदूंगा। या उसके द्वारा दुष्ट स्वामी को मरवादूंगा। जो बाह्य मुझ पर विश्वास रखता है उसको अमित्रों तथा जांगलिकों के साथ लड़ादूंगा। उसके देश में

षड्यंत्र रचूंगा। उस के साथ दूसरे की दुश्मनी करवादूंगा। या वह मुझ से इस प्रकार स्वाधीन हो जायगा। इसके बाद स्वामी के राज्य को इस प्रकार ग्रहण कर लूंगा। या स्वयम् ही राज्य को मैं जब्त करलूंगा। या उसको बांध कर बाहरी भूमि के साथ साथ स्वामी की भूमि का भी स्वामी बनजाऊंगा। जो बाह्य मेरे विरुद्ध होगा उसको दूसरे के स्थान पर लेजाकर अकेले में मरवाडालूंगा। या उसके मूलस्थान को शून्य पाकर छीनलूंगा। जो लोग कल्याण बुद्धि होते हैं वह वही काम करते हैं जिस से साथियों का स्वार्थ सिद्ध हो। कल्याणबुद्धि के साथ संधि करे। शठ को "वैसा ही होगा जैसा तुम कहते हो" यह कहकर धोका दे। इसी ढंग पर संपूर्ण काम करे।

बुद्धिमान् राजा को चाहिये कि वह--दूरवर्त्तियों को दूरवर्त्तियों से मित्रों को मित्रों से, मित्रों को दुश्मनों से, स्वदेशवासियों से मित्रदेशवासियों को, और अपने को मित्रों तथा शत्रुओं से सर्वदा बचाता रहे।

१४२ प्रकरण।

क्षय व्यय तथा लाभ का विमर्श।

क्षय। योग्य पुरुषों के ह्रास का नाम क्षय है।

व्यय। हिरण्य तथा धान्य के ह्रास का नाम व्यय है।

शत्रु पर तभी आक्रमण करे जब कि क्षय तथा व्यय की अपेक्षया लाभ अधिक देखे।

१ आदेय २ प्रत्यादेय ३ प्रसादक ४ कोपक ५ ह्रस्व काल ६ तनु क्षय ७ अल्पव्यय ८ महान् ९ वृद्ध्युदय १० कल्प ११ धर्म्म १२ पुरोग इत्यादि लाभ की विशेषतायें हैं।

१. आदेय। जो लाभ सुगमता से प्राप्त हो, सुरक्षित रखा जासके तथा शत्रु जिसको ग्रहण न कर सके उसको आदेय कहतेहैं।

२. प्रत्यादेय। आदेय से विपरीत लाभका नाम ही प्रत्यादेय है। जो इसको ग्रहण करता है या इसमें निमग्न रहता है वह विनाश

को प्राप्त होता है। यदि वह यह देखे कि—प्रत्यादेय लाभ को ग्रहण कर मैं शत्रु के कोश, दंड (सैन्य) तथा संरक्षण के साधनों का क्षय करसकूंगा। या—खान, द्रव्यवन (जंगल), हस्तिवन (हाथी का जंगल), सेतुबंध [पुल], वणिक्पथ (व्यापारी मार्ग), आदि को चूस कर निस्सार बनादूंगा। या—शत्रु की प्रकृतियों को क्षीण कर दूंगा; दूसरे देश में भागने के लिये बाधित कर दूंगा या उसके विरुद्ध विद्रोह करने के लिये तय्यार करूंगा या—उसको शत्रु से लड़ादूंगा, या—शत्रु के पास पड़े पण्य को उसे देदूंगा या—उसको किसी एक विरक्त कुलीन शत्रु की शरण में उसको भेज दूंगा या—उसको भूमि दूंगा और इस प्रकार उसको ऊंचा कर सदा के लिये अपना मित्र बना लूंगा—तो वह प्रत्यादेय लाभ को भी ग्रहण करले। आदेय तथा प्रत्यादेय में इसी नियम को काम में लाना चाहिये

३. प्रसादक। जो लाभ (देश आदि) अधार्मिक से धार्मिक को मिले वह अपने तथा पराये लोगों की प्रसन्नता का कारण होने से प्रसादक कहाता है। इससे विपरीत लाभका नाम प्रकोप है।

४. कोपक। जो लाभ मंत्रियोंके उपदेश से मिले उसको कोपक कहते हैं। क्योंकि मन्त्री लोग समझने लगते हैं हमने ही राज्य को क्षय व्यय से बचाया। राज्य द्रोही मंत्रियों के अनादर से जो लाभ मिले उसको भी कोपक कहते हैं। क्योंकि वह लोग यह समझते हैं "स्वार्थ सिद्ध होने के बाद यह हमारा नाश करदेगा"। कोपक लाभ से विपरीत लाभ को प्रसादक कहते हैं। प्रसादक तथा कोपक में इसी नियम को काम में लाना चाहिये।

५. ह्रस्वकाल आक्रमण करते ही जो लाभ मिले उसको ह्रस्व-काल कहते हैं।

६. तनुक्षय। जो लाभ मंत्र मात्र से साध्य हो उसको तनुक्षय कहते है।

७. अल्पव्यय। जो लाभ भक्त मात्र (भत्ता) व्यय से ही प्राप्त हो उसको अल्पव्यय कहते हैं।

८. महान् । जिसका तात्कालिक लाभ बहुत ही अधिक हो उस को महान् कहते हैं ।

९. वृद्ध्युदय । जिस के प्राप्त होते ही विशेष लाभ हो उसको वृद्ध्युदय कहते हैं ।

१०. कल्य । जो बाधा रहित [निराबाधक] हो उसको कल्य कहते हैं ।

११. धर्म्य । जो प्रशस्त हो उसको धर्म्य कहते हैं ।

१२. पुरोग । मित्र राष्ट्रों (सामवायिक) से जो विना किसी प्रकार की बाधा या शर्त [अनिर्बन्ध] के लिये हो उसको पुरोग कहते हैं ।

यदि तुल्य लाभ दिखाई पड़े तो—१ देश, २ काल, ३ शक्ति, ४ उपाय, ५ प्रिय, ६ अप्रिय, ७ जप [षड्यंत्र], ८ अजप (अषड्यंत्र)] ९ सामीप्य, १० विप्रकर्ष [दूरी], ११ तदात्व (तात्कालिकपन), १२ अनुबंध (साथ होना), १३ सारत्व, १४ असारत्व, १५ असातत्य (जो लगातार न हो), १६ बाहुल्य तथा बाहुगुण्य (बहुत उत्तम) देखकर लाभ ग्रहण करे ।

लाभविघ्न । १ काम, २ कोप, ३ साध्वस (भीरुता), ४ कारुण्य ५ ह्री [लज्जा], ६ अनार्यभाव, ७ मान, ८ दयालुता, ९ परलोकापेक्षा (परलोक का ख्याल), १० धार्मिकता, ११ अतिकुल, १२ दैन्य, १३ ईर्ष्या (असूया), १४ प्रमाद, १५ उदारता, १६ अविश्वास, १७ भय १८ संतोष, (इतिकार), १९ गरमी सर्दी तथा वर्षा से अपने आप को बचाने में असामर्थ्य और २० तिथि नक्षत्र तथा यज्ञ का मंगल पूर्ण होना आदि लाभविघ्न की विशेषतायें हैं ।

जो नक्षत्र आदि को बहुत ही अधिक पूछता है उस के अर्थ सिद्ध नहीं होते। अर्थ का साधक (नक्षत्र) तो अर्थ ही है । तारे क्या कर सकते हैं ? कार्य्य में चतुर व्यक्ति (साधन) सैंकड़ों प्रकार की कोशिश कर अर्थ को प्राप्त कर लेते हैं । जैसे हाथी हाथी को बांधता है वैसे अर्थ अर्थ को खींचता है ।

१४३ प्रकरण।

बाह्य तथा आभ्यतर आपत्तियां।

संधि आदि का उचित ढंग पर न करना ही अपनय है। इससे बहुत प्रकार की विपत्तियां उपस्थित होजाती हैं। दृष्टान्त स्वरूपः-

१ बाहरी लोगों से देश के अन्दर उत्पन्न की गई विपत्ति।

२ देश के अन्दर के लोगों का बाहरी लोगों से मिलने के कारण उत्पन्न विपत्ति।

३ बाहरी लोगों का देश के बाहर ही षड्यंत्र रचना।

४ अन्दर के लोगों का देश के अन्दर ही षड्यंत्र रचना।

अब इन पर क्रमशः प्रकाश डाला जायगा।

१ बाहरी लोगों से देश के अन्दर उत्पन्न की गई विपत्ति। अन्दर के लोग विदेशियों से या विदेशी अन्दर के लोगों से मिल कर जब षड्यंत्र रचते हैं तो षड्यंत्र बहुत ही भयंकर होता है। जो लोग इस के बीच में होते हैं वह किसी न किसी प्रकार का बहाना बनाकर बच जाते हैं। परन्तु जो षड्यंत्र के अनुसार काम करते हैं या उस में पूर्ण रूप से संमिलित होते हैं वह नहीं बचते। उनको एक बार यदि दबा दिया जाय तो फिर दूसरों को ऐसी हिम्मत नहीं होती। बाहरी अन्दरूनी लोगों से तथा अन्दरूनी लोग बाहरी लोगों से षड्यंत्र नहीं रचते। बाहरी लोगों की संपूर्ण कोशिशों के निष्फल होने से राजा की शक्ति तथा समृद्धि बढ़ जाती है।

(२) देश के अन्दर के लोगों के बाहरी लोगों से मिलने के कारण उत्पन्न विपत्ति। देश के अन्दर जो लोग षड्यंत्र रचें उनको साम तथा दान द्वारा शांत कर दिया जाय। साम से तात्पर्य स्थान तथा मान से और दान से तात्पर्य अनुग्रह परिहार (राजस्व से मुक्त करना) तथा काम आदि देने से है। जो लोग बाहरी लोगों से मिलकर षड्यंत्र रचें उनको भेद तथा दंड के द्वारा दबा दिया जाय। मित्र बनकर गुप्तचर लोग बाहरी लोगों को कहें कि "आप

समझदार हो जाइये। अमुक आदमी राजद्रोही के भेस में आप को नुक्सान पहुंचाना चाहता है"। इसी प्रकार राजद्रोही का भेस बनाये हुए गुप्तचर राजद्रोहियों को बाहरी लोगों से या बाहरी लोगों को राजद्रोहियों से फाड़ देवें। तीक्ष्ण लोग उन के पेट में घुस कर उन को मार डालेंगे। या बाहरी लोगों से उन को मरवादें।

(३) बाहरी लोगों का देश के अन्दर ही षड्यंत्र रचना। जब बाहरी लोग, बाहरी लोगों के साथ और अन्दर के लोग, अन्दर के लोगों के साथ षड्यंत्र रचें तो उनका एक उद्देश्य से आपस में मिलना बहुत ही खतरनाक होता है। दोष के दूर करने पर राज्यद्रोही स्वयं ही नष्ट होजाते हैं। परन्तु यदि कोई राज्य-द्रोहियों को नष्ट करे तो उसके दोष [दुर्गुण] अन्य बहुत से लोगों को राज्यद्रोही बना देते हैं। इस लिये षड्यंत्र रचने वाले बाहरी लोगों को भेद तथा दंड से दबावें। मित्र के भेष में सत्रि लोग (गुप्त चरों का एक भेद) उनको कहें कि "आप यह समझ लीजिये कि यह राजा अपने मतलब को सिद्ध करने के लिये दूसरे राजा से लड़ाई छेड़ रहा है"। साथ ही राजदूत की सेना के साथ गये हुए तीक्ष्ण लोगें शस्त्र तथा जहर आदि से उनको मारडालें। इस के बाद सत्री लोग षड्यंत्र रचनेवालों को सारी की सारी बात बतादें।

(४) अन्दर के लोगों का देश के अन्दर ही षड्यंत्र रचना। ऐसे लोगों का उचित उपाय किया जाय। जो लोग असंतुष्ट हों या संतुष्ट मालूम पड़ें उनके साथ साम उपाय का उपाय प्रयोग किया जाय। या दान उपाय के अनुसार उनका आदर सत्कार किया जाय और उनको कहा जाय कि तुम्हारी राजभक्ति देख कर या तुम्हारे सुख दुःख का ख्याल रखकर ही ऐसा किया गया है। या मित्र के भेष में गुप्तचर उनसे कहें कि "राजा तुम्हारे हृदय की बात जानना चाहता है। अतः तुम उसको आदि से अन्ततक अपने दिल की बात कहदो"। या उनको यह कह कर आपस में फाड़दे कि तुम्हारा अमुक साथी राजा के साथ अन्दर ही अन्दर मिला हुआ

है" दांडकार्मिक प्रकरण में विधान किये गये दंडों के अनुसार ही उन लोगों को दंड दिया जाय जो आपस में फट गये हों ।

इन चारों प्रकार की आपत्तियों में पहिले अन्दुरूनी आपत्ति का ही उपाय करना चाहिये । "घर को सांपकी तरह देश के अन्दर के लोगों का विद्रोह शत्रु के आक्रमण से कहीं अधिक भयंकर है" इस पर पूर्व में ही प्रकाश डाला जा चुका है ।

उपरि लिखित आपत्तियों में क्रमशः पूर्व पूर्व की आपत्ति लघु (हल्की) होती है । पहिले लघु आपत्ति का ही उपाय करना चाहिये बशर्ते कि किसी भारी आपत्ति के पीछे कोई बलवान् शत्रु न हो ।

१४४ प्रकरण ।

राज्यद्रोहियों तथा शत्रुओं के साथी ।

शुद्ध तथा सच्चरित्र लोग दो प्रकार के होते हैं । एक तो वह हैं जो कि राज्य द्रोहियों (दूष्य) से पृथक् रहते हैं और दूसरे वह हैं जो कि शत्रु का साथ नहीं देते हैं । नागरिकों तथा ग्रामीणों को राज्य द्रोहियों से बचाने के लिये दंड (सैन्य) से भिन्न उपायों को काम में लाया जावे । प्रभावशाली मनुष्यों के संघ को दंड देना असंभव है। यदि कोई यह करे भी तो उसको उचित फल न मिले । इससे अतिरिक्त बहुत प्रकार के अनर्थ होने शुरू हो जांय । इसलिये मुखियों के साथ दांड कार्मिक प्रकरण में बताये हुए नियमों के अनुसार व्यवहार करे । इसी प्रकार नागरिकों तथा ग्रामीणों को शत्रु से बचाने के लिये सामादिक उपायों का प्रयोग करे । योग्य पुरुषों का एकत्रित करना राजा पर और काम तथा कोशिश करना मन्त्री पर निर्भर है । इसलिये दोनों पर ही सफलता का आधार समझना चाहिये ।

जिस जनता में राजभक्त तथा राज्य को ही समान रूपसे मिले हों उसको आमिश्रा कहते हैं । राजभक्त लोगों के सहारे ही आमिश्रा जनता पर शासन किया जासकता है । क्योंकि बिना सहारे के कोई भी कहीं पर थंभ नहीं सकता है । जिस जनता में

मित्र तथा अमित्र लोग मौजूद हों परमिश्रा कहते हैं। मित्र लोगों के सहारे ही परमिश्रा पर प्रभुत्व प्राप्त किया जासकता है। मित्र के द्वारा सिद्धि का होना सुगम होता है। अमित्र के द्वारा यही बात संभव नहीं है। यदि मित्र संधि न करना चाहे तो गुप्तचरों के द्वारा उसको अमित्र से फाड़े और इस प्रकार उसको अपने वश में करे। या मित्र समाज में जो सदा ही रहता हो उससे दोस्ती करे। क्योंकि ऐसे आदमियों से दोस्ती होते ही समाज के मध्यस्थ लोग छिन्न भिन्न होजाते हैं। या मित्र समाज में जो मध्यस्थ हों उनको अपने साथ मिलाले। इसके साथ मिलते ही मित्र समाज के अन्दर रहने वाले लोग तितर बितर होजाते हैं। सारांश यह है कि जिन उपायों से उनका जत्था टूट जाय उन उपायों को काममें लावे। दृष्टान्तस्वरूप उनमें जो धार्मिक लोग हों उनकी जाति कुल विद्या तथा आचार आदि की प्रशंसा करे और पूर्वजों के त्रैकालिक उपकारों तथा लाभों का जिक्र कर साम उपाय से उनको वश में करे। उनमें से जिन लोगों में उत्साह न रहा हो, जो लड़ाई से थकगये हों, जिनको कोई उपाय न सूझता हो, जोकि आय व्यय तथा प्रवास से परेशान हों, जो सच्चे दिल से किसी दूसरे राजा को चाहते हों, जो किसी दूसरे राजा से डरते हों, या जो मित्रता तथा कल्याण के इच्छुक हों उनपर भी साम उपाय का ही प्रयोग किया जाय।

लुब्ध तथा क्षीण राजा को तपस्वियों तथा मुखियों के द्वारा कुछ दे दिवाकर अपने पक्ष में करले। दान पांच प्रकार का है। (१) देयविसर्ग [देने योग्य वस्तु को देना]। (२) गृहीतानुवर्तन [देने के बाद कुछ और देदेना]; (३) आत्तप्रतिदान [जो मिलाहो उसको लौटा देना]। (४) स्वद्रव्यदान (अपनी चीज को देना)। (५) दूसरों की अपूर्व वस्तु लेनेके लिये स्वयंग्राहदान (सेना आदि के द्वारा सहायता देना)।

यदि वह देखे कि दो राजा एक दूसरे से वैर तथा द्वेष तथा भूमि जाने की शंका रखते हैं तो उनको इन्हीं में से किसीएक बात के द्वारा लड़ा देवे। उनमें जो डरपोक हो उसको कहे कि "देखो यह

दोनों आपस में मिलकर तुझको ही नुकसान पहुंचावेंगे । इसने अमुक मित्र से खुल्लमखुल्ला संधि करली है । कोई बात छिपी थोड़े ही है" । अपने देश से या परदेश से जिसके पास माल बिकने के लिये आवे उसके विषय में खुफिया पुलिस के लोग शोर मचायें कि "चढ़ाई करने के लिये ही इसने समान मंगाया है" । यदि उसके पास सामान अधिक होगया हो तो उसको आज्ञा दे कि "मैंने तुम्हारे पास अमुक सामान भेजा है । शत्रु संघ पर आक्रमण करदो । संपूर्ण लाभ तुम्ही को मिलेगा" । इसके बाद सत्री (गुप्तचरों की एकशाखा) दुश्मनों को दहक दें कि "देखो तुम्हारे दुश्मन ने उसके पास यह माल भेजा है" । विजिगीषु शत्रु के देश में पैदा होने वाले मालको चुप्पे चुप्पे मंगवाले । इसके बाद वैदेहक के भेष में गुप्तचर का काम करनेवाले लोग शत्रु के मुखियोंके पास उस माल को बेचें और सभी इधर उधर यह बात फैलादें कि "शत्रुने ही विजिगीषु को यह माल दिया है" । इसी प्रकार स्वदेश के महापराधी लोगों को अर्थमान (रुपया पैसा तथा इज्जत देकर) द्वारा अपने वशमें कर और उनको शस्त्र विष, तथा अग्नि आदि देकर शत्रुके देश में भेजदे और साथ ही अपने यहां के एक अमात्य को बरखास्त करदे । उसके घरबार को कैद करदे और कहदे कि वह तो मरवादिया गया है । इसके बाद वह अमात्य शत्रु के पास जाय और स्वदेश के गए हुए महापराधी लोगों से क्रमशः एक एक करके मिले । यदि वह उसकी आज्ञा के अनुसार काम करें तो उनको न पकड़वावे । जो अपने आपको असमर्थ कहें उनको शत्रु राजाके सुपुर्द करदे । उनमें से जो राजा का प्रियपात्र तथा विश्वास पात्र हो वह राजा को कहे अमुक मुखिया से आप अपने को बचाइये । इसपर यदि वह उस मुखिया के मरवाने के लिये आज्ञापत्र लिखे तो दोनों ओर से तनखाह पाने वाले लोग उस आज्ञापत्र को बीचमें ही पकड़लें । इस प्रकार उत्साही तथा शक्तिशाली मुखियों के पास आज्ञापत्र लिखवाया जाय कि "अमुक राज्य ग्रहण कर हमारे साथ संधि करलीजिये" । सत्री लोग इस आज्ञापत्र को लेकर दुश्मन के पास पहुंचादें तथा

किसी की छावनी स्वदेशी तथा मित्र की सेनाको नष्ट करदें। इसके बाद गुप्तचर लोग मित्र बनकर अन्य राजाओं को भड़कावें कि "यह आपही को मरवाना चाहता है"॥ जिसका कोई बीर पुरुष हाथी या घोड़ा मर गया हो, गुप्तचरों ने मरवा दिया हो या गायब कर दिया हो उसको सत्री लोग कहें कि "अमुक ने मारा है" और इस प्रकार आपस में उसको लड़ावें। जब वह मरवाने के लिये चिट्ठी दे तो और उसमें लिखे कि "ऐसा ही तुम भी करो जो लाभ होगा वह तुम्हीं को मिलेगा" तो इस चिट्ठी को दोनों रियास्तों से समान रूपसे तनखाह पाने वाले लोग पकड़लें। इससे यदि वह आपस में फट जांय तो उनमें से किसी एक को अपने वशमें करले सेनापति, राजकुमार तथा दंड चारी [सेना को चलाने वाला] लोगों के साथ भी इसी प्रकारका व्यवहार किया जाय।

राष्ट्र संघों को आपस में फाड़ देने का नाम ही भेद है। खुफिया पुलिस के लोग गूढ़ पुरुष] तीक्ष्ण को आज्ञादें और दुर्बल, व्यसनी [पीड़ित, कष्टमें पड़ा] तथा दुर्ग में स्थित शत्रुओं में से जिसको मरवाना सुगम समझें उसको उससे मरवादें। तीक्ष्ण ही एक ऐसा है जो कि संपूर्ण काम शस्त्र विष अग्नि आदि के सहारे करता है और संपूर्ण साधनों से पूरे होने वाले कामों को पूरा करता है।

साम दान दंड भेदका प्रयोग इसी प्रकार कियाजाता है। इनमें से पूर्व पूर्व का प्रयोग सुगम है। साम एक गुना, दान साम के बाद होने से दुगुना, भेद सामदान के बाद होने से तीन गुना और दंड साम दान दंड के बाद होने से चार गुना शक्तिशाली माना जाता है। स्वजातीय शत्रुओं तथा विरोधियों को भी इन्हीं उपायों से शान्त किया जाय। इनमें विशेषता केवल यही है कि—प्रसिद्ध प्रसिद्ध दूतमुख्य (अभिज्ञात दूत मुख्य) स्वभूमिष्ठ (जिनकी अपनी जमींदारी हो) लोगों के पास उपहार लेकर जावें और कहें कि वह लोग अमुक व्यक्ति के साथ संधि कररहे हैं या उसको शत्रु के नाश के लिये प्रेरित कर रहे हैं। यदि वह इस बात पर विश्वास न करे तो उसको कहें कि "आप कष्ट न उठाइये। हमारा मतलब सिद्ध

होगया।" इसी प्रकार दोनों ओर से तनखाह पाने वाले लोग उनमें से किसी एक को यह कह कर उत्तेजित करें कि—"तुम्हारा अमुक राजा बहुत ही दुष्ट है" या जिसका जिसके साथ वैर द्वेष या कलह देखें या जिसको किसी दूसरे से डरता हुआ पावें उसको कहें कि "अमुक व्यक्ति तुम्हारे शत्रु से मिल गया है। इसने पहिले तुमको धोका दिया था। शीघ्र ही तुम संधि करलो। इसके पकड़ने के लिये कोशिश करो"। या उनका आवाह (उपनिवेश बसाना) तथा विवाह द्वारा मेल बढ़ाकर आपस में लड़ने वाले लोगों को और भी अधिक लड़ा देवे। सामंत आटविक, कुलीन तथा कैदी लोगों से उसके राज्य को छिनवा ले। या उनको एक दूसरे के साथ संगठित कर जातीय तथा व्यापारीय संघ, (सार्थ), प्रजा तथा जांगलिक सेना के द्वारा उनके छिद्रों (कमजोर स्थान) पर आक्रमण करवाये गुप्तचर लोग अग्नि विष तथा शस्त्र के द्वारा यही काम करें।

शत्रुओं को जहरीली शराब, शठको पूर्ववर्णित घातक योग, और परभिश्रा जनता को विश्वास तथा प्रलोभन देकर मारे।*

१४५—१४६ प्रकरण ।

अर्थानर्थसंशय विवेचन तथा उनकी उपाय विकल्पज सिद्धि ।

कामादि की अधिकता से राजा की अपनी ही प्रकृतियां कुपित होजाती है। विदेशीय नीति के ठीक न होने से भी यही होता है। इन दोनों ही बातों को राजाकी वृत्ति समझा जाता है। कोप वही है जिस से स्वजन नाराज हो जाय। शत्रु की वृद्धि के

* डाक्टर शामशास्त्री ने इस श्लोक में **परभिश्रा** तथा **आमिल** का अर्थ ठीक न जान कर अर्थ दूसरे रूपसे कर दिया है। इसी प्रकरण में कौटिल्य ने **परमिश्रा** का लक्षण देदिया है अतः इसका अर्थ **गुप्तचर** नहीं हो सकता। "एकामिषद्वयोर्दि वैर बीजमहाहरो:" इत्यादि श्लोक में आमिष का अर्थ मांस न होकर **"एकस्वार्थ"** है। उपरि लिखित अर्थ में प्रलोभन का तात्पर्य एकस्वार्थ रूपी प्रलोभन से ही है।

सम्बन्ध में निम्नलिखित तीन बातें विचारणीय हैं। [१] आपदर्थ। [२] अनर्थ। [३] संशय। *

(१) आपदर्थ। जो अर्थ प्राप्त होने पर शत्रु की वृद्धि करे, या दूसरों को पुनः लौटाया जाय, या क्षय तथा व्यय को बढ़ावे, वह आपत्ति जनक होने के कारण आपदर्थ कहाता है। दृष्टान्त स्वरूप सामन्त के लोग जिस बात को चाहते हों वही बात दूसरे सामन्त के कष्ट में पड़ने से उनको मिल जाय या जो धन शत्रु के लिये हो, या जिस पर अपना स्वाभाविक अधिकार हो गया हो या जिस को पीछे से कुपित होकर पार्ष्णिग्राह ने छीन लिया हो या जोकि आगे चलकर मिलना हो, या जोकि मित्र को नाशकर तथा संधि को तोड़कर प्राप्त किया गया हो और मंडल जिस के विरुद्ध हो उसको आपदर्थ कहते हैं।

(२) अनर्थ। अपने या पराये से भय की उत्पत्ति का नाम ही अनर्थ है।

(३) संशय। उपरिलिखित दोनों बातों में—कहीं अनर्थ तो नहीं है? कहीं यह अर्थ अनर्थ तो नहीं है? कहीं अनर्थ ही तो अर्थ नहीं? इस ढंग के संदेह का नाम ही संशय है। रुपया तथा इज्जत आदि के द्वारा शत्रु की सेना का बुला लेना कहीं अनर्थ तो नहीं? शत्रु तथा मित्र को लड़ने के लिये तैय्यार करने में अर्थ है या नहीं? यही संशय के उदाहरण हैं। इनमें ऐसे संशय के अनुसार काम करे जिससे अर्थ प्राप्त हो।

अर्थ के-[१] अर्थानुबंध, [२] निरनुबंध [३] अनर्थानुबंध और अनर्थ के [४] अर्थानुबंध [५] निरनु बंध, [६] अनर्थानुबंध आदि कुल मिलाकर छ भेद हैं।

---

* डाक्टर शाम शास्त्री ने इस परिच्छेद का भाषान्तर करते समय अर्थ कार्य अर्थ संपत्ति या धन किया है। हमारी समझ में अर्थ का इस परिच्छेद में तात्पर्य स्वार्थ या स्वप्रयोजन से है।

[१] अर्थ अर्थानुबंध । शत्रु को नष्ट कर पार्ष्णिग्राह को अपने वशमें करने का नाम ही अर्थ–अर्थानुबंध (अर्थात् एक स्वार्थ से दूसरे स्वार्थ का प्राप्त होना है) कहाता है

(२) अर्थ–निरनुबंध । दंड [सैन्य] तथा अनुग्रह के द्वारा उदासीन के अर्थ को सिद्ध करना अर्थ–निरनुबंध [वह अर्थ जिसके द्वारा अपने स्वार्थ का सिद्ध होना आवश्यक न हो] कहाता है।

[३] अर्थ–अनर्थानुबंध शत्रु का पूर्ण रूप से नाश करना अर्थ–अनर्थानुबंध [जिससे अनर्थ होने की संभावना हो]कहाता है।

(४) अनर्थ–अर्थानुबंध । शत्रु के पड़ोसी को धन तथा सैन्य (कोश–दंड) द्वारा सहायता पहुंचाना अनर्थ–अर्थानुबंध (वह अनर्थ जिससे अपना लाभ हो] कहाता है।

(५) अनर्थ-निरनुबंध । हीनशक्ति को उभाड़ कर तथा लड़ने के लिये प्रोत्साहित कर स्वयं पृथक् होजाने का नाम अनर्थ निरनुबंध है।

(६) अनर्थ-अनर्थानुबंध । शक्तिशाली राजा को उभाड़ कर या लड़ने के लिये प्रोत्साहित कर पृथक् होजाने का नाम अनर्थ अनर्थानुबंध है।

इन छः अर्थों में पूर्व पूर्व का अर्थ अधिक लाभकर है। कार्य्य करते समय इसी नियम का ख्याल करना चाहिये।

सब ओर से यदि एक साथ ही बहुत से अर्थ प्राप्त हों तो इसको समन्तोऽर्थाप यदि उसकी प्राप्ति में सब ओर से पार्ष्णिग्राह बाधक हों तो इसको अर्थसंशयापद्—यदि पार्ष्णिग्राह को मित्र तथा आक्रन्द (शत्रु के पीछे का शत्रु) का सहारा मिलजाय तो इसको अर्थसिद्धि—यदि सब ओर शत्रुओं का खतरा हो तो इसको अनर्थापद्—यदि शत्रुओं के साथ मित्रों की लड़ाई हो तो इसको अनर्थसंशयापत् और यदि चलामित्र तथा आक्रंद (शत्रु के पीछे का शत्रु) का सहारा मिल जाय तो इसको अनर्थसिद्धि कहते हैं। यदि इधर उधर से प्राप्त होने वाले लाभ में शत्रु बाधक

हो और उसकी बाधा को दूर करने का कोई भी उपाय न हो तो इसको उभयतोऽर्थापद् का नाम दिया जाता है। ऐसी हालत में सब ओर से प्राप्त होने वाले लाभों में उसी अर्थ को ग्रहण करे जिसमें लाभ मालूम पड़े। यदि दो ओर से एक सदृश लाभ मालूम पड़े तो उसी लाभ के लिये यत्न करे जिसमें थोड़े से उपाय से ही लाभ निश्चित हो, जोकि महत्वपूर्ण, समीप तथा आवश्यक हो और जो कि प्राप्त होसकता हो यदि इधर उधर दोनों ओर से अनर्थ हो तो उसको उभयतोऽनर्थापत्–कहते हैं। ऐसी हालत में यदि सभी ओर अनर्थ ही अनर्थ दिखाई पड़े तो मित्रों से सहायता प्राप्त कर स्वार्थ–सिद्धि करे। यदि कोई भी मित्र न हो तो प्रकृतियों [शत्रु प्रकृतियों] में जिसको कमजोर समझे उस पर आक्रमण करदे। दो ओर से आये हुए अनर्थों को ज्याय पर, और सब ओर से आये हुए अनर्थों को मूल पर आक्रमण कर रोके। यदि इससे अर्थ न सिद्ध हो तो सब कुछ छोड़ छाड़ कर भाग जाय। क्योंकि प्रायः यह देखने में आया है कि जीते रहने से पुनः राज्य मिल जाता है जैसा कि सुयात्र तथा उदयन के मामले में होचुका है। यदि एक ओर से लाभ मिलता हो और दूसरी ओर से राज्य जाता हो तो इसको अर्थानर्थापद् कहते हैं। इस हालत में वही अर्थ सिद्ध करे जिससे अनर्थ दूर होता हो। यदि यह संभव न हो तो राज्य के बचाने में प्राणपन से यत्न करे। सब ओर से होने वाले अर्थानर्थापद् का नियम इसीसे जान लेना चाहिये। यदि एक ओर से अनर्थ की और दूसरी ओर से अर्थ प्राप्ति की संभावना हो तो इसको अनर्थार्थसंशय कहते हैं। इसमें पहिले अनर्थ से अपने आपको बचावे। इसके बाद अर्थप्राप्ति की चिन्ता करे। सब ओर से होने वाले अनर्थार्थसंशय का नियम इसीसे स्पष्ट है। यदि एक ओर से अर्थ और दूसरी ओर से अनर्थ संशय हो तो इसको अर्थानर्थसंशय कहते हैं। सब ओर से होने वाले अनर्थार्थसंशय का नियम इसी से अनुमान करलेना चाहिये। इनमें से पूर्व पूर्ववर्ती प्रकृति को अनर्थसंशय से मुक्त करने का यत्न करे। अनर्थ संशय में पड़ने पर जो अर्थ मित्र से सिद्ध होता है वह दंड से कदापि

नहीं। यदि मित्र न हो तो जो अर्थ दंड (सैन्य) से सिद्ध होता है वह कोश (धन) से कदापि नहीं।

यदि समग्र प्रकृति को न बचासके तो उनके कुछ एक भागको ही बचावे। जो भाग संख्यामें अधिक हो, जिनमें तीक्ष्ण तथा लुब्ध वर्ग के लोग न हों या जिस भाग में सार वस्तु हो या बहुत ही अधिक लाभ देने वाले पदार्थ हों उस भाग की रक्षा सबसे पहिले करे। जो संख्यामें कम हो या जिस भाग में कम दाम की चीजें हों या जिनके बचाने में बहुत ही अधिक क्षयकी जरूरत हो उसके संबंध में संधि, आसन या द्वैधीभाव की नीति का अवलंबन करे। क्षय, स्थान तथा वृद्धि में अगले अगले को ही क्रमशः प्राप्त करे। यदि इससे विपरीत बात हो तो क्षयादियों में जिससे भविष्य में लाभ देखे उसी के लिये कोशिश करे। देशके संबंध में भी नियम इसी प्रकार हैं। यात्रा (चढ़ाई) के मध्य या अन्त में आने वाले अर्थ, अनर्थ संशय आदिकों का विचार पूर्ववत् ही करलेना चाहिये। क्योंकि यात्रा (चढ़ाई करना) में यह प्रायः सदा ही बने रहते हैं। जिस अर्थ की सिद्धिमें कल्याण हो, पार्ष्णिग्राह तथा उसके साथियों के नाशकी संभावना हो, क्षय व्यय प्रवास प्रत्यादेय [दूसरे को धन जमीन आदि लौटाना] आदि का सामना न करना पड़ता हो तथा राष्ट्र की रक्षा होती हो उसीकी प्राप्ति के लिये यत्न करे। अपने ही राज्यमें अनर्थ तथा संशय का होना कभी भी सहन न करना चाहिये। यात्रा [चढ़ाई] के बीच में जो अनर्थ तथा संशय पैदा हो उनका उपाय भी इसी ढंगपर करना चाहिये। यात्रा के आदि या अन्त में जो लोग कर्शनीय [दुर्बल करने के योग्य] या उच्छेदनीय [नष्ट करने के योग्य] हों उनको दुर्बल तथा नष्ट कर जिस बात में कल्याण देखे उसको करे। शत्रु की बाधा के भय से अनर्थ या संशय वाली बात की ओर न झुके। जो राष्ट्र संघका नेता न हो उसको चाहिये कि वह यात्रा के मध्य या अन्त में अनर्थ या संशय को प्राप्त करते ही जिस बात में हित या कल्याण समझे उसीको करे। यात्रा को अन्त तक निभाना उसके लिये आवश्यक नहीं है।

अर्थ, धर्म्म काम यह तीन अर्थ के ही भेद हैं। इनमें से पूर्व पूर्व का प्राप्त होना कल्याण कर होता है। इसी प्रकार अनर्थ, अधर्म शोक यह तीन अनर्थ के भेद हैं। इनमें से पूर्व पूर्व का प्रतिकार करना हितकर होता है। क्या यह अर्थ है या अनर्थ है? क्या यह धर्म्म है या अधर्म है? क्या यह काम (कष्ट) है या शोक है? यह तीन संशय के भेद हैं। इनमें से अगले के सिद्ध हो जाने पर पूर्व का ग्रहण करना ठीक है। काल में भी इसी ढंग के भेद तथा नियम हैं। आपत्तियों के भेद तथा नियम भी इसी प्रकार हैं।

पुत्र भ्राता तथा बन्धुओं को साम तथा दान से पक्ष में करना अनुरूपसिद्धि, पौर, जानपद तथा सेनापतिओं [दंडमुख्य] को दान तथा भेद से अनुकूल करना अनुलोमासिद्धि और इससे विपरीत दशा में प्रतिलोमासिद्धि कही जाती है। मित्र तथा अमित्र विषयक सिद्धि को व्यामिश्रासिद्धि का नाम दिया जाता है साम दान आदि उपाय एक दूसरे के साधक हैं। शत्रु के शंकित अमात्यों के साथ साम, वणियों के साथ दान, संघों तथा गुट्टों के साथ भेद तथा शक्तिशालियों के साथ दंड का यदि प्रयोग किया जाय तो द्रव्य उपायों की कुछभी जरूरत नहीं रहती। आपत्तियों के हलके भारी होने के अनुसार १ नियोग, २ विकल्प तथा ३ समुच्चय होते हैं। १ 'इस उपाय के सिवाय और किसीभी उपाय से नहीं'। २ "इसके साथ साथ कदाचित अन्य उपायों से भी" और ३ "इस के साथ साथ अन्य उपायों से भी" सिद्धिप्राप्त होसकती हैं इसको क्रमशः १ नियोग २ विकल्प तथा ३ समुच्चय के नाम से पुकारते हैं। साम दानादि उपायों में एक के चार उपाय किसी तीन के भिन्न भिन्न प्रयोगों को मिलाकर चार, उपाय दोदो के भिन्न भिन्न प्रयोगों को मिलाकर छः उपाय और चारों के संमिलित प्रयोगों को मिलाकर एक ४ उपाय और इस प्रकार कुल उपाय पन्द्रह हैं। इतने ही उनके प्रतिलोम [विरोधी उपाय] उपाय हैं। इनमें से एक उपाय से सिद्धि एकसिद्धि, दो उपायसे सिद्धिको द्विसिद्धि तीन उपाय से सिद्धि को त्रिसिद्धि और चार उपाय से सिद्धिको चतुःसिद्धि कहते हैं। धर्म्म तथा काम अर्थ का मूल है। उनके

लिये अर्थ सिद्धि करना सर्वार्थासिद्धि कहाता है। सिद्धियों के यही भेद हैं।

दैव, अग्नि, उदक, व्याधि, प्रमाद, बुखार (विद्रव) दुर्भिक्ष आदि विपत्तियां तथा आसुरीसृष्टि आपत्ति मानी जाती हैं।

आसुरीसृष्टि यदि अधिक या कम हो या सर्वथा ही न हो उन से बचने के लिये अथर्ववेद में विधान किये गये प्रयोगों को काम में लावे और संपूर्ण काम देवता, ब्राह्मण तथा सिद्धों के अनुसार करे॥

१० अधिकरण।

सांग्रामिक।

१४७ प्रकरण।

स्कंधावार-निवेश।

नायक (नेता), बढ़ई तथा ज्योतिषी (मौहूर्त्तिक) उत्तमभूमि (मकान आदि बनाने के लिये जो भूमि उत्तम हो) में गोल, लंबा या चौकोन छावनी [स्कंधावार] बनावें। उसमें भूमि के अनुसार चार दरवाजे छः मार्ग तथा नौ विभाग बनावे।

जिधर से शत्रु की चढ़ाई का डर हो उधर खाई, शहरपनाह, दीवार, दरवाजे तथा अटारी बनाई जांय। मध्य विभाग के उत्तरीय नवें विभाग में १०० धनुष लंबा तथा ५० धनुष चौड़ा राजा का महल बनाया जाय। पच्छिमी भाग के आधे में अन्तःपुर और अंत में आन्तर्वंशिक सैन्य [अन्तःपुर अध्यक्ष की सेना] के रहने का प्रबंध किया जाय। पूर्व विभाग में उपस्थान [देवस्थान] दक्खिनी भाग में कोश तथा शासन संबंधी दफ्तर (कार्य्यकरण) और इनसे १०० धनुष की दूरी पर खंभे दीवार [शकटमेधी, प्रतती, साल] आदि से घिरे चार चार मकान बनाये जांय। इनसे-पहिले में मंत्री

तथा पुरोहित, दहिने में कोष्ठागार तथा भोजन भंडार, बायें में कुप्यागार [जांगलिक पदार्थों का भंडार] तथा आयुधागार—दूसरे में तनखाह लेने वाले नौकर, घुड़सवार, रथी आदि और बाहर की ओर लुब्धक (शिकारी) तथा चांडाल [श्वगणी], बाजा बजाने वाले तथा आग लगाने वाले, गुप्तचर तथा पहरेदार—रखे जांय। शत्रु के आक्रमण से बचने के लिये कूप गड्ढे तथा कंटीली झाड़ियां बनाई जांय। पहरेदारों के अट्ठारह टोलियां [वर्ग] समय बदल बदल कर पहरा दिया करें। गुप्तचरों के ज्ञान के लिये दिन में ही उनका समय विभाग [दिवायाम] बना दिया जाय।

झगड़ा शास्त्रार्थ, शराब, जलसा [समाज] तथा जुआ आदि रोक दिया जाय। अपनी अपनी मुहरों को सुरक्षित रखने के लिये सबको चेतावनी दे दी जाय। अन्तपाल को कहा जाय कि वह सेनापति के कार्यों तथा सिपाहियों के संबंध में दी गई आज्ञाओं का लेखा लिखा करे।

प्रशास्ता को चाहिये कि वह मजदूरों तथा बढ़इयों को साथ में लेकर आगे आगे चले और स्थान स्थान पर कूआं आदि बनवावे तथा जल का प्रबंध करे॥

१४८—१४९ प्रकरण।

स्कन्धावार का प्रयाण, बलव्यसन, अवस्कंदकाल तथा सैनिक संरक्षण।

घास भूसा लकड़ी पानी के अनुसार गांवों तथा जंगलों की गणना की जाय और उनमें पड़ाव (अध्वनिवेश) डाला जाय। स्थान, आसन (ठहरना), गमन आदि का समय निश्चित कर यात्रा (चढ़ाई) करे। आवश्यकता से दुगुनी रसद साथ में ली जाय। यदि रसद पहुंचाने के लिये जानवर पर्याप्त न हों तो फौजी लोग ही रसद को ढोवें। या पहिले से ही हर पहाड़ पर रसद का प्रबंध किया जाय।

यात्राकाल में सबसे आगे नायक, मध्य में कलत्र (परिवार) तथा स्वामी, पार्श्व में घोड़े, दहिने बायें हाथ बहुमूल्य पदार्थ, व्यूह के अन्त में हाथी तथा प्रसार होने चाहियें। प्रसार से तात्पर्य्य जंगल में पैदा होने वाले पदार्थों से है। स्वदेश से मिलने वाली सहायता वीवध और मित्र से प्राप्त हुई सहायता (सेना) आसार कहाती है। वीवध तथा आसार अपने अपने स्थानों से राजा के साथ मिलने के लिये प्रस्थान करें। स्थान पर जमकर लड़ने वाले अभूमिष्ठ लोगों (जोकि अपना स्थान छोड़ बैठे हों) को युद्ध में पराजित कर देते हैं।

अधम श्रेणी के सैनिक एक योजन, मध्यम श्रेणी के सैनिक डेढ़ योजन और उत्तम श्रेणी के सैनिक दो योजन प्रतिदिन चलते हैं। सैनिकों की चाल देखकर यात्रा [चढ़ाई] करना चाहिये। सेना-पति को सबसे पीछे चलना चाहिये और पड़ाव पर सबसे आगे अपना खेमा गाड़ना चाहिये।

आमने सामने की लड़ाई में मकर से पीछे की लड़ाई में शकट से, पासे पर की लड़ाई में वज्र से, और चारों ओर की लड़ाई में सर्वतोभद्र से आक्रमण करे। यदि रास्ता एक आदमी के चलने लायक हो तो सूची व्यूह का प्रयोग करे। द्वैधी भाव की नीति आलंबन करने पर पार्ष्णि, आसार (सहायक) मध्यम या उदासीन में से सबसे पहिले उसका प्रतीकार करे जो कि शत्रु को आश्रय दे तथा धन धान्य का नाश करे। जिस मार्गमें संकट पड़ने की संभावना हो उसका शोधन करना चाहिये साथही कोश, सैन्य, मित्र, अमित्र, जांगलिक सैन्य, वृष्टि ऋतु आदि की प्रतीक्षा करके आक्रमण करना चाहिये। यदि वह यह देखे कि—शत्रु दुर्ग की रक्षा करने में असमर्थ है, उसकी रसद कम पड़ गई है, उसको भाड़े पर भी सेना नहीं मिल सकती, मित्र की सेना भी उसको सहायता नहीं पहुंचा सकती है, गुप्तचरों की सम्मति जल्दी करने के पक्ष में नहीं है या शत्रु मेरे अभिप्राय को शीघ्र पूरा कर देगा तो—धीरे धीरे चढ़ाई करे। यदि मामला इससे विपरीत हो तो शीघ्र ही प्रस्थान करदे। हाथी, खंभों या नावों के पुल, नाव, लकड़ी

तथा बांस के बेड़े आदि के सहारे नदियों को पार करे। यदि शत्रु ने घाट पर कब्जा कर लिया हो तो हाथी तथा घोड़ों के सहारे नदी को अन्य स्थानसे पारकर सत्र [जंगल, रेगिस्तान आदि] पर कब्जा करले। अपनी सेना को—भयंकर जंगल, निर्जलस्थान, घास भूसा लकड़ी पानी से रहित प्रदेश, कठोर मार्ग, शत्रु का आक्रमण भूख प्यास, रात्रि की थकावट, दलदल, गहरी नदी, घाटी, पहाड़ी, चढ़ाई, उतराई, पगडंडी, पथरीली जमीन, कूच का डंका बजने के बाद तैय्यारी करना या खाने पीने में मस्त रहना, आने जाने की थकावट, ऊंघना, व्याधि, संक्रामक रोग (मरक), दुर्भिक्ष, पदाति अश्वारोही हस्त्यारोही आदियों की बीमारी, तथा सैनिक विद्रोह आदि से बचावे और शत्रु की सेना को नष्ट करे। सेनापति को चाहिये कि वह पगडंडी पर चलती हुई शत्रु की सेना का—आहार, विस्तरा, फैलाव, चूल्हे, झंडी, हथियार आदि से ज्ञान प्राप्त करे तथा अपनी सेना के असली स्वरूप को छिपावे।

यदि किसी को अपने ही देश में लड़ाई करनी पड़े तो उसको चाहिये कि वह किसी नादेय (नदी संबंधी) या पार्वतीय [पहाड़ी] दुर्ग का सहारा ले और उसको पीछे रखकर लड़े या आगे बढ़े।

१५०—१५२ प्रकरण।

कूटयुद्ध, स्वसैन्योत्साहन तथा स्वबल तथा अन्यबल का प्रयोग।

यदि किसी राजा के पास बलवान् सेना हो, शत्रु के षड्यंत्रों तथा कुचक्रों का भय न हो, घातक प्रयोगों का प्रतीकार करचुका हो तो वह प्रकाशयुद्ध में प्रवृत्त हो अन्यथा शकटयुद्ध (कूटयुद्ध) को ही करे सेना के कष्ट या प्रबल आक्रमण के समय में शत्रु को मारडाले। अपनी युद्ध भूमि में रहते हुए अभूमिष्ठ (जो कि युद्ध भूमि में न हो) राजा को नष्ट करदे। या अपनी प्रकृति पर पूर्णरूपसे प्रभुत्व प्राप्तकर राज्यद्रोहियों, दुश्मनों तथा जांगलिकों के द्वारा

शत्रु को यह दिखाये कि "मैं हार गया हूं" "और जब वह इस विश्वास में पड़कर अपना स्थान छोड़दे तो उसका घात करदे। यदि उसकी सेना एकस्थान पर एकत्रित हो तो उसको हाथियों से छिन्न भिन्न करदे। या भागकर धोखादे और जब वह धोखे में तितर वितर हो जाय या संगठित होजाय तो उसको नष्ट करदे। या आगे से आक्रमण कर उसको भगावे या तितर वितर करदे और इसके बाद अश्वारोहियों तथा हस्त्यारोहियों से कतल करवादे। या आगे से आक्रमण कर विषम जमीन में उसको ले आवे और फिर पीछे से नष्ट करदे। या पीछे से आक्रमण कर विषम जमीन में लेआवे और फिर यही काम करे। या पार्श्वसे या इधर उधर से विषम जमीन में लाकर कतल करे। या राज्यद्रोही, दुश्मन तथा जांगलिक आदियों की सेनासे उसको लड़ाकर थका डाले और इसके बाद मारडाले। या बागीकी सेना धोखादे और विजय का उसको विश्वास दिलाकर सत्र के अन्दर उसको कतल करदे। या जब वह व्यापारी, पशुपालक, छावनी आदि के छिन जाने से दुःखित होगया हो तो सावधान होकर उसको मरवादे। रद्दी सेना के रूप में प्रबल सेना लेजाकर शत्रुके वीर वीर आदमियों को कतल करवादे। शत्रुके पशुओं तथा कुत्तों को चुराने के बहाने वीर वीर पुरुषों को इकट्ठा करे तथा उसके बाद उनको मरवादे। या रात में शत्रुको बागियों से लड़ाकर थकादे और जब वह सो जावे तो दिनमें ही कतल करदे। या हाथियों पर कपड़ा तथा चमड़ा चढ़ाकर रात में लड़ाई करे। या सेनाके तैय्यार करने से थकेहुओं को दिनमें मारडाले या संध्याके समयमें कतले आमकरदे।

रेगिस्थान, संकटमय स्थान, दलदल, पहाड़, नदी, घाटी ऊंचीवीची नाव, गौ, शकटव्यूह, धुंध तथा रात आदि सत्र नाम से पुकारे जाते हैं। आक्रमण करने से पूर्व ही कूटयुद्ध करना चाहिये।

संग्राम या धार्मिक युद्ध करने से पूर्व धार्मिक राजा सेनाको किसीएक नियत स्थानपर निश्चित समय में इकट्ठा करे और कहे कि "मैं तुह्मारी तरह प्रजाका नौकर हूं। तुह्मारे साथ ही मिलकर

राज्यका भोग करता हूं। मेरी आज्ञाके अनुसार शत्रुका नाशकरो''। वेदों में भी कहा है कि ''यज्ञों में दक्षिणा आदि देने के पश्चात् यजमान को स्वर्ग में जो स्थान मिलता है वही स्थान शूरवीरों को प्राप्त होता है। इसी के संबंध में यह दो श्लोकभी हैं।

यान्यज्ञसंघै स्तपसा च विप्राः स्वर्गैषिणः पात्रच पश्चयांति।
क्षणेन तानप्यतियांति शूराः प्राणान् सुयुद्धेषु परित्यजन्तः॥
नवं शरावं सलिलस्य पूर्णं सुसंस्कृतं दर्भकृतोत्तरीयम्।
तत्तस्य माभून्नरकं च गच्छेद्यो भर्तृपिण्डस्य कृतेन युध्येत्॥ *

इस प्रकार मन्त्रि तथा पुरोहितों के द्वारा योधा लोगों को उत्साह दिया जाय। कार्तान्तिक (भविष्यद्वाणी करने वाले, शकुन विचारने वाले) लोग यह फैलाकर सैनकों को उत्साहित करें। कि ''दैव सब प्रकार से राजाके अनुकूल है। उसकी सर्वथा विजय होगी''। इसी प्रकार शत्रुके विषय में उल्टी बातें फैलायी जांय और उसके सैनकों को घबड़ा दियाजाय। ''कल युद्ध शुरू होगा'' यह कहकर व्रत धारण करे और रात को शस्त्रसे सुसज्जित वाहन (घोड़ा हाथी आदि) पर सोवे। अथर्ववेद के मन्त्रों से हवन करे। लोग महाराज की विजय के लिये आशीर्वाद दें और प्रार्थना करें। ब्राह्मणों को प्रणाम तथा दक्षिणा से संतुष्ट किया जाय। जो लोग शूरवीर, शस्त्र निपुण, कुलीन, अनुरागी तथा अर्थमान [रुपया तथा इज्जत] से संतुष्ट हो उनकी टोली बनायी जाय और इसमें पिता पुत्र भाई तथा सिरमुंडे लोगोंको संमिलित किया जाय। हाथी, रथ, घोड़ा [राज वाहन] आदि पर राजा सवार होवे तथा शिक्षित घुड़ सवारों के बीचमें रहे। राजाके भेष में कोई दूसरा सेनापति व्यूह बनावे।

---

* ब्राह्मण तथा याज्ञिक लोग स्वर्ग की इच्छा रखतेहुए यज्ञों के द्वारा जिनलोकों को जाते हैं, शूरवीर लोग युद्धमें प्राणों का त्याग करतेही उनलोगों को पहुंचजाते हैं। जो आदमी स्वामी का अन्न खाकर युद्ध नहीं करता है वह नरक में जाता है। और उसको जल से भरा मिट्टी का नया बर्तन तथा कुशाका दुपट्टा नसीब नहीं होता।

सूत तथा मागध कहें कि शूरवीर लोग स्वर्गमें और भीरु लोग नरक में जाते हैं और साथ ही योधाओं के जात कुल संघ काम आदि की प्रशंसा करें। पुरोहित लोग कर्त्तव्य कर्म का उपदेश दें। सत्रिक (गुप्तचर), वर्धकि (बढ़ई) तथा मौहूर्तिक अपने काम की सफलता और शत्रु की असफलता दिखावें। सेनापति सेना को अर्थ तथा मान से संतुष्ट कर कहे कि—राजा के वधमें १००००००, सेनापति तथा राजकुमार के वधमें ५००००, वीरों तथा मुख्यों के वध में १००००, हस्त्यारोही तथा रथी के वधमें ५०००, घोड़े के वधमें १०००, प्यादों के मुखिया के वधमें १००, प्रत्येक शिर का २०, और जीते जी पकड़ने में दुगुना इनाम दिया जायगा। दस दस वर्ग के अधिपतियों को इस पुरस्कार की सूचना दे दीजाय। चिकित्सक लोग शस्त्र यंत्र मलहम पट्टी आदि का सामान और स्त्रियां पुरुषों को उत्तेजित करने के साथ साथ अन्नपानादि का सामान हाथ में लेकर सेनाके पीछे पीछे चलें। अपनी भूमि में सेना का व्यूह बनाते समय इस बात का ध्यान रखा जाय कि फौज का मुंह दक्खिन की ओर न हो, सूर्य सदा पीछे रहे तथा हवा पीठ की ओर से आवे। शत्रु की भूमि में जो व्यूह हो उस पर घुड़सवारों के द्वारा आक्रमण किया जाय।

जो स्थान व्यूह तथा आक्रमण के लिये उपयुक्त न हो, उस स्थान पर जमकर आक्रमण करने से पराजय तथा इससे विपरीत दशा में जय प्राप्त होता है।

आगे पीछे तथा पार्श्व के अनुसार भूमि समा, विषमा तथा व्यामिश्रा नाम से पुकारी जाती है। समाभूमि में दंड तथा मंडल व्यूह और विषमाभूमि में भोग तथा संहत व्यूह बनाये जांय।

विशिष्ट बल वाले शत्रु की शक्ति नष्ट कर संधि करे। समबल वाले यदि स्वयं संधि के लिये प्रार्थना करें तो संधि के लिये तैय्यार होजाय। हीन शक्ति वाले का घात करदें बशर्ते कि वह अपने देश में न हो या उसने आत्मसमर्पण न कर दिया हो।

जो पराजित होने के बाद जीवन की आशा छोड़ कर आक्रमण करता है उसका आक्रमण तथा वेग असह्य होता है। इसलिये

उचित यही है कि पराजित लोगों को बहुत अधिक पीड़ित न किया जाय ।

१५३–१५४ प्रकरण ।

युद्धभूमि, पदाति अश्व रथ हस्ति आदि के काम

[क]

युद्ध भूमि ।

पदाति, अश्वारोही, रथी तथा हस्त्यारोही आदियों को युद्ध तथा निवेश (कैंप, डेरा डाल कर पड़े रहना) के लिये उपयुक्त भूमि मिलना आवश्यक है जो लोग रेगीस्तान, वन, नदी या घाटी तथा स्थल पर युद्ध करते हैं—नीची जमीन या उंची जमीन या रात दिन में एक सदृश लड़ाई लड़ सकते हैं—नदीवाली, पहाड़ी दल दल, झील तथा पानी वाली जमीनों में युद्ध करना जानते हैं, हाथी घोड़े पर चढ़कर शत्रु पर आक्रमण करते हैं—उनके लिये युद्ध की भूमियां तथा समय पृथक् पृथक् होते हैं ।

रथ पर चढ़कर युद्ध करने वालों के लिये वही भूमि उपयुक्त है जो कि—सम, स्थिर, एक सदृश [छेद आदि से रहित], गड्ढा रहित, (निरुत्खातिनी), गाड़ी के पहियों तथा पशुओं के खुरों से मजबूत बनाई गई, धुर को न अटकाने वाली (अनक्षग्राहिणी) पेड़ झाड़ी खंभा, खूंटा बल्मीक डंठल, आदिसे रहित, सूखी और बालू तथा कांटों से शून्य हो । हस्त्यारोही तथा अश्वारोहियों को युद्ध तथा खेमा गाड़ने [निवेश] के लिये सम तथा विषम भूमि चाहिये ।

घुड़ सवारों के लिये वही भूमि उपयुक्त है जिसमें बेल पत्थर कांटे तथा गड्ढे न हों और जिस पर कूदा फांदा जा सके ।

प्यादों के लिये वही भूमि उत्तम है जिसमें पत्थर, ठूंठ, पेड़ बेल बल्मीक आदि भरे पड़े हों ।

हस्त्यारोहियों के लिये वही भूमि उत्तम है जिसमें पहाड़, टीले नदियां छोटे मोटे पेड़, कांटे आदि से शून्य दलदल आदि हों ।

जो भूमि कांटे से रहित समान तथा विस्तृत हो वह प्यादों के लिये-- जो इससे दुगुनी विस्तृत, कीचड़ पानी ठूंठ पत्थर बालू आदि से रहित हो वह घुड़ सवारों के लिये—जो कीचड़ पानी नड़ा, सरकंडा से परि पूर्ण हो तथा जिसमें गोखरू, बड़े बड़े पेड़ों की शाखा आदि न हों वह हस्त्यारोहियों के लिये और जो तलाब आदि से परिपूर्ण खेतों तथा गडढों से रहित हो, तथा जिसपर रथ इधर उधर सुगमता से ही घुमाया जासके वह रथियों के लिये बहुत ही उत्तम होती है। इस प्रकार युद्ध की भूमियों पर प्रकाश डाला जा चुका। संपूर्ण प्रकार की सेनाओं के युद्धों तथा निवेशों (खेमा आदि गाड़ना) के विषयमें भी यही नियम हैं।

[ख]

अश्व रथ हस्ति आदि के काम।

युद्ध भूमि पर इकट्ठे ही रहना, आंधी पानी में लगाम पकड़े रहना, रसद तथा सामिग्री की रक्षा या घात, सेना के नियंत्रण को शिथिल न होने देना, सेनाकी पंक्ति को लंबा करना तथा उसके पक्ष की रक्षा करना, सबसे पहिले आक्रमण करना, शत्रुकी सेना को तितर बितर करना, कुचलना, पकड़ना अपनी सेना को बचाना, मार्ग के अनुसार सेना को इधर उधर ले जाना, कोश तथा राज कुमार को इस स्थान तक पहुंचाना, शत्रु की सेना के पीछे जा पड़ना, भीरू या भागते हुओं का पीछा करना तथा एक स्थान पर संपूर्ण सेना को संगठित करना आदि अश्वारोहियों के काम हैं।

आगे आगे चलना, सड़क बनाना, खेमा गाड़ना, पानी लाने के लिये रास्ता बनाना, सेनाके पार्श्व को बचाना, खड़े होकर लड़ना, पानी को तैर कर पार करना, अप्रवेश्य स्थानों में घुसना, आग लगाना या बुझाना, चतुरंगिणी सेना के एक भाग को जीतना, तितर बितर हुई सेना को एकत्रित करना, संगठित सेना को तितर बितर करना, तकलीफ में बचाना, मारना, डराना, तंग करना, धीरता दिखाना, पकड़ना, छोड़ना, किलेके दरवाजों तथा अटारियों बुर्जों का तोड़ना और खजाना आदि लेजाना हस्त्यारोहियों के काम हैं।

अपनी सेना की रक्षा करना, चतुरंग बल को रोकना, लड़ाई पकड़ना तथा छोड़ना, तितर बितर हुई हुई सेना को एकत्रित करना संगठित सेना को तितर बितर करना, तंग करना, वीरता दिखाना, और भयंकर आवाज करना आदि रथारोहियों के काम हैं।

सब प्रकार के देश तथा काल के अनुसार हथियार पहुंचाना तथा लड़ना प्यादों के काम हैं।

शिविर (लड़ाई के लिये खेमे आदि जहां गाडे गये हों) सड़क, मकान, कुंआ, घाट आदि का संशोधन करना, हथियार कवच, उपकरण, घास, आदि पहुंचाना, घायलों को मय उनके हथियार कवच आदि के साथ उठाले आना आदि मेहनती मजदूरों (विष्टि) के काम हैं।

यदि राजा के पास घोड़ों की संख्या कम हो तो वह बैलों तथा घोड़ों से और यदि हाथी कम हो तो वह गदहों ऊंटो तथा गाड़ियों से उनकी कमी को पूरा करे।

१५५-१५७ प्रकरण।

व्यूहविभाग, बलविभाग तथा चतुरंगसेना द्वारा युद्ध।

दुर्ग से ५०० धनुष दूर पर युद्ध किया जाय। या भूमि के अनुसार सेनापति तथा नायक इतनी दूर पर व्यूह बनावें जोकि आंखों से न दिखाई देसकें। व्यूह में १ शम के अन्तर पर प्यादे, ३ शम के अन्तर पर घुड़सवार, ५ शम के अन्तर पर रथ, १० या १५ शम के अन्तर पर हाथी खड़े किये जांय। या उनको इस ढंग पर खड़ा करें ।जिससे युद्ध करने में सुगमता हो। ५ अरत्नि का १ धनुष होता है। धनुष की दूरी पर ही धनुषधारी, ३ धनुष पर घुड़सवार, ५ धनुष पर रथी और हाथी रखे जांय। पक्ष (सेना के बगल में लड़ने वाले) कक्ष (सेना के अवान्तर में लड़ने वाले) तथा उरस्य (सेना के सामने लड़ने वाले) में ५ धनुष का अन्तर

होना चाहिये घुड़सवार ५ पुरुषों से, हस्त्यारोही तथा रथी १५ पुरुषों से और तीन प्यादे एक घुड़सवार से लड़सकते हैं। तीन तीन रथों को उरस्य पक्ष तथा कक्ष में रखा जाय। इस प्रकार कुल संख्या पैंतालीस होती है। समव्यूह में २२५ घुड़सवार, ६७५ प्यादे, तथा इतने ही घोड़े रथ हाथी के पादगोप [पैरों की रक्षा करने वाले] होते हैं। इसमें दो दो रथ के हिसाब से २१ रथ तक बढ़ाने पर दस प्रकार के विषम व्यूह बनते हैं। जो सैनिक व्यूह में न आसकें उनका एक पृथक् मंडल (अवाप) बना दिया जाय। सेना के मुख्य भाग में रथों का दोतिहाई होना चाहिये। इससे अधिक जो रथ हों उनको उरस्य बना दिया जाय। व्यूह में काम आए हुए रथों का एकतिहाई मंडल (अवाप) में रखना चाहिये। हाथी तथा घुड़सवारों के संबंध में भी यही नियम है। युद्ध की आवश्यकता से अधिक यदि हाथी घोड़े रथ हों तो उनको मंडल में छोड़ देना चाहिये। सेना की अधिकता को ही आवाप या मंडल कहते हैं। इसी प्रकार सेना के एक भाग की अधिकता को अन्वाप, तथा राज विद्रोहियों की अधिकता को अत्यावाप के नाम से पुकारा जाता है। परवाप तथा प्रत्यावाप से जो सेना तीन या चार गुना से आठ गुना तक अधिक हो उसका आवाप [मंडल] बना देना चाहिये। रथव्यूह के सदृश हास्तिव्यूह बनता है। जिस व्यूहमें हाथी घोड़े तथा रथ मिश्रित हों उसको व्यामिश्र व्यूह कहते हैं। जिस व्यामिश्र व्यूह के अन्त में [चक्रान्त] हाथी, इधर उधर [पार्श्व] घोड़े, मुख्य भाग में रथ, उरस्य में हाथी तथा रथ और कक्ष तथा पक्षमें थोड़े हों उसको मध्यभेदी और इससे विपरीत को अन्त भेदी कहते हैं। शुद्ध व्यूह में सान्नाह्य [आक्रमण करने वाले] हाथियों का उरस्य, औपवाह्य [तेज भागने वाले हाथियों का मध्य और काल हाथियों का पक्ष [पार्श्ववर्ती] तथा अश्वव्यूह में कवचधारी घोड़ों का उरस्य और साधारण घोड़ों का कक्ष तथा पक्ष बनाया जाता है। पत्तिव्यूह (प्यादों का व्यूह) में आगे कवचधारी (आवरणी) और पीछे धनुर्धारी होते हैं। जिस व्यूह में—पक्ष में पदाति, पार्श्व में

हाथी, पृष्ठ में रथ और अग्र (पुरस्तात्) में शत्रु के व्यूह के अनुसार व्यूह बना हो उसको द्व्यङ्गबलविभाग कहते हैं त्र्यंगबल विभाग भी इसी प्रकार बनाया जाता है।

हाथी तथा घोड़ों की सेना में भी वही उत्तम है जिसमें सैनिक शक्तिसंपन्न [दंड संपत्] तथा अस्त्र शस्त्र से सुसज्जित हों। प्यादे रथी तथा हस्त्यारोहियों में भी वही अच्छा माना जाता है जिसमें कुल, जाति, वीरता, उमर, शक्ति, वेग, तेज, चातुर्य्य, धैर्य्य, उत्साह [उदग्रता ?], कर्मण्यता [विधेयता] आदि गुण विशेष रूपसे मौजूद हों। उत्तम सेना का—एक तिहाई उरस्य, दो तिहाई पक्ष तथा कक्ष मध्यम सेना का—दोनों भाग अनुलोम अनुसार तथा प्रतिलोम और निकृष्ट सेना (तृतीयसार) का—प्रतिलोम होना चाहिये। इस प्रकार संपूर्ण सेना का उपयोग करना चाहिये। यदि निकृष्ट सेना अन्त में लगायी जाय तो शत्रु का प्रबल आक्रमण होने पर पीछे हटना पड़ता है। इसलिये उत्तम सेना [सारबल] को अग्रभाग में रखकर कोटियों [?] में अनुसार (मध्यम सेना का एक भाग) को रखना चाहिये। इसी प्रकार जघन [?] में तृतीय सार (निकृष्टसेना) को और मध्यमें फल्गुबल [तुच्छ सेना] को स्थापित करना चाहिये। ऐसा करने पर शत्रु का प्रहार सहन करना सुगम होजाता है। व्यूह बनाने के बाद पक्ष, कक्ष तथा उरस्य में से एक या दो से आक्रमण करे और शेष भागों से प्रहार या शत्रु के आक्रमण को रोके। यदि शत्रु की सेना दुर्बल तथा हाथी घोड़े की सेना से रहित हो और अमात्यों तथा राज्य द्रोहियों का कुचक्र उसमें प्रबल हो तो उस पर प्रबल सेना के साथ आक्रमण करना चाहिये। अपनी सेना का जो अंग कमजोर हो उसको अच्छी तरह से पुष्ट करलेना चाहिये। अपने पास सेना उसी ओर रखे जिस ओर शत्रु से नुकसान पहुंचने की संभानवा तथा खतरा हो।

अभिसृत, परिसृत, अतिसृत, अपसृत, उन्मथी, अवधान, वलि, गोमूत्रिकामंडल, प्रकीर्णिका, व्यावृत्तपृष्ठ, अनुवंश, अग्र-भग्नरक्षा, पार्श्वभग्नरक्षा, पृष्ठभग्नरक्षा, भग्नानुपात आदि युद्ध-

सवारों की लड़ाई के नाम हैं । प्रकीर्णिका को छोड़कर अन्य सब तरीके व्यस्त [तितर बितर हुई २] तथा समस्त [संगठित] चतुरंग सेना को नष्ट करने के लिये उपयुक्त हैं । पक्ष, कक्ष तथा उरस्य के संबंध में प्रभंजन [तोड़ना], अवस्कन्दन (भगाना) तथा सौप्तिक (सोते हुए को कुचल कर मार डालना) आदि हाथी की सेना के लड़ने के तरीके हैं । उन्मथी तथा अवधान को छोड़कर अन्य सब युद्ध रथी करता है । अपनी युद्ध भूमि में अभियान (चढ़ाई करना), अपयान (भगाना) स्थित (खड़े रहकर लड़ना) आदि युद्ध करनेमें रथी सेना की जरूरत पड़ती है । प्यादों की विशेषता यह है कि वह सब प्रकार के देश तथा काल में प्रहार कर सकता है और छिपकर शत्रु की सेना का घात कर सकता है ।

सेना के चारों अंगों की दशा के अनुसार ही व्यूह, ओज तथा युग्म बनाया जाता है । दो सौ धनुष तक आगे बढ़ने पर सेना का व्यूह नहीं बिड़गता । इसलिये राजा को चाहिये कि दो सौ धनुष की दूरी पर ही युद्ध करे और व्यूह बिगड़ने पर युद्धसे हट जाय ।

१५८–१५९ प्रकरण ।

दंड भाग मंडल तथा असंहत सम्बन्धी व्यूह और प्रतिव्यूह का स्थापन ।

औशनस के अनुसार—पक्ष, उरस्य तथा प्रतिग्रह और बार्हस्पत्य के अनुसार पक्ष, कक्ष, उरस्य तथा प्रतिग्रह आदि व्यूह के भेद है । इस प्रकार स्पष्ट है कि पक्ष [प्रपक्ष] कक्ष तथा उरस्य एक तरीके से दोनों के ही भेद हैं । १ दंड २ भोग ३ मंडल तथा ४ असंहत व्यूहों के मुख्य मुख्य भेद हैं ।

१. दंड । सेना के सीधे खड़े रहने का नाम दंड है ।

२. भोग । सैनिकों का एक दूसरे के पीछे पंक्ति में खड़े करने का नाम भोग है ।

३. मंडल। सैनिकों को इस ढंग पर खड़े करना कि वह चारों ओर ध्यान देसके मंडल कहाता है।

४. असंहत। छोटे छोटे समूहों में सेना के पृथक् पृथक् खड़े करने को असंहत कहते हैं।

१. दंड व्यूह।

पक्ष कक्ष तथा उरस्य के समान होने का नाम भी दंड है। वही प्रदर कहाने लगता है जबकि कक्ष आगे की ओर बढ़े हों। इसी प्रकार वह पक्ष तथा कक्ष के पीछे हटने पर दृढ़क [दृढ़], दोनों पक्षों के फैल जाने पर असह्य, पक्ष कक्ष को स्थिर रखकर उरस्य से आगे बढ़ने पर श्येन इस से विपरीत चाप, चापकुक्षि, प्रतिष्ठ तथा सुप्रतिष्ठ नाम से पुकारा जाता है। चापपक्ष का ही दूसरा नाम संजय है। यदि वह उरस्य से आगे बढ़ जाय तो विजय, उस का कर्ण तथा पक्ष स्थूल हो जाय तो स्थूलकर्ण, उस का पक्ष तथा स्थूल दुगुना हो जाय तो विशाल विजय और यदि वह पक्ष से आगे बढ़ जाय तो चमूमुख और यदि उसकी दशा इस से उलटी हो तो झषास्य कहा जाता है। सेना को पंक्ति वार एक दूसरे के पीछे खड़ा करना सूची, दो दो पंक्ति में खड़ा करना वलय और चार चार पंक्ति में खड़ा करना दुर्जय कहाता है। दंड व्यूह के यही मुख्य मुख्य भेद हैं।

२. भोग व्यूह।

यदि पंक्ति (भोग) पक्ष, कक्ष तथा उरस्य से विषम हो तो सर्पसारी या गोमूत्रिका, यदि उरस्य में दो दो पंक्ति हों तथा पक्ष स्थिर [दंड] हो तो शकट, इस से विपरीत दशा हो तो मकर और यदि शकट व्यूह में हाथी घोड़े तथा रथ हों तो उस को पारिपतन्तक कहते हैं। भोग व्यूह के मुख्य मुख्य यही भेद हैं।

३. मंडल व्यूह।

पक्ष कक्ष तथा उरस्य को इस ढंग पर गोल [मंडल] खड़ा करना कि उनका आपस का भेद नष्ट हो जाय सर्वतोभद्र, सर्वतो

मुख अप्रतीक तथा दुर्जय कहाता है। मंडल व्यूह के यही मुख्य मुख्य भेद हैं।

४. असंहत व्यूह।

पक्ष कक्ष तथा उरस्य को तितर वितर कर खड़े करने से असंहत व्यूह बनता है। यदि सेना के पांच भाग असंहत हों तो वज्र, चार भाग असंहत हों तो उद्यानक तथा काकपदी और आधे चांद की तरह तीन भाग असंहत हों तो कर्कटकशृंगी नाम से उनको पुकारा जाता है। असंहत व्यूह के यही मुख्य मुख्य भेद हैं।

यदि रथ उरस्यमें, हाथी कक्ष में घोड़े पृष्ठभाग में होंतो उसको अरिष्ट, यदि प्यादे, घोड़े, रथ तथा हाथी एक दूसरे के पीछे हों तो उसको अचल और यदि हाथी, घोड़ा, रथ तथा प्यादे एक दूसरे के पीछे हों तो उसको अप्रतिहत व्यूह कहते हैं।

इनमें— प्रदर को दृढक से, दृढ़क को असह्य से, श्येन को चाप से, प्रतिष्ठ को सुप्रतिष्ठ से, संजय को विजय से, स्थूलकर्ण को विशालविजय से, पारिपतंतक को सर्वतोभद्र से और अन्य संपूर्ण व्यूहों को दुर्जय से तोड़ा जाय। प्यादे, घोड़े, रथों, तथा हाथियों में अगला पहिले को और अधिकांग हीनांग को नष्टकरे।

दस अंग के मालिक को पादिक दशपादिक के मालिक को सेनापति तथा दस सेनापतियों के मालिक को नायक नाम से पुकारा जाता है। वह तुर्ही, शंख, ध्वजा पताका आदिकों से व्यूह में संगठित सैनिकों को इशारा देकर चलावे। सैनिकों को भिन्न २ अंगों में संगठित करने के बाद स्थान, गमन, लौटना, आक्रमण, व्यूह आदियों से देश काल के अनुसारही सफलता प्राप्त होती है।

सैन्य, गुप्त घातक तरीके [उपनिषद्योग], साथ रहकर मारने वाले तीक्ष्ण, जादूगरी [माया], देवसंयोग [देवताओं के साथ मिलना आदि] बैलगाड़ी [शकट], हाथी के गहने, राज्यद्रोहियों का विद्रोह [दूष्य प्रकोप], गउओं का झुंड [गोयूथ], छावनी में आग लगाना (स्कन्धा वार प्रदीपन) सेना के मध्य तथा पार्श्वभाग का नष्ट करना (कोटीजघनघात), दूतभेषधारी गुप्तचरों के द्वारा

पैदा कियेगये झगड़े, किलेमें आग लगाना, किले को छीनलेना, संबंधियों का समुत्थान तथा गदर, जांगलिकों की दुश्मनी—आदि तरीकों से शत्रु को परेशान कियाजाय। धनुष धारियों के द्वारा फेंकागया बाण कभी एक आदमी को मारता है और कभी नहीं भी मारता है परन्तु राजनीतिज्ञ की बुद्धि गर्भ के अन्दर रहने वालों तक को नष्ट करदेती है।

११ अधिकरण।

संघ वृत्त

१६०—१६१ प्रकरण।

भेदोपादान तथा उपांशुदंड।

दंड और मित्र के लाभों से संघका लाभ उत्तम है। संघ से शक्ति प्राप्तकर सामदान से उन लोगों को अपने साथ रखे जो शत्रुओं के विरोधी [अधृष्य] और अपने अनुकूल [अनुगुण] हों और जो अपने से विरुद्ध हों उनको भेद तथा दंड से अपने अनुकूल बना लेवे।

कांभोज, सुराष्ट्र, क्षत्रिय तथा श्रेणी आदि संघ वार्ता [कृषि, पशुपालन तथा वाणिज्य] और शस्त्र की जीविका से तथा लिच्छि-विक, वृज्जिक, मद्रक, कुकुर कुरु पांचाल आदिके संघ राजा शब्द से संतुष्ट रहते हैं।

राजा को चाहिये कि सभी संघों के पास अपने सत्री लोगों को रखे; जो कि संघोंके पारस्परिक द्वेष, ईर्ष्या कलह आदि के कारणों का पतालगा कर उनके क्रमागत भेद को यह कह कर बढ़ावें कि "अमुक व्यक्ति या संघ तुम्हारी निन्दा करता है"। जब दोनों दल एक दूसरे पर क्रुद्ध होजावें तो आचार्य के भेषमें विद्या शिल्प द्यूत आदिका व्यवहार करनेवाले खुफिया लोग या संघ के मुखियों

या कलवारों के भेस में तीक्ष्ण लोग उनको एक दूसरे के विरुद्ध भड़काकर उनमें छोटे छोटे झगड़े पैदा करें। या कृत्यपक्षके सहारे कम हैसियत (हीनाच्छिन्दिक) के लड़कों को बड़ी हैसियत वालों (विशिष्टच्छिन्दिका) की लड़की लेने के लिये उत्साहित करें। या बड़े हैसियत वाले लोग (विशिष्ट) अविवाहित लड़कों को लड़की लेने से रोकें। या कम हैसियत वालों को बड़ी हैसियत वालों के साथ विवाह संबंध स्थापित करने के लिये या दोनों को ही एक दूसरे की बराबरी करने के लिये उभाड़ें। उनसे कहें कि कुल पौरुष स्थान विपर्यास (ऊंची नौकरी प्राप्त होना आदि) तथा उच्च कुल में विवाह करने से ही कम हैसियत के लोग हैसियत वाले होजाते हैं। झगड़ा अधिक बढ़ने पर तीक्ष्ण लोग रात में द्रव्य, पशु मनुष्य तथा शस्त्र आदि से सहायता पहुंचावें। सभी झगड़ों में राजा हीनपक्ष को कोश तथा दंड की सहायता दे और दूसरे पक्ष के घात के लिये प्रेरित करे। जब वह आपस में जुदा जुदा होजांय तो उनको तितर बितर करदे। या सब को एक ही देश में बसाकर उनके पांच पांच या दश दश परिवार (कुल) को जोतने बोने के लिये जमीन दे। राजाशब्द से संतुष्ट होने वाले लोगों के कैदी कुलीनों के राजपुत्र के रूप में उनका शासन बनावे। कार्तान्तिक लोग संघ में यह प्रचार करें कि अमुक अमुक आदमी राजा के लक्षणों से युक्त हैं। संघ के धार्मिक मुखियों को कहें "कि राजा के अमुक पुत्र या भ्राता के साथ होकर आप अपने धर्म का प्रतिपालन करिये।" यदि वह तैय्यार होजांय तो कृत्यपक्ष के वश में करने के लिये उनको कोश तथा दंडसे सहायता पहुंचाई जाय। यदि वह लोग एक दूसरेपर आक्रमण करें तो कलवार के भेष में रहने वाले गुप्तचर मैनफल के रस में भरे शराब के सौ सौ घड़े उनको यह कहकर देदेवे कि स्वर्गमें गये हुए लड़कों तथा स्त्रियों के लिये यह नैषेचानिक है (अर्थात् उनको तृप्त करता है) चैत्य मंदिर आदि के दरवाजों पर सत्रिलोग गिरी रखी चीज़ सोना, मोहर, सोने के बर्तन आदि रखें और संघ को आताहुआ देखकर राजकर्मचारियों को सूचना देवें कि

यह चीज़ अमुक संघ के हाथ में बेचदीगई हैं। इसी प्रकार पशुओं का दिया जासकता है। संघ के पशुओं को या उनके गहने निशानी आदि को लेकर संघ के मुखिया को देदेवें। इसके बाद संघको कहें कि "यह चीज अमुक मुखिया को देदीगई है"। छावनी तथा जांगलिकों में भी इसी प्रकार भेद पैदा किया जासकता है।

सत्री संघ के मुखियाके जिस लड़के को उभंगी तथा उत्साही देखे उसको कहे कि—"तुम अमुक राजा के लड़के हो। तुम को शत्रु के भयसे यहां रख छोड़ागया है"। यदि उसको इसबात में विश्वास आजाय तो राजा उसको कोश तथा दंड से सहायता देवे और संघों के साथ लड़नेके लिये प्रेरित करे। जब राजा अपना मतलब सिद्ध करले तो उसको देश निकाला देदे।

बंधकिपोषक (रंडी बनाने के खातिर लड़की पालने वाले), प्लवक नट, नर्तक, सौभिक आदि लोग संघके मुखियों को खूबसूरत औरत के द्वारा उन्मत्त करें। इसके बाद औरत को दूसरे के पास भेजकर कहें कि संघके अमुक मुखिया ने उस औरत को जबरन अपने पास रखलिया है। जब उनकी आपस में लड़ाई होजाय तो तीक्ष्ण लोग अपना काम करें और कहें कि "अमुक कामी इस प्रकार मार डाला गया"। या वह औरत ही उसको कहे कि "अमुक संघ का मुखिया मुझको तुम्हारे पास नहीं आने देता है। मैं तो जी से तुमको ही चाहती हूं। जबतक वह जीता है। तबतक मैं तुम्हारे पास नहीं आसकती हूं"। यह कहकर उसके मरवाने का प्रबंध करे। या जबर्दस्ती भगाई गई औरत उपवन या क्रीड़ागृह में तीक्ष्ण लोगों से रातके अन्दर उसको मरवादे। या स्वयं उसको जहर देकर खतम करदे और लोगों में यह फैलादे कि अमुक मुखिया ने हमारे प्रिय को मार डाला है। या सिद्ध के भेस में गुप्तचर उसको सांवननिकी औषधि (वाजीकरण संबंधी औषधि) के साथ जहर देदें और उनके भाग जाने पर सभी लोग इधर उधर कहना शुरू करें कि अमुक शत्रु ने इसको मरवा दिया है। या गूढ़ाजीवा [गुप्तचरका एकभेद] तथा योग स्त्रियां [गुप्त चर का एक भेद] राज निक्षेप के लिये आपस में लड़ना शुरू करें और

इसप्रकार संघ के मुखियों को आपस में लड़ने के लिये कौशिक [रंडी विशेश] नर्तकी तथा गायना [गाने वाली] स्त्रियों के घरों में मुखिया लोग जब निश्चित होकर बैठे हों उस समय रात्री समागम के बहाने तीक्ष्ण लोग उस मकान में घुसें तथा उनको मार डालें या बांधकर लेजावें। सभी लोग जिस संघके मुखिया को स्त्री लोलुप देखें उसको कहें कि—"अमुक गांव में एक दरिद्र परिवार है। उसकी जमींदारी छिन गई है। उसकी स्त्री बहुत ही खूब सूरत है। तथा राज रानी होने के योग्य है। उसको तुम छीनलो" जब वह सचमुच यही करे तो सिद्ध के भेष में गुप्तचर आध महीने के बाद राजद्रोहियों के गुट्ट के मुखिया को लोगों के बीच में कहे कि "इस ने मेरी मुख्य स्त्री, साली, बहिन या लड़की को अपने पास रख लिया है"। यदि संघ उसको पकड़कर दंड देना चाहे तो राजा संघ का साथ देवे। तीक्ष्ण लोग सिद्ध भेष धारी गुप्तचरों को सदा ही रात में इधर उधर भेजा करे। यह लोग आपस में एक दूसरे को यह कहकर बदनाम करें कि "अमुक ने ब्राह्मण की स्त्री को खराब किया है"। या कार्तान्तिक लोग किसी खूबसूरत लड़की के विषय में—जिसकी कि दूसरे के साथ सगाई होगई है—मुख्य को कहे कि "इसकी लड़की के जो लड़का होगा वह राजा बनेगा या इसकी लड़की राजपत्नी बनेगी। इसको किसी न किसी तरीके से अपने काबू में करो"। जब तक वह काबू में न आवे तब तक उसको उत्तेजित करे। उसके प्राप्त होने पर झगड़ा तो स्वभाविक ही है। इसी प्रकार भिक्षु की स्त्री को अतिशय चाहने वाले मुख्य को कहे कि "अमुक मुखिया ने तुम्हारी स्त्री को फंसाने के लिये मुझ को भेजा है। मैं तो उस के डर के मारे पत्थर हो गया हूँ। तुम्हारी स्त्री सर्वथा निर्दोष है। तुम इसका छिपे छिपे बदला निकालो। मैं भी तुह्मारा साथ दूंगा"। इस ढंग के झगड़े के मामलों में यदि झगड़ा स्वयं ही उत्पन्न हो गया हो या तीक्ष्ण लोगों ने उसको पैदा कियाहो तो राजाको चाहिये कि वह हीन या दुर्बल पक्षको कोश दंड के द्वारा सहायता पहुंचावें।

और दुश्मनों तथा राजद्रोहियों से लड़ावे या उसको दूसरी भूमि में भेजदे। संघों के साथ भी इसी नीति का अवलंबन किया जाय। संघोंको भी एक प्रकार का राजा ही समझना चाहिये। इस लिये उनके आक्रमण से राजा को सदा ही अपने आप को बचाना चाहिये।

संघ के मुखिया को चाहिये कि वह संघके सभ्यों के साथ प्रीति तथा न्याय के साथ व्यवहार करे। इन्द्रियों को वशमें रखकर तथा लोगों को अपने साथ में लेकर सबके चित्त के अनुसार काम करे।

१२. अधिकरण।

आबलीयस।

१६२ प्रकरण।

दूत के काम।

the work of a messenger

दुर्बल राजा पर यदि कोई बलवान् राजा आक्रमण करे तो वह अपने पुत्र पौत्रों को उसके आधीन कर बेंत की तरह उसके सामने झुक जावे। भारद्वाज का मत है कि जो बलवान् के सामने झुकता है, एक तरह से वह साक्षात् इन्द्र को प्रणाम करता है। विशालाक्ष का विचार है कि पूरी तैय्यारी के साथ बलवान् के साथ लड़ाई करे। पराक्रम से बहुत से कष्ट नष्ट होजाते हैं। क्षत्रिय का धर्म्म भी तो यही है। युद्ध में जीत हार तो हुआ ही करती है। इससे विपरीत कौटिल्य का मत है कि जो लोग सब ओर सिर झुकाया करते हैं वह कुलैडक (नदी के किनारे के बकरे) की तरह निराशा में ही जीवन बिताते हैं। यदि वह युद्ध करें तो उनकी वही गति हो जो कि विना नाव के समुद्र को तैरने वाले की गति होती है। इसलिये उचित तो यह है कि अविभेद्य दुर्ग का सहारा लिया जाय या

उसी के सदृश किसी दूसरे बलवान् राजा का आश्रय ग्रहण किया जाय। (१) धर्मविजयी (२) असुरविजयी (३) लोभविजयी के भेद से विजयी तीन प्रकार के हैं।

(१) धर्मविजयी। धर्मविजयी वही है जो कि नम्रता मात्र से संतुष्ट होजाय अतः सबसे पहिले उसी का सहारा लिया जाय।

(२) लोभविजयी। जो अपने शत्रुओं से डरे तथा भूमि द्रव्य आदि पाकर संतुष्ट होजाय वह लोभविजयी कहाता है। ऐसे आदमी को रुपया पैसा देकर अपना मित्र बनाया जाय।

(३) असुरविजयी। जो भूमि द्रव्य पुत्र स्त्री आदि के ग्रहण के साथ साथ जान भी लेना चाहे उसको असुरविजयी कहते हैं। इसलिये दुर्बल राजा को चाहिये कि भूमि द्रव्य आदि देकर उसको जितना दूर रखसके रखे।

यदि इनमें से कोई उस पर आक्रमण करना चाहे तो उसको संधि, कूट युद्ध मंत्र युद्ध आदि के द्वारा रोके। शत्रु के पक्ष को साम तथा दान से, अपने पक्ष को भेद तथा दंड से, और शत्रु के दुर्ग, राष्ट्र तथा छावनी को जहर शस्त्र आग आदि का प्रयोग करने वाले गुप्तचरों से अपने वशमें करे। उसके पार्ष्णि पर प्रभुत्व प्राप्त करे। जांगलिकों से उसके राज्य को नाश करवाये और कैदियों तथा कुलीनों से उसको छिनवाये। इस ढंग के नुकसान पहुंचाने के बाद अपने दूत शत्रु के पास भेजे या यों ही संधि करले। यदि वह इस पर भी न माने तथा आक्रमण करे तो अपने कोश तथा दंड का चौथाई भाग एक दिन के अन्दर ही देने की बात कहकर संधि की प्रार्थना करे।

दंडसंधि। यदि शत्रु दंडसंधि [सेना लेकर संधि] करने के लिये तैय्यार हो तो रद्दी घोड़े हाथी तथा विषैली चीज़ें देकर संधि करले।

पुरुषसंधि। यदि वह पुरुषसंधि [योग्य २ मनुष्यों को लेकर संधि क०] करने के लिये तैय्यार हो तो राजद्रोहियों, दुश्मनों तथा जांगलिकों को उस के पास भेजदे। उन का अध्यक्ष किसी

विश्वासपात्र व्यक्ति को बनावे। तीक्ष्ण लोगों की सेना उसको देदेवे। बेइज़्ज़त लोगों को इज़्ज़त देकर या राज्य भक्त ताल्लुकेदार (मौल) को उसके पास भेजे जोकि उसको कष्ट के समय में नुकसान पहुंचावे। सारांश यह है कि उन लोगों को उसके पास भेजे जोकि दोनों के लिये खतरनाक हों और शत्रु के साथ हों जिन को नष्ट हो जाने पर (उभय विनाश) उसका कल्याण हो।

कोशसंधि। यदि वह कोशसंधि चाहे उसको ऐसे बहुमूल्य पदार्थ जिनका कोई भी खरीदार न हो या युद्ध के लिये अनुपयोगी जांगलिक पदार्थ उसके सुपुर्द करे।

भूमिसंधि। यदि वह भूमिसंधि चाहे तो उस को ऐसी भूमि दे जो कि दूसरे की हो [प्रत्यादेया], या जिस पर दुश्मन या निस्सहाय लोग बसे हों या जिस के संभालने में भयंकर क्षय तथा व्यय का सामना करना पड़े।

सर्वस्वसंधि। यदि वह सर्वस्व लेकर सर्वस्वसंधि संधि करना चाहे तो राजधानी को छोड़ कर सब कुछ उस के सुपुर्द कर दे।

दुर्बल को चाहिये कि बलवान् राजा को वही चीज़ दे जोकि उसके पास न रह सकती हो या जिस को कोई दूसरा लेजाना चाहता हो। अपने प्राण की रक्षा प्रत्येक उपाय से करे। धन का क्या?। धन तो अनित्य है। उस के लिये बहुत सोचना ठीक नहीं है।

१६३ प्रकरण। Battle Intrigue

मंत्र युद्ध।

यदि वह संधि करने के लिये न तैय्यार हो तो उसको कहे कि—षड्वर्ग [काम क्रोधादि] के वशमें होकर अमुक अमुक राजा नष्ट होगये। आप उन राजाओं का मार्ग न ग्रहण करिये जिन को अपनी इन्द्रियों पर कुछ भी वश न था। आप धर्म्म तथा अर्थ के

अनुसार काम करिये। उनका साथ न दीजिये। वह उपर से दोस्त हैं और अन्दर से दुश्मन हैं जो कि आप को साहस, अधर्म्म तथा अर्थातिक्रम के लिये उपदेश देते हैं। जीजान छोड़कर लड़ने वाले शूरोंके साथ युद्ध करने को साहस, दोनो ओर से ही लोगों के नष्ट होने का नाम अधर्म्म और हाथ में आईहुई चीज को न लेवे तथा अच्छे दोस्त को छोड़ने का नाम अर्थातिक्रम है। अमुक राजा के बहुत से मित्र हैं। जो कि उसको अर्थ द्वारा सहायता देंगे। वह उनसे सहायता प्राप्तकर आप पर सब ओर से चढ़ाई करदेगा। मध्यम तथा उदासीन मंडल उसके साथ है। आपतो अकेले पड़-गये हैं। वह तो आपके लड़ाई में पड़ने की प्रतीक्षा ही कररहे हैं। और सोचरहे हैं आपका क्षय तथा व्यय हो। आप के मित्र जुदा होजांय। जब आप का कोई सहारा न रहेगा। तो आपको सुगमता से ही नष्ट करसकेंगे। इसलिये आप को दुश्मनों की बातों में न आना चाहिये और दोस्तों की बातों की इसप्रकार बेकदरी न करनी चाहिये। दोस्तों को परेशान करना और दुश्मनों को लाभ पहुंचाना आपके लिये ठीक नहीं मालूम पड़ता। आप क्यों अपनी जान खतरे में डालरहे हैं तथा अनर्थ अपने सर ले रहे हैं।

यदि वह इसपर भी आक्रमण ही करे तो उसके प्रकृतियों का बागी बनादेवे। उन्हीं उपायों को काममें लावे जिनपर सन्धवृत्त तथा योगवामन नायक प्रकरण में प्रकाश डालाजाचुका है। तीक्ष्ण तथा रसद [जहर देने वाले] लोगों को उन उन स्थानों पर पहुं-चावे जिनकी रक्षा करना 'आत्मरक्षितक' प्रकरण में आवश्यक प्रकट कियागया है। बन्धकीपोषक (लड़कियों को रंडी बनाने के लिये पालने वाले लोग) लोग खूब सूरत जवान औरतों से दुश्मन की सेना के सेनापतियों को उन्मत्त करवायें। जब किसी एकस्वामी पर बहुत से आशिक होजांय तो उनको आपस में लड़ादे। जो पक्ष पराजित होजाय उसको भागजाने की सलाह दें या अपने साथ मिलजाने के लिये कहें।

सिद्ध के भेष में गुप्तचर, कामी सेनापतियों को सांवननिक औषधि (वाजी करण करने वाली दवाइयां) में जहर मिलाकर देवें।

वैदेहक (व्यापारी) के भेष में गुप्तचर कामिनी राज रानी के पास रहने वाली दासी को रुपया पैसा दें तथा अपने जालमें उसको फंसावें इसी प्रकार कुछ लोग नौकर का भेष बनाकर उसको कहें कि अमुक जहर तुम वैदेहक के भेष में आने वाले व्यक्ति को देदेओ। यदि वह यह मंजूर करले तो उसको धीरे धीरे राज रानी तथा राजा को भी जहर देने के लिये प्रेरित करे। कार्तान्तिक (ज्योतिषी) के भेषमें गुप्त चर परंपरा से महामात्र पद पर नियुक्त व्यक्ति को कहें कि आपमें तो संपूर्ण लक्षण राजा होने के हैं। इसके बाद उसकी स्त्री भिक्षुकी का भेष बनाकर महामात्र की स्त्री से कहे कि—तुम्हारे जो लड़का होजायगा। या वही भिक्षुकी स्त्री के भेष में पंहुच कर महामात्र को कहे कि—राजा मुझको पकड़ लेगा। परि व्राजका (सन्यासिनी) ने आपके पास अमुक चिट्ठी गहना आदि भेजा है। इसी प्रकार सूद (दाल बनाने वाला) तथा अरालिक (पाचक) के भेष में गुप्तचर उस महामात्र को जहर देने के उद्देश्य से जाकर कहे कि महाराज ने आपके खाने के लिये अमुक वस्तु आपके पास भेजी है। वैदेहक लोग इस वस्तु को मार्ग में ही छीनकर माहामात्र से कहें कि कि देखो राजा तुमको मरवाना चहाता है। तुम लड़ाई के लिये तैय्यार हो जाओ। कार्य्य अवश्य ही सफल हो जायगा। इस प्रकार एक दो या तीनों उपायों से महामात्रों को देश छोड़ने के लिये या राजा पर चढ़ाई करने के लिये प्रेरित करे।

शत्रु के दुर्गों में रहने वाले शून्यपालों (उजाड़ जमीन के प्रबंध कर्ता) की ओर से सत्री नागरिकों तथा ग्रामीणों को कहें कि शून्यपाल ने राजकर्मचारियों तथा फौजों को कहा है कि—राजा भयंकर तकलीफ में पड़गया है। अब उसका जीते जी लौटना असंभव है। जबर्दस्ती के द्वारा धन इकट्ठे न करो। नहीं तो तुमको मरवादिया जायगा। जब सब लोग इकट्ठा हो जांवे तो तीक्ष्ण उनको तथा उनके मुखियों को जहर देदेवें मारडालें तथा कहें कि—जो लोग शून्यपाल की आज्ञाका उल्लंघन करते हैं उनके साथ यही व्यवहार किया जाता है। इसके बाद वही लोग शून्यपाल के स्थान पर खून से लथ पथ हथियार हथकड़ी संपत्ति आदि फेंक

अ.वें। इसपर सत्री लोग सब ओर शोर मचादें कि "शून्यपाल लोगों को मरवाता है तथा लूटता है"। इसी प्रकार प्रजाको समाहर्ता के विरुद्ध करदिया जाय। गांवों के बीचमें रात के अन्तर तीक्ष्ण लोग कहें कि "जो लोग जनपद में पाप करते है उनके साथ यही व्यवहार किया जाता है"। इस पर यदि जनपद के लोग भड़क जावें तो उनके द्वारा समाहर्ता को मरवा देवे। उसके स्थान पर किसी कुलीन या कैदी को नियुक्त करे।

शत्रु राजा के विषय में झूठी मूठी खबरें उड़ाकर तथा उस के तकलीफ में पड़जाने को प्रगट कर गुप्तचर लोग अन्तःपुर, पुरद्वार [शहर का मुख्य दर्वाजा], द्रव्य तथा धान्यभंडार आदि में आग लगा दें और लोगों को मारें।

१६४–१६५ प्रकरण।

सेनापतियों का घात तथा राष्ट्रमंडल का प्रोत्साहन।

राजा [शत्रु राजा] तथा राजवल्लभों (दर्बारियों) के पास रहने वाले सत्रि [गुप्तचर] पदाति अश्वारोही रथी तथा हस्त्यारोही सेना के मुखियों को दोस्ती में बात करते करते कहें कि आप लोगों से राजा नाराज है। जब वह लोग किसी एक स्थान पर इकट्ठे हों तो तीक्ष्ण लोग रात के पहरियों से अपने आप को बचाकर उनके पास जावें और कहें कि "राजा ने आप को बुलाया है। चलिये"। ज्यों ही वह चलने के लिये बाहर निकले उनका मार डाला जाय। सत्रि लोग चारों और यह फैलावें "राजा की आज्ञा से ही यह किया गया है"। प्रवासित लोगों से सत्रि लोग कहें कि—हम आप को सलाह देते हैं कि यदि आप अपनी जान बचाना चाहें तो यहां से भाग जांय। यदि किसी को राजा ने मांगने पर कोई चीज़ न दी हो तो सत्रि लोग उस से कहें कि—राजा ने शून्य पाल से यह बात कही है कि अमुक अमुक व्यक्ति हम से वह वस्तु मांगता है जोकि उस को न मांगना चाहिये था हमारी आज्ञा के अनुसार

शत्रुओं के गुट्ट के सहारे उस से उस वस्तु को छीन लो। इस के बाद पूर्ववत् काम करे। यदि राजा ने किन्ही को मांगते ही चीज़ दे दी हो तो सत्री लोग उनको कहें कि—राजा ने शून्यपाल से कहा है कि अमुक अमुक व्यक्ति ने अयाच्य वस्तु हम से मांग ली है। विश्वास दिलाने के उद्देश्य से ही हमने उनको वह वस्तु दी है। तुम शत्रुओं को साथ में लेकर उसके छीनने की कोशिश करो। इस के बाद पूर्ववत् काम करे। जो लोग राजा से याच्य वस्तु को न मांगे उनको सत्रि लोग कहें कि—राजा ने शून्यपाल से कहा है कि--"अमुक-अमुक व्यक्ति हम से याच्य वस्तु भी नहीं मांगता है। इस से अधिक और क्या बात हो सकती है क्योंकि वह अपने दोषों से ही डरते रहते हैं। उन से हमारा पीछा छुड़ाओ"। इस के बाद पूर्ववत् काम करे। कृत्यपक्ष (शत्रु के पक्ष में ही जाने वाले लोग) के लोगों के साथ इसी प्रकार व्यवहार किया जाय।

राजा के पास रहने वाला सत्री राजा को कहे कि—तुम्हारा अमुक महामात्र शत्रु के आदमियों के साथ बातचीत करता है। यदि उसको इस बात पर विश्वास आजाय तो कुछ एक बागियों को शत्रु का प्रतिनिधि प्रगट कर पेश करदे और कहे कि देखो यह बात ऐसी है।

सेनापतियों, मुखियों तथा प्रकृति के प्रधान प्रधान पुरुषों को भूमि हिरण्य आदि की लालच देकर अपने ही आदमियों के साथ लड़ा दिया जाय या दूसरे देश में चले जाने के लिये कहा जाय। यदि सेनापति का कोई लड़का किसी समीप के दुर्ग में रहता हो तो उसको सत्रि लोग कहें कि—तू अब समर्थ होगया है। तुझको यहां पर योंही बन्द करके रख छोड़ा है। तू चुप बैठा है? आक्रमण कर राज्य को संभाल ले। नहीं तो तुझको युवराज मरवा डालेगा। इसी प्रकार किसी कैदी कुलीन को हिरण्य का लालच देकर कहा जाय कि—शत्रु के सेना की अन्तरीय शक्ति को या उसकी सीमा पर रहने वाली सेना के एक भाग को नष्ट करदे। इसी प्रकार जांगलिकों को भड़काकर उसके राज्य का सत्यानाश करवादे। या पार्ष्णिग्राह को कहे कि—"मैं ही तुम्हारा पुत्र हूं। मेरे

नष्ट होते ही राजा सबको डुबा देगा" या यह कहे कि—"आओ आपस में मिलकर हम तुम चढ़ाई करें।" जब वह इकट्ठे होजांय तो उनको कहे कि "अमुक राजा मुझको नष्ट कर तुम सब लोगों को नष्ट करेगा। तुमको सावधान होजाना चाहिये। मैं तुम्हारा ही कल्याण चाहता हूं।"

पड़ोसी शत्रु के खतरों तथा आक्रमणों से बचने के लिये राजा को चाहिये कि मध्यम उदासीन राजा को सर्वस्व तक देकर अपने साथ मिलाले॥

१६६–१६७ प्रकरण।

शस्त्र, अग्नि तथा रस का प्रयोग। वीवध, आसार तथा प्रसार का बध।

दुर्गों में वैदेहक (व्यापारी), गांवों में गृहपति (गृहस्थ), और जनपद-संधियों में गोरक्षक या तापस के भेष में गुप्तचर सामन्त आटविक या अवरुद्ध (कैदी) कुलीन के पास पण्यागार (व्यापारीय द्रव्य उपहारके रूपमें) भेजकर कहें कि—"आप इस देश को लेलें"। यदि वह लोग देश जीतने के लिये आजावें तो दुर्गमें रहने वाले गूढ़ पुरुष उनका सत्कार करें और उनको प्रकृति के छिद्रों (प्रकृ-च्छिद्र) का ज्ञान करावें। और उनको साथ मिलाकर आक्रमण करें या स्कन्धावार [छावनी] में शौंडिक (कलवार), के भेष में रहने वाले गुप्तचर अभित्यक्त (परित्यक्त) पुत्र का अवस्कंदनकाल (युद्धसमय) में नैषेचनिक (मंगलार्थ अभिषेक) के बहाने मदन-रसमिले हुए सैकड़ों शराब के घड़े दें। या पहिले दिन शुद्धमद्य या माद्य (नशा दिलाने वाला) मद दे और दूसरे दिन जहर मिला मद देदें। या दंडमुख्यों (सेनापति) को शुद्ध मददें और जब नशा आवे तो विष मिला मद पिलादें। या दंडमुख्य भेषधारी खुफिया "अभित्यक्त पुत्र वाले तरीके को काममें लावे।

पक्कमांसिक [पका हुआ मांस बेचने वाला], औदनिक [भात बेचने वाला], शौंडिक या आपूपिक [हलवाई] भेषधारी गुप्त-

चर आपस में मिलकर यह शोर मचावें कि फसल की अमुक चीज यहां पर बड़ी सस्ती मिल रही है। यदि शत्रु के आदमी उन चीजों को लेने आवें तो जहर मिलाकर उन चीजों को उनके हाथ बेच देवें। या स्त्री तथा लड़के जहरीले वर्त्तनों में व्यापारियों से शराब दही घी तेल आदि खरीदें और कहें कि इसी कीमत पर कुछ और अधिक दो। जब वह न दें तो उन चीजों में उल्टा दें। वैदहक (गुप्तचर) या व्यापारी लोग हाथी घोड़ों के घास तथा चारे में जहर मिलादें। मजदूर लोग (कर्मकर के भेष में गुप्तचर) जहर से मिली घास बेचें या पुराने गोवाणिजिक [गाओं के व्यापारी] शत्रुओं की चढ़ाई समय मोहस्थानों (भूलभलइयां) में गौ बकरी तथा भेड़ के झुंडों को—या (सींगों में छछूंदर का खून लगाकर) बदमाश घोड़े गदहे ऊंट भैंस आदियों को—या शिकारी तथा बहेलिये पिंजड़ों से शेरों तथा चीतोंको--या सपेरे बिशैल सांपो को—या हस्थिजीवी हाथियों को छोड़देवें। या अग्निजीवी इधर उधर आग लगादें। विद्रोही अमित्र तथा आटविक [गुप्तचर लोग] या तो पीछे से उनको कतल करदें या चढ़ाई करने में रुकावटें डालें या बनमें छिपकर शत्रु सेनाके अन्तिम भाग (प्रत्यंतस्कंध) को पकड़कर कतल करदें या-- वीवध स्वदेशी सेना, आसार (मित्र की सेना तथा प्रसार जांगलिकों की सेना के पगडंडीपर पहुंचते ही पहिले से ही नियत कियेहुए संकेत के अनुसार रातमें युद्ध करें और भयंकर रूप से तुर्ही बजाकर शोर मचावें कि—अबतो हम देशमें घुसगये। हमने राज्य छीन लिया।—या जब गड़ बड़ मच जाय तो भीड़में ही राजा के निवास स्थान में घुसजाय और राजा को कतल करदें। या म्लेच्छ, आटविक तथा सेनापति दंडचारी के भेषमें गुप्तचर अकेले में पाकर या सत्र, (खतरनाक स्थान) स्तंभ बाट आदि स्थानों में छिपकर उसको चारोंओर से घेरकर या शिकारी लोग गुप्तचर गुप्त तरीकों से चढ़ाई की भीड़ में उसको मारडालें। या पगडंडी (एकायन), पहाड़ स्तंभवाट, खन्जन तथा जल के बीच में अपने देश के सैनिकों के द्वारा उसको कतल करदे। या नदी, झील, तालाब के बांध तथा पुलको तोड़कर पानी

की बाट में उसको बहादे। या धान्वन, घन तथा नदीके दुर्गमें रहते ही उसको योग अग्नि तथा धूम से उसको नष्ट करदे। अर्थात् जब वह संकट में पड़े तो उसको आगसे, धान्वन दुर्ग (पानी आदि से रहित रेगिस्तान का दुर्ग) में फंसे तो उसको धूम से, घरमें रहे तो योग (जहर) से और पानी में घुसे तो उसको खूनी मगर तथा पनडुब्बियों [उदकचरण] के द्वारा तीक्ष्ण लोग मरवादें। यही बात समझी जाय जबकि वह मकान में आग लगजाने के कारण भागता हो।

योगवामन तथा **योग** आदियों में से किसी भी **योग** के द्वारा उपरिलिखित स्थानों में ज्यों ही शत्रु फंसे उसको नष्ट करदिया जाय।

१६८—१७० प्रकरण।
योगातिसंधान दंडातिसंधान तथा एकविजय।

चढ़ाई करने के समय जिन मन्दिरों यज्ञशालाओं में शत्रु विशेष रूप से आता जाता हो उनमें नाशक प्रयोगों [योग] को काम में लावे। ज्यों ही शत्रु मन्दिर में घुसे उस पर यंत्र के सहारे गुप्त दीवार या चट्टान गिरादे, या किवाड़ को या भीत में छिपाकर रखे या किसी एक स्थान पर बंधे परिघ को फेंक दे। या देवताओं के शरीर में छिपाकर हथियार रखे और उनके द्वारा उसको मारे। या जहां जहां पर वह विशेष रूप से आता हो उसको जहरीले गोबर तथा पानी से लेपे। या फूल की बुकनी के बहाने जहरीली बुकनी या उसका धुआं दे दे। या कीलों से भरा हुआ या खतरनाक गढ्ढा नीचे बनाकर चारपाई तथा बिस्तर बिछावे जिसका निचला भाग यंत्र से बंधा हो। ज्यों ही राजा उस पर लेटे उसको कील के द्वारा कुंएं या गढ्ढे में फेंक दे। या जांगलिकों तथा अमित्रों के आक्रमण होने के समय में जो सैनिक जनपद प्राप्त करने में समर्थ हों, उनको इधर उधर कर दे। यदि दुर्ग हो तो उनको इधर उधर भगा दे या शत्रु के उस देश पर चढ़ाई करने के लिये भेज दे जोकि प्रत्यादेय हो। या शत्रु का जो देश जंगलों से घिरा हो या जिस में पहाड़ी जांगलिक या नदी सम्बन्धी दुर्ग हों उस को, उस

के लड़के भाई आदि के द्वारा छिनवा दे तथा उनही का राज्य उस पर स्थापित करे । दंडोपनत प्रकरण में किले के घेरा डालने [उपरोध] के सम्बन्ध में प्रकाश डाला जाचुका है ।

योजन पर्यन्त लकड़ी घास भूस जला दे । संपूर्ण पानी दूषित कर दे या बहा दे । बाहर की ओर जगह जगह पर जाली गढ़े बनावे । कंटीली झाड़ियां लगावें । शत्रु के स्थानों में अनेक प्रकार की सुरंगें लगाकर उसके प्रधान २ निचय (खजाना, अन्नभंडार) को चुरा लेवे । जो अमित्र हों उनके साथ भी यही किया जावे शत्रु की सुरंगों में इतने बड़े बड़े तालाब बना दे जोकि पानी से भरे हों । हवा आने के लिये भिन्न भिन्न स्थानों पर खाली गगरे, कुंएं मकान, मड़इया आदि बनवादे । जिन जिन स्थानों पर संदेह होने की संभावना हो वहां पर भी यही करे । शत्रु की सुरंग में दूसरी सुरंग बनादे या उसके बीच में छेद कर दे तथा उसमें धुआं पानी भर दे । या अपने किलों का प्रबन्ध करे उसका उत्तराधिकारी नियुक्त करे और इसके बाद विपरीत दिशा की ओर या उस ओर प्रस्थान करे जिस ओर वह मित्रों बंधुओं तथा जांगलिकों से सहायता प्राप्त करसके या शत्रु के ही मित्रों राज्यद्रोहियों तथा शक्ति शाली पुरुषों को अपने साथ मिला सके या शत्रु को उनके मित्रों से छुड़ाकर सके या पार्ष्णि पर प्रभुत्व प्राप्त करसके या उसका राज्य छीन सके या वीवध आसार तथा प्रसार का नाश करसके या वह काम करे जिस से आंख हिलाते ही शत्रु का राज्य नष्ट करसके या अपना राज्य बचा सके या मूल को शक्ति शाली बनासके या अनुकूल तथा इष्टसंधि को प्राप्त करसके । या किसी सब जाने वाले व्यक्ति को शत्रु के पास यह कहकर भेजे कि "तुम्हारा अमुक अमुक शत्रु मेरे हाथ में है । व्यापारीय माल या नुकसान का बहाना बनाकर सोने के साथ शक्ति शाली सेना को भेज दो । मैं उसको बांधकर या देश निकाला देकर तुम्हारे पास भेज दूंगा" । यदि वह मंजूर करले तो हिरण्य तथा सारबल [शक्तिशाली सेना] को स्वयं ग्रहण करले । या अन्नपाल किला दे देने के बहाने सेना के एक भाग को अन्दर बुलाले और चुप्पे से उसको मरवादे । या अकेले पड़े हुए जनपद

को नष्ट करने की इच्छा से शत्रु की सेना को बुलावे तथा जब वह देश का घेरा डाले तथा उस पर पूर्ण रूप से विश्वास करे तो उस को मरवा दे। या मित्र बनकर शत्रु लोगों को कहला दे कि—इस किले में धान्य घी नमक आदि कम पड़ गया है। अमुक अमुक समय में यह चीजें इस स्थान पर भेजी जांयगी। तुम रास्ते में ही इन चीजों को छीन लो"। इस के बाद राज्यद्रोही ज्ञात बहिष्कृत अमित्र तथा जांगलिक लोग जहरीले अनाज तथा घी को लेकर आवें। अन्य सब प्रकार की सामिग्रियों तथा वीवध के सम्बन्ध में भी इन ही नियमों को काम में लावे।

संधि करने के बाद हिरण्य का एक भाग उसी समय और शेष भाग धीरे धीरे विलंब के बाद देवे। इसी बीच में उसके सैनिकों को जगा देवे या अग्नि विष शस्त्र के द्वारा प्रहार करे या घूंस खोर तथा सोने के लोभी दर्बारियों को अपने वश में कर लेवे। यदि अपनी शक्ति बहुत ही कम समझे [परिक्षीण] तो शत्रु को अपना दुर्ग देकर दूसरे स्थान पर चला जावे। यदि निकलना कठिन हो तो सुरंग लगाकर, दीवार फाड़कर, [कुक्षिप्रद] या मकान तोड़कर भागजावे। या रात में आक्रमण कर अपने यत्न में सफल हो-जाय। यदि यह न होवे तो पार्श्ववर्ती मार्ग से या पाखंडियों के भेष में दल बल के साथ धीरे धीरे या स्त्री का भेष बनाकर मुर्दे के पीछे पीछे चलकर बाहर निकल जावे। या देवता के चढ़ावे तथा श्राद्ध संबंधी उत्सवों में विष मिला अन्न तथा पानी लोगों को देवे और राज्यद्रोहियों के भेष में आक्रमण कर गुप्तचरों की सेना के द्वारा उनको मारडाले। या दुर्ग ग्रहण करने के बाद भोजन करे, चैत्य में जावे और मूर्ति के पोले पेटमें या गूढभित्ति में या मूर्ति युक्त तह-खाने में छिपकर बैठजावे। जब किसी का भी ख्याल न रहे तो रात में सुरंग से राज महलमें घुसे और सोये हुए दुश्मन को मारडाले या पेंच ढीलाकर यन्त्र को उसपर फेंकदे या जहर तथा जलाने वाली चीजोंसे लिपेहुये साधारण या लाखके घरको आगलगाकर सोते हुए दुश्मन को जीते जी जलादे। या प्रमदवन तथा विहार में से किसी भी स्थान पर तहखाना सुरंग गूढभित्ति के अन्दर

छिपकर तीक्ष्ण लोग आनन्द में प्रमत्त हुए हुए शत्रु को मार डालें। या गुप्तचर लोग जहर देकर, या गुप्तस्थान में छिपी हुई औरतें सांप जहर आग धुंयां आदि फेंक कर उसकी जान लेलें। शत्रु के अन्तःपुर में आने, पर गुप्तचर लोग मौका मिलते ही उसको जिस ढंगका नुकसान पंहुंचासकें पंहुंचावें और अपने आदमियों को सब प्रकार के इशारे देकर तैयार रखें।

शत्रु को चाहिये कि दरवाजों पर रखेगये तथा दुश्मनों के द्वारा जगह जगह पर छिपाये हुए लोगों को तथा बुड्ढों को तुर्ही बजाकर इकट्ठा करे और पूर्व वत् शेष बातों को दुहरावे।

१३. अधिकरण

दुर्ग लंभोपाय

१७१ प्रकरण।

Sowing the seeds of Dissension

उपजाप।

विजिगीषु यदि शत्रु के ग्राम [परग्राम] को अपने बश में करना चाहे तो १ सर्वज्ञ ख्यापन तथा २ दैवत संयोग ख्यापन के द्वारा अपने पक्ष के लोगों को उत्साहित करे और शत्रु के पक्ष के लोगों को उद्विग्न या परेशान करे।

(१) सर्वज्ञख्यापन (सर्वज्ञबताना)। अपने आपको सर्वज्ञ प्रसिद्ध करने के लिये—घरों की गुप्त बातों का पता लगाकर मुख्यों को उनके इरादों के विषय में सूचित करे--कौन कौन राज्यद्रोही हैं इसबात को कंटक शोधन तथा गुप्तचरों के आगमन के द्वारा प्रगट करे--अदृष्ट संसर्ग विद्या (छिपेहुए संबंधों को पतालगाने वाली विद्या) में बताये हुए इशारों के द्वारा भावी नीति को दिखावे और मुद्रा (चिन्ह) संयुक्त कबूतरों के द्वारा विदेश के समाचार को प्रकाशित करे।

(२) दैवतसंयोगख्यापन (देवताओं के साथ संबंधका होना प्रगट करना) देवताओं के साथ अपना संबंध प्रगट करने के लिये--कोई आदमी सुरंग के द्वारा अग्निकुंड, चैत्य (मंदिर विशेष) तथा मूर्ति के नीचे पंहुंचकर स्वयं अग्नि चैत्य तथा देवता के रूप में बोल और पूजा लेवे--या सांप तथा हिरण्य की मूर्ति के अन्दर बैठे लोग पानी में से निकले बोलें तथा पूजन कराने लगें--या रात में जल के भीतर समुद्र वालुका का कोश रखकर अग्नि माला दिखावें --या लकड़ी या बांस बेड़े (प्लवक) को शिला या जंजीर (शिक्य) से बांधकर देवता के रूप में उसपर दर्शन दें--या जल जन्तुओं की बास्तियां झिल्ली से मुंह ढांपकर, पृषत मृगकी अन्तड़ी तथा केकड़ा नाका सूंस उद्बिलाव आदि की चरबी में तेल को सौवार पकाकर नाक में लगावें और यह प्रसिद्ध करें कि रात्रिगण पानी के बीच में आया जाया करते हैं [उदक चरण] इन्हीं लोगों के द्वारा वरुण तथा नाग कन्याओं का सम्भाषण आदि दिखावें-झगड़े के समय में मुंह से आग तथा धुंआं निकालें। पौराणिक कार्तान्तिक, नैमित्तिक, मौहूर्तिक, क्षणिक, [तमाशा दिखाने वाले], गूढ़ पुरुष, साचिव्य कर [विदूषक] तथा दर्शक आदि उपरिलिखित घटनाओं को अपने देश में फैलावें। शत्रु के देश में कहते फिरें कि विजिगीषु को देवता दर्शन देते हैं। उसको दिव्य कोश तथा दिव्य सेना प्राप्त हुई है। सांगविद्या [हाथ देखने वाले] लोग देवताओं के सामने प्रश्न, मृग पक्षियों की बोलियों की परीक्षा तथा स्वप्न विचार आदि के द्वारा उसके विजय को और शत्रु के पराजय को सूचित करें। शत्रु की राशी में दुन्दुभि के साथ उल्का को दिखावें। इन भेष धारी गुप्तचर शत्रु के मुख्य मुख्य व्यक्तियों के पास जावें और कहें कि स्वामी ने आपका आदर सत्कार किया है। अमात्यों तथा फौजों [आयुधीय] से कहें कि हमारा पक्ष इस प्रकार पुष्ट होता है, शत्रु का पक्ष इस प्रकार नष्ट किया जासकता है और ऐसाकरने में दोनों ही पक्षों की एकसदृश भलाई है। हमारा स्वामी अपने आदमियों का सुख तथा दुःख में पुत्र के सदृश पालन करता है। इसप्रकार शत्रु के पक्ष के लोगों को अपने साथ मिलने के लिये

उत्साहित करे। और—दत्त लोगों को कहे कि राजाने तो तुमको एक गदहा समझ रखा है, दंडचारियों को बहकावें कि उसने तुमको लठैत तथा डुफैत बनारखा है, उद्विग्न लोगों को समझावे कि तुमतो नदी के किनारे के भेड़ बनादिये गये हो, विमानित लोगों को कहे कि तुमपर तो पहिले से ही वज्र पड़चुका है, हताश लोगों को समझावे कि तुमतो गिरासपर पलने वाले कउए बना दिये गये हो, बदली के मेघकी तरह वह तुमको कुछभी न देगा, दुश्मन को कहे कि बदमाश औरत को गहना पहिनाने से क्या लाभ ? जिन लोगों का राजा ने आदर सत्कार किया हो उनको कहे कि शेर का चमड़ा लेने से क्या अर्थ सिद्ध होगा ? जो राजा के पास रहते हों उनको कहे कि तुमलोग मौतके मुंह (मृत्युकूट) में हो, जोलोग राजाका सदा ही अपकार करते हों उनको कहे कि तुमतो पीलु लिखाकर तथा ओला दिलाकर ऊंटनी तथा गदही का दूध मथरहेहो। जो लोग इनबातों से अपने बशमें हो जांय उनको अर्थ तथा मान से संतुष्ट कियाजाय। जो लोग द्रव्य तथा भत्तों से असंतुष्ट हों उनको द्रव्य तथा भत्ता देकर खुश रखा जाय। यदि वह इनचीजों के लेनेके लिये तैय्यार न हों तो उनके बच्चों तथा स्त्रियों के पास गहना पहुंचाय जाय।

यदि शहर तथा गांव के लोग दुर्भिक्ष चोर तथा जांगलिकों से पीडित होचुके हों तो सभी लोग उनको कहें कि—तुम राजा से सहायता मांगो। और कहो कि यदि हमको सहायता न मिली तो हम अन्यत्र चले जांयगे।

जो लोग उपरिलिखित बातों में आजावें उनको द्रव्य धान्यक आदि देकर अपने साथ मिला लिया जाय। उपजाप का सबसे अधिक अद्भुत काम यही है।

१७२ प्रकरण।
योग वामन।

enticement of king by ... ...

मुंडे या जटाधारी के भेष में गुप्तचर पहाड़ की गुफा में रहे और अपनी उमर ४०० साल की प्रकट करें। बहुत से जटाधारी

शिष्यों को साथ में लेकर नगर के समीप में डेरा डालें। उसके शिष्य मूल फल आदि के लिये शहर में आवें और आमात्यों तथा राजा को महात्मा जी के दर्शन के लिये उत्साहित करें। जब राजा उसके पास आवे तो उसको पुराने राजा तथा उसके देश के विषय में नयी नयी बातें बतावे। साथ ही कहे कि—सौ सौ साल बाद मैं आगमें प्रवेश कर चोली बदलता हूं तथा बालक के रूप में प्रकट होता हूं। अब आपके सामने चौथी बार आग में प्रवेश करूंगा। आप अवश्य ही आवें। आप जो चाहें तीन वर मांगलें। यदि राजा को विश्वास आजावे तो कहे कि "आप सात रात तक तमाशा देखनेकेलिये सपरिवार यहांपर ही रहिये"। यदिवह वहांपर रहजाय तो आक्रमण कर उसका काम तमाम करदे। या—मुंडे या जटाधारी के भेष में गुप्तचर यह कहे कि जमीन में गड़ा हुआ धन बता-सकता है, और साथही अपने बहुत से शिष्यों को लेकर पड़ोस के वल्मीक में बांसकी नली खूनसे लथपथ कपड़े से लपेट कर रखदे और उसपर सोने का बुरादा छिड़क दे। बांसकी नली के स्थानपर ऐसी सोनेकी नली भी रखी जा सकती है जिसमें से सांप आ जा सके। इसके बाद सत्री राजाको कहे कि—अमुक सिद्ध पुरुष जमीन में गड़े हुए खजाने को बता सकता है। राजा उससे जोजो बात पूंछे उसका उत्तर देवे और साथ ही चिन्ह भी दिखावे। या जमीन में नये सिरे से सोना गाड़ कर कहे कि—खजाने की रक्षा नाग देवता कर रहे हैं। विना पूजा पाठ के उनका प्राप्त करना सुगम नहीं है। यदि उसको विश्वास आजले तो पुनः वही सात रात वाला तरीका काम में लायाजावे। या वही तपस्वी स्थानिक बातों का ज्ञाता अपने आपको प्रकट कर और अपने चारों ओर आग लगाकर बैठ जावे। सत्रि लोग क्रमशः राजाको कहें कि—अमुक आदमी सिद्ध है। उसको संपूर्ण सिद्धियां प्राप्त होगई हैं। राजा उससे जो बात करने के लिये कहे वह करने के लिये तय्यार होजाय और वही सात रात वाला किस्सा दुहरावे। सिद्ध बनेहुए गुप्तचर राजा को जंभकविद्या से प्रलोभन देकर भी पूर्व वर्णित उपाय को काम में लासकते हैं। या—प्रसिद्ध मन्दिर में अपना डेरा लगाकर भिन्न

भिन्न उत्सवों में मुख्य मुख्य राज्याधिकारियों (प्रकृति मुख्य) को वह कहकर राजा पर आक्रमण करसकते हैं।

इसी प्रकार जटाधारी के भेष में गुप्तचर अपने आपको जल के भीतर या सुरंग लगाकर मूर्त्ति या तहखाने के अन्दर छिपाये रखें सत्रि लोग उसको वरुण राजा प्रगट करें और राजाको पूर्ववत् फंसावें। या सिद्ध के भेष में जनपद की सीमा पर रहें और शत्रु को दिखाने के बहाने राजाको फंसले। शत्रु को बुला कर उसकी छाया राजाको दिखावे और अस्वरक्षित स्थान में पाकर उसको कतल करदे। या घोड़ों के व्यापारी के भेष में आकर घोड़ा बेंचना शुरू करें। और राजा को घोड़ा देखने के लिये बुलावें। जब राजा घोड़ों के देखने में निमग्न होजावे तो मौका पाकर उसको भीड़ के अन्दर ही स्वयं मार डालें या घोड़ों से मरवा दें। या तीक्ष्ण लोग नगर के समीप में चैत्य पर चढ़ें और गाजा बाजा बजाते हुए स्पष्ट रूपसे कहें कि—हम लोग राजा और मुख्य मुख्य लोगों के मांस को खाकर पूजा करेंगे। नैमित्तिक तथा मौहूर्तिक बने हुए गुप्तचर इस समाचार को सब ओर को फैलादेवें। या वह लोग नाग का भेष बनावें, शरीर में जलने वाला तेल मलें और हाथ में लोहे के मूसल तथा शक्ति ले कर जोर जोर से दांतों को लड़ावें तथा पूर्ववत् कहें या—रीछ का चमड़ा पहिनें, मुख से आग तथा धुंआं निकालते हुए राक्षस का रूप बनाकर नगर के चारों ओर तीन फेरी करें, और स्यारों तथा हरिनों के भयंकर शोर के बीच में पूर्ववत् कहें। या—जलने वाले तेल (तेजन तैल) से अभ्रक को मिलावें और उसको मूर्ति पर मलकर जलावें तथा पूर्ववत् कहें और दूसरे लोग उसबात को इधर उधर फैलादेवें। या—प्रसिद्ध तथा प्रतिष्ठित देवताओं की प्रतिमाओं मेंसे खूनकी धारा बहावें और दूसरे लोग इधर उधर कहें कि देवता लोग खून बरसा रहे हैं। जो शूर बीर हो उसको देखने के लिये जावे। जो जो देखने के लिये जावें उनको लोहे के मूसल से मारडाला जावे और लोगों में फैला दिया जावे कि शायद उनको राक्षसों ने मारडाला है। सत्री तथा इस अद्भुत बात को देखने वाले लोग राजाको सारी बात कहें। नैमित्तिक तथा

मौहूर्तिक लोग शान्ति पाठ पढ़े और प्रायश्चित्त करें और कहें कि इसके किये विना राजा तथा देशका बहुत ही अधिक अकुशल हो जायगा" इसके बाद राजा को सात रात तक मंत्र तथा बलि होम करने के लिये कहें और इसके बाद उसको पूर्ववत् मारडालें।

विजिगीषु उन योगों को अपने देश में दिखावे और शत्रु को सिखावे तथा उसी मार्ग पर चलाने के लिये उनका प्रतीकार करे। इस बाद उपरि लिखित योगों या तरीकों का प्रयोग करे। जो शत्रु हाथी चाहता हो उसको नाग वन पाल के खूब सूरत हाथी को छीनने के लिये भड़कावे। यदि वह विश्वास में आकर जंगल में घुसे तो उसको अकेला पाकर मरवा डाले या पकड़ कर कैद करले। शिकार के इच्छुक [मृगयाकाम] राजाओं के साथ भी यही व्यवहार किया जाय। जो लोग स्त्री या द्रव्य के लोलुप हों उनको दायाद तथा निक्षेप को छुड़ाने के लिये आई हुई कुलीन विधवाओं या जवान तथा खूब सूरत औरतों से फंसावें और जब वह लोग उनके साथ समागम करने के लिये रात में निकलें तो छिपे हुए सत्री उनको जहर या हथियार से मारडालें। जो लोग—सिद्ध, प्रव्रजित [वैरागी], चैत्य, स्तूप, मूर्ति आदि के दर्शन के लिये प्रायः आया जाया करते हों, तहखाना, सुरंग, गूढ़भित्ति आदि में छिपे हुए तीक्ष्ण लोग उनको मारडालें।

शत्रु राजा—जिन देशों में तमाशा देखने के लिये जाता हो—या जिन विहारों में तथा यात्राओं में आनन्द मानता हो—या जिस जल में नहाता तथा कलोलें करता हो—या जहांपर गाली गलौज बकता हो—या यज्ञ, उत्सव, सूतिका, मृत्यु, रोग, प्रीति शोक, भय, शादी ब्याह आदि में पंहुंचकर प्रमत्त हो जाता हो या अपने आपको भूल जाता हो—या जहां पर कि कोई भी पहरे दार न हो, दुर्दिन या भीड हो—या निर्जन प्रदेश में, या आग से जलते हुए ब्राह्मण के स्थान में मौजूद हो—तो वहां पर तीक्ष्ण लोग पूर्व से ही छिपे हुए गुप्तचरों के साथ मिल कर—वस्त्र, आभरण, माला, शयन, आसन, मद्यभोजन आदि की घंटी तूर्ही आदि के बजते ही उस पर प्रहार करें और जिस रास्ते से राज महल में घुसे हों उसी रास्ते से बाहर निकल जावें इसीका नाम योग वामन है।

१७३ प्रकरण।

खुफिया पुलिस का प्रयोग।

the work of spies

राजा किसी ऐसे विश्वास पात्र व्यक्ति को अपने यहां से बाहर निकाल दे जोकि किसी कंपनी या श्रेणी का मुखिया हो। वह शत्रु की शरण ले ले। और उसके पक्ष को पुष्ट करने का बहाना करके अपने देश से सैनिकों तथा अन्य प्रकार की सहायताओं के लेने की कोशिश करे। इस ढंग पर खुफिया पुलिस का संग्रह कर और शत्रु राजा की अनुमति लेकर अपने स्वामी के बागी गांव या दोस्त पर आक्रमण करे और वहां से हाथी घोड़ा बागी अमात्य सैनिक तथा दोस्त को पकड़ कर शत्रु राजा के पास उपहार के रूप में भेजे। सहायता प्राप्त करने के बहाने शत्रु के किसी एक जनपद में बस जाय, श्रेणी या जंगल में ही अपना अड्डा बनाले। जब शत्रु पक्ष के लोग उस पर विश्वास करने लगें तो उनको अपने स्वामी के हाथी या जंगल के प्राप्त करने के उद्देश्य से भेजे और साथ ही अपने स्वामी को गुप्तरूप से सूचित कर उन को पकड़वा दे। अमात्यों तथा आटविकों [जंगल के स्वामी] के कामों का अनुमान भी इसी से कर लेना चाहिये। दृष्टान्त स्वरूप शत्रु से मैत्री करने के बाद विजिगीषु अपने अमात्यों को बरखास्त कर दे। वह शत्रु के पास दूत भेजकर कहे कि आप कृपा कर हमारे स्वामी को प्रसन्न करवादीजिये। यदि शत्रु इस बात के लिये दूत भेजे तो विजिगीषु कहे कि "आप के स्वामी अमात्यों को हम से फाड़ते हैं। आगे से यहां पर मत आना"। इसी प्रकार विजिगीषु किसी दूसरे अमात्य को निकाल बाहर करे। वह भी शत्रु की शरण ले और अपने स्वामी के खुफिया, बागी, चोर तथा जांगलिक आदियों को साथ ले जाय और शत्रु का विश्वास पात्र बनकर, इस के अन्तपाल, आटविक तथा दंडचारी [सेनापति] आदि मुख्य मुख्य पुरुषों को यह कहकर मरवादे कि "अमुक अमुक व्यक्ति शत्रु के साथ मिला हुआ है"।

विजिगीषु शत्रु से कहे कि "अमुक राजा दिन पर दिन शक्ति शाली हो रहा है और सेना बढ़ा रहा है । आओ आपस में मिल कर उसको नष्ट करें । इस से तुझ को भूमि या हिरण्य मिलेगा" यदि वह विश्वास में आजाय तो उसको प्रकाश युद्ध में शत्रु से मरवादे । या भूमि दान, पुत्राभिषेक या अन्य ऐसे ही उपयोगी महत्व पूर्ण काम पर उसको बुलाकर कैद करले । जो इस में न फंसे उस को चुपके से मरवादे । यदि वह स्वयं न आवे तो शत्रु से उसका घात करवादे । यदि वह शत्रु से अकेले ही लड़ने जावे तो उसको दोनों ओर से घेर कर नष्ट करदे । यदि वह किसी पर भी विश्वास न करे, शत्रु पर अकेला ही चढ़ाई करे या [यातव्य] शत्रु की भूमि को लेना चाहे तो शत्रु को सब प्रकार की सहायता पहुंचा कर उसका उच्छेद किया जावे । यदि वह शत्रु के साथ लड़ाई छेड़कर सेना इकट्ठी करना शुरु करे तो उसकी राजधानी को अपने हाथ में कर ले । या शत्रु की भूमि पर मित्र को या मित्र की भूमि पर शत्रु को उकसावे । जब मित्र शत्रु की भूमि को चाहे तो अपनी हानि का बहाना कर स्वयं भी लड़ाई में कूद पड़े । यह तथा ऐसे ही अन्य तरीके अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये काम में लावे ।

विजिगीषु अपने किसी मित्र की भूमि पर आक्रमण करने वाले शत्रु को सेना के द्वारा सहायता पहुंचावे । इस के बाद गुप्त रूप से मित्र के साथ मेल करले । और मित्र को कहे कि किसी तरह तुम हमारे शत्रु को हमारी भूमि पर आक्रमण करने के लिये उत्साहित करो । इस ढंग की मंत्रणा करने के बाद वह अपने आप को विपत्ति में पड़ा हुआ प्रगट करे और जब शत्रु उस पर आक्रमण करे तो उसको या तो मारडाले या जीवित पकड़कर उसके राज्य को आपस में बांट ले । यदि कोई शत्रु अपने मित्र के सहारे किसी दृढ़ दुर्ग का सहारा ले तो उसकी भूमि को सामंतादियों के द्वारा नष्ट भ्रष्ट करदे । इस पर यदि वह सैन्य द्वारा देश की रक्षा करे तो सैन्य को मरवा दे । यदि शत्रु तथा उसके मित्र आपस में मिले रहें तो खुले तौर पर भूमि तथा राज्य देने का प्रलोभन दे । दोनों ओर से तनखाह पाने वाले मध्यस्थ दूतों को भेजे और कहवा दे

कि "अमुक राजा शत्रु से मिलकर राज्य लेने की कोशिश कर रहा है"। इस प्रकार दोनों में फटाव तथा संदेह पैदा करने के बाद विजिगीषु अपने सेनापतियों, दुर्गमुख्यों तथा राष्ट्रमुख्यों को यह कहकर निकाल दे कि "यह शत्रु से मिले हुए हैं"। निकाले जाकर वह शत्रु को युद्ध, किले का घेरा, या अन्य अवसर, पर पकड़वा दें। देश के मुख्य मुख्य वर्गों को आपस में फाड़ दें। सात्रियों के सहारे भेदभाव को बढ़ावें तथा पुष्ट करें।

शिकारियों तथा बहेरों के भेष में खुफिया शत्रु के किले के मुख्य दर्वाजों पर मांस बेचें तथा पहिरेदारों से दोस्ती करलें। दो तीन वार चोरों के आक्रमण को सूचित कर दुश्मन राजाके विश्वासपात्र बन जांय और धीरे धीरे उसकी सेना को दो भागों में बंटवादें। इसके बाद गांव पर आक्रमण होनेपर या घेरा डालने पर शत्रु को कहें कि "चोर लोग आपहुंचे। संख्या में बहुत अधिक हैं। बहुत बड़ी सेना की जरूरत है"। जब वह चोरों को दंड देने के लिये सेना भेजदे तो रात में अपने स्वामी की सेना के साथ आकर जोर से पुकारे कि "चोर लोग मार डालेगये। सेनाकी यात्रा सफल हुई। किले का दर्वाजा खोलो"। दरवाजा खुलते ही शत्रु पर आक्रमण करदे। अथवा कारीगर शिल्पी पाखंडी गवैइये तथा व्यापारियों के भेष में खुफिया लोगों को शत्रु के दुर्गमें बसादें। कृषक के रूपमें काम करने वाले खुफिया लोग इनको लकड़ी भूसा आनाज तथा मालसे भरी बैलगाड़ियों में छिपाकर हथियार पहुंचावे। देवताओं की ध्वजा तथा प्रतिमाके द्वारा भी यही काम करें। इसके बाद पुरोहित बनेहुए गुप्तचर लोग शंख तथा नगारे बजाकर कहें कि हथियारों से सुसज्जित सेना किले को घेरती हुई तथा कतले आम करती हुई आरही है। मौका पातेही यह लोग किले का दरवाजा खोलदें, अटारी पर चढ़ाने का रास्ता देदें या शत्रु की सेना को आपसमें कटवा मरवादें।

राजा के गुप्तचरों—व्यापारी, मजदूर, पालकीदार, बरात, घोड़ों तथा बाजारी चीजों के विक्रेता, हथियार उठाकर ले चलने वाले मेहनती, धान्यक्रेता तथा विक्रेता, वैरागी—आदियों के द्वारा संधि

पर विश्वास दिलाने के बहाने से किले के अन्दर सेना बुला लीजाय और इस प्रकार किले को अपने हाथ में करालिया जाय । कंटक शोधन में वर्णित तथा उपरिलिखित गुप्तचर जंगल के पास फिरते हुए शत्रु के पशुओं को तथा व्यापारियों को चोरों से मरवादेवें। किसी स्थानपर रखहुए भोजन तथा जलको मैनफल के रससे दूषित कर भागजावें । शत्रु के ग्वाले तथा व्यापारी मैनफल के रस से ज्यों ही बेहोश होजाय या तकलीफ में पड़जाय त्यों ही ग्वाले व्यापारी तथा चोरके भेष में गुप्तचर उनके पशुओं को भगा लेजाय। या—मुंड तथा जटिल के भेष में खुफिया लोग संकर्षण देवता की पूजा के लिये इकट्ठा कियेगये शत्रु के सामान में मैनफल का जहर मिलादें और पशुओं को लूटलें । या—कलवार के भेष में खुफिया लोग पूजा पाठ, मृतक संस्कार, उत्सव सामाजिक काम आदियों के समय में जांगलिकों को शराब देने के बहाने से जांय और ग्वालों को उपहार के रूप में मैनफल के रस से मिली शराब देदें और इसप्रकार शत्रु के पशुओं को छीन लें ।

जो लोग गांवों को लूटने के बहाने शत्रु के जंगलों में और शत्रु का नाश करें उनको चोरोंके भेष में फिरने वाला गुप्तचर कहा जाता है ।

१७४–१७५ प्रकरण ।

किले का घेरना तथा शत्रु का नाश ।

किले के घेरने के बाद ही शत्रु का नाश संभव है । जीते हुए देश में ऐसी शान्ति स्थापित करनी चाहिये कि लोग निर्भय हुए २ सोवें । जो लोग राज्यविद्रोह करें या उठ खड़े हों उनको इनाम देकर या राज्यकर से मुक्त कर शान्त करे बशर्ते कि राज्य छोड़ने का इरादा न हो । आबादी से दूर किसी एक स्थान पर शत्रु की भूमि में संग्राम करे । क्योंकि कौटिल्य के मत में आबादी से ही राज्य तथा जनपद होता है । यदि विजेता के यत्नों को निरर्थक करने के लिये जनपदनिवासी कोशिश करें तो वह उनके खेत दुकान अन्नभंडार तथा मंडी को नष्ट करदे ।

खेत दुकान अन्नभंडार तथा मंडी आदिकों के नाश से, लोगों को भगाने तथा गुप्तरूप से मरवाने से प्रकृति शक्तिहीन होजाती है।

जब विजेता यह समझे कि ऋतु उत्तम है। धान्य कच्चामाल, यन्त्र, शस्त्र, आवरण, श्रमी तथा लगाम आदि की सेना में कुछ भी कमी नहीं है, शत्रु के लिये ऋतु बुरी है देश में बीमारी तथा दुर्भिक्ष है, उसका अन्नभंडार तथा सैन्य नष्ट होगया है, तनख्वाह पर रखे सिपाही तथा उसके मित्र की सेना शक्तिहीन हैं तो वह शत्रु पर चढ़ाई करदे। अपनी छावनी, अन्नभंडार, मंडी तथा सड़क की रक्षा करे, खाई तथा दीवार बनाकर दुर्ग बनावे, शत्रु की खाई का पानी खराब करे या बहावे या उसको मट्टी से भरदे और शत्रु के किले की दीवारों तथा बुर्जों पर सुरंग लगाकर या अन्य उपाय कर आक्रमण करदे। यदि खाई बहुत गहरी हो तो बहुल नामक लकड़ी से और यदि कम गहरी हो तो मट्टी से भरदे। यदि बहुत सी सेना उसकी रक्षा करती हो तो यन्त्रों से उसको नष्ट करे। दरवाजे पर घुड़सवार आक्रमण करें। समय समय पर सामदानादि उपायों को भिन्न भिन्न तरीकों से काम में लावे और सफल होने की कोशिश करे।

किले में रहने वाले बाज कौआ, नप्तृ भास (चील विशेष) तोता, मैना, कबूतर आदियों को पकड़े और उसकी पूंछ में आग लगाकर शत्रु के दुर्गपर छोड़दे। यदि छावनी किले से दूरपर हो और ऊंचे खम्भों तथा दीवारों पर से लड़ाई होती हो तो शत्रु के किले में आग लगादी जाय। किले के अन्दर रहने वाले दुर्गपाल न्युअला, बन्दर, बिल्ली तथा कुत्ते की पूंछमें आग लगाकर उनको लकड़ी से छते मकानों में छोड़दें। सूखी मछलियों के पेट में अग्नि रखकर भालू रेवा कउओं के द्वारा छतों पर पहुंचादे। सरल, देवदार, पूतितृण, गुग्गुलु, श्रीवेष्ट, (तारपीन), सर्जरस, लाख आदि को गदहे ऊंट भेड़ बकरी की लीद के साथ मिलाकर गोली बनाई जाय तो वह सुगमता से जल पड़ती है। प्रियाल का चूर्ण, अवल्गुज का कोयला, मोम, घोड़ा गदहा ऊंट तथा गौ

की लीद को मिलाकर बनायागया पदार्थ फेंक कर आग लगाने के काम में आता है। संपूर्ण धातुओं का चूरा जिसका रंग आगकी तरह हो, कुंभी, जस्ता तथा रांगे का चूरा, पलाश पुष्प, बाल तेल मोम तथा श्रीवेष्ट [तारपीन] के साथ मिलाया जाकर आग लगाने के लिये उपयोगी होता है। सन जस्त रांगे आदि से युक्त बाण पर यदि इसका लेप किया जाय तो बाण बहुत ही विश्वास घाती हो जाता है।

आक्रमण करने के अन्य उपायों के होते हुए अग्नि लगाने का यत्न न किया जाय। अग्नि का कुछ भी विश्वास नहीं है। मन्दिरों तक को इस से नुकसान पहुंच जाता है। असंख्य प्राणि, खेत, पशु, हिरण्य, जांगलिक द्रव्य आदि का इस से नुकसान हो जाता है। दरिद्रराज्य को प्राप्त करने से (लाभ के स्थान पर) नुकसान ही होता है। किले के घेर डालने में यही नियम है।

विजिगीपु जब यह समझे कि—मैं संपूर्ण सामिग्री उपकरण तथा श्रमी से संपन्न हूं, शत्रु बीमार है, उसकी प्रकृति घूंसखोर तथा राजद्रोही है, किला भी पूर्ण नहीं बना है, उसका कोई मित्र नहीं है और जो मित्र मालूम पड़ता है वह भी अन्दर से शत्रु है—तो शत्रु पर चढ़ाई करदे। जब शत्रु के किले या शहर में आग लग जाय, या किसी ने आग लगा दी हो, लोग नाव पर सैर करने के लिये या सेना को देखने के लिये या शराबियों के झगड़ों को निपटाने के लिये गये हों, सेना रोजाना लड़ाई से सर्वथा थक गई हो, भयंकर युद्धों के कारण सेना के बहुत से लोग मर गये हों, रात भर जागने या थकने से लोग सो गये हों, भयंकर बादल या नदी की बाढ़ आगई हो या भयंकर बरफ पड़ी हो तो शत्रु पर एकदम से धावा बोल दे। छावनी या शिविर न बनाकर जंगल में छिप जाय और जब शत्रु जंगल में से बाहर निकलने लगे तो उसको कतल कर दे।

विजिगीपु का अन्दर से मित्र बना हुआ एक दूसरा राजा शत्रु के पास दूत भिजवा कर कहे कि "तुम्हारी यह कमजोरी है। अमुक लोग तुम्हारे अन्दरूनी दुश्मन हैं। घेराडालने वाले राजा के अमुक

दोष हैं। अमुक व्यक्ति तुम्हारा दोस्त है"। जब शत्रु का दूत बाहर निकले तो विजिगीषु उसको पकड़ ले और दोषों को उद्घोषित कर उसको देश से बाहर निकाल दे और स्वयं भी घेरा छोड़कर दूर हट जाय। इसपर दूसरा राजा पुनः शत्रु को कहवावे कि "हमको विजिगीषु से बचाओ। आओ हम तुम मिलकर उससे अपना पीछा छुड़ावें"। यदि वह किला छोड़कर बाहर निकल आवे तो उसको दोनों ओर से घेरकर मार डाला जाय या उसको पकड़ कर कैद कर दिया जाय तथा उसके राज्य को आपस में बांट लिया जाय। या उसकी राजधानी नष्ट कर दी जाय तथा सेना के अच्छे अच्छे आदमियों को चुन चुनकर मरवा दिया जाय। सेना के द्वारा जीते गये शत्रुओं तथा जांगलिकों के साथ भी यही व्यवहार होना चाहिये। अथवा इस में से किसी एक के द्वारा किलेके अन्दर बन्द शत्रु को कहवाया जाय कि—घेराडालने वाला राजा बीमार है। उसपर पार्ष्णिग्राह [पीठ· पर का दूसरा राजा] ने आक्रमण करदिया है। उसकी सेना ने गदर करदिया है। दूसरे राष्ट्रपर आक्रमण करना चाहताहै। इत्या· दि। यदि शत्रु को इन बातों पर विश्वास आजाय तो वह छावनी में आग लगा कर भाग जाय—और इसके बाद पूर्ववत् व्यवहार करे।

विजिगीषु व्यापारीय द्रव्यों को विष से मिला कर किले के अन्दर किसी बहाने से पहुंचावे। शत्रु का मित्र बना हुआ राजा किले में दूत भेजे और कहवादे कि "मैं विजिगीषु को लग भग नष्ट कर चुका हूं। तुम भी उसको पूर्ण रूप से नष्ट करने में मेरी सहायता करो"। यदि वह विश्वास में आजाय तो उसके साथ पूर्ववत् व्यवहार किया जाय। खुफिया लोग [योग पुरुष] राजकीय मुद्रा हाथ में लेकर मित्र तथा बंधु के देखने के बहाने से किले में घुसें तथा उस पर विजिगीषु का कब्जा करवादें। नई शक्ति प्राप्त करने के बहाने किले में घिरे राजा को कहवाया जाय कि "मैं विजिगीषु की सेना पर अमुक स्थान तथा समय में आक्रमण करूंगा। तुम भी लड़ाई के लिये आजाना" इत्यादि। यदि वह विश्वास में आजाय तो यथोक्त रूप से नकली लड़ाई छेड़े तथा

भयंकर कतल्ले आम को दिखावे। रात में जब शत्रु राजा किले से बाहर निकले तो उसको मार डाले। यदि इन तरीकों से काम न निकले तो शत्रु के मित्र या जांगलिक राजा को यह कहकर कि "किले में वह घिरा है। उसकी जमीन पर आक्रमण करो और अपने कब्जे में करलो" शत्रु के ऊपर आक्रमण करने के लिये उभाड़े। यदि वह सचमुच आक्रमण करने के लिये तैय्यार होजाय तो उसको प्रथा प्रकृतियों से लड़ादे और उनके मुखियों से मरवादे या स्वयं ही उसको जहर देदे। यह मित्र का घातक है" ऐसा कहकर इसके बाद किसी दूसरे राजा से शत्रु की मित्रता पैदा करवा दे। वह भी शत्रु के पेट में घुस कर उसके योग्य योग्य वीर पुरुषों को आपस में लड़ादे। या संधि करके उसको नये जनपद में बसादे और चुपे से उसको मरवादे। या राज्यद्रोही जांगलिकों की सेना को तंग करके विद्रोही करदे और जब वह किले से बाहर निकलें तो विजिगीपु के हाथ में किला दे दे। या शत्रु से विरुद्ध होकर भागे हुए दुश्मनों तथा जांगलिकों को रुपया पैसा तथा इज्जत देकर पुनः दुर्ग में भेजकर दुर्ग को अपने वश में करे।

शत्रु के किले को विजय कर तथा अपनी छावनी में पहुंच कर विजिगीपु उन सैनिकों को अभय दान दे जोकि युद्धक्षेत्र में पड़े हों, तथा इस के पक्ष में होगये हों, जिन के बाल हथियार इधर उधर बिखरे पड़े हों जो कि डर से विरूप होगये हों। शत्रु के किले को प्राप्त कर शत्रु के पक्ष का संशोधन और उपांशुदंड से अन्दर बाहर अपना संरक्षण करने के बाद विजिगीपु उस में घुसे।

इस प्रकार शत्रु की भूमि को जीत कर विजिगीपु मध्यम की और उसके जीतने के बाद उदासीन की चिंता करे। पृथ्वी को जीतने का यही पहिला मार्ग है। यदि मध्यम तथा उदासीन न हों तो अपने से अधिक शक्ति तथा सामर्थ्यवाले राजा की और उस के बाद उसकी प्रकृति की चिन्ता करे। पृथ्वी को जीतने का यह दूसरा मार्ग है। यदि चारों ओर राजाओं का मंडल न हो शत्रु को मित्र से मित्र को शत्रु से लड़ाकर काम निकाले। यही तीसरा मार्ग है। शुरू में दुर्बल सामन्त को गिरावे। उससे दुगुना शक्ति प्राप्त कर

दूसरे सामन्त को और उसको जीत कर और इस प्रकार तिगुनी शक्ति प्राप्त कर तीसरे सामन्त को परास्त करे। पृथ्वी के विजय करने का यही चौथा मार्ग है।

षड्यंत्र, खुफिया पुलिस, शत्रु की प्रजा को अपने वश में करना, घेरा डालना तथा एकदम धावा मारना—यह पांच तरीके हैं, जो कि किले के फतह करने में काम आते हैं।

१७६ प्रकरण।

Restoration of peace

विजित प्रदेश में शान्ति स्थापित करना।

विजिगीषु एक गांव या जंगल को ही जीत सकता है। विजित प्रदेश तीन प्रकार का होसकता है।

(१) नवीन।

(२) भूतपूर्व।

(३) पित्र्य।

(१) नवीन नवीन प्रदेश को जीतते ही शत्रु के दोषों को अपने गुणों से ढांपदे। यदि शत्रु गुणी हो तो उससे दुगुने गुणों को दिखावे। प्रजा तथा प्रकृति का हित धर्म्म कर्म्म, अनुग्रह, परिहार, दान तथा मान संबंधी कामों से करे। कृत्यपक्ष [शत्रु से विरुद्ध होकर जिन्हों ने साथ दिया हो] को जो वचन दिया हो उसको पूरा करे। वार वार उनका ख्याल रखे। प्रकृति तथा प्रजा के विरुद्ध चलने से राजा अपने पराये लोगों में विश्वास खो बैठता है। इस लिये विजित देश के समान कपड़ा लत्ता पहिने व्यवहार करे तथा वैसाही अपना स्वभाव तथा रहन सहन बनावे। देश दैवत [मंदिर संबंधी] समाज संबंधी उत्सव तथा विहार (आमोद प्रमोद) संबंधी कामों में अपनी श्रद्धा भक्ति प्रकट करे। ग्रामजाति तथा संघ की पंचायतों में गुप्तचर वार वार शत्रु की निन्दा करे तथा दोष दिखावे। विजिगीषु के द्वारा प्राप्त आदर सत्कार समृद्धि तथा भक्ति को प्रगट करे। राजा संतुष्ट लोगों को दान परिहार

(राज्यकर से मुक्ति) तथा संरक्षण से खुश रखे । धार्मिक लोगों की इज्जत करे । विद्वान् न्याय निष्णात (वाक्यकुशल) धार्मिक तथा शूरवीर लोगों को भूमि द्रव्य दान तथा परिहार आदि से प्रसन्न करे। पुराने राजा के कैदियों को कैद से छुडावे। बीमारों तथा दुखियों की खबर ले । चातुर्मास्यों (चौमासा) में आधे महीने तक पौर्णमासियों में चार दिन तक और राजकीय तथा जातीय दिनोंमे एक दिन तक पशुओं का घात बन्दकर दे। बालक तथा स्त्रीका घात और पशुओं का पुंस्त्वोपघात (बधिया करना) रोक दे। कोश तथा दंड को नुक्सान पहुंचानेवाले पाप पूर्ण रीति रिवाज को हटाकर उनके स्थानपर धार्मिक रीति रिवाज तथा व्यवहार प्रचलित करे। चोरी करने की आदत वाले म्लेच्छ लोगों का स्थान बदलदे और उनको पृथक् २ रखे। शत्रु के साथ षड्यंत्र रचने वाले दुर्ग राष्ट्र तथा दंड (सेना) के मुखियों को तथा मन्त्रि पुरोहित आदियों को देश के अन्त में भिन्न भिन्न स्थानों पर बसादे। स्वामी के नाश के इच्छुक शक्तिशाली लोगों को चुप्पे चुप्पे (उपांशु दंड) मरवादे । शत्रु के साथ पकड़गये स्वदेशी लोगों को राष्ट्र के अन्त में रहने-केलिये कहे । यदि उनमें से कोई बदला लेने में समर्थ हो अच्छे घराने का हो राष्ट्र के अन्त में या जंगल में रहता हो तथा समय समय पर तंग करता हो तो उसको उपर जमीन में भेजदे और उपजाऊ जमीनका केवल चौथाई भाग ही दे। कोश तथा दंड के सहारे पौर तथा जानपद लोगों को गदर के लिये खड़ा करे तो उसको उन्ही लोगों से मरवादे । जो प्रजा या प्रकृति को क्रुद्ध करे तो उसको दूर करदे या डराबने या खतरनाक स्थान में भेजदे ।

(२) भूतपूर्व । राजा भूतपूर्व जनपद को प्राप्त कर उस दोष को दूर करे या ढांपदे जिसके कारण वह देश उसके हाथ से निकल गया था । जिन गुणों से उसने जनपद को प्राप्त किया उसको बढ़ावे ।

(३) पित्र्य पिता माता से जनपद को प्राप्त कर पिता के दोषों को ढांपदे और गुणों को प्रकाशित करे।

दूसरों के धर्म्म युक्त काम तथा नवीन रीति रिवाज (चरित्र) को अपने देश में प्रचलित करे। दूसरों के अधर्म्म युक्त काम को दूर करे और कोई भी ऐसा काम न करे जो कि धर्म्म से विरुद्ध हो।

१४. अधिकरण

औपनिषदिक।

१७७ प्रकरण।

पर घात प्रयोग।

चातुर्वर्ण्य की रक्षा के लिये अधर्मिष्ठ लोगों पर घातक वस्तु [औपनिषदिक] का प्रयोग किया जाय। भिन्न भिन्न देशों के वेष [फैशन] तथा शिल्प को जानने वाले तथा कुबड़े बौने जंगली गूंगे बहरे तथा बेवकूफ बने फिरते म्लेच्छ जाति के पुरुष तथा स्त्रियां शत्रु के शरीर तथा कपड़े लत्ते में कालकूट आदि विषैली चीजों का प्रयोग करें। उसके खेलने पहिनने तथा अन्य काम में आने वाले पदार्थों में गुप्तचर शस्त्र और याज्ञिक, रात्रिचारी [पहरेदार] तथा अग्निजीवी [आग से काम करने वाले] अग्नि छिपाकर रखदें।

भलावा तथा वलगुका के रसमें यदि—चित्र भेक [विषैला-मेंडक] कौंडिन्य, कर्कंकण, पंचकुष्ठ तथा शतपदी [सौकुड़वा]—उच्चिटिङ्गक [बिच्छू], वलीशतक, इध्म तथा कृकलास (गिरगिटांग), गृह गोलिका (विस्तुइया) अंधा सांप, क्रकंठ पूतिकीट तथा गोमारिका आदिका चूर्ण मिलाकर जलाया जावे तो उसका निकला धुंआं शीघ्र ही प्राणियों की जान लेले। यदि इसको काले सांप तथा ककुनी के साथ मिलाकर तपाया जावे तो यह शीघ्र ही प्राणीको कालका ग्रास बनादे। धामार्गव (कडुई तरोई), यातुधान का मूल तथा भलावे के फूल का चूर्ण आधे महिने में और व्याधिघातक मूल तथा जहरीले कीड़ों के सहित भलावे के फूलका चूर्ण एक

महिने में मनुष्य की जान लेलेता है। मनुष्यों को कलामात्र, गदहों तथा घोड़ों को दुगुना और हाथियों तथा ऊंटों को चौगुना देना चाहिये। शतकर्दम, उच्चिटिंगक (विच्छू) कनैर, कडुई तूंबी तथा मच्छी के धुएं को यदि मैनफल कोदों तथा काविस—या हाथीकान ढ़ाक तथा काविस के पत्तों से इधर उधर हिलाया जाय तो वह जिधर जाता है उधर मारता है। पूतिकीट, मच्छी, कडुई तुंबी, शतकर्दम, इध्म तथा वीरबहूटी—या पूतिकीट भटकटैइया राल धतूरा तथा विदारी कंद—या भेड़ का सींग तथा खुर—इनके या कठकरंज हड़ताल मनोसिल घुंची लाल कपास, आस्फाट, सीसा तथा गोवर के चूर्ण का धुआं अंधा कर देता है। सांप की केंचुली गौ घोड़े की लीद तथा अंधे सांप के सिरका धुंआं भी अन्धा बना देता है कबूतर प्लवक (जल जंतु) मांसाहारी जंतु, हाथी, मनुष्य तथा सुअर का पाखाना पेशाव—कासीस हींग भूसा चावल तथा कपास कुइया तथा कडुई तरोई के बीज—गोमूत्रिका तथा शिरीष की जड़—नींब सहजन, नागफनी, तुलसी, त्तीव (सहजन का-दूसरा भेद) पीलुआ तथा भांग—सांप मछली चमड़ा हाथी का नख तथा सींग—इत्यादि में किसी को भी मैनफल तथा कोदों या हाथीकान ढ़ाक के साथ जलाने पर जो धुंआं निकालता है। वह जिधर जाताहै उधर मारताहै। अगर, कुष्ट, नड़ा तथा शतावरकी जड़—सांप मोर कृकृहण तथा पंचकुष्ठ का चूर्ण—इनका धुंआं प्राणियों की आंखों को नष्ट कर देता है अतः संग्राम तथा किले का घेरा डालते समय ऐसे धुंएं को करने से पूर्व अंजन पानी से अपनी आंखों के बचाने का प्रबंध करले। मैना कबूतर बगुला तथा बलाका का पाखाना—स्नुहि (सेहुड़) तथा पीलु के दूध में पीसा हुआ आंखों को अंधा करता है और पानी को खराब कर देता है। जई, साठी के चावल की जड़, मैनफल, जावित्री, मनुष्य का पेशाब, पाखर तथा विदारीमूल—कठगुल्लर, मैनफल तथा कोदों के काथ या हाथीकान ढाक के काथ से युक्त मैनफल—काकड़ासिंगी, गुम्मा, भटकटैइया तथा मयूरपदी—घुंची कारियारी विष की जड़ तथा गौंदी—कनैर, अक्षि, पीलु का फल, मदार

तथा मृगमारिणी--मैनफल कोदों के काथ या हाथीकान तथा ढाक के साथ युक्त मैनफल—यह संपूर्ण योग घास लकड़ी तथा पानी को खराब कर देते हैं। कृतषण्डक, गिरगिटांग, विस्तुइया, तथा अन्धे सांप का धुंआ आंख नष्ट करने के साथ साथ उन्माद करता है। कृकलास (गिरगिटांग) तथा विस्तुइया का योग कोढ़ करता है। यदि उसमें चित्रभेक की अंतड़ी तथा शहत मिला दीजाय तो वह प्रमेह उत्पन्न करता है और यदि उसमें मनुष्य का खून मिलादें तो राजक्ष्मा करता है। दूषीविष (सूखी या पुरानी जहर) मैनफल तथा कोदों का चूर्ण जीभ पर फफोले डाल देता हैं या दूसरी जीभ पैदा करदेता है। मातृवाहक, अंजलिकार, प्रचलाक, भेक, अधि तथा पलिक का योग हैजा फैलाता है। पंचकुष्ठ, कौंडिन्य, अमलतास, महुआ तथा शहत बुखार और चील तथा न्युअला जीभ में फफोले डालता है। यही गदही के दूध में पीसा जाकर गूंगा तथा बहरा कर देता है। पशुओं तथा मनुष्यों पर इनकी मात्रा का समय मास अर्धमास तथा कलामात्र (कुछ ही समय) है। उपरिलिखित योगों की शक्ति यदि बढ़ानी हो तो उनमें भांग संपूर्ण औषधों का चूर्ण या संपूर्ण प्राणियों के मांस का काथ मिला दिया जाय। सैंभर, विलइयाकन्द तथा धनिया से युक्त तथा बच्छुनाग की जड़ तथा छछूंदर के खून से लिप्त बाण जिसको लगता है वह अन्य दस आदमियों को काटता है और वह भी अन्य दस दस आदमियों को काटते हैं। भलावा, यातुधान, कडुईतुंबी पियावांसा, पत्थरफूल, भैंसिदा गुग्गुल तथा हालाहल का काढ़ा भेड़ या या मनुष्य के खून से मिलाने के बाद जिसको लगा दिया जाय उसको बिच्छू के काटने की तरह तकलीफ होने लगती है। इसका आधा धरणसत्तु तथा खली के साथ मिलाकर पानी में डालते ही १०० धनुष तक पानी को खराब कर देता है। इसको खाते ही मच्छियां जहरीली होजाती हैं और वह सब प्राणी विषैले होजाते हैं जोकि ऐसे पानी को पीते या छूते हैं। लाल सफेद सरसों गोह तथा कडुईतुंबी को जमीन में गाड़कर वध्य पुरुष से बाहर निकलवाया जायगा। इसको जो कोई देखता है वही मर-

जाता है। बिजली से मरा काला सांप और बिजली से जली लकड़ियों से ग्रहण की गई घरकी आग के द्वारा यदि कृत्तिका भरणी में भयंकर यज्ञ किया जाय तो यह आग जहां लगजाय वहां किसी भी तरीके से बुझाये नहीं बुझती॥

यदि शहद् से लोहार की—शराब से कलवार की—घी से याज्ञिक की—माला से एकपत्नीक [जिसके एक स्त्री हो] की—सरसों से पुंश्चली (बदमाश औरत) की—दहीसे सूतिका की—चावलों से आहितागिन की - मांस से चंडाल की—मनुष्य मांस से चिता की और मनुष्य तथा भेड़ की चरबी से सब लोगों की अग्नि में अमलतास की लकड़ी लगाकर अग्नि मंत्र से हवन किया जाय तो इससे जो अग्नि पैदा हो वह शत्रुओं की आंखों में चका चौंध पैदाकरदे और किसी से भी बुझाये न बुझे।

(अग्नि मंत्र)

अदिते नमस्ते, अनुमते नमस्ते, सरस्वति नमस्ते, सवितर्नमस्ते अग्नये स्वाहा, सोमायस्वाहा, भूःस्वाहा, भुवःस्वाहा।*

१७८ प्रकरण।

अद्भुतोत्पादन।

शिरीष, गुल्लर तथा शमी का चूर्ण आधा महीना—कसेरु, नील-कमल, सूरण, ईख की जड़, भसीड़ा, दूब, दूध, दूध तथा घी की चटनी महीना भर—दूध घी के साथ उर्द, जौ, कुलथी तथा कुशा की जड़ का चूर्ण—दूध के साथ दूधिया बूटी दूध तथा घी की समान मात्रा से बनी सारीवन, पिठवन के जड़ की चटनी या दूध पूर्ववत् बनाया हुआ दूध शहद् तथा घी महीना भर भूख नहीं लगने देता। सफेद भेड़ के मूत में सात दिन तक रखी सफेद सरसों या महीना आधा महीना रखे कड़ुए तूंबे के बीजों या सात दिन तक मट्ठा तथा जौ का आहार करने वाले सफेद गदहे की

* अदिति, अनुमति, सरस्वति, तथा सविता, को नमस्ते। भूः स्वाहा। भुवः स्वाहा।

लीद में पैदा हुए जौ तथा सफेद सरसों का तेल पशुओं, छिपायों तथा चौपायों का रूप बदल देता है। इन ही पशुओं में से किसी के मूत तथा लीद में सिद्ध की गई सफेद सरसों मदार की रुई तथा पतंग लकड़ी—सफेद मुर्गा तथा अजगर सांप की लीद—सफेद भेड़ के मूत में सात दिन तक पड़ी सफेद सरसों तथा पन्द्रह दिन तक पड़ा मट्ठा मदार का दूध नमक तथा धान्य रांगा को और आधा महीना भेड़ के मूत में पड़ी सरसों तथा कड़ुई तुंबी के बेल के डंठलों का उबटन रोंमें या बाल को सफेद करता है। इसी प्रकार अलावु नामक कीड़े के साथ पीसी गई सफेद विस्तुइया के उबटन से बाल शंख की तरह सफेद होजाते हैं।

तिंदुआ लकड़ी तथा गोबर का अरिष्ट--भलावे का रस और काले सांप या विस्तुइया के मुंह में सात दिन तक रखी घुंची खाने से तथा तोते के पित्त तथा अंडे का रस मलने से कोढ़ हो जाता है। चिरौंजी का कल्क तथा कषाय कोढ़ को दूर करता है। मुर्गा, कड़ुई तरोई तथा शतावर की जड़ महीना भर खाने से काला मनुष्य गोरा और बड़ के कषाय से नहाकर पिया बांसा के कल्क को मलने से गोरा मनुष्य काला हो जाता है। मालकंगुनी के तेल में मिला हड़ताल तथा मनसिल रंग को सांवला कर देता है। सरसों के तेल से मिला जुगुना का चूर्ण रात को जलता है। मालकंगुनी के तेल में पड़ा—जुगुनी तथा केंचुए का चूर्ण या समुद्र जन्तुओं के साथ मिला भृंग, कपाल, खैर, तथा कनैर के फूलों का चूर्ण तेजन (पाचक) होता है।

नीव की छाल तथा तिल का वटना लगाने से शरीर आग से जलने लगता है। यही बात मेंडक की चरवी के लगाने से होती है। पीलु के छाल की राख हाथ पर जलती है। मेंडक की चरवी लगा कर कुश तथा आम के तेल से सींचने पर या समुद्रमंडूकी [मेंडकी] समुद्रफेन तथा राल का चूर्ण डालने पर आग लगाते ही शरीर जल पड़ता है। मेंडक केंकड़ा आदिकी चर्वी में समानमात्रा में मिलायागया तेल, मेंडक की चर्वी का लेप—बांसकी जड़ शैवाल तथा मेंडक की चर्वी के उबटन से भी यही बात होती है। नींब अतिबला

जलवेतस सूरण केले की जड़ तथा मेंडककी चर्वी से बनाये गये तेल को पैरों पर मलने से जलते हुए अंगारोंपर चलसकता है।

पोयेका शाक, प्रतिवला, वेत नींव, आदि की जड़ों के कल्क में मेंड़क की चर्वी से बना तेल यदि पैरों पर मलाजाय तो मनुष्य फूलों के ढेर की तरह जलते अंगारों पर चल सकता है। हंस क्रौंच मयूर आदिकों तथा जलमें तैरने वाले बड़े बड़े पक्षियों के पूंछ में जलती हुई नड़ी [नल दीपिका] बांधने पर ऐसा मालुम पड़ता है कि मानों आकाश में से आग गिर रही है। विजली से जली लकड़ी की राख आगको बुझा देती है। स्त्रियों के मासिक पुष्प (मासिक धर्म्म में बहा रक्त) में भीगे उर्द यदि वजकुली की जड़ तथा मेंडक की चर्वी के साथ मिलाकर चूल्हे में डाल दिये जांय तो उसपर कोई भी चीज़ नहीं पकती चूल्हे को सफा करनाही इसका उपायहै पीलु युक्तजलते हुए गोले को यदि हुर हुर की जड़ पिपरामूल तथा रुईकी गद्दी से लपेट कर मुंह में रखाजाय तो मुंहसे धुंआ निकलने लगता है। कोशाम्र के तेल से सींचने पर वृष्टिमें भी आग जलती रहती है। समुद्र फेन तेल डाल कर जलाने पर पानी में तैरता हुआ जलता रहता है। पानी पर तैरने वाले जन्तुओं की पसली को कल्माष वेणु के साथ रगड़ने से पैदाहुई आग पानी से बुझाने के स्थानपर जलती है। शस्त्र से मारे या फांसी चढ़े आदमी की पसली तथा कल्माषवेणु के रगड़ने से—या स्त्री या पुरुष की हड्डी तथा मनुष्य की पसली के रगड़ने से पैदा हुई आग जिस मकान के चारों तरफ बांई ओर तीन वार घुमाई जाय उस मकान में किसी भी प्रकार की आग नहीं लगती। छछूंदर खंजन चिड़िया तथा खार कीट के साथ घोड़े के मूत में पिसाहुआ लेप हथकड़ी या पैर की संकड़ी के तोड़ने के काम में आता है। कोई भी मनुष्य पचास योजन तक विना थके ही जा सकता है बशर्ते कि वह—कुलिन्द, मेंडक, खार कीट की चर्वी से अयस्कान्त नामक पत्थर का लेप करे, सफेद चील या गिद्ध की पसली, नील कमल तथा नारकगर्भ का लेप पशुके पैरपर मले और उल्लू गिद्ध की चर्वी से ऊंट के चमड़े के जूतों को मले तथा वड़ के पत्तों से ढांक कर पहिने। जो मनुष्य

बाज, सफेद चील, गिद्ध, हंस, क्रौंच तथा विचिरल्ल नामक जन्तुओं की चर्वी या वीर्य्य की पैरों पर मालश करे वह १०० सौ योजन तक बिना थके चला जासकता है। यही बात गर्भवती ऊंटनी की छितबन (जड़ी बूटी) मिली चर्वी तथा श्मशान में पड़े मृत बालक की चर्वी के मलने से भी होती है।

उपरिलिखित प्रकार के अनिष्ट तथा अद्भुत उत्पातों के द्वारा शत्रु के उद्वेग को बढ़ावे। जनता में गदर होजाने की संभावना होते ही शत्रु के साथ संधि करने का यत्नकरे।

१७८ प्रकरण।

दवाई तथा मंत्र का प्रयोग।

रात में फिरने वाले—ऊंट बाघ सुअर सही बागुली उल्लू आदि जीवों में से एक दो या बहुतों की दहिनी बांई आंख से बनाया गया चूर्ण दहिनी आंख का बांये में और बांई आंख का दहिने में लगाने से—बराह की आंख, जुगनू, काली सरिवां तथा एकाम्ल के योग से बने अंजन के आंख में लगाने से तथा—पुष्प नक्षत्र में तीन दिन तक व्रत रखे पुरुष के द्वारा, शस्त्रहत या शूल प्रोत [फांसी पर लटके] मनुष्य की खोपड़ी में बोये तथा भेड़ के मूत से सींचने से पैदा हुए जौ की माला गले में पहिनने से मनुष्य रात में देखने लगता है।

पुष्य नक्षत्र में तीन दिन तक व्रत रखकर जो मनुष्य—कुत्ता बिल्ली उल्लू बागुली आदिकों की दहिणी बांई आंख का पृथक् पृथक् चूर्ण कर पूर्ववत् आंख में लगावे या—निशाचर जंतुओं की खोपड़ी में अंजन भरकर मृत स्त्री की योनि में जलावे तथा पुष्य नक्षत्र में निकाल कर पुनः वहां पर रख दे तथा पुरुषघाती कांड [डंठल] के द्वारा आंख में लगावे या—अहिताग्नि याज्ञिक को जला हुआ या जलता हुआ देखकर उसकी चिता की भस्म को स्वयं मृत पुरुष के कपड़ों में बांध कर अपने शरीर में बांधे तो छाया तथा रूप रहित होकर वह इधर उधर फिर सकता है। सांपकी धौंकनी—

ब्राह्मण के मृतक संस्कार में मारीगई गौ की हड्डी चरबी से भरने पर पशुओं को और सांप के काटने से मरे मनुष्य की हड्डी चरबी से भरने पर मृगों को तथा इसी प्रकार प्रचलाक जंतु की धौंकनी उल्लू बगुली की पूंछ वीट घुटने की हड्डी आदि से भरने पर पक्षियों को अन्तर्धान कर देता है। अन्तर्धान करने के यही आठ तरीके हैं।

१. (प्रस्वापन मंत्र)

बलिं वैरोचनं वन्दे शतमायं च शंवरम्।
भंडीरपाकं नरकं निकुम्भं कुंभ मेव च॥
देवलं नारदं वन्दे वन्दे सावर्णिगालवम्।
एतेषा मनुयोगेन कृतं ते स्वापनं महत्॥
यथा स्वपन्त्यजगरास्स्वपन्त्यपि चमूखलाः।
तथा स्वपन्तु पुरुषा येच ग्रामे कुतूहलाः॥
भंडकानां सहस्रेण रथनेमिशतेन च।
इमं गृहं प्रवेदयामि तूष्णीमासन्तु भांडकाः॥
नमस्कृत्वा च मनवे बध्वा शुनकफेलकाः।
ये देवा देवलोकेषु मानुषेषु च ब्राह्मणाः॥
अद्ध्ययनपारगास्सिद्धाः येच कैलास तापसाः।
एतेभ्यस्सर्वसिद्धेभ्यः कृतं ते स्वापनं महत्॥
अतिगच्छति चमर्यपगच्छंतु संहताः।
अलिते पलिते मनवे स्वाहा। *

---

* विरोचनके पुत्र बलि, सैकड़ों प्रकार की माया जानने वाले शंबर, भंडीरपाक, नरक, निकुंभ, कुंभ, देवल, नारद, सावर्णि गालव, आदिको मैं नमस्कार करता हूं। इनकी कृपासे तुम लोगों को सुलादिया गाया है। जिस प्रकार अजगर सांप सोते हैं उसी प्रकार—गांव के पहरे दार लोग कुत्ते तथा रथ के घोड़े सो जांय। मैं इस घरमें घुसता हूं कि कुत्ते न भौंकें तथा चुप बैठ जांय। कुत्तों को बांधने तथा मनुके नमस्कार करने के बाद मैं—स्वर्ग के देवों, मनुष्यों में ब्राह्मणों, अध्ययन में चतुर सिद्धों, कैलासपर रहने वाले तपस्वियों तथा संपूर्ण सिद्धों की दुहाई देकर कहता हूं कि तुम लोग गाढ़ी नींद में सो जाओ। चमरी बाहर निकाल आवे, संपूर्ण संघ भाग जांय अलित पलित तथा मनु को स्वाहा।—

प्रस्वापन मंत्र का प्रयोग इस प्रकार करे। पुष्य नक्षत्र की कृष्ण चतुर्दशी में तीन दिन तक व्रत रखकर चांडाली के हांथ से उंगुलियों के नख खरीदे जांय। उनको उर्द के साथ मिला कर पिटारी में वंदकर दिया जाय और इसके वाद पिटारी को श्मशान में गाड़ दिया जाय। अगली चतुर्दशी में किसी कुमारी से खुदवा कर उस की गोलियां बनाई जांय। उपरिलिखित मंत्र पढ़कर वह गोली जिधर फेंकी जाय उधर लोग वेहोश हो जाते हैं। इसी प्रकार सही के तीन सफेद तथा तीन ही काले कांटे श्मशान भूमि में गाड़ जांय। दूसरी चतुर्दशी में उखाड़ कर इनको मुर्दे की राख के साथ उपरिलिखित मंत्र के द्वारा फेंकने पर सब जीव जंतु सोने लगते हैं।

२.[प्रस्वापन मंत्र]

सुवर्ण पुष्पीं ब्रह्माणीं ब्रह्माणं च कुशध्वजम्।
सर्वाश्च देवता वन्दे वन्दे सर्वांश्च तापसान्॥
वशं मे ब्राह्मणा यान्तु भूमिपालाश्च क्षत्रियाः।
वंश वैश्याश्च शूद्राश्च वशतां यांतु मे सदा॥

स्वाहा अमिले किमिले वयुजारे प्रयोगे फके कवयुश्वे विहाले दन्त कटके स्वाहा।

सुखं स्वपंतु शुनका ये च ग्रामे कुतूहलाः।
श्वाविधः शल्यकं चैतत्त्रिश्वेतं ब्रह्मनिर्मितम्॥
प्रसुप्तास्सर्वासिद्धा हि एतत्ते स्वापनं कृतम्।
याव द्ग्रामस्य सीमन्तः सूर्य्यस्योद्गमनादिति॥
स्वाहा। *--*

** भण भाणी के फूलवाली ब्राह्मणी, कुशाकीध्वजावाले ब्रह्मा, संपूर्ण देवता तथा तपस्वी आदियों को नमस्कार करके प्रार्थना करताहूं कि ब्राह्मण शूद्र क्षत्रिय तथा वैश्य मेरे बसमें आजांय। अमिल, किमिल, बयुजार, प्रयोग, फक, कबयुश्व, बिहाल, दन्त कटक आदिको स्वाहा। गांवका पहरा देने वाले कुत्ते सो जांय। सेही के तीन सफेद कांटे ब्रह्मा ने बनाये है। संपूर्ण सिद्ध सोगये हैं और उन्होंने सूर्य्य के उदय होने से पूर्व पूर्व तक गांव की सीमा में रहने वाले संपूर्ण लोगों को सुला दिया है।

इस मंत्र का प्रयोग इस प्रकार है । सात दिन तक व्रत रख कर कृष्ण चतुर्दशी में सही के तीन सफेद कांटों तथा (पर की १०८ समिधाओं) के साथ हवन करे । इन में से किसी एक मंत्र को पढ़ कर जिस किसी एक गांव या मकान के दरवाजे पर खोदा जाता है तो वहां के सब लोग सो जाते हैं ।

३. (प्रस्वादन मंत्र)

बलिं वैरोचनं वन्दे शतमायं च शंबरम् ।
निकुंभं नरकं कुंभं तन्तु कच्छं महासुरम् ॥
अर्मालवं प्रमीलं च मंडोलूकं घटोद्बलम् ।
कृष्णकंसोपचारं च पौलोमीचं यशस्विनीम् ।
अभिमन्त्रय्य गृह्णामि सिद्धार्थं शवशारिकाम् ॥
जयन्तु जयति चन मः शलकभूतेभ्यः स्वाहा ।
सुखं स्वपंतु शुनका ये च ग्रामे कुतूहलाः ॥
सुखं स्वपंतु सिद्धार्था यमर्थं मार्गयामहे ।
यावदस्तामयादुदयो यावदर्थं फलं मम ॥
इति स्वाहा । ※

इस मंत्र का प्रयोग इस प्रकार है । चार रात तक व्रत करने के बाद कृष्ण चतुर्दशी में पशु को मारकर चढ़ावे और मरी हुई मैना को पत्तल में बांधकर सही के कांटे से उपरिलिखित यंत्र पढ़कर जिस स्थान में इस में छेद करे उस स्थान के सब लोग सो जाते हैं ।

१. [द्वारावाह मंत्र]

उपैमि शरणं चाग्निं दैवतानि दिशो दश ।
अपयान्तु च सर्वाणि वशतां यांतु मे सदा ॥ स्वाहा । †

※ विरोचन के पुत्र वाले, सैकड़ों प्रकार की माया जानने वाले शंबर, निकुंभ, नरक, कुंभ, तन्तु कच्छ, महासुर, अर्मालय, प्रमील, मंडोलूक, घटोद्बल, कृष्ण, यशस्विनीदौलोमी आदि का मन्त्र जपकर सिद्धि के लिये मरी हुई मैना को ग्रहण करता हूं । शलक भूतों को स्वाहा तथा नमस्कार ।

गांव के पहरा रखने वाले कुत्ते सोजांय । सिद्ध लोग, गाढी नींद में लीन होजांय। सूर्य्य के उदय होने तक मेरा वह कार्य्य सिद्ध होजाय जिस कार्य्य के लिये मैं यत्न कर रहा हूं ।

† अग्नि, दश दिशाओं के देवताओं के देवताओं की शरण में हूं सब लोग भाग जांय तथा मेरे वश में आजांय । स्वाहा ।

इस मंत्र का प्रयोग इस प्रकार है। तीन रात तक व्रत रखने के बाद शक्कर के बीस लड्डू बनावे और शहत् तथा घी के साथ हवन में डाले। इस के बाद लड्डुओं को गन्ध तथा माला से पूजा करे। और उनको जमीन में गाड़ दे। पुष्य के द्वितीय दिन में लड्डु निकाल कर उपरिलिखित मंत्र पढ़े और एक लड्डू तो किवाड़ पर मारे और चार मकान के अन्दर फेंक दे। दरवाजा अपने आप खुल जायगा।

चार रात तक व्रत रखने के बाद कृष्ण चतुर्दशी में पुरुष की हड्डी से बैल बनावे। उपरिलिखित मंत्र पढें। इस से दो बैल लगी गाड़ी सामने आजायगी। चढ़ते ही वह आकाश में चली जायगी। इस प्रकार सूर्य मंडल के विषय में सब कुछ बता सकता है।

(तालोद्घाटन प्रस्वापन मंत्र)

चांडाली कुंभ निकुम्भ कटुक साराघः सनीरभिगोऽसि स्वाहा।

इस मंत्रको पढने से ताले टूट जाते हैं। और घरके लोग सो जाते हैं।

तीन रात दिन तक व्रत रखने के बाद पुष्य नक्षत्र में–शस्त्र से मारे या फांसी पर लटकाये मनुष्य के सिरके खप्पर में मट्टी भरकर, सोमलता लगाई जाय और उसको पानी से सींचा जाय। जो बेल लगे उसको पुष्य नक्षत्र में ही काटाजाय और उसकी रस्सी बंटी जाय। ज्यावाले धनुषों तथा यंत्रों के सामने इसको तोड़ते ही उनकी ज्या टूटजाती है। स्त्री या पुरुष की उच्छ्वासमृत्तिका [फूंकी हुई मट्टी] से, पानी से भरी सांप की धौंकनी को, भरते ही दूसरे की नाक सूजकर आगे बढजाती है। मुंह तथा मकान के संबंध में भी यही जन्त्र मन्त्र किया जाता है। यदि धौंकनी सुअर तथा हाथी की हो और उसको मट्टी से भरकर बन्दर की आंतड़ी में बांधा जाय तो शरीर लंबाई चौड़ाई में कहीं का कहीं पहुंच जाता है अनाह।

यदि कोई शस्त्र से मरी भूरी गौ के पित्त में कृष्णचतुर्दशी के अन्दर–अमलतास की बत्ती दुश्मन की मूर्ति को डुबावे तो शत्रु अंधा हो जाता है। यदि कोई चार रात व्रतरखकर बकरा भेड़ आदि देवता पर कृष्णचतुर्दशी में चढावे और फांसी पर लटकाये आदमी की

हड्डियों की कीलें बनावे और इनमें से किसी एक को जिस किसी के पाखाने पेशाब के गड्ढे में बन्द करदे तो उसका शरीर फूलजाता है। यदि यही बात पैर या आसन में कीजाय तो मनुष्य राजयक्ष्मा से मृत्यु को प्राप्त होजाय। दुकान मकान या खेत में यही करने पर मनुष्य की आजीविका बन्द होजाती है। बिजली से जली लकड़ी की राख को लेपकर जो कीलें बनाई जाती हैं उनका अनुमान भी इसीसे करलेना चाहिये।

दक्षिणी गदा पूरना,* † नींव मुलहटी, बन्दर का रोमा, मनुष्य की हड्डी इन चीजों को कफ्फन के कपड़े में बांध कर जिस के घर में गाड़ा जाय या जो मनुष्य इन के ऊपर पैर रखकर निकल जाय वह स्त्री बालबच्चे धन धान्य सहित, तीन पक्ष के भीतर भीतर ही नाश को प्राप्त होजाय। इसी प्रकार दक्षिणी गदा पूरना, नींव, मुलहटी, किंवा च ‡ तथा मनुष्य की हड्डी जिस के पैर में गड़ जाय या घर सेना गांव तथा शहर के बाहर गाड़ी जांय तो लोग स्त्री बाल बच्चे धन धान्य सहित तीन पक्ष के भीतर ही नाश को प्राप्त हो जांय। चंडाल ब्राह्मण, कउआ उल्लू बकरा तथा बन्दर के बाल जिसके पाखाने में मिला दिये जांय वह शीघ्र ही कराल काल का ग्रास हो जाय। मुर्दे की माला धोबन न्युवले के बाल, बिच्छू बूटी तथा अहिकृत्ति जिसके पैर में गड़जाय उसकी तबतक सूरत बदली रहे जबतक कि उनको उसके पैर से बाहर न निकाल दिया जाय।

यदि तीन रात तक व्रत रखने के बाद पुष्य नक्षत्र में फांसी पर चढ़े या शस्त्र से मारे पुरुष की खोपड़ी में घुंची बोई जाय और उसको पानी से सींचा जाय और पुष्य योगिनी अमावास्या या पूर्णिमा में घुंची की बेल को काटकर मंडलिका बनाई जाय तो उस पर रखे भोजन आदि से परिपूर्ण बर्त्तन नष्ट नहीं होते।

---

* "पुनर्नमवा चीनम" इसका अर्थ दक्षिणी गदा पूरना है। यह एक औषध है जो कि पन्सारियों के मिलजाती है। डाक्टर शामशास्त्री ने इसका अर्थ "नख" कर दिया है जो कि ठीक नहीं है। उन्हों ने स्वयं ही प्रश्न के चिन्ह से सूचित किया है कि यह अर्थ हम से नहीं लगा है।

‡ इसमें स्वयंगुप्ता का अर्थ डाक्टर शामशास्त्री ने छोड़दिया है। स्वयंगुप्ता का हिन्दी नाम किंवाच है। यह पन्सारियों के यहां मिल जाती है।

रातमें जब कभी कोई बड़ा तमाशा निकले तो मरी हुई गाय के थनों को काटकर जलती आग में भूना जाय, भुने हुए को भेड़ के पेशाब में पीसा जाय और पिसे हुए को नये घड़े के अन्दर लेपा जाय। ऐसे घड़े को गाव के बांई ओर से लेजाकर जहां कहीं रख दिया जाय तो गांव का सारा का सारा मक्खन—चाहे वह कहीं पर क्यों न रखा हो--इसी के अन्दर आजाता है। पुष्य योगिनी कृष्ण चतुर्दशी में कुत्ते की योनि में लोहे की मुद्रिका [अंगूठी] डाली जाय और जब वह अपने आप बाहर निकल पड़े तो उसको उठाले। इसके द्वारा वृक्षों के फल जहां चाहें वहां पुकारते ही अपने आप आजाते हैं।

मंत्र, भैषज्य योग तथा माया से संबंध रखने वाले उपायों से दुश्मनों को मारा जाय और अपनी रक्षा की जाय।

१७९ प्रकरण।

शत्रु घातक योगों से स्वपक्ष का रक्षण।

अपने पक्ष के लोगों पर शत्रु जब जहरों का प्रयोग करे तो उनका प्रतीकार इस प्रकार किया जाय।

लसोढ़ा, कैथा, जमालगोटे की जड़, जमीरीनि बुआ शिरीष, पाढ़ई, बांटियारा, बीजबंद, गदापूर्णा, सफेद अपराजिता, बरना, इनके काढ़े को लाल चंन्दन तथा सालावृकी के खून से मिलाकर जो तेजाब बनाया जाय वह राजा के उपयोगी चीज़ों मकानों स्त्रियों तथा सेनाओं पर प्रयोग किये गये जहर को दूर करता है। मृग, न्युअला, नीलकंठ, गोह, स्याही, राई, संभालू, बरना, इन्द्रासन, चौराई, शतावर तथा पिंडीतक का योग (चूर्ण या दवाई बनी हुई) मैनफल के दोषों को दूर करता है। यही बात - स्यार की लेंड, मैनफल, संभालू, तगर, बरना तथा सोमलता की जड़—इसमें से कुछ एक के या सभी के काढ़े को दूध के साथ पीने से होती है। नाटे काटेक रंज (कैडर्य पूति) का तेल उन्माद को दूर करता है। फूल प्रियंगु तथा नक्रमाल की बनी नकछिकनी कोढ़ को नष्ट करती

है। कूठ तथा लोध का चूर्ण पकने तथा सूजने [पाक शोष] को दूर करता है। कट फल, द्रवंति [जमालगोटे का एक भेद] तथा वायविडंग की बनी नकछिकनी सिर की संपूर्ण बिमारियों के लिये राम बाण है। फूलप्रियंगु, मंजीठ, तगर, लाख, मुलहटी, हल्दी तथा शहत् का योग [रसादन] रस्सी, पानी, जहर, चोट तथा गिरपड़ने से उत्पन्न हुई बेहोशी को दूर करता है। मनुष्यों को अक्षमात्र [कर्षमात्र, रुपयाभर] गउओं तथा घोड़ों को दुगुना और हाथियों तथा ऊंटों को चौगुना देना चाहिये। रुक्मगर्भ [जिसके अन्दर से रोशनी निकले] मणि संपूर्ण विषों को दूर करती है। जीवन्ती, अपराजिता, मोखा का फूल तथा बांदा के बीच में पैदा हुए पीपल की मणि संपूर्ण विषों का नाश करती है।

यदि इनके लेप को तुर्ही पर लगाया जाय तो उससे निकला शब्द जहर को नष्ट करदेता है। यदि इसको झंडे पर लेपा जाय तो जो लोग उसको देखें वह निर्विष [जहर रहित] होजांय। राजा को चाहिये कि वह उपरिलिखित तरीकों से अपने सैनिकों की रक्षा करे और जहर धुआं तथा दूषित पानी का शत्रुओं पर प्रयोग करे।

१५ अधिकरण।

तन्त्र युक्ति।

१८०—प्रकरण।

शास्त्र के प्रतिपादन की युक्ति।

मनुष्यों की वृत्ति तथा मनुष्य युक्त भूमि का नाम अर्थ है। भूमि के लाभ तथा पालन के उपाय को प्रगट करने वाले शास्त्र को अर्थशास्त्र कहते हैं। उसके प्रतिपादन की—१ अधिकरण, २ विधान ३ योग ४ पदार्थ ५ हेत्वर्थ ६ उद्देश ७ निर्देश ८ उपदेश ९ अपदेश १० अतिदेश ११ प्रदेश १२ उपमान १३ अर्थापत्ति १४

संशय १५ प्रसंग १६ विपर्य्यय १७ वाक्यशेष १८ अनुमत १६ व्याख्यान, २० निर्वचन, २१ निदर्शन, २२ अपवर्ग, २३ स्वसंज्ञा, २४ पूर्वपक्ष, २५ उत्तरपक्ष, २६ एकान्त, २७ अनागतावेक्षण, २८ अतिक्रान्तावेक्षण, २६ नियोग, ३० विकल्प, ३१ समुच्चय तथा ऊह्य—निम्नालिखित बत्तीस युक्तियां है।

१. अधिकरण। जिस विषयको लेकर प्रारंभ कियाजाय उसको अधिकरण कहते हैं। दृष्टान्त स्वरूप—"पृथिवी के लाभ तथा पालन के संबंध जितने अर्थशास्त्र पूर्वाचार्यों ने बनाये उनको एकत्रित कर तथा संक्षिप्त कर यह एक अर्थशास्त्र बनाया गया है" इत्यादि।

२. विधान। प्रकरणानुसार शास्त्र का वर्णन करना विधान कहलाता है। दृष्टान्त स्वरूप "विद्याविषयक विचार, वृद्धसंयोग, इन्द्रिय जय, अमात्योत्पत्ति" इत्यादि।

३. योग। "यह ऐसा है या इस प्रकार का है" इत्यादि विशेषणों से वाक्य को जोड़ने को योग कहते हैं। दृष्टान्त स्वरूप "चारों वर्णों से युक्त लोग" इत्यादि।

४. पदार्थ। पद तथा उसके अर्थ का नाम पदार्थ है। दृष्टान्त स्वरूप "मूलहर" यह पद है। "जो बाप दादे की संपत्ति को अन्याय से उड़ादे या जब्त करले उसको मूलहर कहते हैं" इस प्रकार व्याख्या करने का नाम अर्थ है।

५. हेत्वर्थ। प्रतिपादित विषय को पुष्ट करने वाले हेतु को हेत्वर्थ कहते हैं। जैसे "धर्म्म तथा काम अर्थपर ही निर्भर हैं" इत्यादि।

६. उद्देश। संक्षेप से एकबात कहने को उद्देश कहते हैं। जैसे "इन्द्रिय जयपर विद्या तथा विनय निर्भर है"।

७. निर्देश। समस्त शब्दों के द्वारा बात कहने को निर्देश कहते हैं। जैसे "कान त्वचा आंख जीभ तथा नाक शब्द स्पर्श रूप रस गन्धादियों को ओर न झुकने का नाम इन्द्रियजय है"। इत्यादि।

८. उपदेश । 'यह करना चाहिये' इस ढंग पर कहने का नाम उपदेश है। जैसे 'धर्म्म तथा अर्थ के अनुसार काम की सेवा करे। कष्ट न उठावे'' । इत्यादि ।

६. अपदेश । दूसरे के विचारों के देने का नाम अपदेश है । "मनुसंप्रदाय के लोग कहते हैं कि मन्त्रि परिषद् १२ अमात्यों की होनी चाहिये। बार्हस्पत्य १६ और औशनस २० आमात्यों के पक्ष में है। कौटिल्य का मत है कि सामर्थ्य के अनुसार ही संख्या होनी चाहिये" इत्यादि ।

१०. अतिदेश । उक्त बात से किसी बात को सूचित करना अतिदेश कहाता है जैसे "दत्त वस्तु के न देने के सम्बन्ध में ऋणादान विषयक नियम ही लगते हैं" इत्यादि ।

११. प्रदेश । वक्तव्य [आगे कही जाने वाली] बात से किसी बात को सूचित करना प्रदेश कहाता है। जैसे "साम दान भेद दंड के द्वारा वैसा करना चाहिये जैसाकि आपत्ति प्रकरण में कहा जायगा''।

१२. उपमान । दृष्ट से अदृष्ट का साधन उपमान कहाता है। जैसे "जिन के राज्यकर मुक्त होने का समय खतम होगया हो उन पर पिता के सदृश अनुग्रह करे' इत्यादि ।

१३. अर्थापत्ति । अर्थात् करके अनुक्त बात को जानना अर्थापत्ति कहाता है। जैसे "संसार के व्यवहार में कुशल लोग इष्ट-मित्रों के द्वारा शक्तिशाली राजा के पास पहुंचे। अर्थात् अनिष्ट लोगों के द्वारा उसके पास न पहुंचे वह तो इसी से निकल आया। इत्यादि ।

१४. संशय । एक ही बात जब दो ओर एक सदृश लगे तो उसको सशय कहते हैं। जैसे "क्षीण तथा लुब्ध प्रकृति वाले तथा अपचरित प्रकृति [जिस की प्रकृति अत्याचार से पिसी आरही हो] वाले राजा में से पहिले किस पर आक्रमण किया जाय'' इत्यादि ।

१५. प्रसंग । प्रकारान्तर से किसी बात का किसी के समान

प्रगट करने का नाम प्रसंग है। जैसे "कृषिकर्म के लिये दी गई भूमि में पूर्ववत् नियम समझना चाहिये"। इत्यादि।

१६. विपर्यय विपरीत बात से पुष्ट करने का नाम विपर्यय है। जैसे "जो राजा अप्रसन्न हो उसके इस से विपरीत चिन्ह है"। इत्यादि।

१७. वाक्यशेष। जिस बात से वाक्य समाप्त होता हो उसको वाक्य शेष कहते हैं। जैसे "पंख हीन की तरह राजा की गति नष्ट हो जाती है। इस में 'गति" यह वाक्यशेष है।

१८. अनुमत। अप्रतिषिद्ध पर-वाक्य को अनुमत कहते हैं। जैसे "औशनस के अनुसार--पक्ष, अग्रभाग तथा संरक्षित भाग--व्यूह के यह तीन विभाग हैं"। इत्यादि।

१९. व्याख्यान। विशेष रूप से कहने का नाम व्याख्यान है। जैसे "राज्य संघों तथा राज्य संघों के सदृश शासन करने वाले राजकुलों का द्यूत निमित्तक झगड़ा तथा एक दूसरे का नाश बहुत ही बुरा है। जुआ सब व्यसनों में बुरा व्यसन है क्योंकि इस से राजा निःशक्त होजाता है" इत्यादि।

२०. निर्वचन। गुण दिखाकर शस्त्र की व्याख्या करने का नाम निर्वचन है। जैसे "राजा को कल्याण मार्ग से दूर फेंकने [व्यस्यति इति व्यसन] के कारण ही व्यसन को व्यसन कहा जाता है"। इत्यादि।

२१. निदर्शन। दृष्टान्त युक्त दृष्टान्त को निदर्शन कहते हैं। "बड़े के साथ लड़ना ऐसा ही है जैसा कि नीचे खड़े होकर हाथी पर चढ़े आदमी से लड़ाई करना"। इत्यादि।

२२. अपवर्ग। अनिष्ट बात को पृथक् करने का नाम ही अपवर्ग है जैसे "दुशमन की सेना को अपनी सरहद पर रहने दे बशर्तेकि देश में गदर होने की संभावना न हो"। इत्यादि।

२३. स्वसंज्ञा अन्य लोगों से भिन्न अर्थ में शब्द के प्रयोग करने को स्वसंज्ञा कहते हैं। जैसे "विजिगीषु के राष्ट्र के पास

जो राष्ट्र हो उसको प्रथमा प्रकृति उस राष्ट्र के बाद का जो राष्ट्र हो उसको द्वितीया प्रकृति और जो इस के भी बाद हो उस को तृतीया प्रकृति कहते हैं"। इत्यादि।

२४. पूर्वपक्ष। प्रतिषिद्धव्य वाक्य को पूर्वपक्ष कहते हैं। जैसे "स्वामी तथा अमात्य सम्बन्धी विपत्ति में अमात्य सम्बन्धी विपत्ति ही भयंकर है"। इत्यादि।

२५. उत्तरपक्ष। निर्णय करने वाले वाक्य को उत्तरपक्ष कहते है। जैसे "राजा सम्बन्धी विपत्ति ही भयंकर है। क्योंकि राजा पर ही संपूर्ण बातें निर्भर हैं। राजा ही संपूर्ण बातों का केन्द्र है"। इत्यादि।

२६. एकान्त। सब अवस्थाओं में एक सदृश लगने वाले नियम को एकान्त कहते हैं। जैसे "राजा को सदा ही तैय्यार रहना चाहिये" इत्यादि।

२७. अनागतावेक्षण। आगे कही गई बात की ओर ध्यान खींचने का नाम अनागतावेक्षण है। जैसे "तराजू तथा बट्ट के विषय में पौतवाध्यक्ष के प्रकरण में कहा जायगा"। इत्यादि।

२८. अतिक्रान्तावेक्षण पीछे कही गई बात की ओर ध्यान खींचने का नाम अतिक्रान्तावेक्षण है। जैसे अमात्यों का गुण पूर्व में ही कहे जाचुके हैं"। इत्यादि।

२९. नियोग। ऐसा कहना चाहिये। ऐसा न कहना चाहिये इस ढंग की बात को नियोग कहते हैं। जैसे "धर्म्म तथा अर्थ की बात कहे। अधर्म्म तथा अनर्थ की बात न कहे"। इत्यादि।

३०. विकल्प। विकल्प इससे या उससे इस ढंग की बात कहना विकल्प कहाता है। जैसे "या धार्मिक विवाह से उत्पन्न लड़कियां"।

३१. समुच्चय। इसके लिये तथा उसके लिये इस ढंग पर कहने का नाम समुच्चय है। पिता तथा बन्धुओं के लिये वही दायाद है जो कि धर्म्म विवाह से विवाहित स्त्री पुरुष से उत्पन्न हुआ हो।

३२. ऊह्य। अनुक्त बात को सोच लेना ऊह्य कहते हैं । जैसे "कुशल लोग उसी ढंग पर निर्णय करें। जिससे दाता तथा प्रति गृहीता को नुक्सान न पहुंचे। इत्यादि।

इस प्रकार बत्तीस युक्तियों के द्वारा यह अर्थ शास्त्र लिखागया है। यह इसलोक तथा परलोक की प्राप्ति तथा रक्षा में समर्थ करता है। धर्म्म अर्थ तथा काम को प्रवृत्त करता है तथा बचाता है और अधर्म्म अनर्थ तथा विद्वेष को नष्ट करता है । जिसने नन्दराज के हाथ में गईहुई भूमि के साथ शास्त्र तथा शस्त्र का उद्धार किया उसीने इस शास्त्र का भी निर्माण किया है।

समाप्त ॥

चाणक्य के सूत्र।

१. सुख का मूल धर्म है।
२. धर्म्म का मूल अर्थ है।
३. अर्थ का मूल राज्य है।
४. राज्य का मूल इन्द्रिय जय है।
५. इन्द्रिय जय का मूल विनय या शिक्षण है।
६. विनय का मूल वृद्धों की सेवा है।
७. वृद्ध सेवा से ज्ञान बढ़ता है।
८. ज्ञान से आत्मा का ज्ञान होता है।
९. आत्मा के ज्ञान से आत्म शक्ति प्राप्त होती है।
१०. आत्मशक्ति से सब अर्थ प्राप्त होजाते हैं।
११. अर्थशक्ति से प्रकृति प्राप्त होती है।
१२. प्रकृति के प्राप्त होने पर विघ्नों से परिपूर्ण राज्य का भी संचालन होजाता है।
१३. प्रकृति का विद्रोह तथा कोप सब कोपों से भयंकर है।
१४. अशिक्षित तथा अविनीत राजा से न राजा का होना ही उत्तम है।
१५. संपत्ति के दिनों में सहायता प्राप्त करते हुए आत्मशक्ति को बढ़ावे।
१६. सहायता से हीन राजा का विचार कार्य्य में परिणत नहीं होता।
१७. अकेला पहिया गाड़ी नहीं चलाता।
१८. सहायक वही है जो कि सुख दुख का साथी हो।
१९. मानी अपने ही समान दूसरे मानी से मन्त्र या सलाह मशवरा करे।
२०. अविनीत से प्रेम में आकर कभी भी सलाह न ले।
२१. राज्यभक्त बुद्धिमान् व्यक्ति को मन्त्री बनावें।
२२. सलाह मशवरे के बाद ही संपूर्ण काम शुरू करने चाहिये।

२३. मन्त्र की रक्षा में ही कार्यसिद्धि होती है।
२४. जो मन्त्र प्रकाशित करता है वही सब काम बिगाड़ देता है।
२५. प्रमाद से राजा शत्रुओं के वशमें आजाता है।
२६. सब तरीके से मन्त्र की रक्षा करनी चाहिये।
२७. मन्त्र की रक्षा से राज्य की वृद्धि होती है।
२८. मन्त्र की रक्षा सबसे उत्तम काम है।
२९. कार्य्य से अंधे मनुष्य को सलाह तथा मंत्र प्रकाश देता है।
३०. मन्त्ररूपी आंख से दूसरे के दोषों को देख सकता है।
३१. मन्त्र के समय में ईर्षा द्वेष न करना चाहिये।
३२ जिस बात में तीन की एक संमति हो वही ठीक है।
३३. मन्त्री वही है जो कि कार्य्य तथा अकार्य्य को देखसकें।
३४. छः कानों के बीच में पड़ी बात फूट जाती है।
३५. विपत्ति में जो प्यार करे वही मित्र है।
३६. मित्र की प्राप्ति से बल बढ़ता है।
३७. शक्ति संपन्न नई २ चीज़ों के प्राप्त करने का यत्न करे।
३८. आलसी नई चीज़ों को नहीं प्राप्त करते।
३९. आलसी प्राप्त वस्तु की भी रक्षा नहीं कर सकते।
४०. आलसियों की सुरक्षित चीज़ बढ़ती नहीं है।
४१. नौकरों को आलसी काम पर नहीं लगा सकते।
४२. नई वस्तु का चौथाई राज्य का भाग है।
४३. नीतिशास्त्र का आधार राजा पर है।
४४. तन्त्र तथा आवाप राजा पर निर्भर है।
४५. तन्त्र का संबंध अपने विषय के प्रतिपादन से है।
४६. विषय का कार्यरूप में परिणत होना (आवाप) मंडल पर निर्भर है।
४७. मंडल संधिविग्रह का निश्चय करता है।
४८. राजा वही है जोकि नीति शास्त्र के अनुसार काम करे।
४९. शत्रु वही है जिसका स्वभाव न मिलता हो।
५०. मित्र वही है जिसका हृदय मिलता हो।
५१. कारण से ही मनुष्य शत्रु तथा मित्र होजाते हैं।

५२. कमजोर मनुष्य सन्धि करले ।
५३. तेज से ही अर्थ जुटते हैं ।
५४. ठंडा लोहा गर्म से नहीं जुड़ता है ।
५५. बलवान् हीनशक्ति से लड़ाई छेड़ ।
५६. बलवान् अपने से बलवान् या समान से लड़ाई न करे ।
५७. हाथी से लड़ने के सदृश ही बलवान् मनुष्य के साथ कमजोर मनुष्य की लड़ाई है ।
५८. कच्चा वर्तन झट से टूट जाता है ।
५९. दुश्मन के कामों की देख रेख रखें ।
६०. या एक ओर से संधि करले ।
६१. दुश्मन की दुश्मनी से अपने आपको बचावे ।
६२. यदि कमजोर हो तो ताकतवर का सहारा ले ।
६३. जो कमजोर का सहारा लेता है वह पीछे से तकलीफ उठाता है ।
६४. राजा को आग समझकर उसके पास रहे ।
६५. राजा के प्रतिकूल काम न करे ।
६६. बहुत सजधज के साथ न रहे । या चटकीला भड़कीला कपड़ा न पहिने ।
६७. देवताओं की लीला न करे ।
६८. एक दूसरे के साथ बढ़ाचढ़ी करनेवालों को आपस में फाड़दे ।
६९. तकलीफ में पड़े हुए मनुष्य की कार्यसिद्धि नहीं होती ।
७०. चतुरंग सेना होतेहुए भी भोग विलास में मस्त राजा नष्ट होजाता है ।
७१. जुआरी राजा का कोई भी कार्य्य सिद्ध नहीं होता ।
७२. शिकार के शौकीन राजाका धर्म्म तथा अर्थ नष्ट होजाता हैं ।
७३. अर्थ की इच्छा व्यसनों में नहीं गिनीजाती ।
७४. कामी राजा का काम सिद्ध नहीं होता ।
५७. गाली देना आग के जलाने से बढ़कर है ।
७६. गाली देने से मनुष्य सबका अप्रिय होजाता है ।
७७. संतुष्ट व्यक्ति के पास लक्ष्मी नहीं रहती ।

७८. अमित्र के साथ दंडनीति के काम में लावे।
७९. दंडनीति के सहारे ही राजा प्रजा की रक्षा करता है।
८०. दंडनीति समृद्धि को बढ़ाती है।
८१. दंड के अभाव में मन्त्रि गड़ बड़ करने लगते हैं।
८२. दंड के डरसे वह गड़ बड़ नहीं करते।
८३. दंड पर ही आत्म रक्षा निर्भर है।
८४. अपनी रक्षा में ही सब की रक्षा है।
८५. अपने पर ही वृद्धि तथा नाश निर्भर है।
८६. समझ बूझकर दंड का प्रयोग करना चाहिये।
८७. दुर्बल राजा का भी अपमान न करना चाहिये।
८८. आग भी कभी जलाने में अशक्त हुई है।
८९. दंड द्वारा ही प्रवृत्ति का पता चलता है।
९०. अर्थ की प्राप्ति प्रवृत्ति पर निर्भर है।
९१. अर्थ पर धर्म्म तथा काम का आधार है।
९२. अर्थपर ही संपूर्ण कार्य अवलंबित है।
९३. अर्थ के कारण कम मेहनत से ही काम सिद्ध होजाता है।
९४. उपाय करने पर कोईभी काम कठिन नहीं रहता।
९५. उपाय न करने पर किया भी काम नष्ट होजाता है।
९६. काम करने वालों का उपाय ही एकमात्र सहारा है।
९७. पुरुषार्थ से सोचा हुआ काम सिद्ध होजाता है।
९८. भाग्य पुरुषार्थ के पीछे ही चलता है।
९९. भाग्य बिना बहुत मेहनत करने पर भी फल नहीं मिलता।
१००. जो ध्यान नहीं देता उसकी कोई वृत्ति नहीं।
१०१. सोचने के बाद काम करे।
१०२. काम में देरी न करे।
१०३. चंचल चित्त वालों का काम पूरा नहीं होता।
१०४. हाथ में आई चीज को छोड़ने से कार्य्य का व्यतिक्रम हो जाता है।
१०५. दोष रहित कामों को किया जाय।
१०६. विघ्नयुक्त कामों को न करे।

१०७. समय को पहिचानने वाला कार्य को पूरा करलेता है॥
१०८. देरी करने से देरी ही काम को बिगाड़ देती है॥
१०९. सब कामों में क्षण भी वृथा नष्ट नकरे।
११०. देश तथा फल को समझ कर काम शुरू करे।
१११. भाग्य बिना आसान काम भी कठिन होजाता है।
११२. नीतिज्ञ देश तथा काल को देखता रहे।
११३. समझ बूझकर काम करने वालों के पास लक्ष्मी स्थिर रूप से निवास करती है।
११४. सब उपायों से संपूर्ण संपत्तियों को एकत्रित करे।
११५. बिना समझ बूझकर काम करने वाले भाग्यवादी का लक्ष्मी साथ नहीं देती।
११६. ज्ञान तथा अनुमान से परीक्षा करनी चाहिये।
११७. जो जिस काम में चतुर हो उसको उसी काम में लगाया जाय।
११८. उपायज्ञ दुःसाध्य को भी सुसाध्य करलेता है।
११९. अज्ञानी के द्वारा किये गये अपराध को बहुत न माने।
१२०. याहच्छिक होने से कीड़ा भी नये नये रूपों को धारण करता है।
१२१. काम के सिद्ध होने पर ही उसका प्रकाश कियाजाय।
१२२. दैव तथा मानुष्य दोषसे ज्ञानियों के कामभी बिगड़ जाते हैं।
१२३. शान्ति विषयक कामों से दैव का प्रतिषेध कियाजाय।
१२४. मानुषी कार्य विपत्ति को चतुराई से दूरकरे।
१२५. बेवकूफ लोग काम बिगड़नेपर दूसरे के दोषों को दिखाते हैं।
१२६. काम करवाने वाले को बहुत उदारता न करनी चाहिये।
१२७. भूखा बछला मा का थन काटता है।
१२८. सुस्ती से काम बिगड़ जाता है।
१२९. भाग्यवादियों का काम सिद्ध नहीं होता।
१३०. मतलबी लोग आश्रित लोगों का पोषण नहीं करते।
१३१. जो काम न देखे वह अंधा है।
१३२. प्रत्यक्ष परोक्ष तथा अनुमान से कामों को देखे।

१३३. बे विचारे काम करने वाले को लक्ष्मी छोड़देती है।
१३४. सोच समझ कर विपति को तरना चाहिये।
१३५. अपनी शक्ति को देखकर काम शुरूकरे।
१३६. घर के लोगों को खिलाकर जो खाय वही अमृतभोजी है।
१३७. संपूर्ण अनुष्ठानों से अमदनी के रास्ते बढ़जाते हैं।
१३८. भीरु को कार्य्य की चिंता नहीं होती।
१३९. कार्य्यार्थी लोग स्वामी के स्वभाव को जान कर कार्य्य को सिद्ध करते हैं।
१४०. स्वभावज्ञ ही गौ के दूध का उपभोग करते हैं।
१४१. समर्थ व्यक्ति क्षुद्रव्यक्ति पर गुप्त बात को न प्रगट करे।
१४२. आश्रित लोग भी कोमल स्वभाव वाले की पर्वाह नहीं करते हैं।
१४३. तीक्ष्ण शासक से सभी घबड़ाते हैं।
१४४. उचित शासक होना चाहिये।
१४५. समर्थ हीन बुद्धिमान की भी लोग बात नहीं मानते।
१४६. ज्यादा भार से पुरुष सदा के लिये बैठ जाता है।
१४७. जो सभा में किसी के दोष को कहता है वह एक प्रकार से अपने दोष की प्रख्याति करता है।
१४८. समर्थ लोगों का कोप समर्थों को ही नष्ट करता है।
१४९. सब लोगों के लिये कोई भी वस्तु अप्राप्य नहीं है।
१५०. साहस करने से ही कार्य्य सिद्ध नहीं हो जाता।
१५१. प्रवेश न होने से कष्ट में पड़ा हुआ व्यक्ति प्रायः भूल जाता है।
१५२. समय खराब करने में कोई चीज वाधक नहीं है।
१५३. अनिश्चित नाश वाला कार्य्य निश्चित नाश वाले कार्य्य से उत्तम होता है।
१५४. दूसरे के धन को गिरो रखने में निक्षेप्ता का ही स्वार्थ है।
१५५. दान ही सब से बड़ा धर्म्म है।
१५६. भले मानुषों के पास पहुंच कर बुरी बात बुरी बात नहीं रहती।
१५७. जो धर्म्म तथा अर्थ को न बढ़ावे वही काम है।
१५८. अनर्थ का सेवन करने वाला उन से भिन्न होता है।

१५६. लोगों में सीधे आदमी कम हैं ।
१६०. बेइज्जती से मिले धन को सज्जन लोग नहीं लेते ।
१६१. एक दोष अनेक गुणों को नष्ट कर देता है ।
१६२. महात्मा लोगों को दूसरे के साथ साहस न करना चाहिये ।
१६३. रीति रिवाज को कभी भी न तोड़े ।
१६४. शेर भूखा भी होकर घास नहीं खाता ।
१६५. प्राण चाहे चले जांय परन्तु दूसरे के साथ विश्वास घात न किया जाय ।
१६६. कमीने श्रोता को स्त्री तथा बालक भी छोड़ देते हैं ।
१६७. बालक से भी मतलब बात ले लेवे ।
१६८. ऐसा सत्य न बोले जिस पर लोगों की श्रद्धा न होवे ।
१६९. थोड़े से दोष के होने से गुणियों का त्याग न करना चाहिये ।
१७०, बुद्धिमानों में भी दोषों का पैदा होजाना आसान है ।
१७१. कोई भी रत्न ऐसा नहीं है जो कि तोड़ा तथा काटा न गया हो ।
१७२. मर्य्यादा तोड़ने वाले व्यक्तियों पर विश्वास न करे ।
१७३. अप्रिय व्यक्ति प्रिय बात किये जाने पर भी द्वेष करते रहते हैं ॥
१७४. झुकी हुई भी तुला कोटि कुएं के पानी को सुखा देती है ॥
१७५. बुद्धिमानों की बात का अनादर न करे ॥
१७६. गुणवालों के आश्रय से निर्गुण भी गुणी हो जाते हैं ॥
१७७. दूध में मिला पानी दूध ही होजाता है ॥
१७८. मिट्टी के बर्त्तन में पाटलो की गंध आती है ॥
१७९. चांदी सोने के साथ मिला कर सोना होजाती है ॥
१८०. बेवकूफ लोग उपकार करने वाले का अपकार करते हैं ॥
१८१. पापियों को बदनामी का कुछ भी भय नहीं होता ॥
१८२. शत्रु लोग भी उत्साहियों के वश में होजाते हैं ॥
१८३. विक्रम ही राजा का धन है ॥
१८४. आलसियों के लिये यह लोक तथा परलोक कुछ भी नहीं है ॥

१८५. निरुत्साही लोगों से भाग्य भी भागता है।
१८६. मछलियों की तरह पानी में से अपने मतलब की चीज निकाल ले।
१८७. अविश्वसनीय व्यक्तियों पर विश्वास न करे।
१८८. जहर सदा ही जहर है।
१८९. धन ग्रहण करते समय वैरियों का साथ न करे।
१९०. धन के प्राप्त करने में वैरियों का विश्वास न करे।
१९१. धन पर ही संपूर्ण संबंध निर्भर हैं।
१९२. शत्रु का भी लड़का यदि मित्र हो तो उसकी रक्षा करनी चाहिये।
१९३. शत्रु का छिद्र जितना बड़ा दिखाई दे उसको हाथसे बढ़ादे।
१९४. शत्रु का जहां पर छेद देख वहां पर ही आक्रमण करे।
१९५. अपने दोष को प्रकाशित न करे।
१९६. छिद्र पर जो प्रहार करें वही शत्रु हैं।
१९७. हाथ में आये हुए भी शत्रु का विश्वास न करे।
१९८. आत्मीय के दोष को दूर करे।
१९९. आत्मीय लोगों की बेइज्जती सुनकर मनस्वि लोग दुःखी हो जाते हैं।
२००. एक अंग का दोष सारे शरीर को नुकसान पहुंचा देता है।
२०१. उत्तम व्यवहार से शत्रु पर विजय प्राप्त करता है।
२०२. नीच उपकार का बदला चाहते हैं।
२०३. नीच को सलाह न दे।
२०४. नीच पर विश्वास न करे।
२०५. दुर्जन का कितना ही आदर क्यों न करे वह कष्ट ही पहुंचाता है।
२०६. जंगली आग चंदन को भी जला ही देती है।
२०७. किसी भी पुरुष का कभी भी अपमान न करे।
२०८. क्षंतव्य पुरुष को भी कष्ट न दे।
२०९. बेवकूफ लोग स्वामी से अधिक अधिक रहस्य युक्त बात कहते हैं।

२१०. फल से ही अनुराग मालूम पड़ता है ।

२११. आज्ञा पालन करने से ऐश्वर्य्य प्राप्त होता है ।

२१२. मूर्ख लोग दातव्य को भी क्लेश देकर देते हैं ।

२१३. अधैर्य्यशील महान् ऐश्वर्य्य को प्राप्त करके भी खो बैठते हैं ।

२१४. अधैर्य्यशील के लिये यह लोक तथा परलोक कोई चीज़ नहीं है ।

२१५. दुर्जन लोगों का संसर्ग न करे ।

२१६. कलवार के हाथ का दूध भी न छुए ।

२१७. बुद्धि वही है जो कि कार्य्य संबंधी संकटों के पड़ने पर भी न घबड़ावे ।

२१८. मित भोजन में ही स्वास्थ है ।

२१९. अपथ्य से अजीर्ण होने पर पथ्य न ग्रहण करे ।

२२०. कम खाने वाले बीमार नहीं पड़ते ।

२२१. बुढ़ापे में बीमारी में रोग के बढ़ने की उपेक्षा न करे ।

२२२. अजीर्ण में भोजन ही दुःख का मूल है ।

२२३. शत्रु के भी रोग बढ़ जाता है ॥

२२४. धन के समान ही दान होता है ॥

२२५. तीव्र तृष्णा वाले व्यक्ति का दबाना सुगम है ॥

२२६. तृष्णा से बुद्धि क्षीण होजाती है ॥

२२७. कार्य्य के बहुत होने पर उस काम को भविष्य के लिये छोड़ रखे जिसका अधिक फल हो ॥

२२८. असमाप्त कार्य्य का निरीक्षण स्वयं ही करे ॥

२२९. मूर्ख साहसी होते हैं ॥

२३०. मूर्खों के साथ विवाद न करे ॥

२३१. मूर्खों के साथ मूर्ख बनकर रहे ॥

२३२. लोहे से ही लोहे में छेद किया जाता है ॥

२३३. बुद्धि रहित व्यक्तियों का कोई भी दोस्त नहीं होता ॥

२३४. संसार धर्म्म पर स्थिर है ॥

२३५. धर्म्माधर्म्म मृत्यु के बाद भी साथ रहते हैं ॥

२३६. धर्म्म की जन्म भूमि दया है।
२३७. सत्य तथा दान धर्म्म का मूल है।
२३८. धर्म्म से लोगों को जीतता है।
२३६. मृत्यु भी धर्म्मात्मा की रक्षा करता है।
२४०. धर्म्म से विपरीत पाप जहां जहां पर जाता है वहां वहां पर धर्म्म से भिन्न बुद्धि हो जाती है।
२४१. आकार से ही उपस्थित विनाशवालों की प्रकृति का ज्ञान प्राप्त हो जाता है।
२४२. अधर्म्म में बुद्धि रखने वाले आत्म विनाशको सूचित करते हैं।
२४३. चुगल खोरों की कोई भी छिपी बात नहीं।
२४४. दूसरे की गुप्त बात न सुननी चाहिये।
२४५. वल्लभों या राज दर्बारियों के काम प्राय: अधर्म्म युक्त होते हैं।
२४६. आत्मीय लोगों की बात न टालनी चाहिये।
२४७. यदि माता भी दुष्ट हो तो उसको छोड़ देना चाहिये।
२४८. यदि अपने हाथ में भी विष चढ़गया हो तोउसको काट देना चाहिये।
२४६. यदि शत्रु भी हितैषी हो तो उसको अपना बंधु समझना चाहिये।
२५०. औषधी कहीं पर क्यों न लगी हो ले लेना चाहिये।
२५१. चोरों पर विश्वास न करना चाहिये।
२५२. अप्रतीकार चीज़ों का अनादर न करना चाहिये।
२५३. छोटीसी भी तकलीफ तकलीफही पंहुंचाती है।
२५४. अपने आपको अमर समझ कर धन कमावे।
२५५. सभी लोग अमीरों की इज्जत करते हैं।
२५६. इन्द्रभी यदि गरीब हो तो लोग उसकी कदर नहीं करते।
२५७. मनुष्य के लिये दारिद्र्य एक प्रकार से जीवन मरण है।
२५८. अमीर कुरूपभी सुरूप है।
२५६. अमीर यदि कंजूस हो तोभी लोग उसको नहीं छोड़ते।
२६०. अकुलीन भी कुलीन से उत्तम हो जाता है।
२६१. अनार्य को बेइज्जती का क्या डर ?

२६२. समझदार लोगों को आजीविका या नौकरी की क्या चिंता ?

२६३. जितेन्द्रिय लोगों को विषयों का क्या डर ?

२६४. कृतार्थ लोगों को मृत्यु का भय नहीं होता।

२६५. सज्जन लोग दूसरे के स्वार्थ को अपना ही स्वार्थ समझते हैं।

२६६. दूसरे की उन्नति का आदर न चाहिये॥

२६७. दूसरे की उन्नति में अपना आदर का होना नाश का मूल है।

२६८. थोड़ीसी भी दूसरे की चीज न छूनी चाहिये॥

२६९. दूसरे की चीज लेना अपनी चीज खोना है॥

२७०. चोरी से बढ़कर मृत्यु का जाल और कोई चीज नहीं है॥

२७१. समय पर जौ का सतुआ भी जान बचादेता है॥

२७२. मरे हुए को दवाई से क्या लाभ ?

२७३. समय पर दूसरे के प्रभुत्व से अपने आपको भी लाभ पहुंच जाता है।

२७४. नीच की विद्या पाप कर्म में ही लगती है॥

२७५. सांप को दूध पिलाना जहर को ही बढ़ाना है॥

२७६. धात के समान कोई दूसरी चीज नहीं है॥

२७७. भूख से बढ़कर कोई दूसरा शत्रु नहीं॥

२७८. जो काम नहीं करता उसको भूख सताती है॥

२७९. भूखे के लिये कौनसी चीज अभक्ष्य है॥

२८०. इन्द्रियें ही बुढ़ापे को उत्पन्न करतीं हैं॥

२८१. भिड़कने तथा डांटने वाले स्वामी को छोड़दे॥

२८२. लोभी की सेवा ऐसी ही है जैसे कि जुगुनू को आगके खातिर धौंकना॥

२८३. विद्वान् तथा विशेषज्ञ स्वामी का आश्रय लेवे॥

२८४. मैथुन ही पुरुष का बुढ़ापा है।

२८५. अमैथुन ही स्त्रियों के लिये बुढ़ापा है।

२८६. नीचे तथा ऊंचे लोगों के साथ विवाद सम्बन्ध न किया जाय।

२८७. अगम्य स्त्री के गमन से आयु यश तथा पुण्य नष्ट हो जाते हैं।

२८८. अहंकार के समान कोई दूसरा शत्रु नहीं है।
२८९. सभा में बैठकर शत्रु की निन्दा न करे।
२९०. शत्रु की तकलीफ सुनने में भली मालूम पड़ती है।
२९१. दरिद्र के बुद्धि नहीं रहती।
२९२. दरिद्र का हित वाक्य भी कोई नहीं मानता।
२९३. अपनी स्त्री भी दरिद्र का अपमान करती है॥
२९४. फूलों से हीन आम पर भौंरे नहीं जाते।
२९५. दरिद्रों का विद्या ही धन है।
२९६. चोर भी विद्या को नहीं चुरा सकते।
२९७. विद्या से प्राप्त हुई हुई प्रसिद्धि ही प्रसिद्धि है।
२९८. पशु रूपी शरीर नष्ट नहीं होता।
२९९. जो दूसरे का हित करे वही सज्जन है।
३००. इन्द्रियों के संयम को शास्त्र कहते हैं।
३०१. शास्त्र विरुद्ध काम करने वालों को शास्त्रांकुश बचाता रहता है।
३०२. नीच की विद्या ग्रहण करने के अयोग्य है।
३०३. म्लेच्छ भाषा न सीखे।
३०४. म्लेच्छों की भी अच्छी बात ग्रहण कर लें।
३०५. गुण में मत्सर न करना चाहिये।
३०६. शत्रु की भी अच्छी बात ले लेनी चाहिये।
३०७. विष से भी अमृत ग्रहण करना चाहिये।
३०८. उमर से ही मनुष्य की इज्जत बढ़ती है।
३०९. स्थान में ही मनुष्य की पूजा होती है।
३१०. भले आदमियों के कामों का अनुकरण करे॥
३११. मर्य्यादा का कभी भी उल्लंघन न करे॥
३१२. पुरुष रूपी रत्न का कोई मूल्य नहीं है॥
३१३. स्त्री के समान कोई दूसरा रत्न नहीं है॥
३१४. रत्न दुर्लभ होते हैं।
३१५. भयों में सब से बड़ा भय अपयश है।
३१६. आलसियों को शास्त्र का तत्व नहीं प्राप्त होता॥

३१७. स्त्रियों के पराधीन व्यक्ति को स्वर्ग नहीं मिलता और उनका कोई भी काम धर्म्म काम नहीं कहाता ।
३१८. स्त्रियां भी स्त्रैण की इज्जत नहीं करतीं ।
३१९. फूल की चाह से कोई सूखे विख को नहीं सींचता ।
३२०. अद्रव्य में कोशिश करना बालू को उबालना है ।
३२१. बड़े लोगों की हंसी न उड़ावे ॥
३२२. निमित्त देखकर कार्य्य का अनुमान होजाता है ॥
३२३. निमित्त नक्षत्रों में भी विशेषता कर देते हैं ॥
३२४. जल्दबाज लोग नक्षत्र परीक्षा नहीं करते ॥
३२५. परिचय होने पर दोष नहीं छिपते ॥
३२६. जो स्वयं अशुद्ध होता है वह दूसरे को भी ऐसा ही समझता है ॥
३२७. स्वभाव मिटाये नहीं मिटता ॥
३२८. अपराध के अनुसार ही दंड होना चाहिये ॥
३२९. बात के अनुसार ही उत्तर होना चाहिये ॥
३३०. आमदनी के अनुसार ही गहने होने चाहिये ॥
३३१. कुल के अनुसार ही रहन सहन होना चाहिये ॥
३३२. कार्य्य के अनुसार ही प्रसन्न होना चाहिये ॥
३३३. पात्र के अनुसार ही दान देना चाहिये ॥
३३४. उमर के अनुसार ही वेष होना चाहिये ॥
३३५. भृत्य वही है जो कि स्वामी के अनुकूल हो ॥
३३६. स्त्री वही है जो कि मालिक के वशमें हो ॥
३३७. शिष्य वही है जो कि गुरु के वशमें रहे ॥
३३८. पुत्र वही है जो कि पिता के वशमें रहे ॥
३३९. अत्यंत अधिक आदर संदेहास्पद होता है ॥
३४०. स्वामी के कुपित होने पर भी स्वामी के ही पीछे चले ॥
३४१. लड़के को मां जब मारती है तो लड़का मां के पास ही जाकर रोता है ॥
३४२. प्रेम करने वालों का गुस्सा कुछ ही समय तक रहता है ॥
३४३. मूर्ख अपने दोष को नहीं देखता और दूसरे के दोष को ही देखता है ॥

३४४. धूर्तों के साथ आदर का व्यवहार रखना चाहिये ॥
३४५. आदर या उपचार से तात्पर्य्य मीठे व्यवहार से है ॥
३४६. चिर परिचित लोगों का अत्यादर करना देखकर समझना चाहिये कि कुछ दाल में काला है ॥
३४७. हजार कुत्तों से अकेली दुर्लभ गौ का होना ही भला है ॥
३४८. नौ नकद न तेरा उधार (कल के मोरसे आजका कबूतर ही भला है) ॥
३४९. अतिसंग खराबी पैदा करता है ॥
३५०. क्रोध रहित व्यक्ति सबको अपने वशमें करलेता है ॥
३५१. अपकारी पर यदि गुस्सा हो तो गुस्से पर गुस्सा करते ही जाना चाहिये ॥
३५२. मूर्ख मित्र गुरु वल्लभ तथा बुद्धिमानों के साथ विवाद न करना चाहिये ॥
३५३. ऐश्वर्य्य से कोई भी पिशाच नहीं रहता ॥
३५४. पुण्य कामों में धनाढ्यों को कुछ भी मेहनत नहीं होती ॥
३५५. गाड़ी पर चढ़े लोगों को थकावट नहीं होती ॥
३५६. घर बार वे लोहे की हथकड़ी है ॥
३५७. जो जिस काम में निपुण हो वह उसी काममें लगाया जाय ॥
३५८. मनस्वियों के शरीर को पीड़ा देना भले आदमियों का काम नहीं है ॥
३५९. बिना प्रमाद के स्त्रियों की रक्षा करे ॥
३६०. स्त्रियों पर कुछ भी विश्वास न करे ॥
३६१. स्त्रियों में न तो शान्ति और न लोकज्ञता ही होती है ॥
३६२. गुरुओं की माता पूजनीय होती है ॥
३६३. सभी हालतों में मां का पालन करना चाहिये ॥
३६४. बदसूरती गहनों में छिप जाती है ॥
३६५. लज्जा ही स्त्रियों का भूषण है ॥
३६६. वेद ही ब्राह्मणों का भूषण है ॥
३६७. धर्म्म सभी का भूषण है ॥
३६८. विनययुक्त विद्या सब भूषणों का भूषण है ॥

३६९. उपद्रव शून्य देशमें बसे ॥
३७०. देश वही है जिस में बहुत से भली आदमी हों ॥
३७१. राजा से सदा ही डरता रहे ॥
३७२. राजा से बढ़कर और कोई देवता नहीं है ॥
३७३. राजा से निकली आग दूर दूर तक भस्म कर देती है ॥
३७४. खाली हांथ राजा के पास न जावे ॥
३७५. गुरु तथा देव के पास भी खाली हाथ न जावे ॥
३७६. कुटुंब से डरना चाहिये ॥
३७७. राज परिवार में सदा ही आते जाते रहना चाहिये ॥
३७८. राज पुरुषों के साथ संबंध बनाये रखे ॥
३७९. राज दासी की सेवा न करनी चाहिये ॥
३८०. आंखों से भी राजा की ओर न देखे ॥
३८१. घर का स्वर्ग यही है कि लड़का गुणवान हो ॥
३८२. पुत्रों को विद्याओं का पारगामी बनाना चाहिये ॥
३८३. जनपद के लिये ग्राम को छोड़दे ।
३८४. ग्राम के लिये कुटुंब को छोड़दे ।
३८५. सबसे बड़ा लाभ पुत्र लाभ है ।
३८६. कष्टके समय में जो माता पिता को बचावे वही पुत्र है ।
३८७. जो कुल को प्रसिद्धि दे वही पुत्र है ।
३८८. अपत्यरहित व्यक्ति को स्वर्ग नहीं मिलता ।
३८९. भार्य्या वही है जिसके बालक हो ।
३९०. बहुत सी स्त्रियों के ऋतुमती होने पर पुत्रवती का गमन करे ।
३९१. ऋतुकाल में गमन करने पर ब्रह्मचर्य्य नष्ट होता है ।
३९२. पर क्षेत्र में बीज न डाले ।
३९३. पुत्र के लिये ही स्त्रियां है ।
३९४. अपनी दासी का गमन करना अपने को दास बनाना है ।
३९५. जिसका विनाश समीप होता है वह हितकारी बात को नहीं सुनता ॥
३९६. शरीरधारियों को सुख दुःख नहीं रहता है ।

३६७. काम करने वाले के पास गौ के बछड़े की तरह सुख दुःख आया करते हैं ॥

३६८. सज्जन तिल मात्र उपकार को पर्वत करके मानता है ॥

३६९. अनार्यों के साथ उपकार न करना चाहिये ॥

४००. अनार्य प्रत्युपकार के भय से शत्रु हो जाता है।

४०१. आर्य्य स्वल्प भी उपकार होने पर प्रत्युपकार के लिये दिन रात चिन्ता करता है।

४०२. देवता का कभी भी अपमान न करना चाहिये।

४०३. चक्षु के समान कोई दूसरी ज्योति नहीं।

४०४. चक्षु ही शरीरधारियों की नेता है।

४०५. जिसके आंख नहीं उसको शरीर से क्या लाभ?

४०६. पानी में पेशाब न करे।

४०७. नंगा होकर जल में न घुसे।

४०८. जैसा शरीर वैसा ही ज्ञान होता है।

४०९ जैसी बुद्धि होती है वैसा ही वैभव होता है।

४१०. आग में आग न फेंके।

४११. तपस्वियों की पूजा करे।

४१२. परायी स्त्री के साथ संगम न करे।

४१३. अन्नदान भ्रूण हत्या जैसे पाप को भी नष्ट करता है।

४१४. वेदबाह्य कोई धर्म्म नहीं।

४१५. धर्म्माचरण हरसमय करना चाहिये।

४१६. सत्य स्वर्ग को पहुंचाता है।

४१७. सत्य से बढ़कर कोई तप नहीं है ।

४१८. सत्य स्वर्ग का साधन है।

४१९. सत्य पर ही संसार स्थिर है।

४२०. सत्य से ही देव बरसता है।

४२१. असत्य से बढ़कर कोई पाप नहीं।

४२२. गुरुओं की आलोचना न करनी चाहिये।

४२३. दुष्टता न करे।

४२४. दुष्टका कोई मित्र नहीं ॥

४२५. दरिद्र का जीवन काटना कठिन होता है ॥

४२६. दानशूर ही सब से बड़ा शूर है ॥

४२७. गुरुदेव तथा ब्राह्मणों में भक्ति रखना ही सबसे बड़ा भूषण है।

४२८. विनय सबका भूषण है ॥
४२९. विनीत अकुलीन कुलीन से उत्तम होता है ॥
४३०. सदाचार से आयु तथा कीर्ति बढ़ती है ॥
४३१. अहितकारी प्रिय बात न कहना चाहिये ।
४३२. जिसकाम के बहुत से लोग विरुद्ध हों वह काम न करना चाहिये ।
४३३. दुर्जनों के साथ साझी न करे ।
४३४. स्वार्थी नीचों के साथ संबंध न करे ।
४३५. ऋण शत्रु और व्याधि को अधूरा न छोड़े ।
४३६. सामर्थ्य के अनुसार चलनाही पुरुष के लिये रसायन है ।
४३७. मांगनेवालों की अवज्ञा न करे ।
४३८. नीच लोग दुष्कर कर्म करवा कर करनेवालों को धुत्कार देते हैं ।
४३९. अकृतज्ञ नरक से नहीं लौटते ।
४४०. वृद्धि तथा नाश जवान पर निर्भर है ।
४४१. जिह्वा विष तथा अमृत की खान है ।
४४२. मधुर तथा प्रिय बोलनेवाले का कोई भी शत्रु नहीं होता ।
४४३. स्तुति करने से देवता भी प्रसन्न होजाते हैं ।
४४४. झूठी भी कठोर बात देर तक रहती है ।
४४५. राजा के विरुद्ध बात न कहना चाहिये ।
४४६. कान को प्यारी कोयल की अवाज से लोग खुश रहते हैं ।
४४७. अपने धर्म्म के कारण ही मनुष्य सत्पुरुष कहाता है ।
४४८. मांगनेवालों की कोई इज्जत नहीं ।
४४९. सौभाग्य ही स्त्रियों का भूषण है ।
४५०. शत्रु से भी-दुर्व्यवहार न करे ।
४५१. खेत वही है जिसमें बिना मेहनत के पानी लगे ।
४५२. एरंड का सहारा लेकर हाथी को न चिड़ावे ।
४५३. बहुत बढ़ीहुई सेंमलकभी हाथी के बांधने का खूंटा नहीं बनता ।
४५४. कार्णिकार कितना ही लंबा क्यों न हो मूलल के काम में नहीं आता ।

४५५. जुगुनू कितना ही चमके आग नहीं कहा जासकता।

४५६. बुड्ढा होना ही गुण का हेतु नहीं।

४५७. पिचुमंद कितना ही पुराना क्यों न हो शंकुल के काम में नहीं आता।

४५८. जैसा बीज होता है वैसा ही फल निकलता है।

४५९. विद्या के अनुसार ही बुद्धि होती है।

४६०. कुल के सदृश ही आचार होता है।

४६१. पिचुमन्द कितना ही क्यों न सुधारा तथा बनाया जाय आम नहीं देता।

४६२. आये हुए सुख का परित्याग न करे।

४६३. मनुष्य [अपनी गलती से ही] दुःख में पड़ता है।

४६४. रात में इधर उधर न घूमे।

४६५. आधी रात में न सोवे।

४६६. उसीके विद्वानों से परीक्षा करवादे।

४६७. अकारण ही दूसरे के घर में न घुसे।

४६८. जानकार भी लोग बुराकाम करते हैं।

४६९. लोग प्रायः शास्त्र के अनुसार ही चलते हैं।

४७०. यदि शास्त्र न होतो शिष्ट लोगों के अनुसार कामकरे।

४७१. आचरण से अधिक प्रामाणिक शास्त्र नहीं हैं।

४७२. दूर रहते हुएभी राजा चारों की आंखों से देखता है।

४७३. लोग एक दूसरे के पीछे चलते हैं।

४७४. जिसका नमक खावे उसकी बदनामी न करे।

४७५. इन्द्रियनिग्रह सब तपस्याओं का सार है।

४७६. स्त्रीके बंधन से छुटकारा पाना कठिन है।

४७७. स्त्रियें ही सब बुराइयों की जड़ हैं।

४७८. स्त्रियों को पुरुषों की परीक्षा न करनी चाहिये।

४७९. स्त्रियों का मन चंचल होता है।

४८०. अशुभ से बचने वाले लोग स्त्रियों में नहीं फंसते।

४८१. तीनों वेदों को जानने वाले ही यज्ञ के फलों को जानते हैं॥

४८२. पुण्य के फल के अनुसार ही स्वर्ग में रहना मिलता है॥

४८३. स्वर्ग से गिरने से बढ़कर और कोई दुःख नहीं है ॥
४८४. मनुष्य मर कर इन्द्र नहीं बनना चाहता ॥
४८५. निर्वाण ही सब दुःखों की औषध है ॥
४८६. अनार्य की मैत्री से आर्य्य की शत्रुता उत्तम है ॥
४८७. कठोर बात कुल को नष्ट करती है ॥
४८८. पुत्र स्पर्श से बढ़कर और कोई सुख नहीं है ॥
४८९. विवाद में धर्म्म का अनुसरण करे ॥
४९०. संध्याकाल में कार्य्य की चिंता करे ॥
४९१. प्रदोष में संयोग न करे ॥
४९२. जिसका नाश नजदीक हो वह अन्याय करता है ॥
४९३. दूध चाहने वाले को हथिनी से क्या लाभ ?
४९४. दान के समान वश्य कोई दूसरा उपाय नहीं ॥
४९५. दूसरे की चीज को लेने के लिये उत्सुक न हो ॥
४९६. पाप की कमाई पापी ही खाते हैं ॥
४९७. कउए निमकौरी खाते हैं ॥
२९८. समुद्र कभी प्यासा नहीं होता ॥
४९९. बालू भी अपने समान गुण वाले से मेल रखता है ॥
५००. सज्जन लोग दुर्जनों के साथ मेल नहीं करते ॥
५०१. हंस प्रेतवन में नहीं रहते ॥
५०२. लोग रुपये की खातिर ही काम करते हैं ॥
५०३. आशा से ही लोग बंधे हैं ॥
५०४. आशा रहित लोगों के पास लक्ष्मी नहीं रहती ॥
५०५. आशा रहित लोगों के पास धैर्य्य नहीं होता ।
५०६. दैन्य से उत्तम मरण है ।
५०७. आशा लज्जा को छिपा देती है ।
५०८. मा के साथ न रहना चाहिये ।
५०९. अपनी प्रशंसा न करना चाहिये ।
५१०. दिन में न सोवे ।
५११. ऐश्वर्य्यांध आसन्न लोगों को नहीं देखता । इष्ट बात नहीं सुनता ।

५१२. स्त्रियों का पति से बढ़कर और कोई परम दैवत नहीं है।
५१३. पति के अनुसार चलने में दोनों को ही सुख मिलता है।
५१४. आये हुए अतिथि की यथा विधि पूजा करे।
५१५. हव्य का कोई भी व्याघात नहीं है।
५१६. शत्रु मित्र की तरह मालूम पड़ता है॥
५१७. मृगतृष्णा जल की तरह होती है।
५१८. दुर्बुद्धि बुरी बात को ही पसन्द करते हैं।
५१६. सत्संग ही स्वर्ग वास है।
५२०. आर्य पराये को अपने तुल्य समझता है।
५२१. रूप के अनुसार ही गुण होता है।
५२३. जहां सुख से रहें वही स्थान है।
५२४. विश्वास घातियों का कोई भी निश्चय नहीं है।
५२५. साधु शरण में आये दुःखी को अपना करके मानते हैं।
५२६. अनार्य्य दिल की बात छिपाकर दूसरी बात कहता है।
५२७. बुद्धि हीन पिशाच के तुल्य है।
५२८. मार्ग में अकेले न चले।
५२६. पुत्र की प्रशंसा न करे।
५३०. नौकरों को स्वामी की प्रशंसा करनी चाहिये।
५३१. धर्म्म कृत्यों में स्वामी का ही नाम ले॥
५३२. राजा की आज्ञा का उल्लंघन न करे॥
५३३. आज्ञा के अनुसार काम करे॥
५३४. बुद्धिमानों का कोई भी शत्रु नहीं है॥
५३५. अपने दोष को न प्रकाशित करे॥
५३६. क्षमावान् सब कुछ कर लेता है॥
५३७. आपत्ति के लिये धन की रक्षा करे॥
५३८. साहसी चोरों या अपराधियों की प्रिय बात न करे॥
५३६. जो कल करना हो वह आजही करे॥
५४०. सांझ की बात सबेरे ही करे॥
५४१. व्यवहार के अनुसार ही धर्म्म है॥
५४२. लोकज्ञता ही सर्वज्ञता है॥
५४३. जो शास्त्रज्ञ लोकज्ञ नहीं वह मूर्ख के तुल्य है॥

५४४. तत्व का दिखाना ही शास्त्र का प्रयोजन है ॥
५४५. तत्त्व ज्ञान कर्तव्य को प्रगट करना है ॥
५४६. व्यवहार में पक्षपात न करना चाहिये ॥
५४७. व्यवहार धर्म्म से भी महत्त्वपूर्ण है ॥
५४८. आत्मा ही व्यवहार का साक्षी है ॥
५४९. आत्मा सबका साक्षी है ॥
५५०. कूटसाक्षी कभी भी न बने ॥
५५१. झूठे गवाह नरक में गिरते हैं ॥
५५२. महाभूत छिपे पापियों के गवाह है ॥
५५३. आत्मा का पाप आत्माही प्रगट करता है।
५५४. आकार छिपी बात को प्रगट कर देता है।
५५५. आकार का संवरण करना देवताओं के लिये भी अशक्य है।
५५६. चोरों तथा सरकारी नौकरों से धन को बचावे।
५५७. प्रजा दर्शन न देने वाले राजा को नष्ट कर देती है ॥
५५८. प्रजा दर्शन देने वाले राजा को चाहती है ॥
५५९. प्रजा न्यायी राजा को माता समझता है ॥
५६०. ऐसा राजा इस लोक में सुख और मृत्यु के बाद स्वर्ग को प्राप्त होता है ॥
५६१. अहिंसा ही धर्म्म है ॥
५६१. साधु दूसरे के शरीर को अपने शरीर से बढ़कर मानते हैं ॥
५६३. किसी को भी मांस भक्षण न करना चाहिये ॥
५६४. ज्ञानियों को संसार का भय नहीं होता ॥
५६५. विज्ञानरूपी दीप से संसार का भय नष्ट हो जाता है ॥
५६६. सब कुछ अनित्य है ॥
५६७. कीड़े पेशाब तथा पाखाने से भरा हुआ शरीर पुण्य पाप तथा जन्म का कारण है ॥
५६८. जन्म मरण में दुःख ही दुःख है ॥
५६९. तपस्या से स्वर्ग मिलता है ॥
५७०. क्षमा युक्त की तपस्या बढ़ती जाती है ॥
५७१. इसी से सब लोगों को कार्य्य सिद्धि होती है ॥

भारत के सुप्रसिद्ध प्राचीन अर्थशास्त्र के आचार्य

बृहस्पति रचित

बार्हस्पत्य अर्थशास्त्र

का

सरल हिन्दी अनुवाद

अनुवादक—हिन्दी संसार के परिचित तथा सुप्रसिद्ध लेखक

ला० कन्नोमल जी एम. ए. जज

इसमें मूल सूत्र, हिन्दी अनुवाद, विस्तृत भूमिका, कई एक टिप्पणियां (जिसमें भारत के प्राचीन धर्मों प्राचीन नगरों, पर्वतों, नदियों आदि कई एक विषयों पर बड़ा विस्तृत प्रकाश डाला गया है) तथा प्राचीन भूगोल सम्बन्धि २ चित्र भी दिये हैं—पुस्तक बहुत उत्तम है। बढ़िया कपड़े की जिलद सहित संपूर्ण पुस्तक का मूल्य १॥) है। पुस्तक अवश्य संग्रह करने योग्य है—

बार्हस्पत्य-सूत्र छः अध्यायों में विभक्त है। पहले अध्याय में यह बताया गया है, कि मनुष्य को अपना चरित्र कैसे निर्माण करना चाहिये उसे क्या करना और क्या न करना चाहिये राजा में क्या गुण होना चाहिए; उसे कैसे मंत्री रखने चाहिए और उसका क्या कर्तव्य है संक्षिप्त रूप से इस अध्याय में राजा के चरित्र सम्बन्धी सभी बातें उल्लिखित हैं। बृहस्पति जी लिखते हैं कि राजा शिकार में बहुत अनुराग नहीं रखे और न स्त्रियों में ही रातदिन रहकर विलासोन्मत्त रहे, क्योंकि इससे आयु क्षीण होती है। उसे अपना समय वेश्याओं ज्योतिषिओं, साधु सन्यासिओं तथा निजी नौकरों के साथ न व्यतीत करना चाहिए। जो लोग स्त्री, जुआ, मदिरापान आदि में अनुरक्त हों, उन्हें अपनी सेवा में कभी नहीं रखना चाहिए। राजा को काम, क्रोध, मद, मात्सर्य, पैशुन्य आदि दुर्गुणों से बचना, मदिरा कदापि न पान करना, आत्म-संयमी होना, अपने समान सच्चरित्र मनुष्य नौकर रखना, दान करना, हिंसा से बचना, तथा सच्चरित्र पुरुषों को मित्र बनाना चाहिए। उसे ऋणी कभी नहीं होना उचित है ऋण तीन प्रकार से होता है, काम—वश होने से, विलासरत होने से, क्रोध अथवा लोभ से। गूढ़नीति (Policy) के लिए लिखते हैं कि

वह तीरस्थ वृक्षके समान है, जिसकी स्थिति दृढ़ नहीं है। इस लिये राजा को उसे हितकारक समझना उचित नहीं। ऐसी ही अनेक बातें इस अध्याय में लिखी हैं। इन बातों पर हमारे राजा महाराजाओं को भलीभाँति ध्यान देना चाहिए।

दूसरे अध्याय में उन नियमों और सिद्धान्तों का विवरण है, जिन के अनुसार राजा को व्यवहार करना समुचित है। अर्थोपार्जन के समय लोकायित शास्त्र के अनुकूल चलना चाहिए। काम विषय में कापालिक नियमों का पालन करना और धर्म विषय में आर्हत शास्त्र का अनुकरण करना कर्त्तव्य है। मांस-मदिरा आदि विषयों में कापालिक बड़े लिप्त रहते हैं। आर्हत वह सिद्धान्त है, जिसके अनुसार सभी प्रकार की हिंसा त्याज्य है।

यदि राजा के मंत्री अच्छे हों, परंतु राजा स्वयम् पराछिद्र-दर्शी और अधर्मी हो, तो वह राज्य नहीं चला सकता है। जो ऐश्वर्य मद में मत्त हो, लोभ और मान से भरा हुआ हो, वह कमाई हुई सम्पत्ति को भी खो बैठता है। नीति वही है, जिसका फल धर्म, अर्थ और काम की प्राप्ति हो। काम और अर्थ को धर्म की कसौटी से जांचना चाहिए और धर्म को धर्मशास्त्र से। नीतिविरुद्ध पुत्र भी शत्रु है बालक, दुष्ट, उच्छृंखल, शास्त्र-अनभिज्ञ, मूढ़, दुराचारी, तीक्ष्ण, तेज स्वभाव वाला और जो अपने को ही सब कुछ समझता हो,—ऐसे मनुष्यों के साथ परामर्शादि नहीं करना चाहिए। स्वकार्य सिद्ध करने, स्वयश और स्वप्राण-रक्षा करने में यदि अपना सर्वस्व भी छोड़ना पड़े तो छोड़ देना चाहिए। धर्म ही प्रधान है, पुरुषार्थ नहीं। जो सुख अधर्म से मिले, वह शत्रु-सा है। जो मनुष्य अपनी बात का सच्चा है और शास्त्रों के वाक्यों पर श्रद्धा रखता है, वह समुद्र को भी पी-कर सुखा सकता है। उसके लिए कुछ भी असम्भव नहीं है। एक दुर्जन कई-एक का नाश कर देता है। पुरुषार्थ पर ही भाग्य निर्भर है। जो अपनी स्त्री में ही रत है और जो आत्मदमन में शक्ति रखता है, उसके बराबर कोई दूसरा नहीं है सज्जन भय से अपना धर्म नहीं छोड़ देते। राजा को अधर्म तथा वध नहीं करना चाहिए। उसे ऐसी बात नहीं करनी चाहिए, जिससे उसका अपयश हो। इसी प्रकार की बातें इस अध्याय में हैं।

तीसरा अध्याय विद्या-सम्बन्धी है। इस में तत्कालीन धर्म, मत, दार्शनिक सम्प्रदाय, मंत्र, तंत्र, औषधियाँ, यज्ञ, युग, उत्सव आदि का वर्णन है। इतिहास, पुराण, दर्शन शास्त्रादि पढ़ने का आदेश है। सब से बड़ी बात यह है कि इस अध्याय में केवल पृथ्वी का ही वर्णन नहीं है, किन्तु तत्कालीन भारतवर्ष के देश, प्रदेश, नगर,

पर्वत, तीर्थ, नदियां, जातियां आदि का पूरा-पूरा विवरण है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह अध्याय बड़े ही महत्व का है।

चौथे अध्याय में शकुनादि का वर्णन है तथा अन्य और भी उपयोगी शिक्षाएं हैं।

शुभ शकुन ये हैं--मुर्गी की आवाज़, हाथी देखना, हाथी का शब्द, देव-स्तुति, पाठ-ध्वनि, देवताओं की कथा, नेत्रों में अञ्जन, दर्पण में मुख देखना, अलंकार पहनना, ताम्बूल खाना, कर्पूर, चन्दन, धूप, तुरही, शंख, वीणा, मृदङ्ग, ढोल आदिक के शब्द-घोष तथा श्वेत पुष्पादि।

अशुभ शकुन ये हैं,--बलों तथा गिद्धों का दिखायी देना, संध्या की अग्नि-ज्वाला, लड़ते हुए गीदड़ों का रोना, ग्राम या पुर के द्वार पर हिंसक पशुओं के शब्द, देवताओं की प्रतिमाओं से स्वेद आना इत्यादि।

पाँचवें अध्याय में उपायों का वर्णन है। ये उपाय साम, दाम, भेद, मायोपेक्षा और वध आदि हैं। तेजपुरुषों के साथ सामनीति का प्रयोग करना उचित है, अर्थात् उससे राजीनामा कर लेना चाहिए। डरपोक और पोच मनुष्यों के साथ साम और भेद उपायों का प्रयोग करना चाहिए। लुब्ध मनुष्यों के साथ साम, दाम और भेद उपायों का प्रयोग करना चाहिए। ऐसे मनुष्य जो निरन्तर कष्ट देते हैं, उनके साथ साम, भेद, दाम, मायोपेक्षा और वध—इन सब का प्रयोग करना उचित है। मायोपेक्षा का अर्थ है, कृत्रिम उपेक्षा सब से पहिले साम से काम ले, वह यदि निष्फल हो तो दूसरे उपाय सोचने चाहिए। बृहस्पति जो मनोविज्ञान के पूर्ण ज्ञाता हैं। आप कुछ ऐसी बातें लिखते हैं, जिनसे मानुषीवृत्ति की विषमता का पता लगता है। जैसे सम्बन्धी अपने सम्बन्धियों की विपत्ति पर हर्ष करते हैं, हृदय में क्रूरता रखते हुए उनका बुरा करते हैं। सभी भयों में जाति अथवा सम्बन्धियों का भय बड़ा घोर है। जैसे गौओं में दूध स्वाभाविक है, वैसे ही ब्राह्मणों में स्वाभाविक है क्रोध, स्त्रियों में चपलता, जातिवालों में अप्रेम। मित्रता पत्र-स्थित जलबिन्दु के समान अस्थिर होती है। जो गुरुजनों के हितकारक-शास्त्र-वाक्य नहीं सुनते, उनके सिरपर आपत्ति की घटा सदा रहती है। ऐसे मनुष्यों से सदा दूर रहना चाहिए। लोक-विरुद्ध कोई कार्य करना उचित नहीं। ऐसे कई-एक उपदेश भी इस अध्याय में दिये हैं।

छठवें अध्याय का सम्बन्ध न्याय से है। मनुष्य को देश, काल, नय, अनय देख काम करना चाहिए। जो कार्य वेदविरुद्ध हो अपने पुरुषार्थ और मान के विपरीत हो, उसे कभी नहीं करे। जिसके

पास धन है, उसके पास मित्र, धर्म, विद्या, गुण, बुद्धि, बलादि सभी-कुछ हैं। जिस प्रकार हस्ती हस्ती के विना नहीं पकड़ा जा सकता है, उसी प्रकार धन धन के विना नहीं कमाया जा सकता है। संसार में मूल धन ही है, वह मृत-पुरुष और चाण्डाल के समान है।

धर्म का मूल विद्या है। इसलिए उसे प्राप्त करना चाहिए। जगत् का मूल विद्या ही है। विद्या सभी-कुछ है। इसी प्रकार की नीति की बातें इस अध्याय में लिखीं हैं।

छपगया ! छपगया !! छपगया !!!

हिन्दी-संसार में एक नई बात

डाक्टर सर जगदीशचंद्र बोस

और उनके आविष्कार

लेखक—श्रीयुत सुखसम्पतिराय भंडारी।

अन्य देशों के आगे भारत का मुख उज्ज्वल, भारत का सिर ऊँचा करने वाले जो दस पांच नर-रत्न हैं, उनमें **विज्ञानाचार्य सर ज़गदीशचंद्र वसु** भी एक हैं। आपके नवीन आविष्कारों को देख सुन कर योरप और अमेरिका के नामी नामी विद्वान् वैज्ञानिक चकित होचुके हैं। अन्य देशों में वसु बाबू का नाम बडे आदर से लिया जाता है। भारत में तो ऐसा कोई विरला ही पढ़ा लिखा होगा जिस ने आपका नाम न सुना हो। इस पुस्तक में वसु बाबू की जीवनी तथा उनके आविष्कारों का विस्तृत रूपसे दिग्दर्शन कराया गया है। हिंदी में ऐसी पुस्तक का अभी तक अभाव था हर्ष है कि यह त्रुटि भी दूर होगई। पुस्तक हरएक हिन्दी प्रेमी को अवश्य संग्रह करने योग्य है, पुस्तक बढ़िया कागज पर बहुत उत्तम छपी है मूल्य केवल ।।=)

मिलने का ठिकाना:—

मोतीलाल बनारसीदास,

मालिक—पंजाब संस्कृत पुस्तकालय,

सैदमिट्ठा बाज़ार, लाहौर।